Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिन्दी शिक्षण

TEACHING OF HINDI

डॉ० के. सी. जैन
शैल जैन

TANDON PUBLICATIONS®
LUDHIANA

CC-0 A[illegible] Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिन्दी शिक्षण

(TEACHING OF HINDI)

डॉ. के. सी. जैन
एम. ए. (हिन्दी, दर्शनशास्त्र)
एम. एड., पी. एच. डी.

शैल जैन
एम. ए. (हिन्दी, राजनीति शास्त्र), एम. एड.

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu.
Acc No...10005
Dated...16/11/2012

TANDON PUBLICATIONS
BOOKS MARKET, LUDHIANA

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

Published by :
TANDON PUBLICATIONS
BOOKS MARKET
LUDHIANA. 141008
Phones : (O) 0161-4639694
Mobile : 98159-08794, 94172-30122
Fax: 91-0161-4639694
Email : tandonpublications@yahoo.com
Trade Mark No. : 1611885

Copy Right Reserved with the Publishers

PRICE : Rs. Rs 350.00

Composed by :
Data Image
Jalandhar City,

Printed by :
Bright Printers
Jalandhar City.

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनुभव- एक प्रेरणा

मनुष्य अपने जीवन में जितना अनुभवों से सीखता है इतना नियमों से नहीं । नियमों को सार्थकता अनुभव ही प्रदान करते हैं अर्थात् अनुभवों की कसौटी पर खरे उतरे नियम अर्थपूर्ण और व्यावहारिक होते हैं । शिक्षण एक प्रक्रिया होने के साथ-साथ एक कला भी है । शिक्षण को कदापि भी यान्त्रिक प्रक्रिया नहीं बनने देना चाहिये । यान्त्रिक प्रक्रिया में नियमितता तो अवश्य होती है लेकिन चालक की सूझ-बूझ और अनुभवों को महत्व न देकर नियमों पर विशेष ध्यान देकर उनकी पालना करता है तो शिक्षण अर्थहीन, नीरस, शुष्क और निरर्थक बन जाता है । इस लिये शिक्षण को सार्थक और जीवनपूर्ण बनाने के लिये नियमों के साथ-साथ अपनी आन्तरिक सूझ-बूझ और जीवन के अनुभवों को क्रियान्वित करना चाहिये । प्रस्तुत पुस्तक में भावी शिक्षकों की सूझ-बूझ को जागृत करने और उनके अनुभवों को कार्यान्वित करने की प्रेरणा देने हेतु छोटा सा प्रयास किया गया है । हिन्दी शिक्षण में भाषाई कौशलों और उसकी अनेक साहित्यिक विधाओं का क्यो प्रयोजन है और प्रयोजन की प्राप्ति किस प्रकार से की जाये-इन सभी बातों का उल्लेख स्पष्ट रूप से किया गया है । यह पुस्तक कश्मीर विश्व-विद्यालय एवं महर्षि दयानन्द विश्व विद्यालय रोहतक बी. एड. के 2003-2004 के सत्र में लिखी गई है । यह पुस्तक अत्यन्त सरल भाषा में और सहज ढंग से लेखकों के दैनिक जीवन के अनुभवों के आधार पर लिखी गई है । यह पुस्तक प्रश्नोंत्तर विधि को न अपनाते हुए भी पाठकों को इतनी सरल एवं बोधगम्य लगेगी की वे कम समय में अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।

हमें अपने विचारों को पुस्तक रूप में आपके सामने प्रस्तुत करने के लिये जिन शुभचिन्तक बन्धुओं ने परेरित किया उनका हम हृदय से आभार प्रकट करते हैं । पुस्तक में हमारे अपने विचार होते हुए भी अनेक सन्दर्भों एवं स्थलों पर अन्य पुस्तकों से भी सहायता ली गई है । उन लेखकों का आभार प्रकट करना हमारा परमकर्त्तव्य बनता है । हमने भरसक प्रयत्न अवश्य किया हो लेकिन हमारा ज्ञान तुच्छ है इसलिये पुस्तक में कुछ कमियां रह जाना भी स्वाभाविक है । इसलिये कमियों के लिये आपसे हम क्षमा चाहेंगे और कमियों के दूर करने हेतु आप के द्वारा दिये गये सुझावों का हृदय से स्वागत करेंगे ।

लेखकगण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

TEACHING OF HINDI

Syllabus

Kashmir University

Unit I Position of Hindi Teaching

(*i*) Origin and development of Hindi language.

(*ii*) Objectives of teaching Hindi at elementary & secondary levels.

(*iii*) Role of Hindi as a link language in India.

(*iv*) Problems of Hindi Teaching.

Unit II Methods

(*i*) Translation method

(*ii*) Play way method

(*iii*) Direct method

(*iv*) Structural approach

Unit III Reading & Writing

(*i*) Concept, Meaning and Importance of Reading

(*ii*) Types of reading silent/loud, extensive & intensive,

(*iii*) Reading defects and their cure.

(*iv*) Quality of good handwriting.

(*v*) Defects in writing skills and their improvement.

(*vi*) Summarizing and elaborating.

(*vii*) Essay writing/Letter writing.

Unit IV Teaching of Prose and Poetry

(*i*) Teaching of Prose and Lesson planning Prose

(*ii*) Teaching of Poetry and lesson planning Poetry

(*iii*) Concept and meaning of evaluation

(*iv*) Criteria of a good language test

(*v*) Error analysis and remedial teaching

Unit VContent

(*i*) Standard sounds of Hindi, Vowels, consonants correct pronunciation in Hindi.

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(*ii*) Definition & Kinds of Nouns & Adjectives.

(*iii*) A detailed description of the life & works contribution of Kabir & Tulsi

(*iv*) Study of the following :

(*a*) Kabir's Dohe (7th & 9th Grade Texts)

(*b*) Mekadevi's Murjaya Phool (7th Grade Text)

(*c*) Giloo (Story) – (8th Grade Text book)

(*d*) Nilakant-(10th Grade Text)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विषय वस्तु
(CONTENTS)

UNIT - I
हिन्दी शिक्षण की स्थिति
(Position of Hindi Teaching)

1. हिन्दी भाषा की उद्भव एवं विकास — 3–60
   Origin and Development of Hindi Language
2. प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य — 61–64
   Objectives of Teaching Hindi at Elementary and Secondary Level
3. भारत में हिन्दी भाषा की सम्पर्क भाषा के रूप में भूमिका — 65–70
   Role of Hindi as Link Language in India
4. हिन्दी शिक्षण की समस्याएं — 71–76
   Problems of Hindi Teaching

UNIT - II
शिक्षण विधियां
(Teaching Methods)

1. अनुवाद विधि (Translation Method) — 79–86
2. खेल विधि (Playway Method) — 87–90
3. प्रत्यक्ष विधि (Direct-Method) — 91–95
4. संरचना उपागम (Structural Approach) — 96–101
5. बालोधान विधि (Kindergarten Method) — 102–103
6. माण्टेसरी विधि (Montessori Method) — 103–106
7. प्रोजेक्ट विधि (Project Method) — 107–109
8. बेसिक शिक्षण विधि और भाषा शिक्षण — 110–111
   (Basic Teaching Method and Language Teaching)
9. समवाय विधि और भाषा शिक्षण — 112–114

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(Correlation Method and Language Teaching)
10. हिन्दी शिक्षक के गुण 115–122
(Qualities of Hindi Teacher)
11. भाषा-शिक्षण के सिद्धान्त एवं सूत्र 123–130
(Principles and Maxims of Language Teaching)

UNIT III

वाचन व लेखन

(Reading and Writing)

1. वाचन का प्रत्यय, अर्थ व महत्त्व 133–134
(Concept, Meaning and Importance of Reading)
2. वाचन के प्रकार मौन/सस्वर, गहन व द्रुत (तीव्र) 135–147
(Types of Reading Silent/Loud/Intensive and Extensive)
3. वाचन दोष व समाधान 148–151
(Reading defects and their Cure)
4. अच्छे लेखन के गुण 152–157
(Quality of good handwriting)
5. लेखन कौशल मे अशुद्धियां व समाधान 158–168
(Defects in writing Skill and their Improvement)
6. संक्षेपीकरण व विस्तारीकरण 169–176
(Summarising and Elaborating)
7. निबन्ध लेखन/पत्र लेखन 177–199
(Essay Writing/Letter Writing)
8. हिन्दी पाठ्य क्रम निर्माण के सिद्धान्त और पाठ्यक्रम की समीक्षा 200–204
(Principles of the Construction of Hindi Curriculum and Critical Evaluation of Curriculum)

UNIT IV

पद्य व गद्य शिक्षण

(Teaching of Poetry and Prose)

1. कविता शिक्षण व कविता पाठ योजना 207–230
(Teaching of Poetry and Lesson Planning)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. गद्य शिक्षण व पाठ योजना 231–242
(Teaching of Prose and Lesson Planning)
3. मूल्यांकन का प्रत्यय व अर्थ 243–265
(Concept and Meaning of Evaluation)
4. अच्छे भाषा परीक्षण का आधार 266–268
(Criteria of a Good Language Test)
5. अशुद्धि विश्लेषण व उपचारात्मक शिक्षण 269–283
(Error Analysis and Remedial Teaching)
6. हिन्दी शिक्षण में पाठ्यक्रम सहगामी गतिविधियां 284–296
(Co-curricular Activities in Hindi Teaching)

UNIT V

1. हिन्दी की मानक ध्वनियां, हिन्दी के स्वर व व्यंजनों का सही उच्चारण 297–304
(Sounds of Hindi Vowels, Consonants Correct Pronounciation in Hindi)
2. संज्ञा व विशेषण की परिभाषा के प्रकार 305–310
(Definition and Kinds of Nouns and Adjectives)
3. कबीर व तुलसी का जीवनवृत व उनका योगदान 311–329
(A detailed description of the Life and Works Contribution of Kabir and Tulsi)
4. निम्न का अध्ययन (Study of the following) 330–376
I. कबीर के दोहे (7वीं व 9वीं कक्षा की पाठ्य पुस्तक)
Kabir's Dohe (7th and 9th Grade Text)
II. महादेवी की कविता मुरझाया फूल (7वीं कक्षा की पुस्तक)
Mahadevi's Murjahaya Phool (7th Grade Book)
III. गिल्लू (कहानी) 8वीं कक्षा की पाठ्य पुस्तक
Gilloo (Story) (8th Grade Text Book)
IV. नीलकंठ (10वीं कक्षा की पाठ्य पुस्तक)
Nilkanth (10th Grade Text Book)
पाठ–योजना (Lesson Planning)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

UNIT I

हिन्दी शिक्षण की स्थिति

(Position of Hindi Teaching)

(1) हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास

(Origin and Development of Hindi Language)

(2) प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य

(Objectives of Teaching Hindi at Elementary and Secondary Level)

(3) भारत में हिन्दी भाषा की सम्पर्क भाषा के रुप में भूमिका

(Role of Hindi as link Language in India)

(4) हिन्दी शिक्षण की समस्याएं

(Problems of Hindi Teaching)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1

हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास
(Origin and Development of Hindi Language)

भाषा सदा ही परिवर्तनशील होती है। वह कभी भी स्थिर नहीं रहती। इसी लिये यह कहा गया है कि 'भाषा बहता नीर' अर्थात् भाषा बहते पानी के समान है। भाषाविदों के अनुसार कोई भी भाषा एक हजार वर्ष से अधिक समय तक एक जैसी नहीं रह सकती। उस भाषा में निश्चित रूप से परिवर्तन अवश्य ही होता है। भाषा में परिवर्तन धीमी गति के साथ होता है जिसका पता हमें कालान्तर के बाद पता चलता है। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप नई-नई भाषाएं जन्म लेती हैं। इसके अतिरिक्त भाषा पर स्थान, जलवायु और सभ्यता का भी प्रभाव पड़ता है। जलवायु के परिवर्तन के कारण ही भाषा के उच्चारण के अन्तर का पता चलता है। इसी प्रकार जैसे-जैसे समाज सभ्य होता है अर्थात् प्रगति की ओर बढ़ता है नये-नये विचारों के लिये नये-नये शब्दों का निर्माण भी होता है जिससे भाषा के शब्दकोश का भी विकास होता है।

हिन्दी का उद्भव और विकास

भारत में आर्यों की भाषा वैदिक संस्कृत थी। वैदिक संस्कृत में वेदों की रचना हुई और इसे देववाणी भी कहा जाता है। इस भाषा का उच्चारण जब सामान्य जन के लिये सम्भव न हुआ तो उच्चारण अशुद्धि के कारण प्राकृत भाषा का जन्म हुआ।

वैदिक संस्कृत का व्याकरण सम्मत रूप संस्कृत कहलाया। संस्कृत का अर्थ है- सुधरा हुआ। संस्कृत में प्रसिद्ध व्याकरण पाणिनी द्वारा रचित अष्टाध्यायी है। वैदिक काल की प्राकृत बदल कर दूसरी प्राकृत के रूप में पाली भाषा कहलाई जिसमें बाद में चलकर बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ।

कालान्तर में इस दूसरी प्राकृत में भी परिवर्तन हुआ और इससे अपभ्रंश का जन्म हुआ। अपभ्रंश का अर्थ है बिगड़ा हुआ। इस अपभ्रंश से आगे चलकर पूर्वी हिन्दी और पश्चिमी हिन्दी का विकास हुआ और इन्हीं रूपों से हिन्दी का जन्म हुआ। इस विवरण को तालिका के माध्यम से दर्शाया गया है जो अग्रलिखित है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

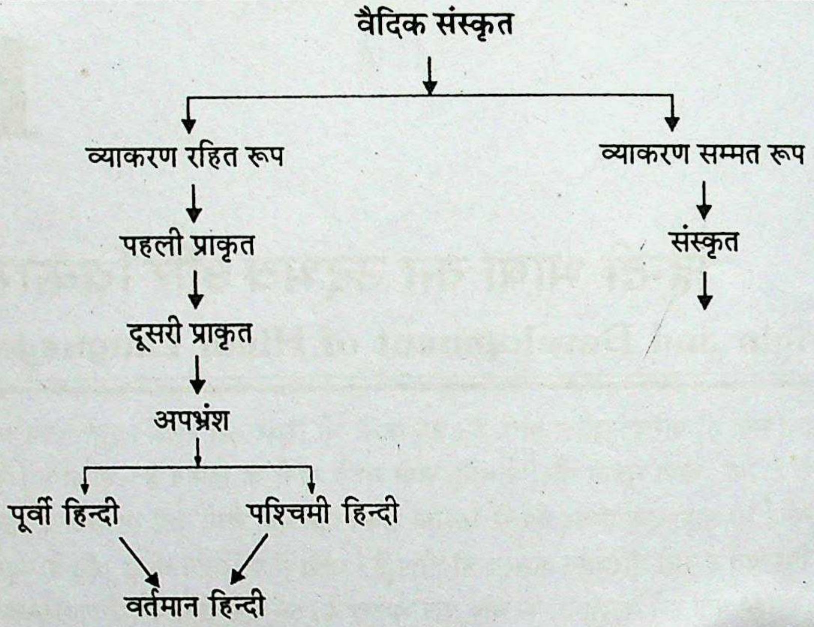

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट रूप से इस बात का पता चलता है कि वेदों के समय से आजतक भारत में समय के अनुसार भाषा की दृष्टि से अनेक परिवर्तन हुए हैं। परिवर्तन के साथ एक ही वैदिक भाषा की कितनी ही शाखाएं बन गई हैं। आधुनिक उत्तरी भारत की सभी भाषाएं वैदिक संस्कृत से निकली हैं। यद्यपि वेदों की रचना के सम्बन्ध में कोई निश्चित तिथि निर्धारित नहीं की जा सकती तथापि विद्वान इस बात पर एक मत हैं कि आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व वेदों की रचना अवश्य हो चुकी थी। इन पांच हजार वर्षों में भी अनेक परिवर्तन हुए। इस सारी अवधि को हम तीन कालों में विभक्त कर सकते हैं प्राचीन काल, मध्य काल और आधुनिक काल।

I. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल में सर्वप्रथम हम वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ और उपनिषदों की भाषा पाते हैं। वेदों में सबसे प्राचीन ऋग्वेद हैं और उसकी भाषा प्राचीनतम हैं, जो प्राचीन ईरानी भाषा अवेस्ता के निकट है। उपनिषद आदि के बाद वेदांग साहित्य और तत्पश्चात् सूत्र साहित्य की रचना हुई। अब तक वैदिक भाषा में इतना परिवर्तन हुआ था कि पाणिनी जैसे व्याकरणाचार्य को इस भाषा को नियमबद्ध बनाने की आवश्यकता पड़ी। पाणिनी के बाद यही भाषा नियमबद्ध और परिमार्जित होने के कारण संस्कृत भाषा कहलाई। रामायण और महाभारत की रचना संस्कृत भाषा में हुई। संस्कृत भाषा एक समय उत्तरी भारत की बोलचाल की भाषा थी परन्तु कालानुसार यह भी बिगड़ गई। यद्यपि साहित्य और राजकीय भाषा नियमबद्ध संस्कृति ही रही, परन्तु जनसाधारण की बोली साहित्यक संस्कृत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में पर्याप्त अन्तर उत्पन्न हो गया था। गौतम बुद्ध के समय से भारतीय आर्य भाषा का मध्यकाल आरम्भ होता है।

II. मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा काल

यह काल ई. पू. 500 से 1000 ई. तक माना जाता है। इस काल में सर्वप्रथम पाली भाषा और अशोक की धर्मलिपि की भाषा उदाहरण रूप में आती हैं। अशोक की धर्मलिपियों में उत्तरी भारत की भाषा में तीन विभिन्न रूप, पूर्वी, पश्चिमी और पश्चिमोत्तरी अवश्य थी। लोगों की बोली में बराबर परिवर्तन होता रहा। अशोक धर्मलिपियों की भाषाएं ही बाद की 'प्राकृत' के नाम से प्रसिद्ध हुईं। इस काल में संस्कृत के साथ-साथ साहित्य में इन प्राकृतों का भी व्यवहार होने लगा। इसमें कितने ही काव्यग्रन्थ और धर्म पुस्तकें लिखी गईं। संस्कृत नाटकों में उनका प्रचुर प्रयोग हुआ। इस समय की बोलियों के चार रूप मिलते हैं। पश्चिमी भाषा का मुख्य रूप शौरसेनी प्राकृत था, पूर्वी का मागधी प्राकृत (अर्थात् मगध या दक्षिण बिहार की भाषा), इन दोनों के बीच में अर्धमागधी (जो इनका मिश्रत रूप था) और चौथी दक्षिण रूप महाराष्ट्री प्राकृत थीं, प्राकृत भाषाओं का समय 500 ई. तक है। इसके उपरान्त इन भाषाओं में इतने परिवर्तन आ चुके थे कि साहित्य में प्रयुक्त होने वाले नियम बद्ध प्राकृत और जनसाधारण को प्राकृत में पर्याप्त अन्तर दिखाई देने लगा। जिसके फलस्वरूप इन बिगड़ी हुई प्राकृत बोलियों का नाम अपभ्रंश पड़ा। अपभ्रंश भाषाओं का काल 500 से 1000 ई. तक है। प्रत्येक प्राकृत का एक अपभ्रंश रूप आ रहा है।

III. आधुनिक भारतीय आर्य भाषा काल

इस काल में अर्थात् 1000 ई. से वर्तमान समय तक भारत की वर्तमान आर्य भाषाएं विकसित हुई हैं। शौरसेनी अपभ्रंश से हिन्दी, गुजराती, पंजाबी और पहाड़ी भाषाओं का सम्बन्ध है। पूर्वी हिन्दी का सम्बन्ध अर्धमागधी अपभ्रंश के साथ है। बिहारी, बंगला, आसामी और उड़िया का सम्बन्ध मागधी अपभ्रंश से है और मराठी का महाराष्ट्री अपभ्रंश के साथ।

इस प्रकार हमारी हिन्दी भाषा का जन्म शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। हिन्दी साहित्य का आरम्भ ग्यारवीं शताब्दी से होता है। इस भाषा का प्रारम्भिक रूप हम 'खुमान रासो', 'बीसलदेव रासो' और 'पृथ्वीराज रासो' नामक वीर रस पूर्ण काव्य ग्रन्थों में देखते हैं। आरम्भ काल से वर्तमान काल तक हिन्दी भाषा के रूप में अनेक परिवर्तन हुए तथा उसके कई भेद उपभेद बने। हिन्दी के प्रमुख भेद हैं – पूर्वी और पश्चिमी हिन्दी। पश्चिमी हिन्दी मध्य प्रदेश (अर्थात् दिल्ली, अम्बाला का जिला और उत्तर प्रदेश का पश्चिमी भाग) की भाषा है। मेरठ तथा दिल्ली के निकट बोली जाने वाली पश्चिमी हिन्दी के ही एक रूप ख़ड़ी बोली से वर्तमान साहित्य उर्दू तथा हिन्दी की उत्पत्ति हुई। इसकी एक दूसरी बोली ब्रजभाषा मथुरा के आसपास बोली जाती है। इन दो बोलियों के अतिरिक्त पश्चिमी हिन्दी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

में बांगरू, कन्नौजी, और बुन्देली बोलियां भी सम्मिलित हैं। हमारी राष्ट्रभाषा का वर्तमान साहित्यिक खड़ी बोली का ही वर्तमान रूप है। पूर्वी हिन्दी में अवधी प्रमुख है, जो अवध के आसपास जन साधारण की बोली है। 2000 वर्षों के हिन्दी विकास के हिन्दी का जो रूप बना वह इसकी जननी संस्कृत पाली से भिन्न बना। इसने नया रूप धारण किया, नया व्याकरण ग्रहण कर लिया। संस्कृत संश्लेषणात्मक भाषा है, हिन्दी विश्लेषणात्मक है। संस्कृत के वर्णों के 300 रूप हैं और हिन्दी में केवल 64 रह गए हैं। संस्कृत में दो स्वर पास पास नहीं आते। संस्कृत में व्यंजन पास पास नहीं आते। हिन्दी में भी दो स्वर पास पास नहीं आते और सन्धि नहीं होती। हिन्दी ध्वनियों में कई परिवर्तन हुए हैं। संस्कृत के ॠ, लृ और ज्ञ का उच्चारण हिन्दी में वैसा नहीं रहा। ऋ तथा लृ का प्रयोग नहीं रहा। श और ष का अन्तर भूल गए। ह्रस्व ए और ओ की ध्वनियां आ गईं। अन्तिम अ का उच्चारण लुप्त प्राय हुआ। शब्द के बीच में भी अ का उच्चारण लुप्त हो गया जैसे चलता-फिरता का उच्चारण 'चलता फिर्ता' है 'चलअता-फिरअता' नहीं।

हिन्दी का लिंग, वचन और कारक संस्कृत से भिन्न है। 'ने' और 'को' का प्रयोग जटिल है। हिन्दी में संस्कृत तत्सम् शब्दावली के अतिरिक्त तद्‌भ व देशी और विदेशी शब्दों का प्रयोग है। अंग्रेजी के शब्दों का नहीं। हिन्दी के वाक्य गठन पर अंग्रेजी वाक्य गठन का प्रभाव पड़ा है। अंग्रेजी के अनुवाद करने के कारण अंग्रेजी प्रकार के जटिल वाक्य हिन्दी में भी आ गए हैं।

हिन्दी शब्द फारसी भाषा का शब्द है। फारस में हिन्दी का शब्दार्थ हिन्दी से सम्बन्ध रखने वाला है। हिन्दी संस्कृत के 'सिन्धु' का ईरानी रूप है। 'सिंधु' शब्द का तात्पर्य सप्त सिन्धु अर्थात् भारतीय आर्यों का प्राचीन देश (पंजाब) अथवा समस्त भारत है। हिन्दी शब्द मुसलमानों ने ईरान से आकर भारत की भाषा के अर्थ में प्रयुक्त किया। हिन्दी पर अधिकार जमाने के बाद मुसलमानों ने दिल्ली के आसपास की भाषा का नाम हिन्दी रखा, जो शब्द आज तक प्रचलित है। इस प्रकार ब्रज अवधी और खड़ी बोली हिन्दी के अन्तर्गत आई। आजकल हिन्दी का जो रूप राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचलित है, वह खड़ी बोली का ही आधुनिक रूप है। ब्रज और अवधी का साहित्य लुप्त सा हो गया और वे केवल ग्रामीण बोलियां ही रह गईं। खड़ी बोलियों का आधुनिक रूप टकसाली हिन्दी या स्टैंडर्ड हिन्दी है।

यद्यपि हिन्दी भाषा की उत्पत्ति प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं से हुई है, फिर भी इसका समूह प्राचीन आर्य भाषाओं के अतिरिक्त और भी भाषाओं के प्रभाव से बना है। साधारण हिन्दी शब्द समूह तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है –

(1) भारतीय आर्य भाषाओं का समूह।

(2) भारतीय आर्य भाषाओं से आए हुए शब्द।

(3) विदेशी भाषाओं के शब्द।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(1) भारतीय आर्य भाषाओं के तत्सम और तद्भव शब्द हिन्दी में प्रचुरता से पाये जाते हैं। तत्सम् का अभिप्राय संस्कृत के विशुद्ध शब्दों से है। जैसे 'भाषा', 'धर्म' शब्द जो संस्कृत से आए हुए हैं और ज्यों के त्यों हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। तद्भव के शब्द हैं जो मध्यकालीन आर्य भाषाओं अर्थात् संस्कृत और प्राकृत से आए हुए हैं और परिवर्तित रूप में हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी का सांप शब्द संस्कृत के 'सर्प' और प्राकृत के 'सप्प' से निकला है। इसी प्रकार कन्हैया या 'कान्हा' कृष्ण से निकल कर तद्भव रूप से हिन्दी में प्रयुक्त होता है।

(2) भारतीय आर्य भाषाओं से आए हुए शब्द या तो दक्षिण की द्रविड बोलियों (तामिल, तेलगु, कन्नड़ और मलयालम) से हिन्दी में घुस गए हैं अथवा मुण्डा और कोल जाति की प्राचीन भाषाओं से निकले हैं।

(3) विदेशी भाषाओं के शब्दों से तात्पर्य है–

I. फारसी, अरबी, तुर्की और पशतो भाषाओं से आए हुए शब्द, जैसे– कैंची, चाकू, लाख, किताब, बादशाह, फौज, मालिक आदि।

II. अंग्रेजी और यूरोपीय भाषाओं से आए हुए शब्द, जैसे– स्कूल, बोतल, अंग्रेजी, रेडियो आदि। अंग्रेजी भाषा से आए हुए शब्दों की संख्या हिन्दी में कुछ कम नहीं।

इस प्रकार हिन्दी ने भारतीय आर्य भाषा से उत्पन्न होकर देशी और विदेशी शब्दों से सम्पन्न होकर आधुनिक विकसित रूप धारण किया है।

अभ्यास के प्रश्न

1. भारतीय आर्यभाषा का संक्षिप्त परिचय देते हुए आधुनिक हिन्दी के विकास का इतिहास लिखिए।
2. हिन्दी भाषा की शब्दावली का विश्लेषण करते हुए विदेशी भाषाओं में आए हुए शब्दों की एक विस्तृत सूची दीजिए।
3. वर्तमान काल में हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास पर एक लेख लिखें।
4. वर्तमान काल तक हिन्दी भाषा के उद्गम और विकास पर एक लेख लिखें।

भाषा की प्रकृति

भाषा की प्रकृति को स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्नलिखित बातों का जानना आवश्यक है –

I. भाषा पैतृक सम्पत्ति नहीं है – कुछ लोगों का यह मानना है कि भाषा पैतृक सम्पति है अर्थात् जिस प्रकार माता पिता की सम्पत्ति उसके पुत्र को मिल जाती है उसी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रकार बच्चा जन्म के बाद मां बाप की भाषा सीख जाता है, किन्तु प्रयोगों ने इस धारणा को गलत सिद्ध कर दिया है। जन्म से बच्चा कोई भाषा नहीं जानता। यह भी आवश्यक नहीं है कि फ्रांसीसी मां बाप का बेटा फ्रांसीसी भाषी ही हो या चीनी मां बाप का बेटा चीनी भाषी हो। अतः भाषा पैतृक सम्पत्ति नहीं है।

II. भाषा अर्जित सम्पत्ति है – यदि भाषा पैतृक सम्पत्ति नहीं है तो वह अर्जित ही होगी। बच्चा भाषा को सीखता या अर्जित करता है। चीनी मां बाप से उत्पन्न पुत्र यदि भारत में रहे तो वह वही भाषा अर्जित करेगा या सीखेगा जो उसके आस पास बोली जाएगी। दक्षिण भारत के जो उत्तर भारत में आकर रहने लगते हैं उनके बच्चे अपनी भाषा उतनी अच्छी तरह नहीं सीख पाते जितनी कि आस पास के क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा सीख लेते हैं। क्योंकि आस पास की भाषा को अर्जित करने का उन्हें अवसर मिलता है।

III. भाषा आद्यत सामाजिक वस्तु है – यदि भाषा अर्जित सम्पत्ति है तो प्रश्न यह उठता है कि व्यक्ति भाषा का अर्जन कहाँ से करता है ? उत्तर में हम कह सकते हैं कि व्यक्ति भाषा का अर्जन समाज से करता है। भाषा आदि से अन्त तक समाज से सम्बन्धित है। उसका अर्जन, विकास तथा प्रयोग समाज में ही होता है। अतः हम भाषा को समाज से पृथक नहीं कर सकते। वैसे हम अकेले में या सोचने में जिस भाषा का प्रयोग करते हैं वह भाषा इस भाषा से भिन्न होती है या फिर वह स्थिति अपवाद की है।

IV. भाषा परम्परागत है, व्यक्ति उसका अर्जन कर सकता है, उसे उत्पन्न नहीं कर सकता – भाषा परम्परा से चली आ रही पारम्परिक वस्तु है, मनुष्य तो केवल अर्जन ही कर सकता है उसको उत्पन्न नहीं कर सकता। भाषा में थोड़ा बहुत परिवर्तन ला देना उसको उत्पन्न करना नहीं है केवल परिवर्तन करने का अधिकार ही मनुष्य को होता है। भाषा को उत्पन्न करने का अधिकार तो केवल परम्परा और समाज को है। हाँ, सांकेतिक या गुप्त या कृत्रिम भाषाएँ इस भाषा से भिन्न हैं। उन्हें सामान्य अर्थ में भाषा के समकक्ष नहीं रखा जा सकता।

V. भाषा का अर्जन अनुकरण द्वारा होता है – ऊपर कहा गया है कि भाषा का अर्जन समाज से किया जाता है, यह अर्जन अनुकरण द्वारा होता है। कोई बच्चा सुनता है कि अमुक वस्तु को 'दूध' कहा जाता है तब वह भी उसको 'दूध' कहने लगता है। यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने 'अनुकरण' मनुष्य का सबसे बड़ा गुण माना है। मनुष्य भाषा को सीखने में उसी गुण का प्रयोग करता है। परम्परागत अनुकरण के कारण ही हमें हर भाषा का इतिहास मिलता है।

VI. भाषा चिर परिवर्तनशील है– यह बात सही है कि भाषा का अर्जन अनुकरण द्वारा होता है किन्तु मनुष्य अनुकरण प्रिय होने पर भी अनुकरण की कला में पूर्ण नहीं है। एक व्यक्ति से दूसरा व्यक्ति भाषा सीखता है तो वह ठीक उसी प्रकार नहीं बोल सकता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दोनों में कुछ न कुछ अंतर रह ही जाता है। भाषा का ठीक अनुकरण न होने के निम्न कारण है :–

(अ) शारीरिक

(ब) मानसिक

अनुकरण-कर्त्ता की शारीरिक और मानसिक स्थिति हमेशा एक सी नहीं रहती और न एक मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति ठीक वैसी होगी जैसी दूसरे व्यंक्ति की। ऐसी स्थिति में अनुकरण में अन्तर आ जाना स्वाभाविक है।

अनुकरण में अंतर के अतिरिक्त मुख सुख, सादृश्य, अज्ञान, बलाघात आदि अनेक अन्य कारणों से भी भाषा में परिवर्तन आता रहता है। यह परिवर्तन ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य अर्थ अर्थात् भाषा के सभी पक्षों में होता है।

VII. भाषा का कोई अन्तिम स्वरूप नहीं है – भाषा कभी पूर्ण नहीं होती अर्थात् यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक भाषा का अन्तिम रूप यह है। मृत भाषा का अन्तिम रूप होता है क्योंकि उसके विकास या उसमें परिवर्तन आने की सम्भावना नहीं रहती, किन्तु जीवित भाषा का अन्तिम रूप नहीं बताया जा सकता। उसमें तो प्रतिपल परिवर्तन होता रहता है। यह परिवर्तन तब तक होता रहता है, जब तक उसका प्रयोग होता रहता है।

VIII. भाषा की धारा स्वभावतः कठिनता से सरलता की ओर जाती है – मनुष्य स्वभाव से ही कम से कम प्रयास से अधिक लाभ उठाना चाहता है। भाषा के प्रसंग में भी यही बात कही जा सकती है। कम प्रयास करने के कारण ही हम सत्येन्द्र को 'सतेन्द्र' और फिर 'सतेन' कहने लगते हैं। पुरानी भाषाओं (ग्रीक, संस्कृत आदि) में रूपों और अपवादों का बाहुल्य था, किन्तु बाद की या आधुनिक भाषाओं में न तो उतने अधिक रूप मिलते हैं और न उतने अधिक अपवाद। साहित्यिक भाषा को देखकर कहा जाता है कि आज की हिन्दी कठिनता की ओर जा रही है किन्तु यह निर्णय एकांगी है, क्योंकि साहित्यिक भाषा कृत्रिम भाषा है, स्वाभाविक नहीं। सामान्य बोलचाल की हिन्दी सरलता की ओर बढ़ रही है, हाँ अपनी आवश्यकता के अनुसार वह नई अभिव्यक्तियों को अवश्य ग्रहण कर रही है।

IX. भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता और अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की ओर जाती है – भाषा के विकास या इतिहास के विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भाषा आरम्भ में स्थूल थी किन्तु धीरे धीरे वह सूक्ष्म होती गई। उसने स्थूल से चलकर सूक्ष्म विचारों को व्यक्त करने की क्षमता प्राप्त कर ली। इस प्रकार वह धीरे धीरे स्थूल से सूक्ष्म बनती गई। भाषा जितनी ही पुरानी होगी उतनी ही प्रौढ़ होगी तथा उसमें सूक्ष्म भावों को व्यक्त करने की क्षमता अधिक होगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

X. भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाती है:– पहले लोगों का कहना था कि भाषा वियोग से संयोग की ओर जाती है। कुछ लोगों के अनुसार भाषा बारी–बारी से दोनों स्थितियों से गुजरती है। किन्तु अब इस मत को भ्रामक माना जाने लगा है। आधुनिक विद्वानों के अनुसार भाषा संयोग से वियोग की ओर जाती है। संयोग का अर्थ है मिली हुई। उदाहरण के लिए 'रामः गच्छति' में 'गच्छति' एक शब्द है जिसके लिए हिन्दी में 'जाता है' का प्रयोग होगा। यहाँ 'गच्छति' संयोगात्मक रूप है तो 'जाता है' वियोगात्मक। इसी प्रकार 'राम:' सयोगात्मक है तो 'राम ने' वियोगात्मक या 'रामस्य' संयोगात्मक तो 'राम का' वियोगात्मक है।

भाषा की परिभाषा

भाषा की व्याख्या करने से पहले हमारे सामने यह प्रश्न उठता है कि भाषा क्या है ? या फिर भाषा को कैसे परिभाषित किया जाये ? इस सन्दर्भ में विद्वानों एवं भाषा शास्त्रियों ने अलग–अलग परिभाषाएं दी हैं। इनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :–

पतंजलि मुनि के अनुसार "भाषा वह व्यापार है जिससे हम वर्णानात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं"।

भाषा वैज्ञानिक स्वीट (Sweet) महोदय के अनुसार "भाषा ध्वनियों द्वारा मानव के भावों की अभिव्यक्ति है"।

एक अन्य भाषा वैज्ञानिक इस परिभाषा का थोड़ा सा परिष्कार करके भाषा की परिभाषा निम्न ढंग से देते हैं :–

"भाषा मानव मस्तिष्क और हृदय की चेरी बनती हुई ध्वनि रूप में या लिपि रूप में विचारों और भावों की अभिव्यक्ति है।"

आटो जस्परसन (Otto Jesperson) के अनुसार "भाषा ऐसी मानवीय वृत्तियों का समूह है जिसका उद्देश्य है भाषा और विचारों की अभिव्यक्ति तथा दूसरों तक प्रसार।"

बनार्ड ब्लॉक एवं जार्ज ट्रेगर के मतानुसार –

"भाषा स्वेच्छागत वाक् – प्रतीकों की वह प्रणाली है जिसके द्वारा सामाजिक समूह परस्पर संगठित रहता है।"

श्री सीताराम चतुर्वेदी का मत है– "भाषा के आविर्भाव से सारा मानव संसार गूंगों की विराट बस्ती बनने से बच गया।"

अर्थात् भाषा विचाराभिव्यक्ति का प्रमुख साधन है।

सामान्य रूप से यह कहना उचित होगा कि विचारों और भावों की अभिव्यक्ति एवं पुनरावृत्ति ही भाषा है।

ऊपरलिखित परिभाषाओं का समन्वय करने से यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती है कि भाषा विचार–विनिमय का एक प्रमुख साधन है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाषा के रूप

मुख्य रूप से भाषा के दो रूप हैं – भाषा का ध्वनि रूप और लिपि रूप। इनमें से निश्चय ही भाषा का ध्वनि रूप प्रधान है और लिपि रूप गौण है। आज के वैज्ञानिक और सभ्य समाज में ध्वनि रूप और लिपि रूप-दोनों का ही पूर्ण रूप से महत्त्व है। ध्वनि रूप के अन्तर्गत हम एक दूसरे से बातचीत करते हैं, भाषण देते हैं, दूसरों को पढ़ाते हैं, किसी भी प्रकार की सभा में अपने विचारों को प्रकट करते हैं, एक दूसरे से प्रश्न पूछते हैं और फिर उनका मौखिक रूप से उत्तर देते हैं। दैनिक जीवन के प्रतिदिन के कार्यों को पूरा करने के लिये हम एक दूसरे से बातचीत करते हैं।

परन्तु दफतरों में और व्यापार केन्द्रों में और इसके साथ-साथ स्कूलों और महाविद्यालयों में, न्यायालयों में भाषा के लिपि रूप की आवश्यकता भी पूर्ण रूप से होती है। भाषा का ध्वनि रूप तभी उपयोगी हो सकता है जब वार्तालाप करने वाले आमने सामने हों। लेकिन जिनसे हम विचारों का आदान प्रदान करना चाहते हैं और यदि वे हमारे से दूर हों या अलग-अलग शहर या प्रान्त में रहते हैं तो ध्वनि रूप का सहारा लेना उचित व सार्थक नहीं हो सकता। हाँ थोड़ा बहुत टैलीफोन का प्रयोग सम्भव हो सकता है। लेकिन पूर्ण रूप से और सही ढंग से विचारों का आदान प्रदान करने के लिये लिपि रूप का ही प्रयोग करना पड़ता है। एक कवि अपनी कविता लिखता और लेखक अपनी कृति से सन्देश देना चाहता है। वे अपनी रचनाओं को पुस्तक के रूप में प्रकाशित करते हैं और असख्य लोग उन रचनाओं को पढ़ते हैं और प्रभावित होते हैं। विचार विनियम के लिये दोनों रूपों का होना आवश्यक है।

भाषा के दोनों रूपों को निम्न ढंग से दर्शाया गया है।

भाषा के दो रूप

भाषा व विचार अभिव्यक्ति

↓

भाषा का ध्वनि रूप	भाषा का लिपि रूप
जैसे- बोल चाल	जैसे पत्र व्यवहार
भाषण	लेख
टैलीफोन पर बातचीत	पुस्तक रचना
टेप	शिलालेख

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भाषा के आधार

हम पहले ही इस बात को स्पष्ट कर चुके हैं कि भाषा विचारों के आदान-प्रदान करने का सक्षम एवं सशक्त साधन है। लेकिन अब प्रश्न यह उठता है कि ये विचार कहाँ से आते हैं। इस बात का उत्तर स्पष्ट है कि ये विचार हमारे मन में आते हैं। मनुष्य के पास मनन और चिन्तन की शक्ति है। इसी मनन और चिन्तन की शक्ति के माध्यम से मनुष्य भाषा सीखने में समर्थ है। लेकिन पशु के पास सोचने की शक्ति नहीं है इस लिये वह भाषा हीन है।

हमारे मन में विचार उठते हैं और मानसिक शक्ति के आधार पर तर्क वितर्क का सहारा लेकर उनको अभिव्यक्त करते हैं। हम अभिव्यक्ति के लिये शरीर के अंगों को माध्यम बनाते हैं। अगर हमारे शरीर के अंग ठीक प्रकार से कार्य न करें तो हम भाषा का प्रयोग नहीं कर सकते। भाषा का सही ढंग से अभिव्यक्ति के लिये मुख्य रूप से दो साधन हैं। इन साधनों को हम आधार भी कह सकते हैं।

भाषा के दो सशक्त आधार

1. मानसिक आधार (Mental Basis)
2. भौतिक आधार (Physical Basis)

1. मानसिक आधार – मानसिक आधार में मुख्य रूप से दो बातें आती हैं। पहली बात है मन में विचारों का पैदा होना और इन विचारों के बिना भाषा का कोई अस्तित्व नहीं जैसे पशुओं के लिये भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है क्योंकि वे विचार हीन हैं। दूसरी बात है मानसिक प्रक्रिया और क्रिया जिनके द्वारा हमारा सोचना-विचारना, पढ़ना लिखना। हमारे विचार भाषा की आत्मा एवं सशक्त साधन व आधार हैं। शरीर के अंगों से ध्वनित होने वाली ध्वनियां तो विचारों को प्रकट करने के लिये केवल मात्र माध्यम हैं।

2. भौतिक आधार – ध्वनियां भाषा का शारीरिक व भौतिक आधार। बोलने वाले के लिये मुख और सुनने वाले के लिये कान आधार हैं। भाषा के लिखित रूप के लिये हमारे हाथ भौतिक आधार बनते हैं। इस लिये भाषा की शिक्षा देने हेतु और प्राप्त करने हेतु दोनों आधारों का त्रुटि रहित होना अत्यन्त आवश्यक है।

भाषा का कार्य
(Functions of language)

भाषा केवल दूसरों के पास संवाद भेजने या वार्तलाप करने का साधन नहीं, अपितु संवाद और वार्तालाप के लिये सामग्री उपलब्ध कराने का भी महत्त्वपूर्ण साधन है। भाषा विचारों को व्यक्त तो करती ही है, अपितु उसके साथ-साथ विचारों के उत्पादन का मूल आधार भी है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जैसे

1. हम सोचते हैं।
2. हम कल्पना करते हैं।
3. हम चीजों को पहचानते हैं।
4. हम बातों और चीजों को स्मरण रखते हैं।

ऊपरलिखित जितनी भी क्रियाएं हैं ये सभी शब्दों पर निर्भर करती हैं। उदाहरण के रूप में हम किसी मनुष्य, पेड़-पौधे या पर्वत को तब तक नहीं जान सकते, जब तक हमें उसका नाम का न पता हो। इस लिये यह कहना सार्थक और उचित होगा कि किसी भाषा पर अधिकार होने का अर्थ है उस भाषा का प्रसंगानुकूल प्रयोग में सक्षम होना। इस भाषा कुशलता की क्षमता को प्राप्त करने से अनेक लाभ हैं – जैसे

1. उस भाषा में जो कुछ ज्ञान का भण्डार है, वह अपना हो जाता है। अर्थात् इच्छानुसार अध्ययन करने की क्षमता प्राप्त हो जाती है।
2. मन सुन्दर उत्कृष्ट तथा उपयोगी, विचारों, भावनाओं और प्रेरणाओं से प्रेरित होता है।
3. मानसिक और बौद्धिक विकास होता है। व्यक्ति की कार्य क्षमता बढ़ाने के लिये भाषा का कुशल प्रयोग अत्यन्त अनिवार्य है।
4. भाषा-प्रयोग की कुशलता से मनुष्य के परिचित शब्दों की शब्दावली में वृद्धि हो जाती है। शब्द ही विचार के वाहन होते हैं। शब्दों के बिना कोई सोच नहीं सकता। शब्दों के मेल से वाक्य बनता है। हमारा दैनिक जीवन में सोचना विचारना वाक्य पर निर्भर करता है। इस लिये शब्दों के बिना चिन्तन और मनन नहीं हो सकता। जो मनुष्य न्यून शब्दावली से ही सन्तुष्ट हो जाता है, उसे न्यून विचारों से भी सन्तुष्ट रहना पड़ेगा और उसे अपने साधारण विचारों को भी दूसरों तक पहुंचाने में कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। हमारे शब्द ही अमूर्त विचारों को मूर्त बनाते हैं।

भाषा मनोवैज्ञानिक अपनी गहन खोजों के बाद इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि किसी मनुष्य की शब्दावली उसकी बौद्धिकता का सच्चा प्रतीक है। जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये मनुष्य के शब्दाभंडार में लगातार वृद्धि का होना आवश्यक है।

भाषा प्रयोग में कुशलता का अर्थ

भाषा में योग्यता प्राप्त करने से बढ़कर कोई अन्य कौशल (हुनर) नहीं है। भाषा में योग्यता प्राप्त करने से तात्पर्य है :-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1. अच्छी तरह से सुनना,
2. अच्छी तरह समझना,
3. अच्छी तरह पढ़ना,
4. अच्छी तरह बोलना,
5. अच्छी तरह लिखना।

निष्कर्ष रूप में भाषा के मौखिक तथा लिखित रूपों का सन्तुलित विकास ही भाषा की कुशलता है। इस प्रकार भाषा-ज्ञान के दो भागों में सन्तुलित ढंग से समन्वय होना चाहिये।

(क) भाषा के मौखिक रूप के माध्यम से अर्थ करने एवं विचारों को अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास करना।

(ख) भाषा के लिखित रूप के माध्यम से अर्थ ग्रहण करने एवं विचारों को अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास करना।

भाषा-ज्ञान और भाषा कुशलता ऐसे साधन हैं, जिनके द्वारा मनुष्य अपने विचार बोलकर या लिखकर दूसरों पर अधिक सरलता, सहजता, स्पष्टता, प्रभावोत्पादक ढंग तथा पूर्णता से प्रकट कर सकता है।

भाषा कुशलता ही मनुष्य की वास्तविक योग्यता, उसकी विद्वता और बुद्धिमता, उसके अनुशीलन, मनन् और विचारों की गम्भीरता, उसके गूढ़ उद्देश्य तथा उसके स्वभाव और सामाजिक स्थिति का परिचय देती है। हर किसी के व्यक्तित्व से सम्बन्ध रखने वाली इस प्रकार की सभी बातों का पता सहसा सभी लोगों को नहीं चलता। भाषा के विशेष ज्ञाता और पारखी ही ये सब बातें समझ सकते हैं और दूसरों के उद्देश्यों को जानने का सफल प्रयत्न कर सकते हैं। भाषा का प्रभाव बहुत अधिक होता है और उसके उत्कृष्ट ज्ञान का फल भी उतना ही अधिक होता है।

भाषा के लाभ

1. भाषा के माध्यम से मनुष्य समाज में अपना चिंतन प्रकट कर अपने व्यक्तित्व की अभिव्यंजना करता है।
2. भाषा के माध्यम से ही किसी देश और भाषा के प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन संभव हो सकता है।
3. भाषा के द्वारा ही साहित्य-सृजन संभव है। कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि रूप भाषा की ही देन है।
4. सम्पूर्ण विश्व के लोग एक दूसरे की भाषा को पढ़कर, समझकर, एक दूसरे की सभ्यता और संस्कृति को समझते हैं जिससे मानव-समाज में परस्पर सम्बन्ध स्थापित होते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5. मनुष्य की कल्पना एवं चिन्तन शक्ति भाषा के माध्यम से ही मुखरित होती है।

भाषा की विशेषता

1. व्यक्तित्व की पहचान – भाषा व्यक्ति के व्यक्तित्व की पहचान है। किसी भी व्यक्ति का सुन्दर रूप देखकर हम प्रभावित होते हैं। इसी प्रकार सुन्दर ढंग से सुन्दर वस्त्र धारण करने वाला व्यक्ति भी दूसरों को प्रभावित करता है। लेकिन व्यक्ति की वास्तविक पहचान तभी हो सकती है जब वह बोलता है। शुद्ध और प्रभावपूर्ण शब्दावली का प्रयोग कर, अवसर के अनुकूल उचित शब्दों का व्यवहार में प्रयोग कर मनुष्य अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ता है।

2. समृद्ध और शुद्ध शब्दावली – प्रायः देखा गया है कि विद्यार्थियों का शब्द भण्डार जितना समृद्ध होगा वे अपने विषय को उतनी ही तत्परता से सीखते हैं, समझते हैं और उसे धारण कर ज्ञानार्जन करते हैं। परीक्षा में अधिकतम अंक प्राप्त करने के लिये भाषा का शुद्ध होना बहुत आवश्यक है। वे अपने अध्यापक, वर्ग, सहपाठियों और समाज के अन्य वर्गों के लोगों को अपनी प्रभावशाली भाषा से प्रभावित करते हैं। जो मनुष्य भाषा से निर्धन है वह समाज में उचित सम्मान व स्थान प्राप्त नहीं कर सकता। बार-बार एक ही प्रकार की शब्दावली के प्रयोग से नीरसता आ जाती है और सुनने व पढ़ने वाला व्यक्ति ऊबने लगता है। इस लिये शब्द-भण्डार का व्याम्पक, सशक्त और समृद्ध होना आवश्यक है।

3. भाषा की परिवर्तनशीलता – भाषा स्थाई न होकर परिवर्तनशील होती है। भाषा का रूप सदैव एक जैसा नहीं रहता। कालान्तर के साथ-साथ भाषा में परिवर्तन होता रहता है। लेकिन यह परिवर्तन बहुत धीमी गति से होता है। वैदिक संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिन्दी भाषा इस परिवर्तन की देन है। देश और काल के अनुसार भी भाषा के रूप में परिवर्तन होता है और यह परिवर्तन भाषा में विकास माना जाता है। संस्कृत में प्रयुक्त शब्द अग्नि, सत्य, रात्रि, क्षेत्र आज हिन्दी में क्रमशः आग, सच, रात और खेत के रूप में बिगड़ गये हैं या परिवर्तित हो गये हैं या विकसित हो गये हैं।

भाषा की ऊपरलिखित प्रमुख विशेषताओं के अतिरिक्त कुछ अन्य विशेषताएं हैं जो निम्नलिखित हैं।

(1) केवल मनुष्य के मुख से उच्चरित रूप को ही हम भाषा कहते हैं।

(2) भाषा की रचना विभिन्न ध्वनियों के संयोग से होती है।

(3) विभिन्न ध्वनियों के संयोग से बनने वाले सार्थक शब्द ही भाषा की रचना करते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(4) भाषा के ये शब्द 'प्रतीकात्मक' (ध्वनि प्रतीक) होते हैं जो किसी वस्तु के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं।

(5) संसार के हर भाषा-भाषी के लिये 'वस्तु' तथा उसका 'अर्थ' तो एक ही रहता है, अन्तर केवल 'ध्वनि प्रतीक' अभिव्यक्ति के स्तर पर होता है।

(6) हर भाषा की अपनी एक व्याख्या होती है और इसके अपने नियम और सिद्धान्त भी होते हैं।

(7) भाषा का मुख्य उद्देश्य होता है – विचारों का आदान प्रदान करना, चाहे यह आदान प्रदान मौखिक रूप में हो या फिर लिखित रूप में हो।

(8) विचारों का आदान-प्रदान समाज में ही सम्भव है, इस लिये भाषा सामाजिक व्यापार है।

भाषा विविध रूपों में

भाषा के व्यावहारिक दृष्टि से अनेक रूप हैं। इन सभी रूपों की चर्चा निम्नलिखित है:-

1. मातृ-भाषा – मातृ-भाषा बालक अपने परिवार में रहते हुए अपनी माता, परिवार के अन्य सदस्यों, सम्पर्क में आने वाले अन्य व्यक्तियों और आस-पास के पड़ोस में रहने वाले व्यक्तियों का अनुकरण करके सीखता है। प्रारम्भ में बालक मातृ-भाषा सीखता है और बाद में मातृ-भाषा की सहायता से अन्य भाषाएं सीखता है। प्राय: बालक अपने क्षेत्र के व्यक्तियों के सम्पर्क में आते हैं और वे उनका अनुकरण कर क्षेत्रीय भाषा को सीखते हैं। इस दृष्टि से व्यक्ति की बोली, क्षेत्रीय भाषा अथवा विभाषा ही उसकी मातृ-भाषा होती है। लेकिन शिक्षा जगत में मातृभाषा का अर्थ और अधिक व्यापक रूप में लिया जाता है। व्यापक अर्थ में किसी व्यक्ति की मातृ-भाषा वह भाषा होती है जिसे वह जन्म से सीखना आरम्भ करता है और आगे चलकर अपने से बड़े शिक्षित व्यक्तियों का अनुकरण करके अथवा शिक्षण संस्था में अध्ययन करके अपने गुरूजनों से उसके सर्वमान्य रूप को सीखता है। इस दृष्टि से अगर हम देखें तो हिन्दी दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर-प्रदेश, मध्य प्रदेश और बिहार में रहने वाले व्यक्तियों की मातृभाषा है। शिक्षण के सन्दर्भ में हिन्दी मातृ-भाषा के रूप में समृद्ध भाषा है। मातृ-भाषा का ज्ञान अन्य भाषाओं को सीखने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। मातृ-भाषा किसी भी मनुष्य के चिन्तन और मनन की नींव होती है।

2. मूल-भाषा – मूल भाषा उस भाषा को कहते हैं जो भाषा-परिवार की आदि भाषा होती है और बाद में अनेक भाषाओं को जन्म देती है। इस लिये भाषा के विद्वान इसे 'मूलभाषा' कहते हैं। उदाहरण के तौर पर उत्तरी भारत की आर्य भाषाओं की मूल-भाषा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वैदिक संस्कृत है। किसी की भाषा के वैज्ञानिक ज्ञान की प्राप्ति के लिये उसकी मूल-भाषा का जानना बहुत आवश्यक होता है।

3. संस्कृति-भाषा – इस भाषा में किसी भी देश की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति निहित होती है। यह भाषा प्राचीन आचार विचार, जीवन मूल्यों और ज्ञान का भण्डार होती है। इस दृष्टि से संस्कृत हमारी मूल भाषा है। अगर हम भारत की प्राचीन संस्कृति को गहनता से जानना चाहते हैं तो हमारे लिये संस्कृत भाषा का अध्ययन करना आवश्यक है। इसी प्रकार यूरोप की प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं की ज्ञान प्राप्ति के लिये ग्रीक और लैटिन भाषा का अध्ययन आवश्यक है।

4. राज-भाषा (प्रादेशिक भाषा) – राजनैतिक दृष्टि से किसी राज्य व प्रदेश का शासन कार्य जिस में भाषा में होता है उसे राज्य की राज भाषा या प्रादेशिक भाषा कहते हैं। व्यापक दृष्टि से देश हित में देखें तो मातृ-भाषा, राज भाषा और राष्ट्र भाषा में कोई अन्तर नहीं होता लेकिन हमारे देश में अनेक भाषाएं हैं और भिन्न-भिन्न राज्यों की भिन्न-भिन्न भाषाएँ हैं। उन राज्यों की मातृ भाषा ही राज-भाषा अथवा प्रादेशिक भाषा है। भाषा विवाद और जटिलता को समाप्त करने के लिये ऐसा करना उचित भी है। प्रत्येक व्यक्ति के लिये सक्रिय रूप से राज्य के कार्यों में योगदान देने के लिये राज भाषा का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

5. राष्ट्र-भाषा – जो भाषा किसी भी राष्ट्र के शासन कार्य की माध्यम बनती है उसे राष्ट्र-भाषा कहा जाता है। यह भाषा वह भाषा होती है जिसे राष्ट्र के अधिकांश व्यक्ति प्रयोग में लाते हैं। राष्ट्र-भाषा का प्रश्न उस देश में ही उठता है जिस देश में अनेक भाषाओं का प्रयोग होता हो। जैसे हमारा अपना भारत देश। भारत में राष्ट्र भाषा की बहुत बड़ी समस्या है। सैद्धान्तिक रूप से हिन्दी को राष्ट्र भाषा बना दिया गया है लेकिन व्यावहारिक रूप से अभी भी हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में सर्वमान्यता प्राप्त नहीं हुई है। राष्ट्र की एकता, अखंडता और सुदृढ़ता के लिये राष्ट्र-भाषा अवश्य होनी चाहिये। प्रत्येक नागरिक को अपने देश की राष्ट्र भाषा अवश्य सीखनी चाहिये।

6. अन्तर्राष्ट्रीय भाषा – जो भाषा संसार के सभी राष्ट्रों के विचारों के आदान प्रदान का माध्यम बनती है उसे अन्तर्राष्ट्रीय भाषा कहते हैं। विज्ञान की प्रगति के कारण राष्ट्रों की दूरियां कम हो गई हैं और संसार एक इकाई के रूप में बंध गया है। आज कोई भी राष्ट्र अपनी आवश्यकताओं को स्वतन्त्र रूप से पूरा नहीं कर सकता और यही कारण है कि एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से सम्बन्ध स्थापित किये बिना अपने स्वतन्त्र अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकता। एक दूसरे के सम्पर्क में आने के लिये और सम्बन्ध स्थापित करने के लिये भाषा की आवश्यकता होती है। आज अंग्रेजी ही एक ऐसी भाषा है जिसके माध्यम से विश्व के प्रायः सभी राष्ट्र विचार-विनिमय करते हैं। वर्तमान में अंग्रेजी ही अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अंग्रेजी भाषा को पूर्ण रूप से अन्तर्राष्ट्रीय भाषा होने का सौभाग्य और गौरव प्राप्त हुआ है। इस लिये आज हर राष्ट्र के लिये विज्ञान का ज्ञान प्राप्त करने के लिये अन्य देशों की संस्कृति और सभ्यता का ज्ञान प्राप्त करने के लिये अंग्रेजी का सीखना भी आवश्यकता बन गई है। लेकिन यह बात राष्ट्र के सभी नागरिकों पर लागू नहीं होती।

7. विदेशी भाषा –किसी भी राष्ट्र के लिये वो भाषा जो उस राष्ट्र की न तो मातृ-भाषा है और ना ही राज भाषा और राष्ट्र भाषा है उसे विदेशी भाषा कहते हैं। जैसे हमारे देश के लिये जर्मनी, रुसी, जापानी, चीनी और फ्रेंच आदि भाषाएं विदेशी भाषाएं हैं। इसके अतिरिक्त हमारे देश में प्रयोग में आने वाली अन्य कुछ भाषाएं अरबी, फारसी और अंग्रेजी भी विदेशी भाषाओं के अन्तर्गत आती हैं क्योंकि इनका सम्बन्ध हमारे देश की किसी भी मूल भाषा, सांस्कृतिक-भाषा अथवा मातृ भाषा से नहीं है। लेकिन इनका ज्ञान भी यथा आवश्यकता के अनुसार प्राप्त करना हितकर है लेकिन अनिवार्य नहीं है। प्राय: प्रतिभावान व्यक्ति इन भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं और इन भाषाओं के ज्ञान-विज्ञान और साहित्य की पुस्तकों का हमारे राष्ट्र की मातृ-भाषाओं और राष्ट्र-भाषा में अनुवाद करते हैं जिससे राष्ट्र के अन्य नागरिक भी अपना ज्ञानार्जन कर सकें।

भाषा का स्वरूप

मनुष्य के लिये भाषा भावों विचारों और अनुभवों को प्रकट करने के लिये सशक्त सांकेतिक साधन है। मनुष्य यह भाव प्रकाशन अनेक प्रकार से कर सकता है जैसे हाथ-पैर, आंख, नाक, सिर, भौंह आदि का प्रयोग करके या फिर वस्तु अथवा चित्र के द्वारा, क्रियाओं के माध्यम से भिन्न-भिन्न ध्वनि संकेतों की सहायता से। व्यापक अर्थ में इन भाव प्रकाशन के सभी साधनों को भाषा कहा जा सकता है। लेकिन इन सभी साधनों में ध्वनि संकेतों द्वारा पूर्ण रूप से अभिव्यक्ति की जा सकती है और शरीर के अन्य अंगों के संचालन के माध्यम से पूर्ण और स्पष्ट रूप से अभिव्यक्ति सम्भव नहीं है। इस लिये आज के युग में अधिकांश शिक्षाविद और भाषा शास्त्री विचारों, भावों और अनुभवों को प्रकट करने के लिये ध्वनि संकेतों को ही भाषा का नाम देते हैं।

इस संसार में सभी प्राणी किसी न किसी रूप में अपने भाव प्रकट करते हैं जैसे कुत्ते भौंक करके, घोड़े हिनहिना करके और शेर दहाड़ करके और हाथी चिंघाड़ करके। यह क्रिया किसी न किसी रूप में छोटे से छोटे जीव में भी देखी जा सकती है। परन्तु इन सभी ध्वनि संकेतों को भाषा का नाम नहीं दिया जा सकता। भाषा का सम्बन्ध विचार से है और यह विचार शक्ति ही मनुष्य को पशु से भिन्न मानती है और यही कारण है कि इस धरा पर पुरुष को सर्वश्रेष्ठ प्राणी माना जाता है। भाषा का शास्त्रीय दृष्टि से अर्थ-'विचार की अभिव्यक्ति के लिये समाज द्वारा सर्वमान्य ध्वनि संकेतों का व्यापार है।' इसका यह अर्थ नहीं लगाना चाहिये कि ध्वनि संकेतों की भाषा में अंग संचालन और भाव मुद्राओं को कोई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्थान नहीं है। क्योंकि अभिव्यक्ति की स्पष्टता और प्रभावपूर्णता के लिये इनका प्रयोग एक स्वाभाविक क्रिया है।

व्यावहारिक रूपों से हम देखें तो भाषा का प्रयोग कई अर्थ में और कई ढंग से होता है। वाणी को भी भाषा का नाम दिया जाता, जैसे- गूंगे को हम भाषा हीन कहते हैं। वाणी की दृष्टि से देखा जाये तो उनकी कोई भाषा नहीं होती। सामान्य बोलचाल को भी भाषा कहा जाता है। जैसे हम कहते हैं कि संसार में अनेक भाषाएं हैं। बोली को भी भाषा की संज्ञा दे देते हैं। जिस प्रकार से बुन्देल खंड में बोली जाने वाली बोली को बुन्देली भाषा कह देते हैं। इसी प्रकार मातृ-भाषा और विदेशी भाषा, प्रान्तीय भाषा, राज भाषा और विदेशी भाषा, अन्तर्राष्ट्रीय भाषा- इन सभी के लिये भाषा का प्रयोग किया जाता है। परन्तु भाषा सैद्धान्तिक दृष्टि से – 'कई विभाषाओं में सर्वमान्य व्यवहार में होने वाली एक शिष्ट परिगृहीत विभाषा ही भाषा कहलाने का अधिकार रखती है'। उदाहरणतया हिन्दी भाषी क्षेत्रों में अनेक बोलियां (क्षेत्रीय भाषाएं अथवा विभाषाएं) बोली जाती हैं, जैसे कि ब्रज, अवधी, बुन्देली, भोजपुरी, मैथिली, कन्नौजी, छत्तीसगढ़ी, वांगुरी और खड़ी बोली आदि। मानक भाषा और शास्त्रीय दृष्टि से केवल खड़ी बोली को ही सही रूप से भाषा की संज्ञा दी जाती है। जबकि क्षेत्रीय भाषाओं को अपने-अपने क्षेत्रों में पूरी मान्यता प्राप्त होती है फिर भी लिखित रूप में 'भाषा' को ही मानक भाषा का रूप दिया जा सकता है।

भाषा के स्वरूप को समझने के लिये भाषा की परिभाषा के अन्तर्गत हम यह जान चुके हैं कि भाषा विचार विनिमय का प्रमुख साधन है। विचार विनिमय का अर्थ है- विचारों का आदान-प्रदान। इस बात को हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि दूसरे के विचारों को ग्रहण करना और अपने विचारों को दूसरों के समक्ष प्रस्तुत करना ही विचार विनिमय कहलाता है। इस प्रकार विचार विनिमय में दो बातें स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं – (1) विचार ग्रहण की क्षमता और (2) विचाराभिव्यक्ति की योग्यता।

समाज के व्यक्तियों में प्रखर बुद्धि एवं एकाग्रता जितनी अधिक होगी उनमें विचार ग्रहण की तीव्रता एवं सबलता उतनी ही अधिक होगी। ठीक इसी प्रकार कल्पना शक्ति की प्रबलता एवं भाषा की योग्यता विचारों की सुन्दर, समुचित एवं स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिये आवश्यक है। विस्तार से विश्लेषण करने पर यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती है कि कोई भी व्यक्ति दूसरों के विचारों को दो प्रकार से ग्रहण कर सकता है – पढ़कर और सुनकर। इसी प्रकार अपने विचारों की अभिव्यक्ति भी दो प्रकार से करता है – बोलकर और लिखकर। जैसा कि हम पहले पढ़ चुके हैं कि कभी-कभी विचाराभिव्यक्ति संकेतों द्वारा भी की जाती है परन्तु भाषा शिक्षण में सांकेतिक भाषा का महत्त्व नहीं होता। स्काऊटिंग वगैरह में इसका प्रयोग अधिक होता है। भाषा का स्वरूप निर्धारित करने की दृष्टि से हमारा सम्बन्ध भाषा के केवल उन रूपों से है जो सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने की क्रियाओं पर आधारित हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपरलिखित बातों का संश्लेषण किया जाये तो हम देखेंगे कि किसी बात को सुनकर अर्थ ग्रहण करने एवं बोलकर अभिव्यक्त करने में भाषा के जिस स्वरूप का प्रयोग होता है उसे मौखिक भाषा कहा जाता है। इसी प्रकार किसी बात को पढ़कर उसका अर्थ ग्रहण करना तथा लिखकर अभिव्यक्त करना भाषा के लिखित रूप के अन्तर्गत आता है। जब भाषा के इन दोनों रूपों का प्रयोग न करके किसी बात को संकेतों द्वारा समझाया जाता है तब हम उसे सांकेतिक भाषा कहते हैं। इस प्रकार भाषा के तीन रूप हुए : (1) मौखिक (Oral), (2) लिखित (Written), (3) सांकेतिक (Gestures)। यहां पर हम भाषा के केवल मौखिक और लिखित रूप का ही उल्लेख करेंगे, सांकेतिक का नहीं। भाषा के स्वरूप को तालिका के माध्यम से प्रदर्शित किया जा सकता है।

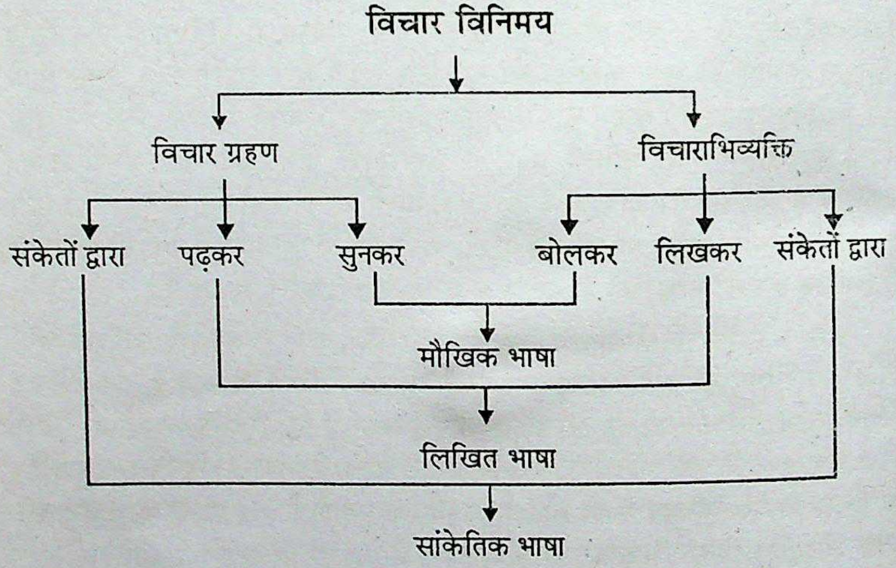

भाषा का महत्त्व

इस संसार में अनेक प्राणी हैं और उनमें पशु–पक्षी और कीट–पतंग मनुष्य जाति से भी प्राचीन हैं। लेकिन प्रगति के पथ पर मनुष्य ही अग्रसर हुआ है और आगे भी ऐसे ही होगा। प्रश्न उठता है कि मनुष्य में ऐसी वो कौन सी शक्ति है जिसके कारण वह अग्रसर हो रहा है और इस धरा पर सर्वश्रेष्ठ प्राणी होने का उसे श्रेय प्राप्त है। वह शक्ति– विचार करने की शक्ति है। इस विचार शक्ति के आधार पर ही वह भाषा सीखने में सक्षम है और संसार के अन्य प्राणी भाषा हीन हैं। विचार प्रधान भाषा केवल मनुष्य ही सीख सकता है क्योंकि उसके पास सोच विचार करने की शक्ति है। इस शक्ति के आधार पर मनुष्य जाति अपने पूर्वजों के भाव, विचार तथा अनुभवों का अनुकरण करके उन्हें स्थाई रूप देने और सुरक्षित रखने में समर्थ हुई है। लिपि का वरदान पाकर तो हमारी भाषा में स्थिरता और स्थाई रूप आ गया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाषा और विचार का अटूट सम्बन्ध है। इन दोनों पक्षों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। इन दोनों पक्षों का सम्बन्ध सिक्के के दो पहलुओं के समान है। सोच विचार भाषा के माध्यम से ही सम्भव है। स्पष्ट विचारों के लिये भाषा अनिवार्य है। विचारों से ही ध्वनियां मुखरित होती हैं और विचार ध्वनियों से उत्पन्न होते हैं। मनुष्य के पास ही भाषा शक्ति है। संसार के किसी अन्य प्राणी के पास वह शक्ति नहीं है। इसी कारण वे विचार नहीं कर सकते और भाषा से वंचित हैं।

आज के भौतिक युग में ज्ञान विज्ञान के साधनों का प्रसार और नये-नये आविष्कार विचार शक्ति से ही सम्भव हो सके हैं। विचार की यह क्रिया एक दिन में पूरी नहीं हुई है और न ही एक काल में पूरी हुई है, इसमें तो आदि काल से लेकर आज तक का समय लगा है। मनुष्य ने अपने पूर्वजों के भाव, विचार और अभिव्यक्तियों को भाषा के माध्यम से प्राप्त किया, उसमें अपने भाव, विचार और महत्त्वाकांक्षाओं को जोड़ा और अगली पीढ़ी तक पहुंचा दिया। इस प्रकार विचारों में परिमार्जन, परिवर्तन और परिवर्द्धन होता रहा। यही कारण है कि हम आज प्रगति के पथ पर अग्रसर हैं। हमारा समस्त ज्ञान और विज्ञान भाषा के द्वारा ही सुरक्षित है। इस लिये यह कहना उचित होगा कि भाषा मानव विकास की आधार-शिला है।

भाषा के विविध रूपों में सबसे अधिक महत्त्व मातृ-भाषा का होता है। मनुष्य जिस समाज में जन्म लेता है प्रारम्भ में उसी की भाषा सीखता है। वह दूसरों से इस भाषा में विचार विमर्श करता है और अपने भावों की अभिव्यक्ति सहज और स्वाभाविक ढंग से करता है। उसके पूरे व्यक्तित्व का विकास मातृ-भाषा पर निर्भर करता है। किसी भी राष्ट्र के नागरिकों को अपनी मातृ-भाषा का ज्ञान अवश्य ही होना चाहिये। मातृ-भाषा के बाद देश की राष्ट्र भाषा का ज्ञान और बाद में अन्य भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये। आज के युग में एक दूसरे के भाव, विचार और अनुभवों से अवगत होने के लिये हमें एक-दूसरे की भाषा सीखना आवश्यक है। जिस व्यक्ति का अधिक से अधिक भाषाओं पर अधिकार होगा वह उतना ही अधिक सामाजिक होगा।

मातृ भाषा का अर्थ

कुछ विद्वानों के अनुसार मातृ भाषा का शाब्दिक अर्थ – मातृ + भाषा = माता से सीखी हुई भाषा है। लेकिन यह बहुत संकुचित अर्थ है। आंग्ल भाषा के विद्वान लेखक श्री वेलार्ड के अनुसार माता से सीखी हुई भाषा तथा समाज से सीखी हुई भाषा मातृ-भाषा कहलाती है। मातृ-भाषा से हमारा तात्पर्य भाषा के उस व्यापक रूप से है जो एक संकुचित सीमा में न होकर उस क्षेत्र या समाज में व्यापक रूप से बोली जाती है। अतः मातृ भाषा का अर्थ केवल माता से सीखी जाने वाली भाषा न होकर क्षेत्र विशेष में बोली जाने वाली भाषा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विस्तृत अर्थ में यह कहना उचित होगा कि मातृ भाषा किसी क्षेत्र विशेष की उस भाषा को कहा जाता है जिसमें उस क्षेत्र के रहने वाले सभी व्यक्ति मौखिक या लिखित रूप से विचारों का आदान प्रदान करते हैं।

स्वाभाविक अभिव्यक्ति के आधार पर यह कहा जा सकता है कि बालक को 105 या 106 डिग्री बुखार हो और उस समय बेसुध हालत में जिस भाषा में वह बुदबदाये वो भाषा उस बालक की मातृ भाषा होगी।

मातृ भाषा शिक्षण का महत्त्व

हम इस बात पर पहले ही विचार कर चुके हैं कि भाषा शिक्षा का माध्यम है। वैसे तो शिक्षा का माध्यम कोई भी भाषा हो सकती है लेकिन बालक नई बातों को अपनी मातृ भाषा के माध्यम से जितनी जल्दी स्वाभाविक ढंग और सहजता से समझ सकते हैं उतनी जल्दी अन्य भाषाओं के माध्यम से नहीं समझ सकते। वास्तव में सभी देशों में अन्य भाषाओं की अपेक्षा मातृ भाषा का स्थान सर्वोपरि होता है। मातृ भाषा ही वह भाषा है जिसके द्वारा व्यक्तित्व का पूर्ण विकास सम्भव होता हैं। इस लिये विद्यालयों में मातृ भाषा की शिक्षा देना परमावश्यक है। पूर्वी पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और दिल्ली में हिन्दी मातृ-भाषा है और साथ ही साथ भारत की राष्ट्र भाषा एवं सम्पर्क भाषा भी है। विदेशों में हिन्दी को विदेशी भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है। समस्त भारत में हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में पढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है परन्तु हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों में (प्रदेशों में) हिन्दी मातृ भाषा के रूप में पढ़ाई जाती है। मातृ भाषा समस्त भाषाओं में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होती है क्योंकि यह बालक की प्रथम और पालने (Cradle) की भाषा होती है। हिन्दी भाषा-भाषी प्रदेशों में हिन्दी का महत्त्व बहुत अधिक है। मातृ भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण का महत्त्व निम्नलिखित गुणों के कारण और भी अधिक बढ़ जाता है।

1. ज्ञानोपार्जन का सरलतम माध्यम : बालक अपने आस-पास के निकटतम वातावरण में रहते हुए बहुत कुछ सीखता है। विद्यालय में जाने से पहले ही मातृ भाषा से सम्बन्धित बहुत से शब्दों का ज्ञान हो जाता है। इन शब्दों को वह भली-भांति ग्रहण एवं अभिव्यक्त कर सकता है। छोटे-छोटे वाक्यों द्वारा अपने भावों, विचारों और आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति करना भी सीख जाता है। उसे किसी बात का समझना और बोलना आ जाता है लेकिन पढ़ना और लिखना नहीं। बालक को लिखना और पढ़ना सिखाने के लिये हमें मातृ भाषा शिक्षण की आवश्यकता पड़ती है। यहाँ एक प्रश्न उठता है कि बालक को किस भाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाये कि वह नई बातों को सरलता से समझ ले ? इस प्रश्न का उत्तर सभी से यही मिलेगा कि मातृ भाषा सरलतम है जिसके बारे में वह मौखिक रूप से जाने-अनजाने में अपने निकटतम वातावरण में थोड़ा बहुत सीख चुका है। इस लिये मातृ भाषा के माध्यम से शिक्षा देना सरलतम है। इसके मुख्य रूप से दो कारण हैं। जो अग्रलिखित हैं :-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(1) एक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त है कि किसी बात को भुलाकर कोई अन्य बात सीखना इतना सरल नहीं होता जितना कि एक नई बात को सीखना या सिखाना। क्योंकि जिस भाषा को बालक बचपन से ही सीखता चला आया है उसी के माध्यम से किसी बात का सीखना और समझना जितना सरल है उसी बात को दूसरी भाषा के माध्यम से समझना उतना कठिन है।

(2) अर्थ ग्रहण और अभिव्यक्ति के मौखिक रूप की शिक्षा बालकों को मातृ भाषा के माध्यम से बचपन से मिलती रहती है। अध्यापक को केवल लिखने और पढ़ने पर विशेष ध्यान देना होता है।

2. बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास : मातृ भाषा को शिक्षा के माध्यम का आधार बना कर चलना चाहिये। इससे बालकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास सम्भव हो सकेगा। बालकों के सर्वांगीण विकास के अन्तर्गत उनका (1) शारीरिक विकास (2) मानसिक (3) सामाजिक (4) भावात्मक (5) नैतिक और (6) सांस्कृतिक विकास होने लगता है। इन सभी उपशीर्षकों की व्याख्या निम्न है।

(1) शारीरिक विकास – शरीर के स्वस्थ रखने के लिये पौष्टिक भोजन, गहरी नींद और चित्त की प्रसन्नता बहुत आवश्यक है। बालक रात को सोने से पहले अपनी मां को कहानी सुनाने के लिये कहते हैं। यह आवश्यक या सम्भव नहीं हर मां जो कहानी सुनाती है वह शिक्षित ही हो, किन्तु मातृ भाषा के माध्यम से अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सकती है। बालक इन कहानियों को सुन कर बहुत प्रसन्न होते हैं। बड़े होने पर उस भाषा के साहित्य को पढ़ते हैं जिसमें वे बचपन में कहानी सुनते थे और मातृ भाषा में रचित साहित्य उनके जीवन की समस्याओं को सुलझाने में सहायक सिद्ध होता है।

(2) मानसिक विकास – मानसिक व बुद्धि से सम्बन्धित विचारों से सभी विद्वान एक मत नहीं हैं। कुछ के विचार में बुद्धि वशंगत होती है अर्थात् बुद्धिमान माता पिता का बालक भी बुद्धिमान ही होगा। परन्तु हमेशा ऐसा देखने में नहीं आता। दूसरे विद्वानों का यह कहना है कि बुद्धि को प्रभावित करने में वातावरण की भूमिका अधिक होती है। अच्छे वातावरण में रहकर बालक का मानसिक विकास होता है और प्रतिकूल वातावरण में मानसिक विकास में बाधा आती है। भाषा विचारों के विकास में सहायक होती है क्योंकि बालक भाषा में ही सोच विचार करता है और बातों को समझने का प्रयास करता है। परन्तु सभी भाषाओं में कही हुई बातों को सरलता से समझ लेता है जो उसे अपनी मातृ भाषा में सुनने को मिलती हैं। इस लिये यह कहा जा सकता है कि मातृ भाषा बालकों के मानसिक विकास में सहायक है।

(3) सामाजिक विकास – मनुष्य इस धरा पर सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। क्योंकि उसके पास सोचने समझने की शक्ति है। इसी लिये उसे सामाजिक प्राणी कहा जाता है। उसका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अस्तित्व समाज में ही सम्भव है। वह समाज का अंग है। वह समाज के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति और समस्याओं का समाधान करता है। अपनी समस्याओं के समाधान हेतु वह दूसरों से विचारों का आदान प्रदान करता है। विचारों का आदान प्रदान किसी भाषा के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है। परन्तु अनजान भाषा के माध्यम से ऐसा नहीं हो सकता। विचारों के आदान-प्रदान के लिये तो वही भाषा उचित होगी जिसे विचार विनिमय करने वाले सरलता से समझ सकते हों। मातृभाषा ही एक ऐसी भाषा है जिसे किसी भी समाज के सभी व्यक्ति बोल सकते हैं और दूसरों को सुनकर समझ सकते हैं। इस प्रकार दूसरों से सहायता लेने, उनको सहयोग देने में सामाजिकता की भावना का निरन्तर विकास होता रहता है। इस विकास में मातृ भाषा का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। मातृ भाषा के प्रति बालक का प्रेम स्वाभाविक होता है। क्योंकि यह भाषा पालने की (Language of Cradle) होती है। उसका यह प्रेम किसी भी लिखित विषय को पढ़ने और समझने में अधिक से अधिक रूचि पैदा करता है। इससे उसके मानसिक विकास के साथ-साथ सामाजिक कुशलता का भी विकास होता है।

(4) भावात्मक विकास – यह बात अनुभव के आधार पर सर्वविदित है कि एक ही भाषा के बोलने वालों में जितना पारस्परिक प्रेम की भावना का विकास होता है उतना भिन्न-भिन्न भाषाओं के बोलने वालों में नहीं होता। ऐसा होना स्वाभाविक भी है क्योंकि बालक को जितना प्यार अपने भाई बहनों से होता है उतना आस पड़ोस के बालकों से नहीं होता। जितना आस पड़ोस के बालकों से होता है इतना मोहल्ले के सभी बालकों से नहीं होता। कहने का तात्पर्य यह है कि सम्बन्धों में जितनी दूरी बढ़ती चली जायेगी उतनी ही स्वाभाविक प्रेम में कमी होती चली जायेगी। ठीक इसी प्रकार बालकों या व्यक्तियों का मातृभाषा के प्रति जितना प्रगाढ़ प्रेम होता है उतना अन्य भाषाओं के प्रति नहीं होता। यही कारण है कि यदि हम एक ऐसे स्थान पर पहुंच जाएं जहां के व्यक्ति हमेशा भिन्न भाषा बोलने वाले हों, वहां पर सौभाग्य से यदि एक भी ऐसा व्यक्ति मिल जाये जो हमारी भाषा में बोल सकता हो तो हम उसके साथ ऐसे प्रेम से बातें करते हैं जैसे कि वह हमारा अभिन्न अंग हो। एक भाषा-भाषी व्यक्तियों के बीच उनकी मातृभाषा सहानुभूति, सद्भावना और भावात्मक एकता का प्रतीक है। मातृ भाषा भावात्मक एकता का सर्वश्रेष्ठ साधन है।

(5) नैतिक विकास – आज सबसे बड़ी आवश्यकता बालकों में चारित्रिक और नैतिक विकास करने की है। यह तभी सम्भव हो सकता है जब शिक्षक या समाज उन बातों में करना चाहते हैं। शिक्षक और समाज के बड़े सदस्यों को बालकों के समक्ष अपना आदर्श रूप कथनी और करनी में प्रस्तुत करना होगा। दूसरी बात यह है कि शिक्षक बालकों को ऐसा साहित्य पढ़ने की प्रेरणा दे जिसके पढ़ने से बालकों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़े और उन्हें चरित्र निर्माण की शिक्षा मिले उनमें नैतिकता पूर्ण सद्गुणों का विकास हो। बालक अपने आस-पास के वातावरण में रहने वाले व्यक्तियों से जो बातें सुनता है,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
उनका भी बालक के चरित्र पर प्रभाव पड़ता है। दूसरे व्यक्तियों की अच्छी बातें सुनकर ग्रहण करने के लिये मातृभाषा बालक के नैतिक विकास में सशक्त साधन का कार्य करती है।

(6) सांस्कृतिक विकास – साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों ही एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसी लिये साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है। साहित्य में समाज के रीति रिवाज़ परम्पराएं, और आचार विचार निहित होते हैं। भली-भांति जीवन व्यतीत करने के लिये मनुष्य के लिये यह आवश्यक है कि वह समाज की इन परिपाटियों के गुण और दोषों से पूरी तरह से अवगत हो। इन सभी आवश्यक बातों को जानने के लिये हमें अपनी संस्कृति का जानना अत्यन्त आवश्यक है और इसके लिये हमें अपनी मातृभाषा का समुचित ज्ञान होना चाहिये। मातृ भाषा के माध्यम से ही हम सरलतम ढंग से संस्कृति के बारे में जान सकते हैं।

3. सरसता एवं पूर्णता की अनुभूति – बालक चाहे जितनी भाषाएं सीख ले किन्तु जीवन की सरसता एवं पूर्णता की अनुभूति उसे मातृभाषा ज्ञान के बिना नहीं हो पाती। इस लिये कोठारी आयोग (1964-66) ने यह सिफारिश की है कि बालक की सम्पूर्ण शिक्षा प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक मातृ भाषा के माध्यम से ही होनी चाहिये। एक विद्वान भाषा शास्त्री ने कहा है कि "मानव व्यक्तित्व की गत्यात्मकता भाषा के प्रभावोत्पादक प्रयोग पर ही निर्भर है और ये भाषा मातृ भाषा ही हो सकती है।"

4. शिक्षा का मुख्य आधार - हम देखते हैं कि साधारणतः मातृ भाषा (हिन्दी) को अन्य विषयों की भांति एक विषय मान लिया जाता है। परन्तु वास्तव में यह आधार भूत विषय है जिसके कुशलतापूर्वक अध्ययन और अध्यापन पर पूर्ण शिक्षा का परिणाम निर्भर करता है। सेम्पसन ने अंग्रजी भाषा के महत्त्व के बारे में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा है कि "साधारण अर्थ में अंग्रेजी (मातृभाषा) शिक्षण-विषय है ही नहीं, वो तो स्कूली जीवन का आधार है .... उसे शिक्षण-विषय कहने की अपेक्षा जीवन का अनिवार्य आधार ही कहना चाहिये।" हमारे देश के स्वतन्त्र होने के बाद मातृ भाषा का महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया है और देश के राजनैतिक नेता एवं शिक्षा-शास्त्री इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि मातृ भाषा को एक विषय के साथ-साथ शिक्षण का माध्यम भी होना चाहिये। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जिस विषय का अध्ययन किया जा रहा हो उसको प्रस्तुत करने में अध्यापक को और ग्रहण करने में बालकों को लेशमात्र भी प्रयास नहीं करना पड़ता। इस लिये पाठ्‌यक्रम में मातृभाषा एक आधार भूत विषय और माध्यम-दोनों रूपों में रखी जानी चाहिये। एक महान विद्वान ने मातृ भाषा शिक्षण को पाठ्‌यक्रम में प्रमुख स्थान देते हुए लिखा है "मातृ भाषा का सफल शिक्षण सम्पूर्ण शिक्षा का मुख्य आधार है।"

5. अभिव्यक्ति में स्वाभाविकता एवं प्रभावोत्पादकता का होना - मातृ भाषा के माध्यम से यदि पढ़ाया जाये तो शिक्षक के लिये विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण व स्पष्टीकरण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
सरल होता है। मातृ भाषा में अभिव्यक्ति स्वाभाविक और प्रभावोत्पादक ढंग से होती है। अन्य भाषा में विचारों को सही ढंग से ना समझने के कारण छात्र-छात्राओं की अभिव्यक्ति स्वाभाविक और प्रभावोत्पादक ढंग से होती है। अन्य भाषा में विचारों को सही ढंग से ना समझने के कारण छात्र-छात्राओं की अभिव्यक्ति स्वाभाविक और प्रभावोत्पादक ढंग से नहीं हो सकती। इस लिये मातृ भाषा ही सहज अभिव्यक्ति के लिये आधारभूत साधन बनती है।

6. ज्ञानोपार्जन का सशक्त साधन – हर व्यक्ति अपने आस-पास के निकटतम वातावरण से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा रखता है। इस कार्य के लिये केवल मात्र मातृ भाषा ही ऐसा साधन है जिससे उसे सहजता से इच्छित ज्ञान प्राप्त हो जाता है। विद्यालयों की प्रारम्भिक कक्षाओं में सभी विषय मातृ-भाषा के माध्यम से ही पढ़ाये जाते हैं। यदि बालक का मातृ भाषा का ज्ञान अधूरा है तो उसका प्रभाव समस्त विषयों के ज्ञान पर पड़े बिना नहीं रह पाता। समस्त विषयों की पुस्तकें मातृ भाषा में ही लिखी होती हैं। अतः मातृ भाषा ज्ञानोपार्जन का सक्षम एवं उत्तम साधन है। छात्र-छात्राएं मातृ भाषा में लिखी ज्ञान विज्ञान की पुस्तकें पढ़कर सहज ढंग से ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और अपनी मानसिक क्षुधा को शान्त कर सकते हैं।

7. मातृ भाषा अन्य भाषाओं के सीखने में सहायक – मातृ भाषा के ज्ञान के बिना कोई भी बालक अन्य भाषाओं को सीख नहीं सकता। मातृ भाषा की बुनियाद पर ही अन्य भाषाओं का भवन बनाया जा सकता है। इस लिये मातृ भाषा नींव का काम करती है और इस नींव का सुदृढ़ होना अत्यन्त आवश्यक है। यह नींव सुदृढ़ होगी तो अन्य भाषाओं को आसानी से सीखा जा सकता है। यदि नींव कमजोर होगी तो अन्य भाषाओं के सीखने में पग-पग पर कठिनाई का सामना करना पड़ेगा।

8. सृजनात्मक शक्ति का विकास – स्वतन्त्र चिन्तन एवं मौलिक अभिव्यक्ति मातृभाषा में ही सम्भव है। यदि हम चाहते हैं कि हमारे देश की परम्पराओं के अनुसार ऐसे मौलिक ग्रन्थों की रचना हो जो कि विश्व साहित्य का अंग बन सकें तो इस बात का प्रयास करना होगा कि भाषा को लेकर विचारकों के विचारों में गतिरोध समाप्त किया जाये। मौलिक साहित्य एवं मौलिक ग्रन्थों की रचना मातृ भाषा में ही सम्भव है, किसी विदेशी भाषा में नहीं। अंग्रेजी भाषा के अध्ययन से हम पश्चिमी सभ्यता, वहां के रीति-रिवाज, साहित्यिक गतिविधियों का अनुकरण तो कर सकते हैं किन्तु मौलिक ग्रन्थों की रचना करना बड़ा कठिन है क्योंकि मातृ भाषा में अभिव्यक्ति जितनी सरल व सहज होती है उतनी अन्य भाषाओं में नहीं। विचारक व दार्शनिक भाषा पर ध्यान नहीं देता बल्कि मौलिक विचारों पर ध्यान केन्द्रित करता है जो कि स्वाभाविक क्रिया है। इस सम्बन्ध में राइबर्न ने मातृ भाषा द्वारा सृजनात्मक शक्ति के विकास पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि "मातृ भाषा की शिक्षा महत्त्वपूर्ण है क्योंकि मातृ भाषा शिक्षण पर हमारे विद्यार्थियों का बौद्धिक विकास निर्भर है- बौद्धिक जीवन का विकास, ज्ञान में वृद्धि, आत्माभिव्यक्ति की क्षमता का विकास, सृजनात्मक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

व उत्पादन क्षमता का विकास।" इसी लिये सृजनात्मक शक्ति का विकास करने के लिये मातृ भाषा का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

9. सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता की प्रतीक – कोठारी आयोग ने शिक्षा के लक्ष्यों पर प्रकाश डालते हुए सामाजिक एकता और राष्ट्रीय एकता पर भी बल दिया है। मातृ भाषा के शिक्षण से इस लक्ष्य की प्राप्ति की जा सकती है। मातृ भाषा में समाज को एक सूत्र में पिरोने की क्षमता होती है। इस लिये यदि देश के सभी नागरिकों को एक सूत्र में बांधना है तो उन सभी की मातृभाषा एक ही होनी चाहिये। हिन्दी भाषा के प्रबल समर्थक एवं पोषक स्वर्गीय भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने मातृभाषा की शिक्षा पर बल दिया है। उनके विचारानुसार मातृ भाषा का ज्ञान सभी प्रकार की उन्नति के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

उन्होंने लेखनी के माध्यम से कहा है :

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति कौ मूल।

बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय कौ सूल।।

उन्होंने यह भी कहा कि अंग्रेजी भाषा के अध्ययन से चाहे व्यक्ति कितना भी गुणी हो जाये लेकिन उसके व्यक्तित्व का विकास समुचित ढंग से नहीं हो सकता। इस बात की अभिव्यक्ति निम्न पंक्तियों के माध्यम से की गई है।

अंग्रेजी पढिके जदपि, सब गुण होत प्रवीण।

पै निज भाषा ज्ञान बिन, रहत हीन के हीन।।

जीवन के सभी पहलुओं पर दृष्टिपात करने के पश्चात् यह कहना हर दृष्टिकोण से उचित होगा कि मातृ भाषा की शिक्षा हर व्यक्ति के लिये महत्त्वपूर्ण है।

महात्मा गांधी जी ने मातृ भाषा के महत्त्व के बारे में उचित ही कहा है कि "मनुष्य के मानसिक विकास के लिये मातृभाषा उतनी है जरूरी है जितनी कि बच्चे के भौतिक विकास के लिए मां का दूध। शिशु प्रथम पाठ अपनी मां से ही पढ़ता है, इस लिये उसके बौद्धिक विकास के लिये उसके ऊपर मातृभाषा के अतिरिक्त कोई दूसरी भाषा थोपना मैं मातृ-भूमि के विरुद्ध पाप समझता हूँ।"

मातृभाषा अध्ययन मानव जीवन के लिये आवश्यक

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसके पास सोच विचार करने की शक्ति है। वह इस शक्ति के आधार पर भाषा सीखने में सक्षम है। बालक को जन्म के बाद सबसे पहले मातृ भाषा सीखने का ही अवसर प्राप्त होता है। क्योंकि उसके लिये अपने परिवार और आस-पास के वातावरण में मातृभाषा को सीखना बहुत सहज और स्वाभविक होता है। इसलिये मातृभाषा का उसके जीवन में बहुत महत्त्व होता है। इस महत्त्व को देखते हुए इस भाषा के सीखने के लिये समुचित व्यवस्था होनी चाहिये। लेकिन कुछ विद्वानों का यह मत है कि मातृ भाषा तो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
बालक अपने माता-पिता, भाई-बहन और आस-पास रहने वाले व्यक्तियों से सीख लेते हैं, इस लिये विद्यालयों में मातृ भाषा पढ़ाने की व्यवस्था की कोई आवश्यकता नहीं। परन्तु हम इस बात को भूल जाते हैं कि बालक परिवार में या स्कूल जाने से पहले केवल मात्र भाषा के अधूरे रूप का ही ज्ञान प्राप्त करता है और भाषा पर किसी प्रकार का कोई अधिकार नहीं होता।

भाषा का समुचित ज्ञान प्राप्त करने के लिये बालकों को स्कूल में मातृ भाषा का ज्ञान अवश्य प्राप्त करना चाहिये। क्योंकि परिवार के सदस्यों और अन्य व्यक्तियों से अनुकरण द्वारा जिस भाषा को सीखते हैं वह विभाषा होती है भाषा नहीं। विभाषा भाषा का सर्वमान्य रूप नहीं होता। इस लिये स्कूल में भाषा के सर्वमान्य रूप की शिक्षा अवश्य दी जानी चाहिये। स्कूल में मातृ भाषा के सर्वमान्य रूप की शिक्षा देने का एक कारण यह भी है कि बालक स्कूल में प्रवेश पाने से पहले जो भाषा सीखता है वो भाषा का अशुद्ध रूप होता है और दूसरे वह केवल बोलना ही सीखता है, लिखना नहीं।

यदि हम भाषा-भाषी परिवारों का निर्माण करना चाहते हैं तो हमें भाषा के सर्वमान्य रूप की शिक्षा की विशेष व्यवस्था करना आवश्यक है। इसकी व्यवस्था करना इस लिये भी जरूरी है कि किसी भी जाति विशेष का साहित्य उसकी मातृ भाषा में होता है और उस साहित्य में जाति विशेष के अतीत की झांकी, वर्तमान का स्वरूप और भविष्य के सपने संजोये होते हैं। इस साहित्य का अध्ययन करने के लिये मातृ भाषा का अध्ययन आवश्यक है।

साहित्य का अध्ययन करने से केवल मात्र ज्ञानोर्जन ही नहीं होता अपितु साहित्य के अध्ययन से सौन्दर्यानुभूति भी होती है। यह सब कुछ तभी सम्भव है जब छात्र-छात्राओं का मातृ भाषा पर अधिकार होता है। भाषा पर अधिकार उसी स्थिति में हो सकता है जब उसका अध्ययन सही ढंग से किया जाये। भाषा के साहित्य के काव्य पक्ष का रसास्वादन करने हेतु भाषा का अध्ययन आवश्यक है।

एक और कारण यह भी है कि मानव समाज के सभी अनुभव, समस्त ज्ञान-विज्ञान, भाषा के माध्यम से ही सुरक्षित हैं। अगर हमें भाषा का उचित ढंग से ज्ञान ही नहीं होगा तो भाषा के माध्यम से सुरक्षित ज्ञान-विज्ञान का अध्ययन कैसे कर सकेंगे। इस लिये यह स्पष्ट है कि विचार विनिमय, ज्ञानार्जन और ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन हेतु मातृ-भाषा का शुद्ध रूप में ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।

मातृ भाषा का शुद्ध ज्ञान प्राप्त करने का सबसे उपयोगी और सबसे मुख्य कारण है भाषा कौशलों का विकास। भाषा एक कला एवं कौशल है और कला और कौशल को सीखने के लिये अभ्यास की आवश्यकता होती है। अभ्यास के लिये समाज में पर्याप्त रूप से विचारों का आदान प्रदान करने का अवसर मिलता है परन्तु शुद्ध भाषा के प्रयोग का अवसर विद्यालयों में ही मिलता है। वैसे भी हर कला और कौशल की अपनी तकनीकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

होती है। मातृ भाषा के सन्दर्भ में यह तकनीकी इसका व्याकरण होता है और शुद्ध बोलने, पढ़ने और लिखने के लिये सुनियोजित ढंग से उस भाषा के व्याकरण को पढ़ने की आवश्यकता होती है। व्याकरण के अभाव में सुनियोजित ढंग से भाषा सीखी नहीं जा सकती।

मातृ भाषा के महत्त्व और इसकी नियोजित ढंग से शिक्षा की आवश्यकता के बारे में विचार करने के बाद हम निष्कर्ष रूप में यह कह सकते हैं कि मातृ भाषा का विद्यालय पाठ्यक्रम में विशेष स्थान होना चाहिये। भाषा को केवल मात्र एक विषय रूप न पढ़ाकर बल्कि इसको अन्य विषयों की शिक्षा का भी आधार मानना चाहिये। छात्र-छात्राओं का अपनी मातृ भाषा पर जितना अधिक अधिकार होगा वे उतनी सहजता और सरलता से भाषा के साहित्य का अध्ययन कर सकेंगे और पाठ्यक्रम से सम्बन्धित अन्य विषयों का ज्ञान भी सुचारू रूप से प्राप्त कर सकेंगे।

हमें अपने ही देश में यह देखकर बहुत अफसोस होता है, मातृ भाषा के अध्ययन और अध्यापन पर विशेष रूप से बल नहीं दिया जाता, बल्कि कई स्थानों पर तो अवहेलना भी की जा रही है जो कि उचित नहीं है। हम आज के इस भौतिक युग में आवश्यकता से अधिक शक्ति विज्ञान और तकनीकी की शिक्षा में लगा रहे हैं जो कि वांछनीय नहीं है।

हिन्दी भाषा का नामकरण

हिन्दी भाषा के विकास, महत्त्व और उसकी आवश्यकता के अध्ययन के बाद हमारी जिज्ञासा होती है कि इस मातृ भाषा का नाम हिन्दी कैसे पड़ा ? हम सभी इस बात से तो भली भांति अवगत है कि भारत देश का आदि नाम सिन्धु था और बाद में भारत के नाम पर इसे भारत कहा जाने लगा जो कि देश का वर्तमान नाम है। हम इसे भारत वर्ष और हिन्दुस्तान के नाम से भी पुकारते हैं। जब ईरानी मुसलमान भारत में आये तो उन्होंने हिन्दु शब्द का प्रयोग किया क्योंकि हिन्दु, सिन्धु का ईरानी रूप है। इस लिये उन्होंने इस देश को सिन्ध के स्थान पर हिन्द और देहली के आस-पास की भाषा को हिन्दवी नाम दिया। फिर कालान्तर के पश्चात हिन्दवी शब्द हिन्दी हो गया। हिन्द शब्द फारसी भाषा का शब्द है। जिसका अर्थ है हिन्द से सम्बन्धित। प्रारम्भ में यह शब्द व्यापक रूप में प्रयोग में आता था। जैसे हिन्दी आदमी, हिन्दी वस्तु, हिन्दी भाषा आदि। कुछ लोगों को यह विदेशी शब्द 'हिन्दी' अच्छा नहीं लगा और इसके परिणामस्वरूप वे हिन्दी न कहकर देवनागरी अथवा नागरी भाषा का प्रयोग करने लगे। इस भाषा को ये नाम हिन्दी लिपि देवनागरी के आधार पर दिये गये। यही कारण है कि आज हमारी यह भाषा हिन्दी, देवनागरी और नागरी के नामों से पुकारी जाने लगी है। हमें चाहिये की संकुचित दृष्टिकोण को त्यागकर विस्तृत दृष्टिकोण के आधार पर हिन्दी को उसके प्रचलित नाम 'हिन्दी' को स्वीकारना चाहिये। हमें अपनी भाषा पर गर्व होना चाहिये कि यह भाषा अन्य भाषाओं के शब्दों को पचाने में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समर्थ है। यही कारण है कि हिन्दी आज एक समृद्ध भाषा का रूप धारण कर प्रगति के पथ पर अग्रसर है।

मातृ भाषा ही शिक्षा माध्यम की आधार शिला क्यों ?

संसार के सभी स्वतन्त्र देशों की शिक्षा का माध्यम या तो उन देशों की मातृ-भाषाएं हैं या फिर राष्ट्र भाषाएं हैं, परन्तु जो देश पराधीन रह चुके हैं वहां पर ऐसा नहीं है। क्योंकि जो देश पराधीन थे और जो उन पर शासन करते थे उन्होंने अपने देश की भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया। यह बात हमारे देश पर भी चरितार्थ होती है। हमारा देश लगभग एक हजार वर्ष गुलाम रहा है। जब हमारे देश में मुगल साम्राज्य की तूती बोलती थी तो अरबी भाषा फलती फूलती रही और अंग्रेजों के युग में अंग्रेजी भाषा का बोलबाला रहा। परन्तु यह बात हमारे लिये खेद की है कि देश को स्वतन्त्र हुए पांच दशक हो चुके हैं और बहुत से भारतीय अंग्रेजी के गीत गाते नहीं थकते और शिक्षा के माध्यम के लिये अंग्रेजी भाषा के पक्ष में तर्क देने के लिये तैयार रहते हैं। हमारे लिये यह समस्या की बात है और इस समस्या पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक हो गया है।

जहां तक हमारे देश में शिक्षा के माध्यम की बात है तो यही उचित होगा कि शिक्षा का माध्यम निम्न स्तर से उच्च्व स्तर तक मातृ भाषा ही होना चाहिये। इस बात के पक्ष में तर्क निम्न हैं :-

1. मातृ भाषा विचाराभिव्यक्ति का स्वाभाविक, सहज और सरलतम साधन है।
2. इसमें हमारे समाज विशेष की संस्कृति सुरक्षित है और इसका प्रभाव बालक के संस्कारों पर पड़ता है।
3. भाषा और विचारों का अटूट सम्बन्ध है। इन दोनों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। बालक मातृभाषा में ही सही ढंग से विचार कर सकता है।
4. मातृ भाषा सभी नागरिकों को भावात्मक सूत्र में बांधने का कार्य करती है।
5. इसके माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास सम्भव है क्योंकि अध्ययन करने से उसे स्वतन्त्र चिन्तन और अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है।

हमारे अपने देश की शिक्षा का माध्यम निश्चित करने से सम्बन्धित मुख्य रूप से दो बातें समस्या के रूप में उभरती हैं –

1. हमारे देश के समस्त नागरिकों की अनेक मातृ भाषाएं हैं।
2. इन सभी भाषाओं का शब्दकोश विस्तृत न होकर संकुचित है।

पहली समस्या अत्यन्त गम्भीर है। इस समस्या के समाधान हेतु श्री त्रिगुण सेन केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री ने शिक्षा के माध्यम के सम्बन्ध में भारत के सभी विश्व विद्यालयों के उपकुलपतियों का सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन में अंग्रेजी को शिक्षा के माध्यम के रूप

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्वीकार करने का विरोध तो किया गया लेकिन दुर्भाग्यवश जो निर्णय लिया गया वो यह था कि प्रान्तीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाया जाये। स्वाभाविक बात थी कि जब हम मातृ भाषा को विचार विनिमय का सरलतम साधन मानते हैं तो इस आधार पर यह तर्क संगत था कि प्रादेशिक भाषाएं शिक्षा का माध्यम हों। लेकिन इस निर्णयं से विदेशी भाषा अंग्रेजी से तो छुटकारा मिल गया लेकिन अनेक हानियों की आशंका बन गई है। जो निम्न है :–

1. शिक्षा प्रादेशिक सीमा तक सीमित हो जायेगी और शिक्षक, पुस्तकों और अन्य सामग्री का लाभ दूसरे प्रदेश को नहीं हो सकेगा।
2. भाषा के आधार पर प्रदेशों में विभाजन की बात सामने आयेगी।
3. भावात्मक एकता, राष्ट्रीय अखंडता और राष्ट्रीय एकता पर खतरा मंडराने लगेगा।
4. व्यावहारिक रूप से किसी एक भाषा को केन्द्रीय प्रशासन की भाषा बनाना कठिन हो जायेगा।

इसके अतिरिक्त दूसरी समस्या भी गम्भीर रूप धारण किये हुए है। क्योंकि अंग्रेजी प्रेमी जिन पर विदेशी दासता का प्रभाव ज्यों का त्यों बना हुआ है वे अंग्रेजी को ही शिक्षा का माध्यम बनाने के पक्ष में हैं और वे तर्क देते हैं, जो निम्नलिखित हैं :–

1. भारत की सभी भाषाओं की शब्दावली सीमित है।
2. ज्ञान विज्ञान की पुस्तकों का इन भाषाओं में अभाव है।
3. विश्वविद्यालयों के अध्यापकों ने अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा ग्रहण की और वे इसी माध्यम से शिक्षा देने में सुविधा महसूस करते हैं।
4. अंग्रेज़ी माध्यम सें न पढ़ने और पढ़ाने पर शिक्षा का स्तर गिर जायेगा।

अगर हम राष्ट्र के हित को ध्यान में रखकर विचार करें तो हमें ये सभी तर्क थोथे व एक बहाना मात्र लगते हैं। हमें खुले दिमाग से विचार करना चाहिये कि अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाये रखने से हम दास मानसिकता से मुक्त नहीं होंगे और हम अपनी शिक्षा को व्यापक रूप देने में समर्थ नहीं हो सकेंगे।

इन सभी बातों का निष्कर्ष यह निकलता है कि माध्यमिक स्तर तक तो शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषाएं हों और उसके बाद राष्ट्र भाषा हिन्दी ही शिक्षा का माध्यम बने। ऐसा करने से राष्ट्र के अधिकांश लोगों को लाभ मिलेगा और राष्ट्रीय एकता, अखंडता को कोई खतरा नहीं होगा। शिक्षा का राष्ट्रीयकरण, अध्यापकों का एक प्रांत से दूसरे प्रान्त में स्थानांतरण सम्भव हो सकेगा। इन सब बातों के अतिरिक्त एक प्रमुख लाभ यह होगा कि देश की राष्ट्र भाषा को माध्यम बनाने से शिक्षा के क्षेत्र में शोधकार्य को प्रोत्साहन मिलेगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाषा और कुछ मनोवैज्ञानिक तथ्य

भाषा के सीखने में मनोवैज्ञानिक तथ्य सहायक होते हैं। ये मनोवैज्ञानिक तथ्य निम्नलिखित हैं :-

1. बालक भाषा को जन्म से सीख कर नहीं आता, अपितु वह जन्म के बाद पारिवारिक वातावरण में भाषा सीखता है।
2. भाषा अपने से बड़ों का अनुकरण करके सीखी जाती है।
3. भाषा का आधार विचार है। विचार के माध्यम से ही वाक्य की उत्पत्ति होती है।
4. भाषा की इकाई वाक्य है।
5. भाषा सीखने का क्रम है। इस क्रम में पहले सुनना, फिर बोलना और इसके बाद पढ़ना और लिखना आता है।
6. बालकों में भाषा सीखने की प्रवृत्ति प्रारम्भ के वर्षों में अधिक होती है और बाद में मन्द हो जाती है।
7. भाषा सीखने की क्षमता सभी बालकों में एक जैसी नहीं होती। उनके अन्दर व्यक्तिगत विभिन्नता पाई जाती है।
8. बालक एक से अधिक भाषा सीखने की क्षमता रखते हैं।
9. बालकों में भाषा सीखने की योग्यता उनके शारीरिक एवं मानसिक विकास और उनकी रूचियों अभिवृत्तियों के साथ-साथ पारिवारिक वातावरण पर निर्भर करती है।
10. बालक मातृ भाषा अनुकरण से सीखने के बाद अन्य भाषाएं मातृ भाषा की सहायता से सीख सकते हैं।

मातृ भाषा और मानसिक विकास

मनुष्य केवल शारीरिक प्राणी न होकर, अपितु मनोशारीरिक प्राणी है। वह भाषा से सम्बन्धित जो भी ज्ञान प्राप्त करता है वो मस्तिष्क, बुद्धि और शरीर की सहायता से करता है। शरीर के अन्तर्गत हमारी कर्मेन्द्रियाँ, ज्ञानेन्द्रियाँ और शरीर के अन्य अंग आ जाते हैं। भाषा की शिक्षा देते समय इन सब बातों को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है।

बालक का शारीरिक और मानसिक विकास क्रम से साथ-साथ होता है। इसी विकास के अन्तर्गत वह अपनी मातृ भाषा भी सीखता है। उसका शारीरिक विकास एवं मानसिक विकास आनुवंशिकता और वातावरण-दोनों पर निर्भर करता है। मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर कोई भी दो बालक समान नहीं होते। यहाँ तक कि जुड़वां बालक भी समान नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by JKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

होते। इन बालकों में यह अन्तर आनुवंशिक गुणों में अन्तर होने के कारण होता है, या फिर वातावरण की भिन्नता के कारण होता है। इन असमानताओं के कारण बालकों के शारीरिक और मानसिक विकास में भी अन्तर होता है और इन्हीं कारणों से उनके भाषा विकास में भी स्पष्ट रूप से अन्तर दिखाई पड़ता है।

ऊपरलिखित तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अवलोकन और सामान्यीकरण करने के पश्चात् मनोवैज्ञानिकों ने जो निष्कर्ष निकाले हैं, उनके आधार पर बालक के जन्म से बाल्यावस्था तक के शारीरिक, मानसिक और भाषा विकास को निम्न ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है। भाषायी विकास को पांच भागों में बांटा गया है –

1. शब्द–ज्ञान (शब्दावली)
2. वाक्य रचना (वाक्य विन्यास)
3. अभिव्यक्ति (विचारों व भावों का प्रकटीकरण)
4. पठन (वाचन)
5. लिपि ज्ञान एवं लेखन

1. शब्द ज्ञान (शब्दावली)– शिशु प्रथम 6 मास तक बोलने का प्रयास नहीं करता। 6 माह की अवस्था में कुछ बोलने लगता है। एक वर्ष की अवस्था में वह इस योग्य हो जाता है कि एक दो वस्तुओं के नाम अस्पष्ट भाषा में बोलता है। धीरे–धीरे नये शब्दों के बारे में जानकारी प्राप्त करता है और शब्द–ज्ञान में वृद्धि होने लगती है।

1. प्रारम्भ के पहले 6 महीनों में वह शारीरिक कष्ट के कारण पूरी तरह बोल नहीं पाता पर मौलिक ध्वनियों को निकालता है। उसकी प्रारम्भ की ध्वनियाँ स्वर, पवर्ग (मम, पप द्वित्व फ, व) और क और न होती हैं।
2. दूसरे 6 महीनों में वह मामा, बाबा, काका, दादा जैसे द्वित्व वर्ण बोलने लगता है।
3. द्वितीय वर्ष में वह निकटतम वस्तुओं के नाम बोलने लगता है। उसकी शब्द संख्या लगभग 30 हो जाती है।
4. तृतीय वर्ष में लगभग 300 साधारण वस्तुओं के नाम सीख जाता है– जैसे आलू, दाल रोटी, कलम और पानी आदि।
5. चतुर्थ वर्ष में लगभग 800 शब्दों को बोलना सीख जाता है, जिसमें वर्तमान, बहु वचन, भूतकाल और भविष्यकाल के शब्द और अंकों के नाम जिसमें दस तक की गिनती शामिल होती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6. पांचवें वर्ष में प्रवेश करने पर सभी साधारण वस्तुओं रंग, पशुओं आदि के नाम और अन्य स्थान और व्यक्तियों के नाम सीख जाता है। जिनकी संख्या लगभग 1500 होती है।
7. छटे वर्ष में उसका शब्द ज्ञान लगभग ढाई हजार तक हो जाता है। इस शब्द-ज्ञान में साधारण संज्ञाएं, विशेषण, सर्वनाम, भूत और भविष्य का प्रयोग, सिक्कों, दिनों और महीनों के नाम होते हैं।
8. 6 वर्ष से लेकर 9 वर्ष तक उसका शब्द ज्ञान लगभग 2500 से 5000 तक पहुँच जाता है। जिसमें लगभग 60% संज्ञाएं 20% क्रियाएं और 20% अन्य शब्द होते हैं। इस अवधि में शब्द-ज्ञान (शब्दावली) का कम या अधिक होना विद्यालय की शिक्षा पर निर्भर करता है।
9. 9 वर्ष के बाद ऐसे ही क्रम से शब्दावली में वृद्धि होती रहती है लेकिन किशोरावस्था में प्रवेश होने पर शब्द-ज्ञान वृद्धि की गति मन्द हो जाती है।

भाषा वैज्ञानिकों और मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि ऊपरलिखित शब्दों की संख्या सामान्य वर्ग के बालकों के लिये इस प्रकार बढ़ती है, लेकिन जो बालक असामान्य वर्ग की श्रेणी में आते हैं उनके लिये कम या अधिक हो सकती है। शब्द-ज्ञान में वृद्धि का होना उचित और अनुचित वातावरण पर भी निर्भर करता है।

2. वाक्य रचना (वाक्य विन्यास) – आरम्भ में बालक एक शब्द का ही वाक्य बोलता है जिसे बालक की माता या निकटतम सम्बन्धी ही समझ पाते हैं जैसे 'कुट' (मां मुझे विस्कुट दो) जैसे मानी (अर्थात मां मुझे पानी दो) जब बालक अढ़ाई वर्ष का होता है तो दो या तीन शब्दों का वाक्य बोलना शुरू कर देता है। साढ़े तीन वर्ष का बालक चार शब्दों का वाक्य बोलने लगता है। 5 से 9 वर्ष तक के बालक पांच से छः शब्दों की रचना करना सीख जाते हैं।

3. अभिव्यक्ति – प्रारम्भ में 3 वर्ष तक के बालक की भाषा स्पष्ट नहीं होती और वह तोतली भाषा बोलता है। अधिकतर उसकी बातें समझ में नहीं आतीं। तीन वर्ष के उपरान्त उसकी भाषा में स्पष्टता दिखाई देने लगती है और 6 वर्ष होने तक उसकी वाणी में स्पष्टता और शुद्धता आ जाती है। 9 वर्ष की आयु में वह वस्तुओं तथा अदृश्य घटनाओं का वर्णन करने के योग्य हो जाता है। 9 वर्ष की आयु पूरी करने पर वह तर्क-वितर्क करने के योग्य भी हो जाता है।

4. पठन (वाचन) – वाचन के लिये 5 वर्ष की आयु उपयुक्त होती है। इस अवस्था में वह वाचन की तैयारी कर देता है, जैसे उसका चित्रों को देखना और पहचान करना, छपे अक्षरों को देखना, पुस्तक या पत्रिका को हाथ में लेना और दूसरों को ऐसा लगना कि मानो वह पढ़ रहा है। चित्रों वाली पुस्तकों को हाथ में लेकर बुदबुदाता है। 6 वर्ष की अवस्था में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वह पढ़ने के लिये तैयार हो जाता है। धीरे-धीरे अर्थ साहित वाचन का प्रयास करता है। 11 वर्ष की आयु में स्वाध्याय करने के योग्य हो जाता है।

5. लिखना (लिपि) - 6 वर्ष की आयु से पहले वह लिखने योग्य नहीं होता क्योंकि उसकी मासपेशियां कमजोर होती हैं। वह रेत पर उंगली फेर सकता है, नुकीली चीज से रेखाएं खींच सकता है और ब्रुश से चित्र बनाने का प्रयास कर सकता है। सरल रेखाएं खींचने के बाद अक्षर लिखना सीखता है और फिर बाद में शब्द व वाक्य लिखना सीखता है। प्रारम्भ में बालक लिखित रूप में इतने शब्दों का प्रयोग नहीं कर सकता जितना कि बोलचाल में कर सकता है।

बालक के मानसिक विकास पर ध्यान देने से इस तथ्य का पता चलता है कि भाषा सीखने का एक क्रम है। इस क्रम में ज्यों-ज्यों बालक का मानसिक विकास होता है त्यों-त्यों उसकी भाषा सीखने की शक्ति का विकास होता है। शिक्षक को चाहिये कि बालक के मानसिक विकास के साथ-साथ भाषा के स्तर का क्रम रखे अर्थात् मानसिक विकास के क्रम के साथ भाषा स्तर को बनाये रखे। निष्कर्ष रूप में बालक के मानसिक विकास को ध्यान में रखते हुए भाषा का शिक्षण होना चाहिये।

भाषा का सामाजिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास से सम्बन्ध

भाषा हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। हमारे जीवन के समस्त क्रिया कलापों में इसका योगदान रहता है। राज-भाषा आयोग ने संकेत करते हुए कहा है कि ''भाषा से मानव की मानवीयता पोषित और सुरक्षित है। भाषा इतिहास वास्तव में सभ्यता के विकास का इतिहास है।''

भाषा सामाजिक व्यवहार कुशलता का प्रथम सोपान है

बालक जब संसार में आता है तो सबसे पहले उसे अपनी माता का ज्ञान होता है। इसके बाद भाषा के माध्यम से ही दूसरी वस्तुओं और पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में जानकारी प्राप्त करता है। उसकी सामाजिक व्यवहार कुशलता भाषा के ज्ञान पर ही निर्भर करती है। सामाजिक आदान-प्रदान, विचार विनिमय व समाज विशेष की परम्पराओं का ज्ञान वह भाषा के द्वारा ही प्राप्त करता है। अपने आस-पास के वातावरण से लेकर समाज का ज्ञान उसे भाषा द्वारा ही मिलता है। रायबर्न ने इसके इस महत्त्व को बड़े सुन्दर शब्दों में व्यक्त किया है कि ''कोई भी बालक तब तक अच्छा तथा उपयोगी नागरिक नहीं बन सकता जब तक कि उसे अपनी मातृ भाषा की ठीक प्रकार से शिक्षा न दी जाये।'' इसलिये यह कहना उचित और सार्थक है कि भाषा ही सामाजिक व्यवहार कुशलता का प्रथम सोपान है।

भाषा और मानसिक विकास समानान्तर गति पर चलते हैं

प्राय: ऐसा देखने में आता है कि जिस मात्रा में बालक के भाषा-ज्ञान का विकास होता है उसी मात्रा में उसका मानसिक विकास होता है। जो बालक भाषा में जितना पिछड़ा रहता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है, उसका मानसिक विकास भी उसी परिमाण में पिछड़ा रहता है। मानसिक विकास के साथ-साथ ऐसा देखने में आया है कि भाषा की अभिव्यंजना व अलंकारिक प्रयोगों की शक्ति की भी वृद्धि होती है। भाषा और मानसिक विकास साथ-साथ चलते हैं। दोनों एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू प्रतीत होते हैं, जिनको कि अलग करना कठिन लगता है।

भाषा और बौद्धिक ज्ञान में अभिन्न सम्बन्ध है

बौद्धिक शक्तियों का उद्भव परिपोषण तथा विकास भाषा पर ही निर्भर करते हैं। स्मरण, चिन्तन, मनन, तर्क-वितर्क व विश्लेषण शक्तियां भाषा के माध्यम द्वारा ही प्रस्फुटित होती हैं तथा उसी के द्वारा विकसित होती हैं। ओटो जैस्पर्सन का यह कथन कितना युक्ति युक्त पूर्ण है कि "भाषा में मनुष्य के सम्पूर्ण बौद्धिक तथा नैतिक सार की कुछ अंशों तक अभिव्यक्ति हो जाती है।" अतः इसमें कोई सन्देह नहीं है कि भाषा और बौद्धिक ज्ञान में अभिन्न सम्बन्ध है।

भाषा भाव की माध्यम, सहायक, व जननी है

भाषा के माध्यम से हम अपने भावों को प्रकट करते हैं। दूसरों के भावों को समझते हैं तथा विचार विनिमय करते हैं। अन्य सब माध्यमों की अपेक्षा हम अपने भावों और विचारों को अधिक स्पष्टता व सरलता से भाषा में प्रकट करते हैं। भाषा केवल भावों की माध्यम ही नहीं सहायक भी है। कभी-कभी भाषा का निज का सौन्दर्य सुन्दर भावों को उद्बोधित करता है। ऐसा लगता है जैसे दो घनिष्ठ मित्र एक दूसरे की सहायता कर रहे हों। भाषा माध्यम व सहायक होने के अतिरिक्त भावों की जननी भी है। भाव और भाषा इतने अभिन्न हो जाते हैं कि भाषा ही भाव लगने लगती है और भाव सुन्दर भाषा ही हो।

राज भाषा आयोग ने भाषा के इस रूप की ओर संकेत किया है कि यह भाषा केवल विचार विनिमय का साधन नहीं बल्कि हम इसके इतने अभ्यस्त हो जाते हैं कि यह हमारे विचारों में प्रविष्ट होकर इसका स्वरूप-निर्माण करती है। हमारा बहुत सा सोचना-विचारना अनिवार्यतः शब्दों तथा वाक्यांशों के रूप में होता है और आवश्यक नहीं कि वह पदार्थ, भावों व सम्बन्धों के रूप में हो जिनके वे प्रतीक होते हैं। इस लिये यह कहना उपयुक्त ही है कि भाषा भावों की माध्यम, सहायक व जननी है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भाषा जन्म से लेकर मृत्यु तक हमारे जीवन को व्याप्त किये रहती है। इसी माध्यम से हम सामाजिक व्यवहार कुशलता, मानसिक व बौद्धिक विकास तथा व्यापार व राजनीति और राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय कार्य विधियों को सम्पन्न करते हैं। परन्तु आश्चर्य की बात है कि किसी का भी ध्यान इसके महत्त्व तथा सर्वोपरि स्थान की ओर नहीं जाता। ब्लूम फील्ड ने बड़े मार्मिक ढंग से इस तथ्य को रखा है कि भाषा का हमारे जीवन में महत्त्वपूर्ण योग रहता है परन्तु हम इस तथ्य का अवलोकन नहीं करते तथा सांस लेने व चलने की तरह इसे स्वाभाविक मान लेते हैं। भाषा के प्रभाव

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
इतने महत्त्वपूर्ण होते हैं, जो मनुष्य को पशुओं से अलग करते हैं परन्तु हैरानी की बात है कि भाषा को हमारे दार्शनिक चिन्तन तथा शिक्षा कार्यक्रमों में महत्त्वपूर्ण एवं सर्वोपरि स्थान नहीं मिलता। इस लिये भाषा के सर्वव्यापी महत्त्व को हृदयगम करना प्रत्येक शिक्षक व विद्यार्थी का कर्त्तव्य होना चाहिये।

मातृ भाषा हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य

उद्देश्य का अर्थ

मनुष्य किसी भी विषय को पढ़कर जो कुछ प्राप्त करना चाहता उसकी आदर्श स्थिति का उद्देश्य परिचायक होता है। इस आदर्श स्थिति की कोई सीमा नहीं होती। उद्देश्य शब्द का शाब्दिक अर्थ भी यही है जिसका विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है– उद्देश्य शब्द दो शब्दों के मेल से बना है, उत तथा दिश। उत का अर्थ है – ऊपर की ओर और दिश का अर्थ है दिशा दिखाना। इस प्रकार उद्देश्य उच्च दिशा की ओर संकेत करता है। इससे यह स्पष्ट है कि उद्देश्य हमें आदर्श प्राप्ति की ओर ले जाता है। शिक्षा और भाषा शिक्षण में भी इसका यही अर्थ लिया जाता है। भाषा शिक्षण के अन्तर्गत उद्देश्य की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है।

भाषा शिक्षण का उद्देश्य एक ऐसा सार्थक कथन है जो व्यक्ति में भाषा की शिक्षा द्वारा वांछनीय परिवर्तन लाने हेतु आदर्श स्थिति की ओर संकेत करता है। यह आदर्श स्थिति ऐसी है जो सीमा में नहीं बांधी जा सकती।

उद्देश्य और लक्ष्य में अन्तर

प्राय: ऐसा देखा जाता है कि उद्देश्य और लक्ष्य में अन्तर नहीं किया जाता। हम इन दोनों के अर्थ एक ही समझते हैं और इनको एक दूसरे का पर्यायवाची मानकर प्रयोग करते हैं। लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है। उद्देश्य और लक्ष्य में पूर्ण और अंश का अन्तर है। उद्देश्य आदर्श और पूर्ण स्थिति की ओर संकेत करता है, जिसकी सीमा नहीं है और इसके विपरीत लक्ष्य की सीमा निश्चित होती है। लक्ष्य निर्धारित किये जाते हैं और व्यक्ति इन लक्ष्यों की प्राप्ति करते हुए उद्देश्य की ओर अग्रसर होता है। भाषा शिक्षण के क्षेत्र में उद्देश्य और लक्ष्य में अन्तर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उदाहरण के लिये बालकों को मातृ भाषा का शुद्ध ज्ञान कराना एक उद्देश्य है और इस मातृ भाषा के शुद्ध ज्ञान के अन्तर्गत वर्णों का ज्ञान एवं उनका उच्चारण, कुछ शब्दों का ज्ञान एवं उनका प्रयोग, विराम चिन्हों की पहचान, वाक्य विन्यास, मुहावरे एवं लोकोक्ति का ज्ञान एवं उनका प्रयोग आदि उद्देश्य की प्राप्ति हेतु निर्धारित कुछ लक्ष्य हैं। इस बात पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाये तो हमें ज्ञात होगा कि लक्ष्य तो प्राप्त किये जा सकते हैं लेकिन उद्देश्य प्राप्त नहीं कर सकते क्योंकि हम कदापि भी यह नहीं कह सकते कि हमें भाषा का पूर्ण और शुद्ध ज्ञान हो गया है। किसी भी व्यक्ति के लिये भाषा का पूर्ण ज्ञान असम्भव है। उद्देश्य और लक्ष्य में मूलरूप में यही अन्तर दिखाई पड़ता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मातृ-भाषा शिक्षण के उद्देश्य

मातृ-भाषा का एक विषय के रूप में भी अध्ययन किया जाता है और साथ ही साथ यह अन्य विषयों के अध्ययन के लिये माध्यम के रूप में आधार शिला भी है। इस लिये मातृ भाषा हिन्दी शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों को निर्धारित करने से पहले शिक्षा के उद्देश्यों पर विचार करंना आवश्यक है। फिर इस बात पर भी विचार करना चाहिये कि जिस विषय को पढ़ाया जायेगा उस विषय की क्या प्रकृति है और उससे किन-किन शैक्षिक उद्देश्यों की किस सीमा तक प्राप्ति सम्भव है। इसके बाद यह देखना भी आवश्यक हो जाता है कि सीखने वालों की रूचि, क्षमता और आवश्यकता किस प्रकार की है ? अन्त में इस बात पर भी ध्यान देना चाहिये कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु हमारे पास कितना समय है और इस उपलब्ध समय में हम उद्देश्यों की किस सीमा तक प्राप्ति करने में सफल हो सकते हैं। मातृ भाषा शिक्षण के लिये हमें निम्नलिखित तथ्यों का स्वीकारना अत्यन्त आवश्यक है -

1. शिक्षा के उद्देश्य
2. मातृ भाषा की प्रकृति
3. मातृ भाषा की साहित्यिक विधाएं
4. सीखने वालों की प्रकृति
5. समय की उपलब्धता

ऊपरलिखित तथ्यों को ध्यान में रखते हुए मातृ भाषा के उद्देश्यों को निश्चित करना सरल हो जाता है। इन उद्देश्यों को संक्षिप्त रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

I. छात्रों में दूसरों की मौखिक भाषा को पूर्ण रूप से समझने की योग्यता का विकास करना।

II. उनमें अपने भाव एवं विचारों को मौखिक रूप से प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने की योग्यता का विकास करना।

III. उनमें दूसरों की लिखित भाषा को पूर्ण रूप से समझने की योग्यता का विकास करना।

IV. उनमें अपने भाव एवं विचारों को लिखित रूप में प्रभावशाली ढंग अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास करना।

V. छात्र-छात्राओं में मातृ भाषा के साहित्य के प्रति रूचि पैदा करना।

VI. छात्र-छात्राओं के मातृ भाषा साहित्य के काव्य रूप का रसास्वादन करने योग्य बनाना अर्थात् सौन्दर्यानुभूति का विकास करना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

VII. उनको साहित्य कोष में निहित विविध प्रकार के ज्ञान-विज्ञान से परिचित कराना।

VIII. छात्रों को अपनी सभ्यता और संस्कृति से परिचित कराना।

IX. छात्रों को मानव जीवन और उसकी विभिन्न परिस्थितियों का ज्ञान कराना और उनकी रूचियों का विकास करना।

X. छात्रों की सृजनात्मक शक्तियों का विकास करना।

XI. छात्रों को साहित्य के सृजन की ओर उन्मुख करना।

XII. छात्रों की सद्वृत्तियों का विकास करते हुए उनको चरित्र निर्माण की शिक्षा देना।

मातृ-भाषा शिक्षण के इन सामान्य उद्देश्यों की सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती। इन उद्देश्यों से सम्बन्धित लक्ष्यों की सीमा निर्धारित की जा सकती है और उन लक्ष्यों को प्राप्त भी किया जा सकता है। मातृ भाषा हिन्दी-शिक्षण के उद्देश्यों की विस्तार से व्याख्या निम्न है –

1. ग्राह्यात्मक उद्देश्य – ग्राह्या का अर्थ होता है ग्रहण करना अर्थात् छात्र-छात्राओं में उन कौशलों का विकास करना जिनके माध्यम से वे मौखिक या लिखित रूप में प्रकट किये गये विचारों को ग्रहण कर सकें। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु हमें विद्यार्थियों में दो कौशलों का अवश्य ही विकास करना होगा जो इस प्रकार हैं –

(क) सुनकर विचारों को ग्रहण करने की योग्यता का विकास करना – दूसरों के द्वारा व्यक्त की गई भाषा को सुनने और समझने के लिये छात्र-छात्राओं को निम्न बातों में निपुण करना :- ध्वनियों का ज्ञान, शब्दों का ज्ञान, स्वराघात व बलाघात का ज्ञान, ध्यानपूर्वक सुनने की आदत का निर्माण, मुहावरों और लोकोक्तियों का ज्ञान, विभिन्न पाठ से सम्बन्धित एवं पाठान्तर क्रियाओं में सक्रिय भाग लेने के लिये प्रेरित करना।

(ख) पढ़कर विचारों को ग्रहण करने की योग्यता का विकास करना – साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जहां साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है वहां साहित्य समाज से भी प्रभावित होता है। समाज एवं साहित्य की सारी पूंजी साहित्य में निहित है। उनका ज्ञान प्राप्त करने के लिये बालकों को पढ़ना और पढ़कर उसके सही अर्थ ग्रहण करना आवश्यक है। इस लिये भाषा शिक्षण का एक उद्देश्य यह भी होता है – पढ़ने की योग्यता का विकास करना। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु निम्न कौशलों का विकास करना अत्यन्त आवश्यक है :-

छात्रों के शब्द एवं सूक्ति भंडार की वृद्धि करना जिससे वे नये नये शब्दों को पढ़कर उनका अर्थ एवं भाव समझ सकें, मुहावरे एवं लोकोक्ति भंडार में वृद्धि करना, विराम चिन्हों का ज्ञान, शुद्ध उच्चारण लिखित भाषा का सस्वर एवं मौन वाचन करना और वाचन करते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
हुए अर्थ ग्रहण करना, पठित सामग्री का केन्द्रीय भाव समझना, उचित हाव-भाव, आरोह-अवरोह एवं यति गति के साथ काव्य वाचन (पाठ) की योग्यता का विकास करना और पढ़ी हुई सामग्री पर चिन्तन-मनन करने की प्रेरणा देना।

2. अभिव्यंजनात्मक उद्देश्य – अभिव्यंजन से तात्पर्य है मौखिक या लिखित भाषा के द्वारा अपने अनुभवों एवं विचारों को दूसरों के सम्मुख अभिव्यक्त करना। समाज में जो व्यक्ति अपने विचारों को जितने प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करता है, वह जीवन में उतनी ही सरलता से सफलता प्राप्त करता है। इस लिये हिन्दी भाषा अध्यापक का कर्त्तव्य विद्यार्थियों में अभिव्यक्ति कौशल का विकास करना भी है :-

(क) बोलकर विचारों को अभिव्यक्त करने की योग्यता का विकास करना- मनुष्य सामाजिक प्राणी है और इस लिये उसके व्यक्तित्व का विकास समाज में रहकर ही सम्भव है। समाज में रहते हुए उसे समाज के अन्य प्राणियों से विचारों का आदान-प्रदान करना पड़ता है। अपने विचारों और भावों को शुद्ध एवं स्पष्ट रूप से व्यक्त करने से सुनने वाला भावानुसार ही बात को समझ लेता है। इस लिये उचित मौखिक अभिव्यक्ति के लिये विद्यार्थियों में निम्न भाषा कौशलों का विकास करना आवश्यक है :-

शुद्ध उच्चारण के साथ बोलने का अभ्यास, बोलते समय शब्दों, सूक्तियों, मुहावरों और लोकोक्तियों का शुद्ध प्रयोग, उचित गति, स्वर एवं प्रवाह के साथ बोलने का अभ्यास, अवसरानुकूल भाषा का प्रयोग, मधुर वाणी का प्रयोग, प्रश्नों का उचित उत्तर देना, तर्क संगत सार्थक बात कहने की क्षमता का विकास करना।

(ख) लिखकर विचारों को प्रकट करने की योग्यता का विकास करना – भाषा का लिखित रूप उसे स्थाई रूप प्रदान करता है। इस लिये छात्र-छात्राओं में लिखित रूप से अभिव्यक्ति की योग्यता का विकास करना भी भाषा-शिक्षण का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। लिखित भाषा ही साहित्य के भंडार को सुरक्षित और विकसित करती है और इसके साथ ही साथ सभ्यता एवं संस्कृति को पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित करती है। लिखित अभिव्यक्ति का विकास करने के लिये विद्यार्थियों में निम्नलिखित भाषा कौशलों का विकास करना चाहिये :-

बालकों को लिखित भाषा का ज्ञान देना, वर्ण विन्यास का ज्ञान कराना, विराम चिन्ह एवं वातावरण के नियमों का ज्ञान कराना, सुन्दर सुडौल लेख का अभ्यास कराना, विभिन्न लेखन शैलियों का ज्ञान कराना, शब्दों सूक्तियों, मुहावरों एवं लोकोक्तियों का उचित प्रयोग करना सिखाना, पढ़ी हुई सामग्री पर पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देना, लिखित विषय सामग्री का संक्षिप्तीकरण करना, विस्तारीकरण करना, क्रम पूर्वक विचारों को व्यक्त करना और उचित गति एवं सावधानी से लिखने के अभ्यास पर बल देना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3. सृजनात्मक उद्देश्य – इसे हम रचनात्मक उद्देश्य भी कह सकते हैं। सृजन या रचना से तात्पर्य है – मौलिक रचना के लिये प्रेरित करना। सृजनात्मक की इस प्रवृत्ति से ही कवियों, लेखकों और महान साहित्यकारों का जन्म हुआ। प्रत्येक बालक में सृजनशीलता होती है लेकिन आवश्यकता इस बात की होती है कि उसे विकसित होने का उचित वातावरण एवं अवसर दिया जाये। प्रायः देखा जाता है कि लिखित अभिव्यक्ति की योग्यता का विकास करना अपना उद्देश्य मानकर बालकों को केवल लिखना सिखा देते हैं और समझ लेते हैं कि हमने अपने कर्त्तव्य की पालना कर दी। लेकिन यह पर्याप्त नहीं है। शिक्षक का कर्त्तव्य है कि वह बालक की प्रतिभा का विकास करे और लिखना सिखाने के बाद बालकों को कहानी, कविता और छोटे निबन्ध लिखने के लिये प्रेरित करे।

इसके अतिरिक्त शिक्षक लिखित अभिव्यक्ति के कौशलों का विकास करने के साथ-साथ निम्न प्रयासों को बढ़ावा दे:–

मौलिक विचारों एवं भावों को उचित भाषा शैली में व्यक्त करना, बालकों से पत्र, कविता, कहानी लिखवाना, मौलिक अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करना, लेखन प्रतियोगिताओं का आयोजन करना और विभिन्न शैलियों की जानकारी देना आदि।

4. सराहनात्मक उद्देश्य – सराहना से तात्पर्य है कि भाषा जगत से सम्बन्धित किसी अच्छे किये गये कार्य की प्रशंसा करना। इस उद्देश्य के माध्यम से भाषा साहित्य में बालकों की रूचि का विकास किया जा सकता है। हर बालक में कुशल कवि या लेखक बनने की योग्यता तो सम्भव नहीं है लेकिन दूसरों द्वारा साहित्य क्षेत्र में किये गये प्रयासों की सराहना तो कर सकता है। इसके लिये निम्न कौशलों का ज्ञान होना आवश्यक है :–

साहित्य की विभिन्न विधाओं का ज्ञान होना और उनका रसास्वादन करना, उचित ताल, लय एवं आरोह-अवरोह के साथ कविता का पाठ करना, कविताएं कंठस्त करना, सूक्तिओं को याद करना, व्याख्या करना और मौखिक लिखित अभिव्यक्ति के माध्यम से उनका उल्लेख करना।

5. समीक्षात्मक उद्देश्य – यहां समीक्षा से अभिप्राय भाषा साहित्य की विभिन्न विधाओं की समालोचना से है। विद्यार्थियों का भाषा एवं साहित्य पर अधिकार की दृष्टि से समालोचना करना सिखाना भी बहुत आवश्यक है। वे साहित्य की जिस भी विधा का अध्ययन करें उसकी मौलिकता की पहचान कर सकें। छात्र यह समझ सके कि वह साहित्य के जिस रूप का अध्ययन कर रहा है उसकी भाषा-शैली, भाव एवं विचार उपयुक्त हैं या नहीं। जब विद्यार्थियों में इस प्रकार के गुण आ जाते हैं तो हम जान सकते हैं किस छात्र का भाषा पर अधिकार है और किस का नहीं है। इस स्तर तक पहुंचने के लिये छात्र-छात्राओं में निम्न कौशलों का विकास होना चाहिये :–

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पत्र, निबन्ध, कहानी, एकांकी, नाटक, उपन्यास और व्यगांत्मक लेखों को पढ़ कर उसी रूप में समझना जिस दृष्टिकोण से उनकी रचना की गई है अर्थात रचनाकार के दृष्टिकोण को समझना, भाषा-शैली का विश्लेषण करना, विभिन्न भाषा-गुणों (ओज, प्रसाद, माधुर्य), शब्दशक्तियों (अभिधा, लक्षणा व्यंजना), रस, अलंकार एवं छन्द आदि को पहचानना एवं विश्लेषण करना और साहित्यिक रचनाओं का निष्पक्ष होकर तर्क संगत ढंग से मूल्यांकन करना आदि।

6. प्रेरणात्मक उद्देश्य – प्रेरणात्मक उद्देश्य से तात्पर्य है विद्यार्थियों की रूचियों को जागृत कर उनको भाषा-साहित्य क्षेत्र में उचित दिशा प्रदान करना जिससे उनके व्यक्तित्व का उचित विकास हो सके। प्रारम्भ से बालकों की रूचि को हम जो दिशा प्रदान कर देंगे उनकी क्रियाएं उसी ओर प्रवाहित होने लगेंगी। यदि शिक्षक बालक की रूचि को साहित्य अध्ययन की ओर मोड़ देगा तो बालक के क्रियाकलापों को उचित दिशा प्रदान होगी। इसके लिये यह आवश्यक है कि अध्यापक व शिक्षक की स्वयं की रूचि भी साहित्य में हो। प्रेरणात्मक उद्देश्य की पूर्ति हेतु शिक्षक को विद्यार्थियों में निम्न गतिविधियों एवं क्रियाकलापों को करने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये :–

साहित्यिक लेख एवं पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने के लिये रूचि जागृत करना, पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों को पढ़ने के लिये प्रेरित करना, पुस्तकालय में स्वाध्याय के लिये कहना, विद्यालय की साहित्यिक गतिविधियों में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करना, विद्यालय की पत्रिका के लिये छात्रों से योगदान लेना, भीत्ति पत्रिका की व्यवस्था करना आदि।

7. सद्वृत्तियों के विकास का उद्देश्य – इस उद्देश्य का तात्पर्य बालकों में उचित दृष्टिकोण, आदतों, अभिवृत्तियों और मानव मूल्यों का विकास करना है। शिक्षा का उद्देश्य भी बालकों में सद्वृत्तियों का विकास करना होता है। साहित्य का सद्वृत्तियों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। भाषा का शिक्षक बालकों में साहित्यिक अभिरूचि विकसित करने के साथ-साथ ही उनमें सद्वृत्तियों को विकसित कर सकता है। शिक्षक साहित्य की विभिन्न विधाओं की रचना एवं गतिविधियों के द्वारा बालकों में प्रेम, सहानुभूति, त्याग, परोपकार, सहयोग, निष्ठा, राष्ट्रीय एकता-संवेदनशीलता और देश-भक्ति जैसी सद्वृत्तियों को सहज एवं स्वाभाविक ढंग से विकसित करने में सफल हो सकता है। ऐसा करने के लिये शिक्षक को बालकों में निम्नलिखित योग्यताओं का विकास करना चाहिये :–

छात्र-छात्राओं को देश-भक्ति, मानव मूल्यों तथा साहित्य प्रेम की ओर प्रेरित करना, उनमें राष्ट्रीय एकता और भावनात्मक एकता का विकास करना, अनेकता में एकता के सिद्धान्त को समझाना, संस्कृति व सामाजिक मान्यताओं में आस्था विकसित करना और उनके आचरण में सुधार करना आदि।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाषा-शिक्षण के इन सभी उद्देश्यों का एक दूसरे के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक उद्देश्य दूसरे उद्देश्य को विकसित करने में सहायक सिद्ध होता है। इन सभी उद्देश्यों की पूर्ति हेतु छात्र-छात्राओं के व्यवहार में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में परिवर्तन होता रहता है। इन सभी उद्देश्यों की सार्थकता भी इंसी बात में है कि उद्देश्यों की पूर्ति करते हुए विद्यार्थियों के व्यवहार में अवश्य ही परिवर्तन हो। शिक्षक को इन होने वाले परिवर्तनों से सजग रहना चाहिये।

मातृ भाषा हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य व्यवहार परिवर्तन की दिशा में

उद्देश्य मातृ भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण का मुख्य उद्देश्य मौखिक एवं लिखित रूप में शुद्ध भाषा का ज्ञान कराना है। रचनात्मक, समीक्षात्मक, सराहनात्मक, सौन्दर्यात्मक और रसात्मक अनुभूति की योग्यताओं का विकास करना भी हिन्दी शिक्षण का उद्देश्य होना चाहिये। इन उद्देश्यों की प्राप्ति की सार्थकता हेतु छात्र-छात्राओं के व्यवहार में अवश्य ही परिवर्तन हो। व्यवहार परिवर्तन की दिशा यथा उद्देश्य हो तो हम समझ सकते हैं कि निर्धारित किये हुए उद्देश्य सार्थक हैं। उद्देश्यों की सही ढंग से सार्थकता इस बात में है कि छात्र-छात्राओं में उद्देश्य के स्वभावानुकूल वांछनीय परिवर्तन आये। क्योंकि शिक्षण को बालक के व्यवहार में परिवर्तन लाने वाली सक्षम एवं सशक्त प्रक्रिया माना जाता है। इस लिये मातृ भाषा शिक्षण द्वारा बालक के सर्वांगीण विकास हेतु कुछ व्यवहारगत परिवर्तन लाना आवश्यक होता है जिससे वह समाज उपयोगी नागरिक बनकर राष्ट्र हित में अपनी सक्रिय भूमिका निभा सके।

मातृ भाषा शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु जिस विषय वस्तु का ज्ञान दिया जाता है और विषय वस्तु से सम्बन्धित क्रियाओं को सम्पन्न किया जाता है उनके द्वारा जो व्यवहार परिवर्तन होता है उसकी व्याख्या निम्न है :-

1. ग्राह्यात्मक उद्देश्य – बालक दो ढंग से विचारों को ग्रहण करता है - सुनकर व पढ़कर। दोनों से बालक में व्यवहारगत परिवर्तन अवश्य ही होंगे।

(क) सुनकर विचारों को ग्रहण करना

विषय वस्तु (श्रव्य सामग्री)- आदर्श वाचन, भाषण, वार्तालाप, निर्देश, कविता-पाठ, प्रश्न, नाटक देखना, आकाशवाणी व दूरदर्शन पर प्रसारित होने वाले कार्यक्रम

व्यावहारिक परिवर्तन

(1) छात्र-छात्राएं आदर्श वाचन, प्रश्न, भाषण, रेडियो टेलीविजन प्रसारण एवं शिक्षक के आदेश कविता आदि को ध्यानपूर्वक सुनेंगे।

(2) विद्यार्थी सुनते समय अनुशासन प्रियता का परिचय देंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(3) वे श्रव्य सामग्री में प्रयुक्त ध्वनियों, शब्दों, मुहावरों आदि को समझने का प्रयास करेंगे और उनको अर्थ प्रदान करेंगे।

(4) वे श्रव्य (श्रुत) सामग्री के भाव व अर्थ को बता सकेंगे।

(5) छात्र शिक्षक द्वारा पूछे गये प्रश्नों को ध्यान से सुनकर उत्तर देंगे।

(6) वे शिक्षक के निर्देशों को ध्यान से सुनेंगे और उनकी पालना करेंगे।

(7) वे श्रुत सामग्री के रूचिकर अंशों का चुनाव कर सकेंगे।

(8) वे श्रुत सामग्री के रूचिकर अंशों का आवश्यकतानुकूल प्रयोग कर सकेंगे।

(9) विद्यार्थी सुनकर नवीन शब्दों, मुहावरों को याद करेंगे और स्वयं अपनी अभिव्यक्ति में उनका प्रयोग करेंगे।

(10) वे रेडियो, टेलीविज़न और टेपरिकार्डर को सुनेंगे और अपने उच्चारण को शुद्ध करने का प्रयास करेंगे।

(ख) पढ़कर विचार ग्रहण करना

विषय-वस्तु – मातृ भाषा साहित्य की विभिन्न विधाओं के अंश जैसे गद्य, निबन्ध कहानी, नाटक, कविता, आत्मकथा जीवनी, व्यंग्य लेख, एकांकी और उपन्यास आदि।

व्यवहार सम्बन्धी परिवर्तन

(1) विद्यार्थी पाठ्य-वस्तु (सामग्री) को शुद्ध उच्चारण, उचित गति, उचित स्वर, उचित स्वराघात, बलाघात एवं स्वर के आरोह-अवरोह के साथ पढ़ सकेंगे।

(2) पाठ्य सामग्री को ध्यान और धैर्य से पढ़ेंगे।

(3) पाठ्य सामग्री का भावानुकूल सस्वर वाचन करेंगे।

(4) विषय वस्तु में प्रयोग शब्दों, मुहावरों एवं लोकोक्तियों का प्रसंग के अनुसार अर्थ ग्रहण करें।

(5) पाठ्य सामग्री के केन्द्रीय भाव को समझ कर बतायें।

(6) वे पाठ्य वस्तु को मन में पढ़कर (मौन वाचन) भावानुकूल अर्थों को समझें।

(7) वे पाठ्य सामग्री में से उपयोगी अंश को चुनें।

(8) विद्यार्थी पाठ्य सामग्री की भाषा शैली को उचित रूप में समझें।

2. अभिव्यंजनात्मक उद्देश्य – हम विचारों की अभिव्यक्ति दो प्रकार से कर सकते हैं :–

1. बोलकर 2. लिखकर। इस लिये अभिव्यंजना के लिये विद्यार्थियों में इन दोनों कौशलों को विकसित करना आवश्यक होता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(क) मौखिक रूप से (बोलकर) विचार अभिव्यक्त करना

अभिव्यक्ति सम्बन्धी गतिविधियां – वार्तालाप विचार-विमर्श, प्रश्नोत्तर, दृश्य या घटना का वर्णन, कहानी कहना, भाषण देना, कविता पाठ, नाटक और प्रश्नों का उत्तर देना आदि।

व्यवहार से सम्बन्धित परिवर्तन

(1) प्रभावशाली ढंग से वार्तालाप में भाग लेना।

(2) शिष्टाचार के नियमों का पालन करते हुए विचारों को अभिव्यक्त करना।

(3) भावानुसार शब्दों और मुहावरों का प्रयोग करें।

(4) शुद्ध भाषा का प्रयोग करें।

(5) प्रसंगानुकूल अभिव्यक्ति शैली का प्रयोग करें।

(6) क्रम बद्धता से विचारों की अभिव्यक्ति हो।

(7) अवसरानुकूल मौखिक अभिव्यक्ति हो।

(8) प्रश्नों का उचित ढंग से उत्तर दें।

(9) पूर्ण आत्मविश्वास से मौखिक अभिव्यक्ति करें।

(10) मौखिक रूप से या लिखित रूप से की गई अभिव्यक्ति में सार्थकता का ध्यान रखा जाये।

(ख) लिखकर अभिव्यक्त करना

लिखित अभिव्यक्ति सम्बन्धी क्रियाकलाप (गतिविधियां) शब्दों का वाक्य में प्रयोग, सुलेख का अभ्यास, निबन्ध रचना, पत्र लेखन, प्रश्नों का उत्तर लिखना, डायरी-लेखन, संवाद-लेखन, आत्म कथा लेखन, विस्तृत सामग्री का लिखित रूप में संक्षेपीकरण करना आदि।

व्यवहार में परिवर्तन

निम्नलिखित व्यवहारगत परिवर्तन होंगे-

(1) विद्यार्थी सुडौल एवं सुन्दर लेख लिखने का प्रयास करेंगे।

(2) अक्षर विन्यास (वर्तनी) का ध्यान रखते हुए शुद्ध लिखेंगे।

(3) विराम चिन्हों का ध्यान रखते हुए लिखेंगे।

(4) व्याकरण के नियमों का पालन करते हुए लिखेंगे।

(5) विषय सामग्री को अनुच्छेदों में विभाजित कर सकेंगे।

(6) वाक्य विन्यास का ध्यान रखते हुए लिखेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(7) विचारों के लिखने में क्रमबद्धता का ध्यान रखेंगे।

(8) शब्दों, मुहावरों, सूक्तियों और लोकोक्तियों का यथा आवश्यकता प्रयोग करेंगे।

(9) लिखित रूप में विचारों की सुसम्बद्धता का ध्यान रखेंगे।

(10) लिखित अभिव्यक्ति के लिये उचित शैली का प्रयोग करेंगे।

3. सृजनात्मक उद्देश्य - लिखित अभिव्यक्ति की योग्यता के विकास हेतु बालकों की सृजनात्मक (रचनात्मक) शक्तियों का विकास करना भाषा अध्यापक का कर्त्तव्य है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अध्यापक को निम्न गतिविधियों का आयोजन करना चाहिये:-

सृजनात्मकता से सम्बन्धित गतिविधियां – निबन्ध-लेखन, कहानी-लेखन, कविता लेखन, संवाद-लेखन, सार-लेखन, आत्म कथा-लेखन, संस्मरण-लेखन और व्यंग्य लेखन आदि।

व्यवहारगत परिवर्तन

(1) छात्र अपने द्वारा अनुभव किये गये विचारों को सार रूप में व्यक्त करेंगे।

(2) वे किसी भी विषय पर संक्षिप्त लेख लिखेंगे।

(3) पठित सामग्री का सार लिखेंगे।

(4) वे देखी, सुनी या अनुभव की गई घटना का कल्पना के आधार पर लेख, कहानी या सार लिखेंगे।

(5) वे किसी भी पढ़ी हुई सामग्री का विस्तारीकरण या संक्षेपीकरण कर सकेंगे।

(6) लिखित अभिव्यक्ति के लिये विभिन्न शैलियों का प्रयोग करेंगे।

4. सराहनात्मक (सौन्दर्यात्मक) उद्देश्य : विद्यार्थियों में साहित्य के सौन्दर्य की पहचान एवं सराहना करने की योग्यता, रसास्वादन व काव्य की सौन्दर्यानुभूति की क्षमता का विकास करने हेतु शिक्षक को विभिन्न साहित्यिक गतिविधियों का आयोजन करना चाहिये :-

विभिन्न प्रकार की कविताओं का पाठ, सुभाषित प्रतियोगिता, कविता कंठस्थ कराना, अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता, सुगमगीत प्रतियोगिता एवं अन्य साहित्यिक गतिविधियां।

व्यवहार में परिवर्तन

(1) विद्यार्थी उचित लय, ताल, आरोह-अवरोह हाव-भाव का ध्यान रखते हुए कविता का पाठ करेंगे।

(2) अच्छी और सुन्दर कविताओं को कठंस्थ करेंगे।

(3) कंठस्थ की गई कविताओं की अवसरानुकूल अभिव्यक्ति करेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(4) शाश्वत काव्य को सुनकर आनन्द विभोर होंगे और उसकी सराहना करेंगे।

(5) अवकाश के समय शिक्षाप्रद कविताओं का पाठ करेंगे। यह गतिविधि मित्र मण्डली में सम्भव हो सकती है।

(6) कविता के रस, अलकांर और छन्दों की सहायता से कविता में व्यक्त किये भावों की सराहना कर सकेंगे।

(7) दूसरों द्वारा काव्य क्षेत्र में किये गये अच्छे प्रयासों की प्रशंसा करेंगे।

5. समीक्षात्मक (समालोचनात्मक) उद्देश्य - विद्यार्थियों की समीक्षात्मक व समालोचनात्मक योग्यताओं के विकास हेतु शिक्षक को निम्न क्रियाओं का आयोजन करना चाहिये।

समालोचना से सम्बन्धित पाठ्य वस्तु

कविता, कहानी, निबन्ध, गद्य, नाटक, एकांकी, आत्म कथा, संस्मरण रेखा चित्र के शास्त्रीय सिद्धान्तों का ज्ञान कराना और इनकी भाषा शैली से भी अवगत कराना।

व्यावहारिक परिवर्तन

(1) विद्यार्थी साहित्य की विविध विधाओं का अध्ययन के बाद उनकी भाषा-शैली और उनके अन्य पक्षों की समीक्षा कर सकेंगे।

(2) वे रचनाओं की विषय-सामग्री का तर्क-वितर्क के साथ न्याय संगत मूल्यांकन कर सकेंगे।

(3) वे सकारात्मक आलोचनात्मक दृष्टिकोण से साहित्यिक रचनाओं के सौदर्य की पहचान कर सकेंगे।

(4) भाषा-तत्वों के आधार पर विषय सामग्री की आलोचनात्मक दृष्टिकोण से प्रामाणिकता परख सकेंगे।

(5) छात्र काव्य रचनाओं के विभिन्न रसों, अलंकारों एवं छन्दों का सही ढंग से विश्लेषण कर सकेंगे।

6. रूचि विकास का उद्देश्य (रूच्यात्मक उद्देश्य) - विषय सामग्री- साहित्य की विभिन्न विधाएं (कविता, कहानी, नाटक, पद्य, गद्य, एकांकी) विभिन्न पाठ्यक्रम सहगामी साहित्यिक क्रियाएं एवं पत्र पत्रिकाओं के अध्ययन हेतु सुअवसर प्रदान करना।

व्यावहारिक परिवर्तन

(1) छात्र-छात्राएं साहित्य की विभिन्न विधाओं के अध्ययन के उपरान्त रूचिकर अंशों का संग्रह करेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(2) वे कविताओं को कण्ठस्थ करेंगे।

(3) छात्र पुस्तकालय अध्ययन और स्वाध्याय में रूचि लेंगे।

(4) अपनी पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने में समय का सदुपयोग करेंगे।

(5) विद्यालय की पाठ्य सहगामी क्रियाओं में पर्याप्त रूप से रूचि लेंगे।

(6) वे विद्यालय से बाहर आयोजित होने वाली साहित्यिक गतिविधियों में भी रूचि लेंगे।

(7) वे विभिन्न साहित्यिक सस्थाओं के सदस्य बनने में रूचि लेंगे।

7. सद्वृत्तियों के विकास का उद्देश्य - शिक्षक छात्र-छात्राओं में सद्गुणों और सद्वृत्तियों का विकास करने हेतु निम्न सामग्री व क्रियाओं व गतिविधियों की व्यवस्था कर सकता है :-

विषय-वस्तु- विभिन्न साहित्यिक विधायें और साहित्यिक क्रियाएं।

व्यावहारिक परिवर्तन

(1) शिक्षाप्रद कहानियां, नाटक, कविता, महापुरुषों की जीवनी, आत्म कथा का अध्ययन करके प्रेरणा प्राप्त करेंगे और सद्वृत्तियों की ओर उन्मुख होते हुए समाज के सदस्यों के साथ सद्व्यवहार करेंगे।

(2) समाज सेवा, मानव-प्रेम एवं देश भक्ति की ओर उन्मुख होंगे।

(3) साहित्यिक क्रियाओं से प्रभावित होकर दूसरों से सहयोग और सहानुभूति करेंगे।

(4) अपने देश की सभ्यता एवं संस्कृति में आस्था प्रकट करेंगे।

(5) शाश्वत मानव मूल्यों के प्रति समर्पित होंगे।

(6) वे अपने व्यवहार एवं आचरण में सामाजिक मूल्यों, नैतिक मूल्यों और शाश्वत मूल्यों को दर्शाने का प्रयास करेंगे।

निष्कर्ष रूप में यह स्पष्ट होता है कि मातृभाषा शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विद्यार्थियों में वांछनीय परिवर्तन की अपेक्षा रहती है। वास्तविक रूप में ये परिवर्तन ही उद्देश्य पूर्ति के सूचक होते हैं। विशेष रूप से यहां पर ध्यान देने की बात यह है कि विद्यार्थियों में होने वाले व्यवहार सम्बन्धी परिवर्तन, भाषा-शिक्षण के एक या अनेक उद्देश्यों की आंशिक पूर्ति के सूचक होते हैं। उद्देश्यों की पूर्ण रूप से प्राप्ति सम्भव नहीं होती है। शिक्षक को अपने विद्यार्थियों में होने वाले व्यवहार परिवर्तनों की ओर सचेत रहना चाहिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ब्लूम द्वारा निर्धारित अनुदेशनात्मक उद्देश्य

प्रोफैसर ब्लूम द्वारा निर्धारित मातृ भाषा हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों से पहले हमारे लिये व्यवहारपरक उद्देश्यों और उनका सामान्य उद्देश्यों से क्या अन्तर है, इस बात का जानना आवश्यक है।

व्यवहारपरक उद्देश्य

अभिक्रम के उद्देश्यों की परिभाषा देने हेतु व्यवहारपरक या संक्रियात्मक तरीका अपनाया जाता है। यहां ध्यान देने की बात यह है कि व्यवहारपरक (behavioural) या सक्रियात्मक (operational) शब्द समानार्थी हैं। इसलिये इनका प्रयोग एक दूसरे के लिये किया जा सकता है। उद्देश्यों के सन्दर्भ में 'व्यवहार परक' से तात्पर्य है अनुदेशन के बाद विद्यार्थी में प्रगट होने वाले व्यवहार को वस्तुनिष्ठ एवं स्पष्ट ढंग से व्यक्त करना। प्रायः ऐसा होता है कि शिक्षण एवं अनुदेशन की प्रक्रिया में उद्देश्यों का निर्माण सामान्य रूप से ही करते हैं। परन्तु व्यवहारपरक उद्देश्यों की रचना को अधिक महत्त्वपूर्ण और उपयोगिता की दृष्टि से अधिक सकारात्मक माना जाता है।

सामान्य उद्देश्य और व्यावहारपरक उद्देश्य में अन्तर
(Difference between general and behavioural objective)

सामान्य उद्देश्यों और व्यवहारपरक उद्देश्यों में मूल रूप में यह अन्तर होता है कि सामान्य उद्देश्यों के लिये व्यापक पदों का प्रयोग होता है और व्यवहारपरक उद्देश्यों को व्यक्त करने के लिये विशेष एवं वस्तुनिष्ठ पद प्रयोग में लाते हैं। इसके अतिरिक्त इनको 'सामान्य रूप' में (मोटे तौर पर) निर्धारित करते हैं जिससे उनके अनुकूल आयोजित होने वाली शिक्षण प्रक्रियाओं के बारे में स्पष्ट मार्ग दर्शन उपलब्ध नहीं होता। इसके विपरीत हम देखते हैं कि व्यवहारपरक उद्देश्यों द्वारा विद्यार्थी में प्रत्याशित (अपेक्षित) अधिगम व्यवहार उसकी परिस्थितिगत विशेषता एवं उसके परिमाणों का उल्लेख होता है। शिक्षण या अनुदेशन के माध्यम से घटित व्यवहार परिवर्तन फलस्वरूप छात्र किस प्रकार की क्रियाएं करने में सफल हो सकता है, इस प्रकार की जानकारी हमें व्यवहारपरक उद्देश्यों के अध्ययन से हो सकती है और इस की पुष्टि व्यवहार क्रियाशीलता से सम्भव है।

उदाहरणतया दैनिक जीवन में बातचीत करते हुए आप यदि हिन्दी पढ़ाने वाले शिक्षक से यह पूछ लें कि हिन्दी विषय की शिक्षा के क्या उद्देश्य हैं तो वो आप से सामान्य उद्देश्य की ही चर्चा करेगा।

जैसे हिन्दी शिक्षण के माध्यम से ज्ञानोपार्जन की योग्यता का विकास करना, साहित्य की विभिन्न विधाओं का ज्ञान कराना, राष्ट्र की सभ्यता और संस्कृति को सुरक्षित रखना, सौन्दर्यानुभूति का विकास करना, छात्र-छात्राओं में सद्वृत्तियों का विकास करना आदि। ये सभी उद्देश्य हिन्दी शिक्षण के सामान्य उद्देश्य के अन्तर्गत आयेंगे। इन उद्देश्यों को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

व्यवहारपरक रूप में व्यक्त करने के लिये यह बताना आवश्यक है कि पूरे अनुदे (शिक्षण) प्रक्रिया की समाप्ति के बाद छात्र-छात्राओं के व्यवहार में किस तरह से परिव आयेंगे। उदाहरण के रूप में हिन्दी शिक्षण के बाद छात्र पढ़े हुए नये दस शब्दों को लिखि रूप से वाक्य में प्रयोग कर सकेंगे इस प्रकार के कथन को व्यवहारपरक उद्देश्यों की श्रे में रखा जा सकता है।

व्यवहारपरक उद्देश्यों के तत्व
(Elements of behavioural objectives)

व्यवहारपरक उद्देश्यों के तीन तत्व होते हैं। जो इस प्रकार हैं –

पहले में शिक्षण के परिणामस्वरूप प्रत्याशित (अपेक्षित) व्यवहार (कार्य-कुशल अभिवृत्ति, नवीन ज्ञान या धारणा) का स्पष्ट रूप में उल्लेख होता है।

दूसरे में जिन दिशाओं या सन्दर्भों में व्यवहार परिवर्तन हो सकेगा उसका विवर किया जाता है।

तीसरे तत्व के अन्तर्गत जिस स्थिति में अभिव्यक्त व्यवहार को मान्य कहा जायेग उसके परिणाम (माप दण्ड) का संकेत होगा।

राबर्ट मेगर की पुस्तक 'प्रिपेयरिंग इन्सट्रकशनल आबजैकिटव्स' (Preparin Instructional Objectives) में इस प्रकार के उद्देश्य निर्माण हेतु लाभप्रद और प्रभावपू अभ्यास प्रस्तुत किये गये हैं। मेगर का कहना है कि 'व्यवहारपरक' उद्देश्यों के निर्माण हे तीन प्रकार के प्रश्नों का पूछना आवश्यक है। ये प्रश्न निम्नलिखित हैं :-

I. जब छात्र-छात्राएं किसी ज्ञान या कुशलता को अर्जित कर लेंगे तो उनमें किस प्रका का परिवर्तन होगा।

II. उनका व्यवहार परिवर्तन किन दिशाओं में होगा।

III. उचित निष्पादन (Appropriat: performance) के लिये क्या स्तर (पैमाना) मान्य होगा।

यह कहना हमारे लिये उचित होगा कि व्यवहारपरक उद्देश्यों के प्रतिपादन के लिं उपर्युक्त ये तीन प्रश्न सहायक हो सकते हैं ?

व्यवहारपरक उद्देश्यों के नमूने
(Examples of behavioural objectives)

निम्नलिखित व्यवहारपरक उद्देश्य कथनों में पूर्व वर्णित (कथित) तत्वों की पहचान कीजिए और यह बतायें कि इनमें से कौन सा कथन पूर्णत: है और कौन सा कथन अंशत व्यवहारपरक की कोटि में रखा जा सकता है :-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1. अभिक्रम (शिक्षण) पूरा होने के बाद छात्र छात्राएं विशेषण शब्दों को पहचान सकेंगे।
2. अभिक्रम का अध्ययन कर लेने पर विद्यार्थी प्रदत्त वाक्य सूची में से विशेषण को लगभग 3 मिनट की अवधि में रेखांकित कर लेगा।
3. अभिक्रम की समाप्ति पर विद्यार्थी पूरी कविता पढ़कर उसका सरल अनुवाद कर लेगा।
4. कविता का पाठ कर लेने पर विद्यार्थी उसमें तीन पदों की व्याख्या अपनी भाषा में कर लेगा।
5. कविता का पाठ कर लेने के बाद विद्यार्थी बिना सहायता के 5 मिनट के अन्दर उसकी आवृत्ति कर लेगा।
6. गद्य को पढ़ लेने के बाद विद्यार्थी अपनी समझ के आधार पर महत्त्वपूर्ण सूचनाओं की आवृत्ति कर सकेगा।
7. गद्य पाठ की समाप्ति पर विद्यार्थी पाठ में दिये गये अनुच्छेदों की बिना गलती के वाचन कर सकेगा।

ऊपरलिखित उद्देश्य कथनों को सावधानी एवं ध्यान से पढ़ने के बाद ज्ञात होगा कि इनमें से कुछ अंशतः व्यवहारपरक हैं जो इस प्रकार हैं – 1, 3, 6 और 7 और शेष कथन अर्थात 2, 4, 5 पूर्णतः व्यवहारपरक कहे जा सकते हैं क्योंकि इनमें तीनों तत्व विद्यमान हैं।

व्यवहारपरक उद्देश्यों की विशेषताएं
(Characteristics of behavioural objectives)

जैसे कि हम पहले ही इस बात की चर्चा कर चुके हैं कि सामान्य उद्देश्य और व्यवहारपरक उद्देश्य में अन्तर है। व्यवहारपरक उद्देश्यों में सीखने की दृष्टि से व्यवहार परिवर्तन का उल्लेख किया जाता है, जबकि सामान्य उद्देश्यों में ऐसा कुछ नहीं होता।

व्यवहारपरक उद्देश्यों की विशेषताएं निम्नलिखित हैं –

I. व्यवहारपरक उद्देश्यों को ऐसे कथन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिनमें धारणा की दृष्टि से स्पष्टता हो।

II. व्यवहारपरक उद्देश्यों द्वारा सन्दर्भ सम्बन्धित व्यवहार का स्वरूप अवलोकनीय और मापनीय होता है।

III. व्यवहारपरक उद्देश्यों के माध्यम से छात्र, शिक्षक और परीक्षक तीनों को लाभ होता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

IV. अभिक्रमित अधिगम की परिस्थितियों को ठोस रूप में गठित करने की दृष्टि से व्यवहारपरक उद्देश्य अत्यन्त गुणकारी होते हैं। इनके माध्यम से अधिगम अनुक्रम जनित सरल हो जाता है।

V. अभिक्रम (शिक्षण) के आधार पर परिवर्तित व्यवहार के मूल्यांकन हेतु अपेक्षित परीक्षा ढंग की रचना करने में भी व्यवहारपरक उद्देश्यों द्वारा पर्याप्त रूप से सहायता मिलती है।

VI. व्यवहार-परक उद्देश्यों के द्वारा शिक्षण और परीक्षण सम्बन्धी रचना कौशलों को निर्धारित करना सरल हो जाता है।

शैक्षिक उद्देश्यों का प्रतिपादन
(Formulation of Educational Objectives)

शिक्षण प्रक्रिया को आरम्भ करने से पहले शैक्षिक उद्देश्यों का प्रतिपादन किसी भी प्रकार की शैक्षिक व्यवस्था के लिये आवश्यक होता है। ये उद्देश्य सामान्य विशिष्ट एवं व्यवहारपरक ढंग से निरूपित किये जा सकते हैं। शिक्षा प्रणालियों का अध्ययन करते समय हम देखते हैं कि प्राय: इन प्रणालियों में शिक्षा के उद्देश्यों का उल्लेख किया जाता है। परन्तु आज प्रशिक्षण, अनुदेशन शिक्षण और अधिगम के क्षेत्र में व्यवहारपरक उद्देश्यों के प्रतिपादन की परम्परा बहुत चर्चा में है।

यहां इतना ध्यान अवश्य ही रखना होगा कि शिक्षण उद्देश्यों को अधिगम व्यवहार के तीन अनुक्षेत्रों में विभाजित कर विश्लेषण किया जाता है। ये क्षेत्र हैं :-

1. संज्ञानात्मक (Cognitive)
2. भावात्मक (Affective)
3. क्रियात्मक (Conative)

ब्लूम द्वारा निर्धारित अनुदेशनात्मक उद्देश्य

प्रोफेसर बी. एस. ब्लूम और उनके साथियों ने उपरोक्त तीनों अनुक्षेत्रों में उपलब्ध अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का अधिक्रमित रूप में वर्गीकरण किया है जिसे 'टैक्सानॉमी ऑफ एजुकेशनल ऑबजेकिटव्स' (Taxonomy of Educational Objectives) के नाम से जाना जाता है :-

शिक्षण-अधिगम की व्यवस्थाओं को गठित करने के लिये और पाठ्यक्रम निर्माण करने हेतु तथा मूल्यांकन करने के लिये वर्गीकरण किया जाता है।

I संज्ञानात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्य (Objectives in Cognitive Domain) – भाषा के क्षेत्र में संज्ञानात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्यों का सम्बन्ध छात्र एवं छात्राओं के बौद्धिक क्षमताओं तथा मानसिक गुणों के विकास से होता है – जैसे स्मृति, विवेक, साहचर्य, तर्क-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वितर्क, चिन्तन-मनन, अनुशीलन और तुलनात्मक अध्ययन आदि। इन उद्देश्यों को निम्नलिखित छः भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(1) ज्ञान (Knowledge) — जिसमें तथ्यों, पदों, प्रक्रियाओं आदि को बिना किसी फेर बदल के प्रत्यास्मरण (Recall) करना मुख्य मानसिक कार्य होता है।

(2) अवबोध (Comprehension) — जिसमें मानसिक क्रिया सीखे हुए तथ्य का दूसरे तथ्य से सम्बन्ध जोड़ने के रूप में सम्पन्न होती है। इसके मुख्य रूप हैं :- रूपान्तरण कर लेना और व्याख्या कर सकना।

(3) अनुप्रयोग (Application) — इसमें छात्र सीखे हुए ज्ञान और अर्जित अवबोध को नवीन परिस्थितियों में लागू कर लेता है।

(4) विश्लेषण (Analysis) — इसमें किसी विषय वस्तु को उसके अलग-अलग घटकों में विभाजित किया जाता है। इस प्रकार का विश्लेषण शब्दों, वाक्यों, नियमों और तथ्यों के सम्बन्धों के बारे में होता है।

(5) संश्लेषण (Synthesis) — इसके अन्तर्गत तथ्यों को जोड़कर एक नवीन संरचना गठित की जाती है। इसके माध्यम से किसी कार्यक्रम के लिये योजना की प्रस्तुति तथा अमूर्त सम्बन्धों के समूह की रचना होती है।

(6) मूल्यांकन (Evaluation) — इसमें विवेक और बाहरी कसौटियों के अनुसार कुछ विशेष मुद्दों पर निर्णय लिये जाते हैं और उनके मूल्यों का पता लगाया जाता है।

भाषा शिक्षण-अधिगम की दृष्टि से इन सभी का महत्त्व है।

II. भावात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्य (Objectives of affective domain) — भाषा के क्षेत्र में भावात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्य का सम्बन्ध व्यक्ति की रूचियों, आकर्षण, रागात्मक और सद्वृत्तियों के विकास से होता है- जैसे कविता के भाव पक्ष और कला पक्ष की सौन्दर्यानुभूति कराना रूचियों का विकास, साहित्य के प्रति आकर्षण और काव्य के माध्यम से रागात्मक और सद्वृत्तियों का विकास करना आदि। इन उद्देश्यों को निम्न पांच भागों में विभाजित किया गया है।

(1) ग्रहण (Receiving) — जिसके अन्तर्गत भाषा शिक्षण में ध्यान देना, तत्परता एवं नियन्त्रण अथवा चयनात्मक अवधान (Selective attention) की क्रियाएं प्रकट होती हैं।

(2) अनुक्रिया (Responding) — इस प्रक्रिया में व्यक्ति एक विशेष तरह की प्रतिबद्धता प्रदर्शित करता है, सक्रिय ढंग से रूचि दिखाता है और अनुक्रिया उत्पन्न की स्वीकृति, तत्परता एवं सन्तोष प्रकट करता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(3) आकलन (Valuing) — इसके अन्तर्गत व्यक्ति किसी मूल्य के लिये स्वीकृति, लगाव, अनुभूति एवं प्रतिबद्धता (उसके साथ बंध जाने) या अपनत्व का भाव प्रकट करता है।

(4) संगठन (Organising) — संगठन की प्रक्रिया के अन्तर्गत व्यक्ति की मूल्यों का संगठन कर एक मूल्य प्रणाली को अपना लेता है और उसे अपने व्यवहार में समाहित कर लेता है।

(5) चरित्र निरूपण (Characterisation) — इसमें व्यक्ति मूल्य प्रणाली की पकड़ करता है और उसे अपने जीवन का अंग मानकर प्रदर्शन करता है।

छात्र-छात्राओं के चरित्र निर्माण और सद्वृत्तियों के विकास के दृष्टिकोण से भावात्मक अनुक्षेत्र के शिक्षण उद्देश्यों का अत्यन्त महत्त्व है। इनसे आत्म सात्करण का अवसर मिलता है और विद्यार्थी उच्च व्यवहार प्रदर्शित करते हैं

III. क्रियात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्य (Objectives in Conative or Psychomolor Domain)– भाषा के क्षेत्र में क्रियात्मक अनुक्षेत्र (Psychomotor domain) के उद्देश्यों का सम्बन्ध मास-पेशियों के प्रयोग और उनके विकास से सम्बन्धित है। जैसे भाषायी कौशलों का विकास-सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना। बालकों को भाषा सिखाने के लिये प्रारम्भ में सुनने और बोलने के कौशलों पर विशेष रूप से बल दिया जाता है और इन कौशलों के विकास हेतु अभ्यास करवाया जाता है। इसके बाद पढ़ने और लिखने के कौशलों का अभ्यास करवाया जाता है। सुनने और बोलने के कौशलों को मुख्य माना जाता है। पढ़ने और लिखने के कौशलों को गौण माना जाता है। क्रमबद्धता की दृष्टि से भाषा सिखाने में सर्वप्रथम सुनने और बोलने की क्रिया और फिर पढ़ने और लिखने की क्रिया पर जोर दिया जाता है।

इ. जे. सिम्पसन ने क्रियात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्यों को पांच वर्गों में विभाजित किया है जो निम्नलिखित हैं –

(1) प्रत्यक्षीकरण (Perception) — इसके अन्तर्गत बालक पूरी परिस्थिति को समझते हुए शारीरिक गतिवाही क्रिया की ओर बढ़ता है।

(2) तत्परता (Set) — इसमें प्रारम्भिक सामंजस्य (Preparatory adjustment) करता है।

(3) निर्देशित अनुक्रिया (Guided Response) — इसके अन्तर्गत व्यक्ति किसी के निर्देशन के फलस्वरूप बाहरी रूप से क्रिया उत्पन्न करता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(4) रचना तन्त्र (Mechanism) — इसमें अनुकरण प्रक्रिया को अपनाते हुए स्वयं विश्वासपूर्वक क्रिया उत्पन्न कर लेता है।

(5) जटिल बाहरी अनुक्रिया (Complex overt response) — इसमें व्यक्ति इस योग्य हो जाता है कि अपेक्षित गति के साथ क्रिया उत्पन्न कर सकता है। भाषा शिक्षण के क्षेत्र में क्रियात्मक अनुक्षेत्र के शिक्षण उद्देश्यों का पर्याप्त रूप से महत्त्व है।

इन तीनों अनुक्षेत्रों के संज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक उद्देश्यों के अध्ययन के पश्चात् वर्तमान में व्यावहारिक रूप से देखें तो इस बात का पता चलता है कि संज्ञानात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर पर्याप्त रूप से अभिक्रम (प्रोग्राम) तैयार किये जा चुके हैं, लेकिन भावात्मक एवं क्रियात्मक अनुक्षेत्रों के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

अनुदेशनात्मक उद्देश्यों की पर्याप्त रूप से जानकारी के लिये और इनको प्राप्त करने हेतु अनुदेशन की परिस्थिति में प्रवेश करने से पहले विद्यार्थी की जो जानकारी या कुशलता पूर्व अर्जित रूप में उपकल्पित की जाती है (मानकर चलते हैं) उसका अभिक्रम में प्रत्याशित अधिगम (Expected learning) की दृष्टि से बड़ा महत्त्व है। इसे पूर्व अपेक्षित कौशल (Pre-requisite skill) का नाम दिया जाता है।

अभिक्रम बनाने के लिये अपेक्षित व्यवहार (अभीष्ट व्यवहार) से सम्बन्धित व्यवहार परक उद्देश्यों का निर्धारण करना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि छात्र के पूर्व अपेक्षित कौशल या कौशलों की सूची तैयार करना भी आवश्यक होता है। इस सम्बन्ध में पहली सूची को सही ना मानकर विवादास्पद मानना चाहिये। इसको सही और अन्तिम रूप देने के लिये छात्रों पर प्रयोग करके इस सूची का मूल्यांकन करना चाहिये।

यहां पर इस बात को पूर्ण रूप से समझ लेना चाहिये कि व्यवहार-परक उद्देश्यों और पूर्व अपेक्षित कौशलों में बहुत अन्तर है। व्यवहार-परक उद्देश्यों के माध्यम से अपेक्षित व्यवहार का विवरण दिया जाता है, जबकि पूर्व अपेक्षित कौशलों की सूची में छात्र की पूर्व जानकारी का संकेत मिलता है। ऐसी जानकारी के बिना छात्र को अनुदेशनात्मक परिस्थितियों से पूर्ण रूप में लाभ नहीं हो सकता।

प्राय: देखने में यह आता है कि अधिकतर अनुदेशनात्मक परिस्थितियों में पूर्व अपेक्षित ज्ञान व कौशल का उल्लेख आवश्यक माना जाता है। इस लिये इन कौशलों को व्यवहार-परक ढंग से व्यक्त करने की संस्तुति (प्रशंसा) होती है।

हिन्दी शिक्षण की दृष्टि से लगभग सभी पाठों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1. ज्ञान पाठ (Knowledge lesson)

2. भावात्मक पाठ (सौन्दर्यात्मक पाठ) (Appreciation lesson)

3. कौशल पाठ (Skill lesson)

मातृ भाषा हिन्दी शिक्षण में अनुदेशनात्मक उद्देश्यों में संज्ञानात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्यों का सम्बन्ध ज्ञान पाठ से है। भावात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्यों का सम्बन्ध सौन्दर्यात्मक पाठ (Appreciation lesson) से है और क्रियात्मक अनुक्षेत्र के उद्देश्यों का सम्बन्ध कौशल पाठ से है।

अन्त में निष्कर्ष रूप में यह कहना उचित ही होगा कि भाषा शिक्षण प्रक्रिया की व्यवस्था को विकसित और संगठित करने हेतु इन तीनों अनुक्षेत्रों (ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक) से सम्बन्धित हिन्दी पाठानुकूल व्यवहार-परक उद्देश्यों को लिखना आवश्यक है। व्यवहार-परक उद्देश्यों में अपेक्षित अधिगम व्यवहार की आवश्यक दशाओं तथा उचित परिमाण कसौटियों का पूरा विवरण होता है। इस लिये यह कहा जा सकता है कि शिक्षण परिस्थितियों को उत्पन्न करने और उनकी प्रभावपूर्णता का मूल्यांकन करने की दृष्टि से अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का प्रतिपादन शिक्षक और छात्र के लिये बहुत लाभकारी सिद्ध हुआ है।

अभ्यास के प्रश्न

1. भाषा से आप क्या समझते हैं ? उसकी प्रकृति क्या है ? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
2. भाषा के महत्त्व और उसके अध्ययन की आवश्यकता पर विस्तार से निबन्ध लिखिए।
3. भाषा के विभिन्न रूप कौन-कौन से हैं ? भाषा के सर्वमान्य रूप की सुरक्षा हेतु आप क्या करेंगे ?
4. भाषा के महत्त्व और उसके अध्ययन की आवश्यकता पर एक निबन्ध लिखिए।
5. मातृ-भाषा से आप क्या समझते हैं ? इसके महत्त्व की विस्तार से चर्चा करते हुए पाठ्यक्रम में इसका स्थान निश्चित कीजिए।
6. 'मातृ-भाषा की शिक्षा पर विद्यार्थियों का मानसिक एवं बौद्धिक विकास निर्भर करता है' इस कथन की विवेचना कीजिए और विद्यालयों में मातृ-भाषा की शिक्षा पर ध्यान न देने से होने वाली हानियों का उल्लेख कीजिए।
7. अंग्रेजी सम्बन्धित दास मानसिकता को दूर करने और राष्ट्र की अखंडता को सुरक्षित रखने के लिये राष्ट्र भाषा हिन्दी को ही उच्च शिक्षा का माध्यम बनाना चाहिये। इस कथन की विवेचना विस्तार से कीजिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

8. भाषा और मानसिक विकास पर निबन्ध लिखिए।

9. शिक्षक को छात्र-छात्राओं के बौद्धिक एवं मानसिक विकास के अनुसार शिक्षण का कार्यक्रम रखना चाहिये। उदाहरण सहित व्याख्या करें।

10. मातृ-भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण का महत्त्व बताते हुए इसके शिक्षण के प्रमुख उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।

11. हिन्दी शिक्षण के विभिन्न उद्देश्यों पर विस्तार से प्रकाश डालिये और स्पष्ट कीजिए कि वर्तमान स्थिति में स्कूलों में इन उद्देश्यों की पूर्ति कहां तक हो रही है?

12. ब्लूम द्वारा निर्धारित हिन्दी शिक्षण के अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का विस्तार से उल्लेख कीजिए।

13. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(1) मातृ-भाषा की विशेषतायें।

(2) हिन्दी भाषा के लाभ।

(3) भाषा उद्भव और विकास।

राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य

हम मातृ भाषा-शिक्षण के रूप में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों की विस्तार से व्याख्या कर चुके हैं। इसमें हमने मुख्य रूप से तीन उद्देश्यों को लिया था – अर्थ-ग्रहण, अभिव्यक्ति और कौशल। इन तीनों का वर्गीकरण करते हुए अन्य उद्देश्यों पर भी प्रकाश डाला था। मातृ भाषा शिक्षण के रूप में इन सभी उद्देश्यों की पूर्ति अत्यन्त आवश्यक है। अब हमारे लिये इस बात पर विचार करना आवश्यक हो जाता है कि हिन्दी के द्वितीय भाषा (Second language) शिक्षण अर्थात् राष्ट्र भाषा शिक्षण के रूप में क्या उद्देश्य हैं और इन दोनों के उद्देश्यों में कितनी समानता और असमानता है। इस बात का उत्तर जानने के लिये हमारे लिये यह आवश्यक हो जाता है कि हम इस बात को जानें कि दोनों रूपों में भाषा सिखाने के पीछे हमारा दृष्टिकोण क्या है। अर्थात दोनों रूपों में भाषा सिखाने के लिये हमारी किस प्रकार की भिन्न-भिन्न अपेक्षाएं हैं।

उपरोक्त बात को ध्यान में रखते हुए बालकों को भाषा की सीख इस लिये दी जाती है –

I. भाषा विचार-विनिमय का सर्वोत्तम साधन है, इसलिए हम बच्चों को भाषा सिखाते हैं।

II. माता एवं मातृभाषा दुनिया में सबसे अधिक प्रिय होती हैं। अत: प्रारम्भ में माता मातृभाषा के माध्यम से बच्चों को जो कुछ भी सिखायेगी उसका उन पर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
अमिट प्रभाव पड़ेगा। इसलिए प्रारम्भिक शिक्षा माता के चरणों में और मातृ भाषा के द्वारा होनी चाहिए।

III. मातृभाषा व्यक्ति को माता के नजदीक लाती है तो राष्ट्रभाषा मातृभूमि के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करती है।

IV. मातृभाषा उसी भाषा को बोलने वालों को परस्पर नजदीक लाती है तो राष्ट्रभाषा लोगों को एकता के सूत्र में बाँध देती है।

V. मातृभाषा की सीमा अपना क्षेत्र है तो राष्ट्र भाषा की सीमा अपना राष्ट्र।

VI. कौशल की दृष्टि से मातृभाषा में जो कौशल सम्भव है वह राष्ट्रभाषा में नहीं इसका यह आशय कदापि नहीं कि राष्ट्रभाषा में कुशलता प्राप्त की ही नहीं जा सकती।

इन सभी बातों पर सोचने विचारने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि -

(क) यदि हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य–अर्थग्रहण, अभिव्यक्ति और कौशल लें तो राष्ट्रभाषा शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य अर्थग्रहण एवं अभिव्यक्ति होंगे। कौशल न आ पाये तो भी कोई बात नहीं।

(ख) ज्ञान, भावना और कर्म की दृष्टि से राष्ट्र की एकता के लिए राष्ट्र के लोगों की भावना में परिवर्तन लाना आवश्यक है और भावना परिवर्तन के लिए ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। इस दृष्टि से भी राष्ट्रभाषा शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य लोगों की भावनाओं में परिवर्तन करना होगा।

(ग) ज्ञान, समझ, ज्ञानोपयोग एवं कौशल आदि उद्देश्यों की दृष्टि से राष्ट्रभाषा शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य ज्ञान, समझ, ज्ञानोपयोग एवं अभिवृत्ति परिवर्तन तक सीमित रह सकता है।

उपरोक्त बातों के ध्यान में रखते हुए राष्ट्र भाषा शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

I. छात्रों में राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न करना।

II. छात्रों को प्रान्तीयता एवं भाषावाद से दूर रहने की शिक्षा देना।

III. छात्रों की संकीर्णता से दूर रहने की शिक्षा देना।

IV. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे दूसरों के विचारों को राष्ट्रभाषा के माध्यम से ग्रहण कर सकें।

V. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे राष्ट्रभाषा में दूसरों के विचारों को पढ़ सकें

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

VI. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे राष्ट्र भाषा में अपने विचारों को दूसरों के सामने बोलकर अभिव्यक्त कर सकें।

VII. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे अपने विचारों को दूसरों के सम्मुख लिखकर अभिव्यक्त कर सकें।

VIII. देश के लोगों को इस योग्य बनाना कि उन्हें देश के किसी भाग में जाने पर भाषायी कठिनाई न हो।

IX. देश के सभी लोग देश की संस्कृति रीति रिवाजों आदि से परिचित हों।

X. देश में सभी स्थानों पर राज्य कार्य एक ही भाषा में हों।

XI. देश के सभी लोग एकता के सूत्र में बंधें।

XII. एक प्रान्त के लोग नौकरी या जीविकोपार्जन की दृष्टि से देश के विभिन्न भागों में समायोजित हो सकें।

इन उद्देश्यों को कैसे पूर्ण कर सकते हैं ?

इन उद्देश्यों की पूर्ति तभी सम्भव है जब वे सभी बातें पूर्ण की जायें जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है जैसे–

(क) सरकार एक सुनिश्चित योजना बनाकर सभी भारतीय पाठशालाओं में उच्च प्राथमिक स्तर से ही हिन्दी को राष्ट्रभाषा अध्ययन के रूप में अनिवार्य कर दे।

(ख) हिन्दी विरोधी देश हित में हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करें।

(ग) हिन्दी के समर्थक हिन्दी को हठात् दूसरों पर थोपने का प्रयत्न न करें।

शिक्षण प्रणालियों की दृष्टि से

I. प्रारम्भिक कक्षाओं में प्रत्यक्ष वस्तुओं को हिन्दी नामों से प्रारम्भ किया जाए। जिन वस्तुओं या बातों को छात्र मातृभाषा के माध्यम से जानते हैं, उन्हें ही पहले लिया जाए।

II. पहले मौखिक भाषा पर विशेष बल दिया जाये। जब मौखिक भाषा काफी सरल बन जाये तभी लिखित भाषा को लिया जाए।

III. मौखिक भाषा के लिए पारम्परिक औपचारिक या अनौपचारिक वार्ता को अधिक से अधिक महत्त्व दिया जाए।

IV. व्याकरण के सैद्धान्तिक पक्ष पर इतना बल न दिया जाए जितना कि व्यावहारिक प्रयोग पर। भाषायी नियमों की जानकारी व्यावहारिक रूप से ही दी जाए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

V लिखने की अपेक्षा पढ़ना अधिक सरल है। अतः पहले बच्चे को अक्षर और शब्द ज्ञान कराया जाए और उसके पश्चात् उनसे पुस्तकें पढ़वाई जाएँ। जैसे-जैसे वे अक्षर, शब्द या वाक्यों को पढ़ने लगे तैसे-तैसे लिखने का अभ्यास कराया जाए।

VI. जहां तक हो सके, जो भी नवीन बात बताई जाये वह क्षेत्रीय भाषा के साथ सह-सम्बन्ध स्थापित करके बताई जाए। इससे बच्चे सरलता से नयी बातों को सीख जाते हैं।

यदि यह सम्भव हुआ तो राष्ट्रभाषा के रूप में निर्धारित सभी उद्देश्यों की कठिनाई में यथेष्ट सरलता हो जायेगी और सम्भवतः सभी उद्देश्यों की पूर्ति भी हो सकेगी।

अभ्यास के प्रश्न

1. राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
2. मातृ भाषा शिक्षण के रूप में हिन्दी शिक्षण और राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों का अन्तर स्पष्ट कीजिए।
3. हिन्दी को द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाने के क्या उद्देश्य हैं ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2

प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य (Objectives of Teaching Hindi at Elementary and Secondary Level)

हम हिन्दी शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों और व्यवहारगत उद्देश्यों के साथ-साथ राष्ट्र भाषा के रूप में भी हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों की चर्चा पहले ही विस्तार से कर चुके हैं। अब हमें इस बात पर विचार करना है कि विभिन्न स्तर पर हिन्दी शिक्षण के भिन्न-भिन्न उद्देश्य क्या हों ?

I. प्राथमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य (Objectives of Teaching Hindi at Elementary Level)

(1) छात्र-छात्राओं को अक्षरों का ज्ञान देना और उच्चारण में शुद्धता लाना।

(2) उनको इस योग्य बनाना कि वे अपने स्तर की भाषा में ठीक प्रकार के बातचीत कर सकें।

(3) वे अपने स्तर की शब्दावली को सुनकर और पढ़कर भली भांति समझ सकें।

(4) छात्र-छात्राओं को सस्वर वाचन के लिये तैयार करना।

(5) छात्र-छात्राओं को इस योग्य बनाना कि अपने स्तर की पाठ्य पुस्तक की विषय-वस्तु का मौन पाठ करके समझ सकें।

(6) उनको इस योग्य बनाना कि वे अपने शब्द भण्डार में वृद्धि करें।

(7) शब्द भण्डार में जिन शब्दों की वृद्धि करें उनका व्यावहारिक जीवन में सक्रिय रूप से प्रयोग भी करें।

(8) छात्र-छात्राओं को प्रवाह पूर्ण रूप से वाचन करने के लिये तैयार करना।

(9) उनको लिपि का ज्ञान कराना और उसका अभ्यास भी कराना।

(10) उनको सुलेख की शिक्षा देना और उसका अभ्यास भी कराना।

(11) छात्र-छात्राओं को शुद्ध लिखने के लिये प्रशिक्षण देना।

(12) उनको श्रुतलेख की शिक्षा देना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(13) कविताओं अथवा बालगीतों को भावानुकूल वाचन करने के लिये तैयार करना।

(14) उनको इस योग्य बनाना कि वे क्रमबद्धता से अपनी बात को कह सकें।

(15) उनको मौखिक अभिव्यक्ति हेतु बोलने के लिये सुअवसर प्रदान करना।

(16) उनको दैनिक जीवन के अनुभवों को बोलकर और लिखकर अभिव्यक्त करने के लिये प्रेरित करना।

(17) उनको स्वतन्त्र अध्ययन के लिये प्रेरित करना।

(18) छात्र-छात्राओं की भाषा सम्बन्धी रूचियों को विकसित करने के लिये अवसर प्रदान करना।

II. मिडल स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य
(Objectives of Teaching Hindi at Middle Level)

मिडल स्तर पर हिन्दी शिक्षण के निम्न उद्देश्य हैं-

(1) छात्र-छात्राओं के शब्द भण्डार एवं सूक्ति भण्डार में वृद्धि करना।

(2) उनको पढ़ी हुई सूक्तियों, मुहावरों और लोकोक्तियों को वाक्यों में प्रयोग करने के लिये प्रेरित करना ताकि वे अपनी मौखिक अभिव्यक्ति को प्रभावपूर्ण बना सकें।

(3) उनको इस योग्य बनाना कि वे अपने शब्द भण्डार का सक्रिय रूप से प्रयोग कर सकें।

(4) उनको भाषा का शुद्ध ज्ञान देने हेतु व्याकरण के नियमों को जानने के लिये प्रेरित करना।

(5) उनको विराम, पूर्ण विराम और आरोह-अवरोह का ध्यान रखते हुए सस्वर वाचन की शिक्षा देना।

(6) उनको मौनवाचन के माध्यम से गहन अध्ययन करने के लिये प्रेरित करना।

(7) छात्र-छात्राओं में स्वाध्याय की प्रवृत्ति का विकास करने के लिये पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त स्कूल के पुस्तकालय अन्य पुस्तकों को पढ़ने के लिये मार्गदर्शन करना।

(8) छात्र-छात्राओं को स्वाध्याय का प्रशिक्षण देते हुए उनकी साहित्य के प्रति रूचि का विकास करना।

(9) उनको सौन्दर्यानुभूति का बोध कराना और कविताओं को पढ़कर रसानुभूति का आभास कराना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(10) उनको कविता विशेष के भाव और कवि के सन्देश को समझने के योग्य बनाना।

(11) छात्र-छात्राओं को शुद्ध और उचित गति से लिखने की योग्यता का विकास करना।

(12) साहित्य की विभिन्न विधाओं से परिचित कराना जैसे कहानी, कविता, निबन्ध, नाटक एकांकी, व्यंग लेख, पत्र आदि।

(13) छात्र-छात्राओं को रचनात्मक कार्यों के लिये प्रेरित करना अर्थात् पाठ्य सहगामी क्रियाएं उपलब्ध करवाना ताकि वे अपनी रूचि अनुसार कविता पाठ, भाषण, अभिनय में भाग ले सकें।

(14) उनको साहित्य की विभिन्न विधाओं की शौलियों से परिचित कराना।

III. माध्यमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्‌देश्य
(Objectives of Teaching Hindi at Secondary Level)

इस स्तर पर पहुंचने तक छात्र-छात्राएं हिन्दी भाषा और उसकी विभिन्न विधाओं के बारे सामान्य जानकारी तो प्राप्त कर लेते हैं परन्तु इनके गहन पहलुओं के बारे में पूर्ण रूप से जानकारी नहीं होती। यही कारण है कि इस स्तर पर हिन्दी भाषा साहित्य के पाठ्यक्रम में कहानियों, एकांकी, साहित्यिक निबन्धों, जीवनियों और विभिन्न रस से सम्बन्धित कविताओं को सम्मिलित किया जाता है। इस स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्‌देश्य कुछ विस्तृत एवं उच्च होते हैं। इस स्तर पर प्रमुख उद्‌देश्य इस प्रकार हैं –

I. छात्र-छात्राओं को मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति में निपुण करने का प्रयास करना।

II. उनमें सस्वर वाचन और मौन वाचन के द्वारा गहन विचारों को ग्रहण करने की शक्ति का विकास करना।

III. छात्र-छात्राओं को साहित्य की विभिन्न विधाओं के गहन अध्ययन की शिक्षा देना।

IV. भाषा का दैनिक जीवन में बोलकर और लिखकर व्याकरण के नियमानुसार प्रयोग करना।

V. उनको शब्द भण्डार में वृद्धि के लिये प्रेरित करना और नये शब्दों का सक्रिय रूप से प्रयोग करने के लिये उनका मार्ग दर्शन करना।

VI. उनको इस योग्य बनाना कि वे भाषा का व्यावहारिक विश्लेषण कर सकें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

VII. उनको सौन्दर्यानुभूति और रसानुभूति के विभिन्न पक्षों का ज्ञान देना।

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

VIII. उनको हिन्दी भाषा साहित्य की विभिन्न विधाओं की विभिन्न शैलियों से परिचित कराना।

IX. उनको विभिन्न लेखन शैलियों का ज्ञान देकर उनको अपनी लिखित अभिव्यक्ति के सुधार के लिये प्रेरित करना।

X. उनमें साहित्य से सम्बन्धित चिन्तन और मनन शक्ति का विकास करना।

XI. उनमें साहित्य के माध्यम से सद्वृत्तियों का विकास करना।

XII. उनको चार भाषायी कौशल–सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना में निपुण करना।

XIII. छात्र–छात्राओं में सृजनात्मक (रचनात्मक) प्रवृत्तियों का विकास करना।

अभ्यास के प्रश्न

1. प्राईमरी स्तर के भाषा शिक्षण उद्देश्यों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
2. माध्यमिक स्तर पर भाषा शिक्षण के प्रमुख उद्देश्यों का स्पष्टीकरण कीजिए।
3. प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर मातृभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के विभिन्न उद्देश्यों की व्याख्या करें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3

भारत में हिन्दी भाषा की सम्पर्क भाषा के रूप में भूमिका (Role of Hindi as a link language in India)

विश्व में अनेक भाषाएं हैं। विश्व में जितनी ही जातियां हैं, देश हैं, प्रान्त हैं उतनी ही भाषाएं एवं बोली दैनिक व्यवहार के अन्तर्गत प्रयोग में लाई जाती हैं। भारत वर्ष में तो अनेक भाषाएं हैं इस लिये इसे बहुभाषायी देश कहा जाता है। यहां पर 'भाषा बहता नीर' और 'पग-पग रोटी और डग-डग नीर' की कहावत पूर्ण रूप से चरितार्थ होती है। भारत में लगभग दो दर्जन से अधिक भाषाएं बोली जाती हैं। आज का युग मिलन एवं परस्पर आदान प्रदान का युग है। विज्ञान के नये-नये आविष्कारों के परिणामस्वरूप यातायात के साधनों ने अब स्थान और समय की दूरी को समाप्त कर दिया है। दूर देशवासी लोग एक दूसरे से मिलते हैं। इसके बिना उनका काम भी नहीं चल सकता। इस लिये स्वतन्त्र देश में एकता का महत्त्व और भी बढ़ गया है।

एक क्षेत्र या स्थान के लोग तो आपस में अपनी भाषा में बातचीत कर लेते हैं लेकिन कठिनाई दूसरे देश या राष्ट्र या प्रान्तवासी से बातचीत करने में आ जाती है। इस समस्या के समाधान हेतु सम्पर्क भाषा का होना अत्यन्त आवश्यक होता है। उदाहरण के रूप में एक हरियाणा वासी और तमिलनाडू प्रान्त का रहने वाला परस्पर मिलें तो अपनी-अपनी भाषा में विचार विनिमय नहीं कर सकते। यह तो तभी सम्भव हो सकता है जब वे दोनों एक दूसरे के प्रान्त की भाषा सीख लें। लेकिन सभी प्रान्तीय भाषाओं का सीखना बहुत कठिन कार्य है। इन सभी कठिनाईयों के निवारण हेतु स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व भी हमारे देश में एक राज भाषा रही है, जिसका सीखना सभी प्रान्तवासियों के लिये आवश्यक था। प्राचीन काल में संस्कृत राज भाषा पद पर सुशोभित थी। तत्पश्चात मुसलमानों और अंग्रेजों ने अपनी-अपनी भाषाओं-फारसी तथा अंग्रेजी को यह स्थान देने का प्रयत्न किया। कुछ शिक्षित लोगों में यह बात प्रचलित भी रही परन्तु साधारण लोग इस भाषा से परिचित नहीं हो सके। वे हिन्दी भाषा का ही व्यवहार में प्रयोग करते थे।

किसी भी देश या राष्ट्र में जिस भाषा का अधिकांश लोग व्यवहार में प्रयोग करते हों और जिसका प्रचार एवं प्रसार अधिक हो वह उस देश की राष्ट्र भाषा कहलाती है। राष्ट्र

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाषा और राजभाषा में थोड़ा अन्तर होता है। राज भाषा वह होती है जिसमें शासन का का
चलता है। इस भाषा का राष्ट्र भाषा होना आवश्यक नहीं होता, जैसा कि फ़ारसी और अं
के रूप में हो चुका है। यदि राष्ट्र भाषा और राज भाषा का दर्जा एक ही भाषा को प्राप्त हो
है तो इससे जनता और शासन को पूर्ण रूप से सुविधा रहती है।

हमारा इतिहास इस बात का गवाह है कि भारत में सदा से उत्तर-प्रदेश की भाषा
ही राष्ट्र भाषा का दर्जा मिलता रहा है। उत्तर प्रदेश की भाषा संस्कृत के रूप में सदियों त
भारत की राष्ट्र भाषा रह चुकी है। सम्प्रदाय, धर्म, या हठ के कारण एक दो बार पाली भा
को इस पद पर रखा गया। परन्तु किसी न किसी उथल पुथल ने यह स्थिति बदल दी
तेरहवीं शताब्दी से ही भारत में साहित्य की भाषा के रूप में ब्रजभाषा तथा अवधि का प्रच
था। मेरठ के आस पास की भाषा, जो खड़ी बोली कहलाती थी, बोलचाल तक ही सीमि
थी। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में इस खड़ी बोली ने बहुत सहारा दिया। सारे देश में इसी
सहारे विचार विनिमय तथा संगठन किया गया। दो मुख्य प्रचारकों-स्वामी दयानन्द सरस्व
एवं महात्मा गांधी ने गुजराती होते हुए भी खड़ी बोली हिन्दी को अपना माध्यम बनाय
साहित्य की अनेक रचनाएं हिन्दी की स्थाई निधि है। संसार के किसी भी साहित्य
तुलना में हिन्दी के साहित्य को प्रस्तुत किया जा सकता है। हिन्दी साहित्य के निर्माण
हिन्दी भाषा-भाषियों के साथ-साथ अन्य लोगों ने भी योगदान दिया है। कामल बुल्के
प्रभाकर माचवे आदि विद्वान इसके जीते जागते उदाहरण हैं कि हिन्दी भारतीय आत्मा
भाषा हैं।

देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात् भारत के नेताओं ने इस देश की राष्ट्र भाषा के प्रश्न
विचार किया। वैसे तो स्वतन्त्रता से पूर्व ही हिन्दी जनमानस की भाषा थी लेकिन इस
बावजूद यह निर्णय लिया गया कि आने वाले 15 वर्षों में हिन्दी को राष्ट्र भाषा का द
प्राप्त हो जायेगा। यह 15 वर्ष की अवधि अंग्रेजी शासन में पहले कर्मचारियों को हिन्दी
अभ्यास करने और हिन्दी को राज-कार्य के अनुकूल बनाने के लिये निश्चित की गई।
अवधि में हिन्दी में पारिभाषिक और वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दों का निर्माण करना
किया गया था।

प्रारम्भ में हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाते समय उसका प्रबल विरोध किया गया था।
विरोध आज भी पूरी तरह से शान्त नहीं है। इसका कारण है कि अंग्रेजी मानसिकता। दू
दक्षिण भारत के लोग भी हिन्दी का विरोध इसलिये करते हैं कि हिन्दी भाषी लोग स
सरकारी नौकरियों पर अपना अधिकार कायम रखेंगे। उनकी यह शंका आधार रहित
क्योंकि हिन्दी का सीखना अंग्रेजी की तुलना में बहुत सरल और बोधगम्य है। दूसरे प्रान्तों
कार्य तो प्रान्तीय भाषा में ही होंगे। कुछ लोग अपने स्वार्थ हेतु अपनी नेतागिरी को चमक
के लिये हिन्दी का विरोध करते हैं। यही कारण है कि आज तक केन्द्रीय सरकार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कार्यालयों में अंग्रेजी भाषा में कार्य हो रहा है। हमारे दक्षिण भारतीय बन्धु आज भी हिन्दी का विरोध कर रहे हैं जो कि उनके लिये ऐसा करना उचित नहीं है। हिन्दी को सम्पर्क भाषा बनाने हेतु उन्हें चाहिये कि जो शक्ति और मेहनत वे हिन्दी के विरोध में खर्च करते हैं अगर उतनी शक्ति और श्रम हिन्दी के सीखने में लगायें तो हिन्दी को वह स्थान निश्चित रूप से मिल जायेगा जिसकी वह आधिकारिणी है।

हिन्दी सम्पर्क भाषा के रूप में राष्ट्र की आकांक्षाओं और हितों को एक सूत्र में बांध कर एक ईकाई के रूप में प्रस्तुत करती है। भारत जैसे विशाल देश जिसका क्षेत्र इतना व्यापक है, जिसका इतिहास इतना प्राचीन है भाषाओं की विविधता का होना स्वाभाविक है फिर भी भारत में कुछ ऐसे तत्व व शक्ति है जो अनेकता में एकता बनाये हुए है। इन सभी तत्वों में सबलतम तत्व है हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी। हिन्दी विश्व की पांच प्रमुख भाषाओं में से एक है जिसे कम से कम बीस करोड़ लोग अपनी मातृभाषा अथवा प्रमुख साहित्यिक भाषा के रूप में प्रयोग करते हैं। इस प्रकार हिन्दी भाषा विश्व की इनी-गिनी भाषाओं में से एक समृद्ध भाषा है जिसका गौरवपूर्ण साहित्य है।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपनी सूझ-बूझ का परिचय देते हुए कहा था कि विदेशी भाषा का दबाव किसी देश की चमक से भले ही कुछ समय के लिये वास्तविकता के प्रति अंधा बना दे, किन्तु यह जादू सदा नहीं चलता, शीघ्र ही जनता जागती है और वह विदेशी भाषा का जुआ कंधे से फैंक देती है। आज भारत की स्थिति उस समय के इंगलैंड जैसी है जब उसने फ्रांस से अपने आपको मुक्त करा लिया किन्तु फ्रैंच भाषा का दबदबा बना रहा। अन्त में जब जनता चेती तो उन्हों ने अपने कंधे से फ्रांसीसी भाषा को झटक दिया। भारत भी धीरे धीरे चेत रहा है भारतीय जनता अनुभव करने लगी है कि अंग्रेजी सभी भारतीय भाषाओं का हक हडप रही है। यह वह वट-वृक्ष है जिसकी छाया में और कोई भाषा-वृक्ष पनप नहीं सकता। जैसे बिल्लियों के झगड़े में सारा माल बंदर हथिया ले गया था। इसी प्रकार भारतीय भाषाओं के वर्तमान कलह में सारा माल अंग्रेजी के हाथ आ रहा है। इसका परिणाम भारतीय भाषाओं का पतन, इतिहास का लोप संस्कृति में विकार और देश के चिन्तकों का उदासीन हो जाना होगा। इतने भयंकर परिणाम को सहन करने के लिये कौन तैयार होगा। यही कारण है कि भारत का प्रत्येक प्रबुद्ध (बुद्धिजीवी) व्यक्ति जब राष्ट्र के हित पर विचार करता है तो इसी निष्कर्ष पर पहुंचता है कि भारत को इस समय येन-केन प्रकारण (जैसे भी हो) अंग्रेजी से मुक्ति पानी ही होगी।

स्वार्थी एवं कुर्सी के लोलुप नेता दक्षिण राज्य हिन्दी के विरुद्ध जहर उगलते हैं। 'हिन्दी थोपी नहीं जायेगी' का अलगाववादी नारा उसी प्रकार लगाया जा रहा है, जिस प्रकार 'इस्लाम खतरे में है' का नारा लगाया जाता है। हिन्दी भाषा भाषियों को इसका उत्तर दक्षिण की कोई भाषा सीखकर दे सकते हैं। इसका एक सुखद और प्रशंसनीय परिणाम यह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

होगा कि अन्य भारतीय भाषाओं का ज्ञान अनुवाद के माध्यम से हिन्दी क्षेत्र को और अ समृद्ध करेगा। ऐसा करने से सम्पूर्ण राष्ट्र में एकता की भावना फले फूलेगी।

राष्ट्र भाषा हिन्दी सम्पर्क भाषा के रूप में – हिन्दी और हिन्दी साहित्य का बहुत विस्तृत है। उर्दू और हिन्दुस्तानी ये दोनों भाषाएं भी इसी के रूप हैं। हमारे साम प्रश्न उपस्थित होता है कि हिन्दी भाषा के किस रूप को राष्ट्र-भाषा माना जाये। भा संविधान ने खड़ी बोली हिन्दी को राष्ट्र-भाषा के रूप में स्वीकार किया है। आज हिन्दी सरलीकरण की बात लोकप्रिय हो रही है। लोकतन्त्र में जनता की आवाज़ की सुनवा जानी चाहिये। लोकतन्त्र बहुमत में विश्वास करता है। भाषा के क्षेत्र में भी हमें इस सत्य स्वीकारना चाहिये। हिन्दी का रूप उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी, संस्कृत, भारत में प्रयोग वाली देशी एवं विदेशी सभी भाषाओं के मिश्रण (योग) से बनी हुई खिचड़ी भाषा हो निश्चित करने के लिये भाषा-विज्ञान को आधार बनाना चाहिये और इसके वैज्ञानिक रू समझना चाहिये।

हिन्दी का हिन्दुस्तानी रूप – जब मुसलमानों का भारत में आगमन हुआ तो य हिन्दी का प्रयोग होता था लेकिन जब वे सत्ता में आये तो अरबी और फारसी राजभ बनीं। साहित्य के क्षेत्र में हिन्दी पनपती रही, लेकिन व्यावहारिक रूप में अरबी और फ का प्रयोग होने लगा और इसके परिणामस्वरूप अरबी और फारसी के मेल से एक नई का जन्म हुआ जिसे उर्दू की संज्ञा दी जाती है। अंग्रेजों के शासन काल में संज्ञा और वि फारसी तथा अरबी भाषा के और सर्वनाम, क्रिया-पद, कारक एवं अधिकांश प्रत्यय भाषा के मेल से एक नई भाषा बनी जिसे अंग्रेजों ने हिन्दुस्तानी भाषा का नाम दिया। शब्दों में यह कहा जा सकता है कि हिन्दी और उर्दू की आपसी मिलावट ही हिन्दुस्ता पं. जवाहर लाल नेहरू इस हिन्दुस्तानी के बड़े समर्थक थे। आज भी कुछ लोग हिन्दु के हिमायती हैं और इसको बढ़ावा देने का प्रयास कर रहे हैं। लेकिन उनके लिये ऐसा उचित नहीं है। क्योंकि हिन्दुस्तानी का ना तो कोई साहित्य है और न ही कोई व्याकर

हिन्दी का सरलीकरण

कुछ लोगों का मत है कि हिन्दी को सरल बनाने हेतु उर्दू, अंग्रेजी और अन्य भा का प्रयोग करना चाहिये। लेकिन उनकी यह बात तर्क संगत प्रतीत नहीं होती क्योंकि भाषा हिन्दी को विदेशी भाषाओं के शब्दों के मेल से सरल बनाने की बात में कोई औ और सार्थकता दिखाई नहीं देती। जहां तक भारतीय भाषाओं का सम्बन्ध है और उ समान शब्दों को हिन्दी भाषा में प्रयोग करने में कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन इसके लि भाषा विज्ञान का सहारा अवश्य ही लिया जाना चाहिये। हिन्दुस्तानी की कल्पना तो को सरल नहीं बल्कि कठिन और विकृत बनाने की सोच है। हिन्दी में अरबी और फ के शब्दों की भरमार कर 'पानी' को 'आब' कहने और आग को 'आतिश' कहने की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रते हैं। कल बंगाली भाषा प्रेमी बंगाली शब्दों के योग से हिन्दी को सरल बनाने की बात हेंगे, मराठी, मराठी भाषा और आसामी, आसामी भाषा के शब्दों के लिये, और न जाने ौन क्या कहेगा। आखिर भारत प्रजातन्त्र देश है और प्रजातन्त्र में सबको अपनी बात कहने ा अधिकार है। इस प्रकार पांच भाषाओं के मेल से भाषा सरल नहीं बल्कि विकृत रूप ारण कर लेगी।

उपरोक्त सभी कठिनाईयों और बाधाओं को देखते हुए देश में एक ऐसी स्वदेशी भाषा ा होना आवश्यक है जिससे व्यक्ति का व्यक्ति से, समूह का समूह से, प्रान्त का प्रान्त से ौर सभी व्यक्तियों, सभी समूहों और सभी प्रान्तों का देश से सम्पर्क स्थापित हो सके। सलिये एक राष्ट्र भाषा का होना अत्यन्त आवश्यक है। हिन्दी ही एक ऐसी लोकप्रिय भाषा जो राष्ट्र भाषा के रूप में सम्पर्क भाषा (Link language) की भूमिका बाखूबी निभा कती है।

हिन्दी के राष्ट्र भाषा बनने के कुछ तर्क संगत कारण निम्न हैं जिनकी उपेक्षा नहीं की ा सकती।

I. यह बहुसंख्यक की भाषा है।
II. इसे भारत की अधिकांश जनता सरलता से समझ सकती है।
III. हिन्दी भाषी देश के सभी भागों में मिलते हैं।
IV. यह हमारे अपने देश की भाषा है।
V. यह हमारे समृद्ध साहित्य और संस्कृति का आधार है।
VI. इसकी लिपि सरल और सुबोध है।
VII. इसका सबसे बड़ा गुण यह है कि जैसे इसका उच्चारण होता है वैसे ही लिपिबद्ध होती है।
VIII. विदेशों में भी हिन्दी बोलने वालों की संख्या अन्य भारतीय भाषाओं के बोलने वालों की अपेक्षा अधिक है।
IX. जन संचार साधनों में भी भारत में जितना हिन्दी भाषा का प्रयोग होता है इतना किसी अन्य भारतीय भाषा का नहीं होता।

उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण कारण जो निम्न हैं–

I. राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने की दृष्टि से।
II. भाषा के आधार पर देश को विघटन और विघटन शक्तियों से बचाने के लिये।
III. राष्ट्र के सभी नागरिकों में पारस्परिक प्रेम एवं सद्भाव बनाये रखने के लिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

IV. राष्ट्र के सभी नागरिकों के पारस्परिक विचार विमर्श के लिये।

V. अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि के लिये भी राष्ट्र एवं सम्पर्क भाषा का होना अत आवश्यक है।

VI. भारत में हिन्दी भाषा में निर्मित अनेक फिल्मों ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की ख प्राप्त की है। वैसे भी भारत में सबसे अधिक फिल्में हिन्दी माध्यम की बनती हैं जो कि देश विदेश में खूब पसन्द की जाती हैं।

सारांश में यह कहना उचित होगा कि यह अटल सत्य है कि हिन्दी समर्थ भाषा है पूरे भारत की एकता का सूत्र हो सकती है और राष्ट्र भाषा के पद पर सुशोभित होती सम्पर्क भाषा (Link language) के रूप में प्रभावपूर्ण, सशक्त एवं सार्थक भूमिका नि सकती है।

अभ्यास के प्रश्न

1. हिन्दी को ही क्यों सम्पर्क भाषा स्वीकार किया जाये ? आपके मत में हिन्दी **किस रूप** को सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिये और क्यों
2. सम्पर्क भाषा के विकास में कौन कौन से तत्व बाधक हैं ? आप उसके भविष्य के बारे में क्या सोचते हैं ?
3. हिन्दी भारत की सम्पर्क भाषा पर विस्तार से लेख लिखिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4

हिन्दी शिक्षण की समस्याएं
(Problems of Hindi Teaching)

हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार कर लिया गया लेकिन इसके शिक्षण को लेकर हमारे सामने अनेक समस्याएं ज्यों की त्यों बनी हुई हैं। क्योंकि आज तक समस्त भारत में न तो उसका शिक्षण अनिवार्य हो सका है और न ही पूरे भारत में इसका प्रयोग शासन के कार्यों में होता है। लाल बहादुर शास्त्री ने अपने प्रधानमन्त्री कार्यकाल में 26 जनवरी 1965 में इसे शासन के कार्यों में हिन्दी को व्यावहारिक रूप देने की घोषणा की थी। परन्तु अहिन्दी भाषा-भाषियों और कुछ अंग्रेजी प्रेमियों के अड़ियल व्यवहार और ना समझी के कारण सरकार को अपना निर्णय बदलना पड़ा और भाषा समस्या उसी प्रकार बनी रही। इन्दिरा गांधी और मोरार जी की सरकार भी इस समस्या को सुलझा न सकी। इस लिये राष्ट्र के हितों को ध्यान में रखते हुए हिन्दी को राष्ट्र भाषा का जो दर्जा प्राप्त हुआ है उसको व्यावहारिक रूप दिया जाना चाहिये। इस दृष्टि से यह अत्यन्त आवश्यक है कि देश के समस्त भागों में हिन्दी शिक्षण की उचित व्यवस्था की जाये और पढ़ने के लिये सुअवसर प्रदान किया जाये। लेकिन यह कार्य बहुत कठिन है। अहिन्दी भाषा क्षेत्रों में हिन्दी शिक्षण की अनेक समस्याएं हैं जिनको बिना सुलझाए ध्येय की प्राप्ति नहीं हो सकती।

यह हम सभी के लिये सोचने का विषय है क्योंकि अहिन्दी भाषा-भाषी लोगों के हिन्दी न पढ़ने के निम्न कारण हो सकते हैं।

I. हिन्दी पढ़ने में उनकी रूचि नहीं है।

II. हिन्दी का व्याकरण उनकी समझ में नहीं आता है।

III. हिन्दी शब्दावली कठिन है।

हिन्दी के पक्षपातियों को सोचना चाहिए कि –

1. वे लोग हिन्दी पढ़ने में रूचि क्यों नहीं लेते और हिन्दी शिक्षण को रूचिकर कैसे बनाया जा सकता है ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

2. हिन्दी के व्याकरण को सरल कैसे बनाया जाए ?

3. हिन्दी शब्दावली को सरल कैसे बनाया जाए ?

इसके अतिरिक्त हमें –

4. सरल शिक्षण विधियों

5. उपयुक्त पाठ्य-पुस्तकों एवं

6. कुशल शिक्षकों की भी आवश्यकता होगी।

अहिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों में हिन्दी शिक्षण में निम्नलिखित समस्याएं हैं :-

I. **अभिरूचि का अभाव** (Lack of Interest)— अहिन्दी भाषा क्षेत्र के रहने वालों की समस्या यह है कि वे हिन्दी पढ़ने में रूचि नहीं लेते। वे हिन्दी का अध्ययन अपनी शान के विरुद्ध समझते हैं। हिन्दी के प्रति रूचि के अभाव के निम्न कारण हैं :-

(1) प्रत्येक व्यक्ति का अपनी मातृभाषा के प्रति प्रेम व रूचि होती है और किसी दूसरी भाषा को पढ़ने में उनको रूचि नहीं होती। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है।

(2) भाषा के आधार पर बने प्रान्तों ने भाषा सम्बन्धी संकीर्णता को और अधिक मजबूत कर दिया है।

(3) अहिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों में यह भ्रम फैला दिया गया कि संसद में अधिकतर हिन्दी भाषी सदस्य हैं इसलिए अन्य भाषा भाषियों पर हिन्दी थोपना चाहते हैं।

(4) हिन्दी समर्थक सत्तारूढ़ नेताओं में हिन्दी के पक्ष का समर्थन करने की क्षमता नहीं है। वे यही वाक्य दोहराते रहते हैं कि अहिन्दी भाषा-भाषियों पर हिन्दी थोपी नहीं जाएगी। राष्ट्रहित के लिए सरकार या जनता को जो कार्य करना पड़ता है या पड़ेगा, उसे लादना या थोपना क्रियाओं से व्यक्त करना कहाँ तक उचित है।

(5) अहिन्दी भाषा-भाषियों को यह भय है कि अगर हिन्दी सरकारी काम काज की भाषा हो गई तो फिर ऊँचे-ऊँचे पदों पर उनका पहुँचना कठिन हो जाएगा और हिन्दी भाषियों का अधिकार अधिक होगा।

(6) इसमें सबसे बड़ी समस्या है कि केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारें हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार के लिए विशेष प्रयत्न नहीं कर रही हैं।

यदि हम अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रति लगाव बढ़ाना चाहते हैं तो सरकार को अपनी भाषा-नीति में स्पष्ट एवं सुदृढ़ होना होगा। वह जनता को इस बात से परिचित करवाये कि लोगों को अपनी अपनी मातृ भाषाओं के अध्ययन के साथ हिन्दी को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अध्ययन अनिवार्य रूप से करना होगा। जब तक सरकार अपने कार्य में दृढ़ संकल्प नहीं होगी तब तक राष्ट्र घातक शक्तियाँ अपना कार्य करती रहेंगी। दृढ़ संकल्प होने का अर्थ लोकतन्त्र की हत्या समझने वाले गलती पर हैं। लोकतन्त्र सर्वमत से नहीं बहुमत से चलता है। हमारी सरकार का प्रयत्न होना चाहिए कि वह जनता को लोकतन्त्रात्मक जीवन व्यतीत करना सिखाएँ। अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी प्रेमियों का अभाव नहीं है। जिस लग्न से वे हिन्दी के प्रचार में कार्य कर रहे हैं वह बहुत सराहनीय है। जनता अवश्य राष्ट्र भाषा के महत्त्व को समझेगी और उसके अध्ययन में रूचि दिखाएगी।

II. राष्ट्रभाषा हिन्दी का अनिश्चित रूप (Indefinite form of Hindi as National Language)— हिन्दी आज कुछ प्रान्तों की मातृभाषा ही नहीं, देश की राष्ट्रभाषा है। देश के विशाल होने के कारण उसमें कुछ परिवर्तन होना स्वाभाविक है। परन्तु हमारे देश में भाषा के रूप के विषय में तीन दल बन गए हैं। पहले दल वाले हिन्दी का विकास संस्कृत के आधार पर मानते हैं। दूसरे दल वालों के अनुसार हिन्दी प्रादेशिक एवं देश-विदेश की भाषाओं से जो कुछ भी ले सके उसे लेना चाहिए। तीसरे दल का कहना है कि हिन्दी अपने निश्चित क्रम से विकास करें परिस्थितिवश उनमें जो परिवर्तन हों, जिनको रोकने से हिन्दी भाषा के प्रचार एवं प्रसार में बाधा आती हो, तो उन्हें स्वीकार कर लेना चाहिए। इस प्रकार राष्ट्र भाषा हिन्दी का कोई निश्चित रूप नहीं है। राष्ट्र भाषा समर्थकों एवं शिक्षकों के सामने यह समस्या है कि अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में व्यक्तियों को कौन सी हिन्दी पढ़ाई जाए। इस सम्बन्ध में तीसरे दल समन्वयकारियों का समर्थन करना चाहिए। जो विदेशी एवं प्रान्तीय भाषाओं के शब्द हिन्दी में मिल गए हैं उनके लिए संस्कृत के आधार पर नए शब्दों का निर्माण निरर्थक है। आज भारत में ऐसा कौन व्यक्ति है जो रेल, स्टेशन, बस, वोट, डाक्टर आदि शब्दों से परिचित नहीं है। यदि हिन्दी में इन शब्दों के लिए नए शब्दों का निर्माण किया जाता है तो उसका मतलब नई हिन्दी सीखना होगा। समय और स्थान की दूरी अब इतनी कम हो गई है कि यदि हम हिन्दी को कोई सबल या लचकदार व्याकरण बना सकें तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि एक दिन हम राष्ट्र भाषा हिन्दी का देशव्यापी रूप तैयार कर लेंगे।

III. उचित पाठ्यचर्या एवं पाठ्य पुस्तकों का अभाव (Lack of proper curriculum and text-books)— देश में शिक्षा का भार प्रान्तीय सरकारों पर है। प्रान्तीय सरकारें इस विषय में एक मत नहीं हैं कि राष्ट्र भाषा हिन्दी शिक्षण किस कक्षा से अनिवार्य किया जाए और उनकी पाठ्यचर्या क्या हो ? अहिन्दी भाषा भाषी क्षेत्रों में हिन्दी की उचित पाठ्य पुस्तक उपलब्ध नहीं है। जो पाठ्य पुस्तकें सम्पादित की गई हैं वे अंग्रेजी के आधार पर की गई हैं। अंग्रेजी भाषा और हिन्दी भाषा की प्रकृति में मूलभूत अन्तर है और उस अन्तर के कारण जिस क्रम से अंग्रेजी पढ़ाई जाती है उस क्रम से हिन्दी नहीं पढ़ाई जा सकती। यह प्रयोगों द्वारा साबित हो गया है कि हिन्दी ध्वनियों का ज्ञान विश्लेषणात्मक प्रणालियों की अपेक्षा ध्वनि साम्य प्रणाली द्वारा सरलता से दिया जा सकता है। पाठ्य पुस्तकें इसी आधार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर बननी चाहिएं। उचित पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के लिए प्रत्येक प्रान्त में अनु अध्यापकों, प्राध्यापकों एवं शिक्षा प्रेमियों के राजकीय स्तर पर संगठन बनाए जाएं जो भाषा हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें तैयार करें।

IV. उचित शिक्षण प्रणालियों का अभाव (Lack of proper teaching methods अहिन्दी व्यक्तियों को हिन्दी पढ़ाने के लिए वे प्रणाली उपयुक्त नहीं हो सकती भारतीयों को विदेशी भाषा अंग्रेजी पढ़ाने की है। भारत में कुछ ऐसे अहिन्दी क्षेत्र हैं हिन्दी बोल चाल में प्रयोग की जाती है, कुछ क्षेत्र में यह अपने टूटे फूटे रूप में प्रयोग जाती है और कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ हिन्दी को बिल्कुल नहीं समझा जाता। इन सभी क्षे प्राथमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण की प्रणालियाँ भिन्न भिन्न होंगी। किसी एक प्रणाल भाषा सिखाना संभव नहीं होगा सभी प्रणालियों के समुचित प्रयोग से हमें आगे ब चाहिए। अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में कक्षा 3 से हिन्दी सिखानी प्रारम्भ करनी चाहिए। शि प्रत्यक्ष प्रणाली और ध्वनि साम्य प्रणाली द्वारा करना चाहिए। अहिन्दी भाषी क्षेत्र के ब को हिन्दी का अभ्यास कराने के लिए यह आवश्यक है कि उन क्षेत्रों में क्षेत्रीय भा साथ-साथ हिन्दी का प्रयोग किया जाए। बच्चों को हिन्दी भाषा में बनाए गए रंगीन आकर्षक चित्र दिखाए जाएं। रेडियो, टेलीविज़न और वीडियो द्वारा हिन्दी का प्रचार कि जा सकता है। समयानुसार शिक्षण प्रणालियों में परिवर्तन करते रहना चाहिए।

V. प्रशिक्षित अध्यापकों का अभाव (Lack of trained teachers)— अहिन्दी क्षेत्रों में प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी है। हिन्दी बोलने वाले ऐसे अध्यापकों की क जो अन्य क्षेत्रों की भाषा जानते हों और उन क्षेत्रों में हिन्दी शिक्षण कर सकें। आज शिक्षकों की आवश्यकता है जो हिन्दी, अंग्रेजी एवं क्षेत्रीय भाषा जानते हों सरकार अध्यापकों को विशेष वेतन क्रम में रखे तो सम्भवतः कुछ व्यक्ति प्रयत्नशील हों। राष्ट्र के प्रचार के लिए जनता और सरकार दोनों को आगे आना चाहिए। केन्द्रीय सरकार ने इस ओर कुछ प्रयास किए हैं।

VI. हिन्दी व्याकरण की जटिलता (Complexity of Hindi Granunar)— हिन्दी में कुछ ऐसी बातें हैं जो अहिन्दी क्षेत्रों के लिए कठिन हैं। हिन्दी में इतनी अधिक ध्वनियाँ हैं और इनमें इतना कम अन्तर है कि अहिन्दी भाषाभाषी के लिए उनका ज्ञान एक कठिन कार्य है। लिखित हिन्दी, उच्चरित हिन्दी पर निर्भर करती है, उच्चारण में सा अन्तर पड़ते ही उसके लिखित रूप में अन्तर पड़ता है और उसके अर्थ में अन्तर की संभावना रहती है। जैसे 'सकल' के स्थान पर 'शकल' से 'समस्त' के स्थान पर का ही अर्थ रह जाता है। कुछ हिन्दी ध्वनियों के उच्चारण अनिश्चित हैं जैसे ङ, ञ, और ऋ। चन्द्र बिन्दु अनुस्वार एवं अनुनासिक लिखने में बहुत गलतियाँ होती हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिन्दी की शब्द रचना बहुत जटिल है। उपसर्ग, प्रत्यय, सन्धि और समास से बनने वाले शब्दों का ज्ञान अहिन्दी भाषी को कराना कठिन है। वास्तविकता तो यह है कि हिन्दी भाषियों को भी इनका स्पष्ट ज्ञान नहीं है। हम कितना शुद्ध बोलते हैं और कितना शुद्ध लिखते हैं, हम भी निश्चित रूप से इस बारे में कुछ नहीं कह सकते। अहिन्दी क्षेत्रों में व्यक्तियों द्वारा लिंग की अधिक अशुद्धियां होना स्वाभाविक है। हिन्दी वाक्य रचनाओं का कोई निश्चित नियम नहीं है। अहिन्दी भाषियों को उसका कोई निश्चित रूप दिखाई नहीं देता।

हिन्दी व्याकरण की अनेकरूपता और अनिश्चितता एक बहुत बड़ी जटिलता है। अत: इस बात की आवश्यकता है कि देश के उच्च कोटि के भाषाविज्ञों की एक समिति बनाई जाए जो एक ऐसा सबल और लचीला हिन्दी व्याकरण तैयार करे जिससे हिन्दी भाषा की जटिलता को समझा जा सके।

VII. कुछ अन्य समस्याएँ (Some other problems)— अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में कुछ और समस्याएँ भी हैं जैसे हिन्दी की शिक्षा में वहाँ की क्षेत्रीय भाषा का कितना प्रयोग किया जाए, कम से कम किन हिन्दी शब्दों का ज्ञान कराया जाए, देवनागरी लिपि को कैसे सिखाएं, भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में उच्चारण दोषों को कैसे दूर किया जाए।

आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दी प्रचारक संस्थाएँ, प्रान्तीय सरकारें और केन्द्रीय सरकार, सब मिलकर इन समस्याओं का हल करें। इन सब समस्याओं पर शोध कार्य करना चाहिए। राष्ट्र भाषा हिन्दी प्रेमियों को आगे आना चाहिए। हिन्दी भाषा-भाषियों को बड़ा परिश्रम करने की आवश्यकता है। आज अहिन्दी क्षेत्रों के लिये प्रशिक्षित हिन्दी शिक्षकों का अभाव है। इसकी पूर्ति हेतु हिन्दी समर्थकों को आगे आना चाहिये। इन अहिन्दी क्षेत्रों में वे ही शिक्षक सफल हो सकते हैं जो अहिन्दी क्षेत्रों की भाषा भी भली भांति जानते हों। दूसरे, हिन्दी भाषा भाषियों का यह कर्त्तव्य भी बनता है कि वे अन्य भारतीय भाषाओं का अध्ययन करें और उनके साहित्य की कृतियों का देश की अन्य भाषाओं में अनुवाद करें। साहित्य का इस प्रकार का आदान-प्रदान होगा तो हम अवश्य ही एक दूसरे के निकट आ सकेंगे और इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से हम एक दूसरे के हृदय को स्पन्दन कर सकेंगे और देश में एकता का प्रसार करने में निश्चित रूप से सफल होंगे। ऐसा वातावरण उत्पन्न होने पर या ऐसी स्थिति में उच्च स्तर पर हिन्दी की शिक्षा का माध्यम बनाया जा सकता है। हिन्दी को माध्यम बनाने से समूचे देश और देशवासियों को निम्न लाभ होंगे।

I. हिन्दी हमारे देश की राष्ट्र भाषा होने के नाते प्रशासनिक और राष्ट्रीय कार्यों में विदेशी भाषा अंग्रेजी का स्थान ले लेगी। ये देश के लिये गौरव की बात होगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

II. अंग्रेजों के समय में जब अंग्रेजी भाषा भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तों, रजवाड़ों को एक संगठन में बांधने में समर्थ थी, वैसे ही हिन्दी हमारी स्वदेशी भाषा होने के कारण इस प्रकार की एकता स्थापित करने में सफल होगी।

III. हिन्दी के शिक्षा का माध्यम बनने से समूचे भारत के लिये एक ही प्रकार और एक जैसे स्तर का पाठ्यक्रम उपलब्ध करवाना सम्भव होगा।

IV. केवल एक भाषा हिन्दी के शिक्षा माध्यम बनने से हिन्दी भाषा की पुस्तकों केन्द्रीय सरकार बड़ी आसानी से उपलब्ध करवाने में सफल होगी।

V. शिक्षक और हमारे देश के छात्र-छात्राएं भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक सरलता से पठन-पाठन करने में सफल होंगे।

VI. हिन्दी के अनुसंधान और शोध कार्यों में विभिन्न प्रान्तों से सहयोग बड़ी आसानी से प्राप्त किया जा सकेगा। लेकिन वर्तमान में विचार-विनिमय विभिन्न भाषा होने के कारण बहुत कठिनाई होती है।

VII. हिन्दी के शिक्षा का माध्यम बनने से उत्तर भारत और दक्षिण भारत के शिक्षित वर्ग के लोग एक स्तर पर आ जायेंगे। अन्यथा भाषा एक न होने पर उन समानता नहीं आ सकेगी।

सारांश में वाद विवाद के उपरान्त यही बात समस्या समाधान हेतु समूचे राष्ट्र के हित में उभर कर आती है कि शिक्षा का माध्यम बनाने के लिये हिन्दी ही सबसे उपयुक्त भाषा है।

अभ्यास के प्रश्न

1. हिन्दी शिक्षण की कौन-कौन सी समस्याएं हैं और इनका समाधान कैसे सम्भव है ?
2. राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने की दृष्टि से भारत की कौन सी भाषा उच्च स्तर शिक्षा का माध्यम होनी चाहिये और क्यों ?
3. माध्यमिक और विश्व विद्यालय स्तर शिक्षा का माध्यम कौन सी भाषा होनी चाहिये-प्रादेशिक भाषा या अंग्रेजी या हिन्दी ? तर्क सहित उत्तर दीजिए।

CC-0 Agamnigam Digital.Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

UNIT II

शिक्षण विधियां

(Teaching Methods)

(1) अनुवाद विधि (Translation Method)

(2) खेल विधि (Playway Method)

(3) प्रत्यक्ष विधि (Direct-Method)

(4) संरचना उपागम (Structural Approach)

(5) बालोधान विधि (Kindergarten Method)

(6) माण्टेसरी विधि (Montessori Method)

(7) प्रोजेक्ट विधि (Project Method)

(8) बेसिक शिक्षण विधि और भाषा शिक्षण
(Basic Teaching Method and Language Teaching)

(9) समवाय विधि और भाषा शिक्षण
(Correlation Method and Language Teaching)

(10) हिन्दी शिक्षक के गुण
(Qualities of Hindi Teacher)

(11) भाषा-शिक्षण के सिद्धान्त एवं सूत्र
(Principles and Maxims of Language Teaching)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1

भाषा शिक्षण और शिक्षण विधियां

(Language Teaching and Methods of Teaching)

एक समय ऐसा था जब शिक्षा शिक्षक केन्द्रित थी और फिर बाद में पाठ्यक्रम केन्द्रित हुई और आज शिक्षा बाल केन्द्रित है। यह परिवर्तन इस लिये हुआ कि शिक्षा और बालक के प्रति हमारी पुरानी मान्यताएं और धारणाएं बदल चुकी हैं। हमारी पूर्ण शिक्षा प्रणाली और भाषा शिक्षण प्रणाली भी इस परिवर्तन से अछूती नहीं है। आधुनिक युग में अनेक मनोवैज्ञानिक खोजों के परिणामस्वरूप शिक्षण विधियों में एक क्रान्ति की लहर सी दौड़ गई है। आज की शिक्षा प्रणाली में मनोविज्ञान का विशेष महत्त्व है। शिक्षा से सम्बन्धित प्रत्येक पहलू को मनोविज्ञान की कसौटी पर कस कर परखने का प्रयास किया जाता है। इस दृष्टि से भाषा शिक्षण में नवीन प्रयोग हो चुके हैं जिसके फलस्वरूप कई नई शिक्षण विधियों की खोज की गई है जो इस प्रकार हैं–खेल विधि, बालोद्यान विधि, प्रोजेक्ट विधि, प्रत्यक्ष विधि, अनुवाद विधि, सरंचना विधि और बेसिक विधि आदि । इन विधियों में से मांटेसरी और बालोद्यान विधि छोटे बालकों के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। इन उपरोक्त सभी विधियों को ध्यान में रखते हुए इसे अपने देश की परिस्थितियों का अध्ययन करते हुए वातावरण के उपयुक्त जो विधि जिस सीमा तक उपयोगी हो उतना ही उसमें से ग्रहण कर लेना चाहिये। प्रत्येक नवीन विधि इस लिये ग्रहण की जाये कि वह नवीन है, यह विचारधारा उचित नहीं है क्योंकि इस से लाभ न होकर बल्कि कुछ हानि ही होगी। किसी भी विधि का अन्धानुकरण करना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं होगा। इस लिये प्राचीन और नवीन विधियों में से जो कुछ हमें उपयोगी दिखाई दे उसे ग्रहण कर लेना चाहिये और बाकी छोड़ देना चाहिये। उपयोगी तथ्यों को जहां कहीं से भी संग्रह करके लाभ उठाया जाये उतना ही थोड़ा है। इस लिये यह कहना उचित होगा कि न तो नवीन विधि पूर्ण रूप से अच्छी है और न ही प्राचीन विधियों की उपेक्षा करने की आवश्यकता है। इस लिये शिक्षक का दृष्टिकोण न तो बिल्कुल रूढ़िवादी होना चाहिये न ही उसे रूढ़िवाद का कट्टर विरोधी होना चाहिये। उसका दृष्टिकोण बालकों के हित में होना चाहिये, इस लिये उसे नवीन शिक्षण विधियों का सही ढंग से मूल्यांकन करके ही अपनाना चाहिये। ऐसा दृष्टिकोण अपनाने से ही वह अपने शिक्षण को प्रभावशाली, सशक्त और सार्थक बना सकता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(1) अनुवाद विधि
(Translation Method)

अनुवाद भाषा शिक्षण की विधियों में से एक महत्त्वपूर्ण विधि है। किसी भी भाष व्यक्त किये गये विचारों एवं भावों को किसी अन्य भाषा में व्यक्त करने की प्रक्रिया 'अनुवाद', 'भाषान्तर' अथवा रुपान्तरण कहा जाता है। भाषा-रचना में जितना म मौलिक रचना का होता है उतना ही महत्त्व अनुवाद की गई रचना का भी होता है। भाष सम्बन्धित क्षेत्रों में अनुवाद का बहुत महत्त्व है। अनुवाद भाषा के साहित्य को विक करने में पूर्णरूप से सहायक है। इस विश्व में अनेक भाषाएं बोली जाती हैं और इन भाषाओं का अपना-अपना साहित्य है और प्रत्येक साहित्य की कुछ अपनी विशेषताएं हैं। सभी भाषाओं के साहित्य में कुछ रचनाएं ऐसी होती हैं जिनको हम बेजोड़ या अद्वि कह सकते हैं। इन रचनाओं का अध्ययन हम अपनी भाषा में अनुवाद किये बिना नहीं सकते। संसार की अनेक भाषाओं के ग्रन्थ हिन्दी भाषा में अनुदित किये जा चुके हैं। इ प्रकार हिन्दी साहित्य के उच्च कोटि के ग्रन्थों का अनुवाद भी संसार की अनेक भाषाओं किया जा चुका है।

इस प्रकार अनुवाद किये गये ग्रन्थों के माध्यम से मानव विश्व की भिन्न-भि भाषाओं के साहित्य का ज्ञान प्राप्त करता है और दूसरों की संस्कृति से परिचित होता है। से मानव का दृष्टिकोण उदार होता है। हमारे देश में अनेक भाषाएं हैं या हम यूँ कह स हैं कि भारत बहु भाषायी देश है। सभी भाषाओं का अपना-अपना साहित्य भी उपलब्ध और प्रत्येक भाषा-भाषी को अपनी भाषा और उसके साहित्य पर गर्व का भी अनुभव है है। अगर हम एक दूसरे की भाषा का और उसके साहित्य का आदर व सम्मान करें स्वाभाविक है कि हम एक दूसरे के निकट आयेंगे और राष्ट्र एकता को बल मिलेगा। प्रकार भारत जैसे बहुभाषायी देश के लिये अनुवाद का महत्त्व और भी अधिक हो जाता

किसी भी नई भाषा के शिक्षण के लिये अनुवाद अत्यन्त सहायक सिद्ध होता लेकिन शिक्षण के अन्तर्गत आवश्यकता से अधिक अनुवाद का प्रयोग अहितकर साबि सकता है। इस लिये अनुवाद का उचित प्रयोग ही सराहनीय हो सकता है। अनुवाद सबसे बड़ी विशेषता यह है कि एक भाषा की तुलना दूसरी भाषा से बड़े सहज ढंग से जा सकती है। इस लिये कभी-कभी भाषा का ज्ञान तुलना के माध्यम से देना बहुत स सिद्ध होता है।

अनुवाद शिक्षण के उद्देश्य
(Objectives of Teaching of Translation)

अनुवाद की आवश्यकता एवं उसके महत्त्व को जान लेने के पश्चात् हमें अनुवाद शिक्षा के उद्देश्यों का स्पष्टीकरण हो जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इन उद्देश्यों को इस प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है–

(I) छात्र–छात्राओं में विचार विनियम की योग्यता का विकास सहज ढंग से किया जा सकता है।

(II) छात्र–छात्राओं को भिन्न भाषाओं के साहित्य और उनकी शैलियों का ज्ञान कराया जा सकता है।

(III) उनको इस योग्य बनाना कि वे दूसरी भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थों का अपनी भाषा में अनुवाद करके अपनी भाषा के साहित्य का समृद्धशाली एवं उच्चकोटि का बना सकें।

(IV) छात्र–छात्राओं को इस योग्य भी बनाना कि अपनी भाषा के उच्चकोटि के मूलग्रन्थों को दूसरी भाषाओं में अनुवाद करके विश्व को इस भाषा के साहित्य से पूरी तरह से परिचित करा सकें।

(V) छात्र–छात्राओं के शब्द–भण्डार एवं सूक्ति भंडार में वृद्धि करना।

(VI) हिन्दी शिक्षण को सुगम एवं सरल बनाना।

(VII) भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन के अवसर प्रदान करना।

अनुवाद के प्रकार
(Kinds of Translation)

अनुवाद तीन प्रकार से किया जा सकता है जो निम्न हैं–

I. शब्दशः अनुवाद (Literal Translation)

II. छायानुवाद (Sense Translation)

III. वाक्य सम्प्रदायानुसार अनुवाद (Idiomatic Translation)

I. शब्दशः अनुवाद (Literal Translation)— इस अनुवाद के अन्तर्गत एक भाषा के शब्दों के स्थान पर अन्य भाषा के समानार्थी शब्दों का प्रयोग किया जाता है। हम इस बात से परिचित हैं कि प्रत्येक भाषा की वाक्य रचना के कुछ अपने नियम होते हैं। शब्दों के अनुवाद में उन नियमों का पालन किया जाता है। उदाहरण के लिये अंग्रेज़ी के वाक्य Ram is Going का हिन्दी अनुवाद होगा 'राम जा रहा है' परन्तु यह नहीं होगा कि राम है जा रहा। इस प्रकार के अनुवाद में भावों की अवहेलना की जाती है और इसके कारण कभी–कभी बड़ा अनर्थ हो जाता है। जैसे उदाहरण के तौर पर हिन्दी के वाक्य में यह कहा जाया कि 'चन्द्र प्रकाश का सिर चक्र खा रहा है' और यदि कोई अंग्रेज़ी में इसका अनुवाद इस प्रकार कर दे कि 'Head of Moon light is eating circle' तो यह आपको स्वीकार नहीं होगा और हास्यस्पद लगेगा। इस लिये अनुवाद के इस ढंग या शैली को उपयुक्त नहीं माना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जा सकता। फिर भी अनुवाद की शिक्षा को प्रारम्भ करने की दृष्टि से इसी शैली या ढंग को अपनाना ही उचित होता है।

II. छायानुवाद (Sense Translation)— यह अनुवाद का दूसरा ढंग है। इसमें किसी एक भाषा की रचना को पढ़कर उसके भावों व विचारों को दूसरी भाषा में व्यक्त करते हैं इस शैली का प्रयोग कई बार कविता शिक्षण में कर लिया जाता है जैसे उदाहरण के रूप में कबीर का निम्न दोहा–

माटी कहे कुम्हार को, तू क्यो रोंदे मोहि।

इक दिन ऐसा आयेगा, मैं रोंदूगी तोहि॥

इसका अनुवाद उर्दू भाषा की रुबाई में इस प्रकार है या हो सकता है–

मैं देखता रहा एक हसीन कूजागर,

मिट्टी को मथ रहा था लातों से कूदकर।

मिट्टी ज़ुबाने हाल से गोया ये कहती थी,

कुछ गुलरुक्खों की खाक है मुझ में भी बेखबर।

उपरोक्त पंक्तियों के भाव व विचार तो दूसरी भाषा स्पष्ट हो जाते हैं। लेकिन शिक्षा की दृष्टि से इसे अनुवाद का नाम नहीं दिया जा सकता। इसमें मूल दोहे के भाव तो स्पष्ट हो जाते हैं लेकिन अनुवाद के सही ढंग का निर्वाह नहीं हो पाया है। इस लिये अनुवाद की यह शैली भी उचित नहीं है।

III. वाक्य सम्प्रदायानुसार अनुवाद (Idiomatic Translation)— इस विधि के अन्तर्गत एक भाषा की रचना का दूसरी भाषा में अनुवाद करते समय मूल रचना के भाव और उसकी शैली का पूर्ण रूप से ध्यान रखा जाता है। इस प्रकार अनुवाद करने वाला कोई भी व्यक्ति इस बात का पूर्ण रूप से ध्यान रखता है कि मूल रचना के भावों को बिना किसी फेर बदल के ज्यों का त्यों व्यक्त करे।

अनुवाद और उसकी विधियां

(Translation and its Methods)

कुछ विद्वानों का या कहना कि अनुवाद करना मौलिक रचना से सरल एवं सुगम होता है। परन्तु उनकी यह सोच भ्रामक है क्यों कि मौलिक रचना के शिक्षण में शिक्षक पूर्ण रूप से स्वतन्त्र होता है और उसको किसी प्रकार की बाधा का सामना नहीं करना पड़ता। लेकिन जहां तक अनुवाद का सम्बन्ध है शिक्षक को दूसरों के भावों, विचारों और अनुभवों से अपने को पूरी तरह से परिचित करवाने की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि अनुवाद की हुई रचना में मूल रचना की शैली को भी पूर्ण रूप से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अपनाया जाये। यदि अनुवाद की हुई रचना में मूल रचना के भावों व विचारों और शैली का स्पष्टीकरण नहीं होता है तो उसे उच्चकोटि का अनुवाद नहीं कहा जा सकता। जहां तक मौलिक रचना का सम्बन्ध है वहां केवल अपनी भाषा का पर्याप्त रूप से ज्ञान होना ही आवश्यक माना जाता है परन्तु अनुवादक के लिये अनुवाद की प्रक्रिया को पूरी तरह से सफल बनाने के लिये दोनों भाषाओं पर अधिकार का होना अत्यन्त आवश्यक है। अनुवाद शिक्षण की मुख्य रूप से तीन विधियां हैं, जो इस प्रकार हैं।

1. पुस्तक प्रणाली (विधि) (Book Method)— अनुवाद की शिक्षा देने हेतु पुस्तकों का निर्माण किया जाता है जिनमें व्याकरण के क्रम से वाक्यों को प्रस्तुत किया जाता है। छात्र-छात्राओं को एक-एक वाक्य लेकर उनका अनुवाद करवाया जाता है। जब वे सभी प्रकार के वाक्यों का अनुवाद करना सीख जाते हैं तो उन्हें फिर मिश्रित वाक्यों एवं खण्डों के अनुवाद करने के लिये प्रेरित किया जाता है। यह विधि तर्क संगत अवश्य है लेकिन इस विधि के द्वारा छात्र-छात्राएं अनुवाद क्रिया में पूरी तरह से अभ्यस्त नहीं होते हैं।

उपरोक्त विधि को अधिक लाभप्रद बनाने के लिये आगमन-निगमन प्रणाली को अपनाना चाहिये। इसके अन्तर्गत सबसे पहले छात्र-छात्राओं के समक्ष एक ही प्रकार के वाक्य प्रस्तुत किये जाते हैं और उन वाक्यों का विश्लेषण कर नियमीकरण किया जाता है और फिर इसके बाद गठित वाक्यों को दूसरी भाषा में अनुवाद करने के लिये कहा जाना चाहिये। इस प्रकार से छात्र-छात्राएं स्वयं नियमीकरण करेंगे और फिर उनको प्रयोग करेंगे। इस प्रकार जो कुछ वे सीखेंगे वो स्थाई होगा। इस बात को एक और अन्य उदाहरण द्वारा अधिक स्पष्ट किया जा सकता है।

कक्षा में सबसे पहले हम छात्र-छात्राओं को सीखने के लिये तैयार करते हैं और उनके सामने अंग्रेज़ी का एक वाक्य रखते हैं जैसे 'He is Mohan' और फिर हिन्दी में अनुवाद करवायें और फिर दूसरा वाक्य 'Mohan is good boy' जिसका छात्र-छात्राएं हिन्दी में अनुवाद कर सकें। इसके पश्चात फिर चार पांच वाक्य और प्रतुत किये जायें जिनका अनुवाद छात्र-छात्राएं अपने प्रयास से कर लें। तत्पश्चात् शिक्षक को अंग्रेज़ी के वाक्य 'Mohan is Going' प्रस्तुत किया जांये और उसका अनुवाद हिन्दी में करने के लिये कहा जाये। क्योंकि इस वाक्य में कुछ नया है इस लिये इसके अनुवाद की आशा छात्र-छात्राओं से नहीं करनी चाहिये। फिर भी कक्षा में दो-चार छात्र मेधावी हो सकते हैं और इसलिये यह सम्भव हो सकता है कि वे इस वाक्य का भी अनुवाद करने में सूक्षम हों। शिक्षक को इस बात की चिन्ता क़िये बिना उद्देश्य कथन कर देना चाहिये कि आज हम इस प्रकार के अंग्रेज़ी के वाक्यों का हिन्दी में अनुवाद करेंगे। अब शिक्षक को इस टेन्स के चार पांच वाक्य प्रस्तुत करने चाहियें जो आगे दिये गये हैं–

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(1) Mohan is playing. मोहन खेल रहा है।

(2) Sohan is reading. सोहन पढ़ रहा है।

(3) Seeta is laughing. सीता हंस रही है।

(4) Geeta is going. गीता जा रही है।

(5) They are dancing. वे नाच रहे हैं।

छात्र-छात्राओं द्वारा उपरोक्त वाक्यों का विश्लेषण करवा करके नियमीकरण करने के लिये कहा जायेगा। छात्र-छात्राओं के स्वयं खोज के प्रयास में शिक्षक उनकी सहायता करेगा-जिससे यह पता चलेगा कि यह सभी वाक्य Present Continuous Tense के वाक्य हैं और क्रिया के आगे ing लग जाने से रहा/रही का अर्थ निकलता है। बाद में सभी छात्र-छात्राओं को अभ्यास का अवसर प्रदान करना चाहिये ताकि वे इस नियम के बारे में पूर्ण रूप से आशवस्त हो जायें।

2. दुभाषिया प्रणाली (Two Language Method)— इस विधि के अन्तर्गत एक छात्र किसी एक भाषा में बोलता है और अन्य छात्र दूसरी भाषा में उसका अनुवाद करता है लेकिन यह विधि अनुवाद की शिक्षा के लिये उपयुक्त नहीं है परन्तु इस विधि को अभ्यास के लिये अपनाना उस समय उचित रहता है जब छात्र अनुवाद करना सीख जाते हैं।

3. तुलना एवं अनुकरण प्रणाली (Comparasion and Imitation Method)— इस विधि में छात्र-छात्राओं के समक्ष अनेक आदर्श अनुवाद प्रस्तुत किये जाते हैं। छात्र-छात्राएं विश्लेषण क्रिया के माध्यम तुलनात्मक रूप से अध्ययन करते हैं। फिर वे गहन अवलोकन करते हुए अनुवाद के आवश्यकतानुकूल नियम निकालते हैं और फिर उनका अनुकरण करते हुए अनुवाद करते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि यह विधि मनोवैज्ञानिक है लेकिन इस में बहुत समय अपेक्षित है।

सारांश में अगर हम कहें तो उपरोक्त विधियां अपने में पूर्ण रूप से उपयुक्त नहीं हैं। हां इन तीनों विधियों को अपनाकर अनुवाद की शिक्षा देना उचित होगा। भाषा की इकाई वाक्य होता है। प्रत्येक भाषा की वाक्य रचना एक विशेष प्रकार की होती है। सबसे पहले हमें छात्रों को दोनों भाषाओं का ज्ञान प्रदान करना चाहिये। जब विद्यार्थी दोनों भाषाओं की वाक्य रचना से भली-भांति परिचित हो जायें तो फिर उन्हें अनुवाद की शिक्षा देनी चाहिये। मातृ भाषा के अतिरिक्त जब छात्र-छात्राओं को अन्य भाषा की शिक्षा देनी होती है तो अनुवाद की आवश्यकता पड़ती है। इस लिये प्रत्यक्ष विधि के द्वारा अनुवाद का ज्ञान कराना चाहिये और नियमों को रटाने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि नियम तो बाद में छात्र स्वयं निकाल लेते हैं। इससे यह पता चलता है कि छात्र-छात्राओं को एक भाषा के वा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

का दूसरी भाषा में अनुवाद करना सिखाना चाहिये। इसके लिये पुस्तक विधि का प्रयोग किया जाये और साथ ही साथ आगमन से निगमन की ओर बढ़ने के सूत्र को भी अपनाना चाहिये।

अनुवाद सिखाने के लिये एक बात स्पष्ट है कि अनुवाद की शिक्षा उसी समय आरम्भ करनी चाहिये जब छात्र-छात्राओं का दोनों भाषाओं पर पर्याप्त रूप से अधिकार हो जाये। कक्षा आठ के बाद ही अनुवाद प्रक्रिया को शुरू करना चाहिये।

लेखों का अनुवाद करवाते समय निम्न बातों को अवश्य ही ध्यान में रखना चाहिये और इन बातों में क्रमबद्धता होनी चाहिये–

(I) छात्र-छात्राओं से लेखों का मौन पाठ करवाया जाये और कठिन शब्दों को रेखांकित करने के लिये कहें।

(II) कठिन शब्दों के अर्थ जानने के लिये शब्द कोश का प्रयोग करें।

(III) उनको पुन: मौन पाठ करने के लिये कहा जाये ताकि वे लेख के भावों और विचारों को ठीक प्रकार से समझ लें।

(IV) शिक्षक को फिर मौखिक रूप से प्रश्न करके यह जानना चाहिये कि लेख के भावों से कितना आत्मसात कर पाये हैं। अगर वे आत्मसात नहीं कर पाये हैं तो शिक्षक को उन्हें आत्मसात कराना चाहिये। जब छात्र-छात्राएं लेख के भावों और विचारों को ठीक प्रकार से समझ लें तो फिर बाद में वाक्यों का अनुवाद करवाया जाये।

(V) कक्षा के कुछ होशियार छात्र-छात्राओं को लेख का मौखिक रूप से अनुवाद करने के लिये कहा जाये। त्रुटियों का निराकरण भी करें।

(VI) यह सब कुछ करने के बाद ही कक्षा के सभी छात्र-छात्राओं को लेख के अनुवाद करने का आदेश देना चाहिये।

(VII) छात्र-छात्राओं द्वारा किये गये अनुवाद की जांच शिक्षक के द्वारा की जानी चाहिये। शिक्षक को त्रुटियों का निराकरण करने के लिये व्यक्तिगत रूप से और सामूहिक रूप से निर्देश देने चाहियें।

अनुवाद सम्बन्धी अनिवार्य बातें
(Some Essentials related with Translation)

(I) दोनों भाषाओं के सीखने के बाद अनुवाद की शिक्षा को प्रारम्भ कर देना चाहिये।

(II) लेखों का अनुवाद करवाना तभी उचित होता है जब छात्र-छात्राएं दोनों भाषाओं की पर्याप्त रूप से जानकारी प्राप्त कर लें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(III) अनुवाद का कराना उसी भाषा में उचित होता है जिसका सक्रिय शब्द एवं सूक्ति भंडार विस्तृत हो और छात्र-छात्राओं को उस भाषा का पूर्ण रूप से ज्ञान हो।

(IV) छात्र-छात्राओं से पहले दूसरी भाषा का अनुवाद उनकी मातृभाषा में करवाया जाये और फिर बाद में मातृभाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करवाया जाये।

(V) शब्दश: अनुवाद (Literal Translation) नहीं करवाना चाहिये। अनुवाद जिस भाषा में किया जाना हो, उस की वाक्य रचना का छात्र-छात्राओं को पूरी तरह से ज्ञान होना चाहिये। अनुवादक के लिये तीन प्रमुख बातों का समझना आवश्यक है जो निम्न हैं-

(क) भाव की रक्षा।

(ख) शैली का रक्षा।

(ग) सरलता, सहजता एवं सुबोधता

इन उपरोक्त तीनों बातों से तात्पर्य है कि अनुवाद की हुई विषय-वस्तु में अंश भाव की स्पष्टता होना चाहिये और शैली वही हो जिसमें मूल रचना रचित हो। अनुवाद की स्पष्टता सरलता और सहजता ऐसी हो जिसे बिना किसी कठिनाई के आसानी से समझ लिया जाये।

(VI) अनुवाद का अनुवाद करना कदापि भी उचित नहीं होता। ऐसा करने से मूल रचना और अनुवाद की हुई रचना में अन्तर आ जाता है।

(VII) कई गूढ़ वाक्यों एवं गुम्फित वाक्यों का अनुवाद ज्यों का त्यों करना आवश्यक नहीं होता। इस लिये ऐसे वाक्यों को तोड़ कर अनुवाद करना उचित होता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. अनुवाद विधि से आप क्या समझते हैं ? भाषा-शिक्षण में अनुवाद की शिक्षा का क्या महत्त्व है ?
2. अनुवाद की शिक्षा के कौन-कौन से उद्देश्य हैं ? अनुवाद सम्बन्धी आवश्यक बातों की चर्चा करें।
3. हिन्दी भाषा-भाषी छात्र-छात्राओं को किसी दूसरी भाषा का हिन्दी में अनुवाद करना किस प्रकार सिखायेंगे ?
4. अनुवाद शिक्षण की कौन-कौन सी विधियां हैं? आप छात्र-छात्राओं को अनुवाद की शिक्षा किस प्रकार देना पसन्द करोगे और क्यों ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2

खेल विधि
(Playway Method)

स्वाभाविक रूप से बालकों की खेल में बहुत रुचि होती है। खेलों के द्वारा बालकों को जो शिक्षा दी जाती है उसको बालक सहजता एवं सरलता से ग्रहण कर लेते हैं और वह शिक्षा स्थाई होती है। इस लिये छोटे बच्चों को खेल के द्वारा शिक्षा देना अधिक सार्थक एवं प्रभावपूर्ण होता है।

खेल द्वारा शिक्षा देने के आधारभूत सिद्धान्त (Basic Principles of teaching by playing method)

I. अतिरिक्त शक्ति का सिद्धान्त (Principle of Surplus Energy)— प्रकृति प्रत्येक व्यक्ति को शक्ति प्रदान करती है। इस शक्ति का बहुत सा अंश जीवन की आवश्यकताओं–भोजन आदि की पूर्ति में व्यतीत हो जाता है। शेष शक्ति का विकास खेलों द्वारा किया जा सकता है।

II. शक्तिवर्धन का सिद्धान्त (Principle of increasing energy)— लार्ड क्रिम्स के अनुासर इस शक्ति के द्वारा खोई हुई शक्ति की पुनप्राप्ति होती है। खेल के द्वारा मनुष्य खोई हुई शक्ति को दुबारा प्राप्त कर लेता है।

III. भावी जीवन की तैयारी का सिद्धान्त (Principle of preparation of future life)— इस सिद्धान्त के प्रवर्त्तक कार्ल ग्रूस हैं। उनके विचार से खेलों द्वारा बालक वे बातें सीखते हैं जो उनके भावी जीवन में काम आती हैं। गुड्डे गुड्डी का खेल, घर बनाकर खेलना आदि सभी इसी सिद्धान्त पर आधारित हैं।

IV. रेचन का सिद्धान्त (Principle of Catharsis)— रेचन शब्द का प्रयोग सबसे पहले अरस्तू ने किया था। इसके अनुसार बालकों की दमन की हुई शक्तियों का विकास खेलों द्वारा ही सम्भव है। टी.पी. नन का भी यह विचार है–''मनुष्य दमन करने की पुरानी आदत को नहीं छोड़ सकता, परन्तु खेल द्वारा इस दोष को दूर किया जा सकता है।''

इन सिद्धान्तों के साथ-साथ ही–

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(1) खेलों में स्वतन्त्रता और रुचि का प्राधान्य होता है।

(2) खेल मनोरंजक होते हैं।

(3) खेलों द्वारा बालकों का आत्मविश्वास बढ़ता है।

(4) खेलों से बालकों में सहयोग की भावना का विकास होता है।

(5) बालकों की कल्पना शक्ति का विकास खेलों द्वारा बहुत कुछ सम्भव है।

इन्हीं सिद्धान्तों का ध्यान में रखते हुए शिक्षा शास्त्रियों के मत से खेल द्वारा शिक्षा देने में बालकों पर उसका अमिट प्रभाव पड़ता है।

खेल द्वारा शिक्षा की शिक्षण पद्धति

शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है। खेल विधि द्वारा शिक्षा में इस उद्देश्य की पूर्ति बड़ी सरलता से हो जाती है। इस विधि के अनुसार किसी विशिष्ट उद्देश्य को सामने रखकर उसी के अनुरूप शिक्षा दी जाती है। बालक के सामाजिक, शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक विकास का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है। खेल अनेक प्रकार के हो सकते हैं, सभी शक्तियों के लिए अलग अलग प्रकार के खेल खिलाए जाते हैं। उदाहरण के लिए :–

(क) शारीरिक विकास के लिए कबड्डी आदि ऐसे खेल खेले जाएं। जिनसे शारीरिक व्यायाम हो जाए।

(ख) मानसिक विकास के लिए गणित दौड़ आदि खेल उत्तम रहते हैं।

(ग) जिन खेलों में एक से अधिक खिलाड़ी भाग लेते हैं वे सभी बालकों के सामाजिक विकास में सहायक होते हैं।

(घ) सभी खेलों में ईमानदारी से काम लेना बालकों की नैतिक विचारधारा का विकास करता है।

रिक्त स्थानों की पूर्ति, अन्त्याक्षरी, समस्या पूर्ति आदि भी एक प्रकार के मनोरंजक मानसिक खेल हैं।

खेल द्वारा शिक्षण विधि का मूल्यांकन एवं हिन्दी शिक्षणागत उपयोजन

इस विधि में गुण अधिक और दोष कम हैं। दोष केवल इतना ही है कि प्रत्येक बात की शिक्षा खेल द्वारा ही देना सम्भव नहीं। इसके अतिरिक्त यह निश्चित है कि खेलों में बालकों की रुचि अधिक होने के कारण उन्हें खेल द्वारा व्याहारिक जीवन की सफल शिक्षा दी जा सकती है।

भाषा शिक्षण के लिए तो इस विधि को बड़ा उपयोगी बनाया जा सकता है। रचना, व्याकरण आदि सभी की शिक्षा प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च कक्षाओं में सफलतापूर्वक दी जा सकती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कक्षा को दो दलों में विभाजित करके एक प्रश्न करे दूसरा उत्तर दे, पहला कोई समस्या रखे द्वसरा उसकी पूर्ति करे।

स्तर के अनुसार प्राथमिक स्तर पर रिक्त स्थानों की पूर्ति, उचित संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण शब्दों द्वारा कराई जा सकती है। यथा–

निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति विशेषण शब्दों द्वारा कीजिए :

1. राम .... लड़का है।
2. श्याम की बकरी ...... है।
3. मोहन के पास .... पैन है।
4. सोहन की गाय ने .... लिटर दूध दिया।

माध्यमिक कक्षाओं के लिए–(1) वस्तुनिष्ट प्रश्नों के आधार पर दो बालकों या दलों की होड़ (2) वाद-विवाद प्रतियोगिता आदि उपयोगी रहती है।

उच्च कक्षाओं के लिए–(1) ऊँचे स्तर की प्रतियोगिता का खेल (2) परिभाषाओं की होड़ का खेल (3) समस्यापूर्ति का खेल आदि बहुत ही उत्तम रहते हैं।

इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए यह प्रणाली सभी विषयों के शिक्षण के लिए बहुत ही उपयुक्त है। फिर भी इस विधि की भी कुछ सीमाएं हैं जो निम्न हैं–

(I) इस विधि में छात्र-छात्राओं को अत्यधिक स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है जिससे अनुशासन के भंग होने का भय बना रहता है।

(II) खेल विधि के प्रयोग करने वाले शिक्षक का व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक और रुचिपूर्ण होना चाहिये। ऐसे शिक्षाकों का उपलब्ध होना कठिन होता है।

(III) इस विधि में अधिक समय अपेक्षित होता है। विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण के लिये बहुत अधिक समय नहीं दिया जाता।

(IV) कई बार प्राय: ऐसा देखा जाता है कि खेल विधि साधन न रहकर साध्य बन जाती है और शिक्षण का ध्येय लुप्त हो जाता है।

(V) खेलों की संख्या पर्याप्त है लेकिन खेलों से सम्बन्धित सामग्री आसानी से उपलब्ध नहीं होती।

(VI) व्यक्तिगत विभिन्नता के कारण छात्र-छात्राओं की स्वाभाविक रुचियां और प्रवृत्तियां भिन्न-भिन्न होती हैं। इस लिये एक समय में अलग-अलग छात्र-छात्राओं के लिये अलग-अलग खेल विधियों का प्रयोग करना सम्भव नहीं हो सकता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(VII) उच्च कक्षाओं के छात्र-छात्राओं को गहन अध्ययन और स्वाध्याय आवश्यकता होती है। उनके लिये यह विधि कारगर साबित नहीं होती।

सारांश में यह कहना उचित होगा कि इस विधि में दोष न होकर बल्कि इसकी सीमाएं हैं जिनका निवारण किया जा सकता है। भाषा-शिक्षण के लिये और विशेष रू छोटी कक्षाओं के लिये खेल विधि अत्यन्त कारगर है। भाषा सिखाने का स्वाभविक सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना है। खेल विधि के माध्यम से इस क्रम और भाषा शि के सूत्रों का सहजता से पालन होता है। इसके अतिरिक्त भाषा सम्बन्धित अन्य क्रियाओं भी खेल विधि के द्वारा सिखाया जा सकता है-जैसे अभिनय, उचित संवाद, कविता अन्त्याक्षरी और पहेलियों का पूछना और महान पुरुषों द्वारा कहे गये सुन्दर कथनों का प्र आदि।

अभ्यास के प्रश्न

1. खेल विधि छोटी कक्षाओं के लिये सर्वोत्तम विधि है। क्या आप इस कथन से सहमत हैं और क्यों ?
2. भाषा शिक्षण के लिये खेल विधि की कौन-कौन सी विशेषतायें हैं ? विस्तार से लिखिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3

प्रत्यक्ष विधि
(Direct Method)

प्रत्यक्ष प्रणाली के अन्तर्गत किसी भी नई भाषाको बिल्कुल उसी ढंग और क्रमबद्धता सिखाया जाता है जिस ढंग और क्रम से बालक को उसकी मातृभाषा सिखाई जाती है र्थात् किसी भी भाषा को उसी भाषा के माध्यम से सिखाना। भाषा सीखने में क्रमबद्धता । बालक पहले सुनता है, फिर बोलता है और बाद में पढ़ना और लिखना सीखता है। लक सबसे पहले अपने माता-पिता के सम्पर्क में रहकर सुनना और बोलना सीखता और द में जब उसे लिपि का ज्ञान कराया जाता है तो वह पढ़ना और लिखना सीखता है। त्येक बालक बोलचाल की भाषा को शब्दों में न सीख कर वाक्यों में सीखता है क्यों कि क्य भाषा की सबसे छोटी इकाई है।

प्रत्यक्ष प्रणाली की कुछ अपनी विशेषताएं हैं जो निम्न हैं–

I. वार्तालाप पर बल–यह प्रणाली (विधि) वार्तालाप पर जोर देती है क्योंकि भाषा ी शिक्षा वार्तालाप से ही प्रारम्भ की जाती है। क्योंकि भाषा की इकाई वाक्य है ; शब्द हीं। वार्तालाप शब्दों में न होकर वाक्य में होता है। इस लिये भाषा सिखाने के लिये वाक्य ा बोलना आवश्यक है। बालकों को स्वतन्त्र रूप से बोलने के लिये प्रेरित किया जाता है। सा करने से बालक नई भाषा को सीखने में सफल होते हैं और बाद में अभ्यास से उनका च्चारण भी शुद्ध हो जाता है।

II. वार्तालाप के बाद पढ़ने और लिखने के कौशलों का ज्ञान–बालक जब ठीक कार से नई भाषा में अर्थात् हिन्दी में बातचीत करना सीख जाता है तो उसे लिपि का ज्ञान या जाता है। लिपि के ज्ञान की प्राप्ति के बाद उसको पढ़ना और लिखना सिखाया जाता ।

III. प्रत्यक्ष वस्तुओं का प्रयोग–परोक्ष अथवा अप्रत्यक्ष विधि में तो किसी शब्द थवा वाक्य का मातृ-भाषा में अनुवाद किया जाता है लेकिन इस विधि में प्रत्यक्ष रूप से स्तु या उसके रूप को प्रस्तुत करके वाक्य का प्रयोग किया जाता है जैसे उदाहरण के रूप

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
में 'गाय' के चित्र को दिखाकर यह कहा जाये कि यह गाय का चित्र है। बालक आसा समझ जायेंगे 'गाय' शब्द किस जानवर के लिये प्रयोग में लाया गया है।

IV. मातृभाषा का प्रयोग नहीं—इस विधि में किसी भी ढंग से मातृभाषा का नहीं किया जाता क्योंकि कोई भी नई भाषा या हिन्दी में भाव व विचार व्यक्त करते मातृभाषा अपने आप ही सामने आ जाती है और इससे भाव व विचार के प्रकट में बाधा जाती है। इस लिये शिक्षक इस विधि के अन्तर्गत वस्तुओं अथवा उनके रूपों को दिख नये-नये शब्दों और मुहावरों का ज्ञान देता है और फिर उन शब्दों और मुहावरों को में प्रयोग करता है। इस प्रकार शिक्षक मातृभाषा के प्रयोग न करने से बचा रहता है।

V. व्याकरण की शिक्षा का उपयोग नहीं होता—इस विधि में किसी भी प्रका और किसी भी रूप में व्याकरण की शिक्षा पर कोई बल नहीं दिया जाता। प्राचीन सम तो पहले व्याकरण सिखाया जाता था और फिर बाद में भाषा की शिक्षा दी जाती थी। ले ऐसा करने के बाद भी बालकों के उच्चारण में अशुद्धता रह जाती थी। इस लिये यहां किसी भी सैद्धान्तिक व्याकरण के पक्ष में नहीं है। भाषा की शिक्षा शुद्धभाषा के प्रयोग दी जानी चाहिये। व्यावहारिक व्याकरण का ज्ञान आवश्यकतानुकूल दिया जाये।

प्रत्यक्ष विधि के उद्देश्य (Objectives of Direct -Method)

(I) मातृभाषा के शिक्षण की तरह ही स्वाभाविक वातावरण में हिन्दी का शि करना।

(II) मातृभाषा या अन्य किसी भाषा की सहायता के बिना हिन्दी का शिक्षण क

(III) इस विधि का प्रमुख ध्येय यह है कि छात्र-छात्राएं हिन्दी में ही चिन्तन मनन करें और वे इस योग्य हों कि वे अपने विचार या भाव प्रवाह के अभिव्यक्त कर सकें।

(IV) इस विधि में शब्द और वस्तु का प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध स्थापित करके श्रव्य सामग्री के प्रयोग, हाव-भाव, अभिनय और पर्यायवाची शब्दों के से कठिन शब्दों की व्याख्या करने का प्रयास किया जाता है।

(V) इस विधि का ध्येय यह है कि छात्र-छात्राओं को हिन्दी सिखाने हेतु अधि अधिक वार्तालाप पर बल दिया जाना चाहिये। ऐसा करने से हिन्दी शि सहज हो जायेगा।

(VI) इस विधि के अन्तर्गत बालकों को जो भाषा सिखानी हो उस भा सम्बन्धित वातावरण पैदा करना चाहिये अर्थात् हिन्दी सिखाने के लिये वाता को हिन्दीमय बनाया जाये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रत्यक्ष विधि के गुण (Merits of Direct-Method)

(I) इस विधि के माध्यम से शीघ्रता से हिन्दी भाषा सीखी जा सकती है। कम परिश्रम करके अधिक लाभ प्राप्त होता है क्योंकि किसी भी भाषा को उसी भाषा के माध्यम से सिखाना सहज और सरल होता है।

(II) इसमें वार्तालाप पर अधिक बल दिया जाता है और यही कारण है कि शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच सक्रियता का वातावरण बना रहता है।

(III) इसमें अनुवाद और व्याकरण का प्रयोग न करके शुद्ध भाषा सीखने का अभ्यास कराया जाता है।

(IV) इस विधि से हिन्दी शिक्षण के मौखिक कौशल का अधिक से अधिक विकास होता है जो उनके भावी जीवन में अत्यन्त सहायक होता है।

(V) इसमें भाषा को स्वाभाविक रूप से सीखने के नियमों और क्रमबद्धता का पालन भी होता है जैसे कि बालक पहले सुनता है और फिर अपने से बड़ों का अनुकरण करते हुए बोलता है। बाद में लिपि का ज्ञान प्राप्त करके पढ़ना और लिखना सीखता है।

(VI) इसमें भाषा शिक्षण के सूत्रों का भी पालन होता है जिससे शिक्षण में रोचकता, नवीनता, क्रियाशीलता और प्रभावोत्पादकता आ जाती है।

(VII) इस विधि का एक गुण यह भी है कि शिक्षक के लिये पढ़ाना सरल हो जाता है और छात्र–छात्राओं के लिये सीखना सुगम और सहज हो जाता है।

प्रत्यक्ष विधि की सीमाएं
(Limitations of Direct-Method)

(1) इस विधि में अधिकांश रूप से वार्तालाप पर बल दिया जाता है। ऐसी स्थिति में सभी बालक ऐसे नहीं होते कि वे वार्तालाप में भाग लें सकें। जो बालक संकोच करते हैं वे वार्तालाप में भाग नहीं लेंगे और जो बुद्धिमान बालक हैं वे अवश्य ही वार्तालाप में बढ़चढ़ कर भाग लेते हैं । इसलिये वार्तालाप का लाभ सभी बालकों को नहीं होता।

(2) इस विधि में अधिक समय अपेक्षित है। यह ठीक है कि प्रारम्भ में तो कम समय लगता है लेकिन बाद में उच्च स्तर पर हिन्दी शिक्षण की व्याख्याओं में अधिक समय लगता है। इस लिये किसी अन्य भाषा जो छात्र जानते हैं उसका सहारा लेना ही पड़ता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(3) इस विधि के अन्तर्गत सीमित शब्दावली का ही प्रयोग हो पाता है। सभी को मूर्त रूप से, भाव भंगिमा, अभिनय से समझना सम्भव नहीं हो पाता लिये भी शिक्षक को हिन्दी का शिक्षण करने के लिये प्रादेशिक भाषा पर बहुत निर्भर रहना ही पड़ता है।

(4) इस विधि में छात्र-छात्राओं की ओर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना अपेक्षि लेकिन छात्र-छात्राओं की कक्षा में संख्या अधिक होने से व्यक्तिगत ध्यान देना सम्भव नहीं होता।

(5) प्रत्यक्ष विधि के लिये अच्छे प्रशिक्षित और अनुभवी शिक्षकों की आवश्य होती है। हिन्दी भाषी क्षेत्रों के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर अनुभवी और प्रशिक्षित शिक्षकों की पर्याप्त रूप से कमी है।

(6) सभी शिक्षकों के लिये यह सम्भव नहीं होता कि वे हिन्दीमय वातावरण में पैदा करें और फिर छात्र-छात्राओं को पढ़ायें।

यह कहना उचित ही है कि प्रत्यक्ष विधि सैद्धान्तिक रूप से मनोवैज्ञानि व्यावहारिक दृष्टि से भी अगर देखा जाये तो छात्र-छात्राओं को वार्तालाप का अभ्यास रूप से होता है और इससे उनका उच्चारण भी शुद्ध होता है। उन्हें व्याकरण के निरर्थक अनुवाद करने की भी परेशानी नहीं उठानी पड़ती है। शिक्षण प्रक्रिया प्रभावपूर्ण और रुचिकर-हो जाती है। इसी लिये भाषा शिक्षण में प्रत्यक्ष विधि का किया जाता है। इतना सब कुछ होने पर भी इस विधि को भी दोषों से मुक्त नहीं कि सकता या यूँ कहिए कि यह विधि कमियों से रहित नहीं है।

प्राय ऐसा देखा जाता है कि बालक मातृ-भाषा का प्रयोग परिवार, स्कूल एवं में सभी सार्वजनिक स्थानों पर करता है और किसी अन्य भाषा का प्रयोग स्कूल में अवधि में ही करता है। इस लिये यह कहना गलत होगा कि वह नई भाषा में शब्द पहले वार्तालाप कर सकेगा। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अगर देखा जाये तो मातृ-भा विचारों एवं भावों से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है और विचार अपने में पूर्ण होता है। छोटा बालक जब भाषा की दृष्टि से 'पानी' शब्द का उच्चारण 'मानी' भी कर देता उस शब्द के पीछे पूरा विचार होता है कि उसे पानी पिलाया जाये। इस लिये हम जब भाषा भी सीखते हैं तो विचारना, सोचना मातृ भाषा में ही होता है। दूसरी या अन्य त्तो हम मातृभाषा का अनुवाद करते हैं। यदि आप हिन्दी क्षेत्र के हैं और अंग्रेज़ी कहते हैं-"My mother is very good" तो आपके मन में विचार रहता है कि मेरी बहुत अच्छी है। कारण मनोवैज्ञानिक ही है। इस लिये यह कहना भी कुछ सीम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उपयुक्त होगा कि मातृभाषा के अतिरिक्त नई भाषा की शिक्षा वार्तालाप से प्रारम्भ करना असम्भव नहीं है तो कठिन जरूर है।

प्रतिभावान और बुद्धिमान बालकों के लिये यह विधि बहुत उपयुक्त है। इसमें कुछ दोष होने के बावजूद यही कहा जायेगा यह प्रणाली स्वाभाविक और रुचिकर है। छोटे बालकों के लिये स्वाभाविक एवं रुचिकर प्रणाली को अपनाना ही उचित रहता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. अहिन्दी भाषी क्षेत्र में हिन्दी शिक्षण के लिये कौन-कौन सी प्रणालियों को अपनाया जा सकता है ? इनमें से किसी एक विधि की विस्तार से चर्चा कीजिए।
2. नई भाषा को सिखाने की प्रत्यक्ष विधि की चर्चा हिन्दी भाषा शिक्षण के सन्दर्भ में कीजिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4

संरचनात्मक पद्धति या गठन-प्रणाल
(Structural Approach or Method

संरचनामक या गठन प्रणलाी के अन्तर्गत वाक्य गठन के ढंग की जानकारी प्राप्त है। प्रत्येक भाषा में वाक्य गठन का अपना-अपना तरीका होता है। छात्र-छात्राओं को वा गठन के ढंग से अवगत कराना भाषा सिखाने के लिये सहायक सिद्ध होता है। इस प या प्रणाली के अन्तर्गत कुछ चुने हुए शब्दों और उनसे बनने वाले समान वाक्यों से बाल को भाषा सिखाने का श्री गणेश किया जाता है। इस प्रणाली के समर्थकों का ऐसा कहन कि कुछ चुने हुए शब्दों एवं ढांचों का अभ्यास कराते हुए बच्चों को भाषा का ज्ञान हो ज है। लेकिन इस विधि से बालकों को कुछ ही शब्दों एवं वाक्यों का ज्ञान करा सकते हैं। ज तक मौखिक रूप से वार्तालाप का अवसर नहीं मिलता है तो भाषा शिक्षण पूर्ण रूप सफल नहीं हो सकता। हिन्दी की वाक्य रचना अंग्रेज़ी भाषा की वाक्य रचना की तरह न है। हिन्दी में अंग्रेज़ी की तुलना में अधिक लचकीलापन है। इसके अतिरिक्त अंग्रेज़ी भा की शिक्षा देने के लिये अनेक प्रकार के शब्दों एवं उनसे बनने वाले वाक्यों की संरच (गठन) की जा चुकी है। हिन्दी पढ़ाने के लिये इस प्रकार के सफल प्रयास अब तक तरह से नहीं हुए हैं। आधुनिक भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा का उद्‌देश्य दूसरों की मौखिक लिखित सामग्री को समझ लेना ही रह गया है और इस प्रकार अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा प्रणाली के द्वारा दी जा सकती है। परन्तु हमारा उद्‌देश्य अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी की शि हिन्दी के माध्यम से देकर उनको दैनिक जीवन में विचार विनियम करने के योग्य बनाना इस ध्येय की प्राप्ति तो वार्तालाप की शिक्षा से ही सम्भव हो सकती है। क्योंकि ग प्रणाली में वार्तालाप की शिक्षा पर बल नहीं दिया जाता है, तो यह विधि राष्ट्र भाषा के में हिन्दी शिक्षण के लिये उपयुक्त नहीं कही जा सकती। शुद्ध वाक्य रचना की दृष्टि से प्रकार का प्रयोग अवश्य ही उपयुक्त और सार्थक है।

संरचनात्मक या गठन पद्धति के उद्‌देश्य
(Objectives of Structural Approach or Method)

संरचनात्मक या गठन प्रणाली के उद्‌देश्य निम्न हैं-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(1) छात्र-छात्राओं को शुद्ध वाक्य रचना का ज्ञान देना।

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(II) हिन्दी भाषा के चार मूलभूत कौशलों–सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना (लेखन) का सामान्य ज्ञान देना।

(III) छात्र-छात्राओं को भाषा का शुद्ध ज्ञान देते हुए उनको शुद्ध उच्चारण के लिये प्रेरित करना।

(IV) उनके शब्द शक्ति का ज्ञान कराते हुए हिन्दी भाषा में निपुण करने का प्रयास करना।

(V) अभ्यास और पुनरावृत्ति पर बल देते हुए उनको हिन्दी शिक्षण में रुचि के लिये प्रेरित करना अर्थात् हिन्दी सीखने के लिये आधार बनाना।

(VI) उनको हिन्दी शिक्षण में अर्थात हिन्दी सीखने के लिये सक्रिय भागीदारी बनाना।

संरचनात्मक प्रक्रिया
(Structural Process)

प्रारम्भ में शिक्षक ऐसी संरचनाओं का चुनाव करता है जो सरल और छात्र-छात्राओं के दिन-प्रतिदिन के जीवन से सम्बन्धित हों। इनमें औपचारिक एवं साधारण वाक्य शब्द समूह को लेकर चलते हैं जैसे (फिर दर्शन देना) शुभ रात्रि, आपका धन्यवाद, आप कब आये आदि। इनके पश्चात् फिर आगे चलकर मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग भी किया जा सकता है। उदाहरण के रूप में जैसे आप तो ईद का चांद हो गये हो, घर का भेदी लंका ढाये आदि। शिक्षक को ऐसी संरचनाओं का अभ्यास देने के बाद कक्षा के स्वाभाविक वातावरण में संरचनाओं को छात्र-छात्राओं के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिये। इस प्रक्रिया में छात्र-छात्राओं की सक्रिय सहभागिता रहती है। संरचना का अभ्यास भाषा कौशलों के क्रमानुसार-सुनना, बोलना, पठन और लेखन के अनुसार करवाया जाता है। भाषा शिक्षण की दृष्टि से संरचना में मौखिक अभ्यास पर अधिक बल दिया जाता है।

संरचनात्मक प्रणाली या पद्धति के गुण
(Merits of Structural Method or approach)

अधिकांश शिक्षा शास्त्रियों के मतानुसार भाषा सीखने के लिये शब्दोपार्जन की अपेक्षा वाक्य गठन पर अधिकार का होना अधिक उपयोगी है। इस लिये छात्र-छात्राओं को वाक्यों की संरचना का विविध रूप से अभ्यास कराना उचित रहता है। ऐसा करने से शब्दावली का अर्जन तो अनायास ही हो जाता है। संरचनात्मक विधि आधुनिक विधि है और इस विधि ने परम्परागत विधियों की कमियों को दूर करने का प्रयत्न किया है। यह विधि भाषण शिक्षण की नई मान्यताओं पर आधारित होने के कारण अनेक गुणों से पूर्ण है। ये गुण निम्न

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(I) सभी भाषा शास्त्रियों ने यह माना है कि भाषा की इकाई का वाक्य से ही पता चलता है। इस लिये शब्द रूप अलग सिखाने की अपेक्षा वाक्यों में प्रयोग करके अभ्यास कराना चाहिये। वाक्य गठन का अभ्यास किसी क्रम के अनुसार कराना ही उचित रहता है। प्रसिद्ध शिक्षा भाषा शास्त्री के अनुसार, "आधुनिक ज्ञान रखने वाले भाषा-शिक्षक के लिए वाक्य-गठन का उचित क्रम विधान करना उतना ही आवश्यक है जितना कि शब्दावली का क्रम विधान।" यह पद्धति शब्दावली की अपेक्षा वाक्य गठन पर बल देती है क्योंकि यह इस मान्यता पर आधारित है कि 'वाक्य विचार की इकाई है' अर्थात् भाषा की प्रमुख इकाई वाक्य है।

(II) यह विधि उच्चारण रूप पर अधिक बल देती है। परम्परागत भाषा शिक्षण में लिखित रूप पर अधिक बल दिया जाता था। लेकिन आधुनिक भाषा विचार-शास्त्र भाषा के उच्चरित रूप पर अधिक जोर देता है। भाषा-विज्ञान इस बात को मान्यता देता है कि भाषा का प्राथमिक रूप उच्चारण है और लिखित रूप गौण है। लेकिन भारतीय स्कूलों में इस मान्यता के अनुसार शिक्षण नहीं होता। क्योंकि मौखिक अभिव्यक्ति पर प्रारम्भ में बल नहीं दिया जाता। इस प्रकार संरचनात्मक पद्धति अधिक सार्थक एवं सशक्त है क्योंकि इसमें सुनने और बोलने को प्राथमिक रूप दिया गया है।

(III) यह पद्धति भाषा सीखने के स्वाभाविक क्रम को अपनाती है। भाषा सीखने के स्वाभाविक क्रम सुनना, बोलना, पढ़ना और लेखन हैं। यह विधि इस क्रम को अपनाकर भाषा का शिक्षण करती है। बालक जब संसार में प्रवेश करता है तो सबसे पहले वह सुनता है और फिर सहज ढंग से अनुकरण करते हुए बोलना प्रारम्भ करता है और फिर इसके पश्चात् पढ़ना और लिखना भी सीख जाता है। बी.डी. श्रीवास्तव के अनुसार, "बोलना वास्तव में भाषा है, लिखित भाषा तो केवल उसका प्रतिरूप वास्तविकता से एक कदम हटा हुआ है, जैसे कि तुम एक वास्तविक व्यक्ति हो और तुम्हारा चित्र तुम्हारा प्रतिरूप है।"

(IV) सरल से कठिन के सूत्र पर आधारित विधि है। किटसन ने कहा है कि "किसी भाषा की मौखिक अभिव्यक्ति (बोलना) पढ़ने और लिखने की अपेक्षा बहुत अधिक सरल है।" इसी लिये बालकों को पहले सरल वाक्य बोलना सिखाया जाता है और बाद में कठिन वाक्यों का बोलना सिखाया जाता है।

(V) मातृभाषा के शिक्षण में भी पहले सुनने और बोलने को महत्व दिया जाता है। यही कारण है कि इनको सुनने और बोलने को प्राथमिक कौशल के अन्तर्गत लिया जाता है और पढ़ने और लिखने के कौशल को गौण कौशल के अन्तर्गत लिया जाता है। इस क्रम के अनुसार बालकों को कक्षा में सीखने के लिये उचित वातावरण पैदा होता है। इस विधि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE 2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विशेष गुण यह है कि हिन्दी कक्षा में केवल मात्र हिन्दी का ही प्रयोग किया जाता और दूसरी भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता। इसके परिणामस्वरूप छात्र-छात्राओं का ध्यान हिन्दी भाषा सीखने पर ही केन्द्रित रहता है।

(VI) यह विधि कक्षा के वातावरण को क्रियाशील, रुचिमय और सजीव बनाये रखती है और इससे कक्षा में नीरसता नहीं आती क्योंकि इस विधि के माध्यम से छात्र-छात्राएं निष्क्रिय श्रोता न बन कर शिक्षण प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं और वे क्रियाशील रहते हैं। इस विधि की रोचकता के कारण कक्षा में किसी प्रकार की अनुशासनहीनता होने का भय नहीं होता। यह विधि कुछ सीमा तक खेल द्वारा शिक्षा की विधि से मेल खाती है। वार्तालाप इतना रुचिपूर्ण होता है जिससे छात्र-छात्राएं आनन्द प्राप्त करते हैं।

(VII) यह विधि अर्थात् संरचनात्मक विधि जीवन की वास्तविक परिस्थितियों के सन्दर्भ के अनुकूल होने के कारण छात्र-छात्राओं के ज्ञान और अनुभव के क्षेत्र से सम्बन्धित रहती है और यही कारण है कि अध्यापन स्पष्ट एवं सरल और सफल ढंग से होता है। यदि छात्र-छात्राओं को कुछ नये शब्दों से परिचित कराना होता है तो शब्दों का अर्थ उचित परिस्थिति और सन्दर्भ से पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाता है। श्री एस. के. देशपांडे ने संरचनात्मक-पद्धति की परिभाषा इस प्रकार दी है कि ''प्रत्येक संरचना या वाक्य गठन को सार्थक सन्दर्भ में प्रस्तुत किया जाना चाहिये विशेष रूप से नित्य दिन जानी-पहचानी परिस्थितियों के सन्दर्भ में, जिससे सीखने वाले की रुचि अधिक जागृत हो सके।''

(VIII) इस विधि में सैद्धान्तिक व्याकरण को न अपनाकर व्यावहारिक व्याकरण पर बल दिया जाता है आज आधुनिक विधियों में व्याकरण के परम्परागत महत्व का कोई स्थान नहीं है। यह विधि रटवाने पर किसी प्रकार से बल नहीं देती बल्कि रटवाने की अपेक्षा अधिक दुहरा कर अर्थात् बार-बार अभ्यास कराने पर बल दिया जाता है। इसमें निगमन विधि का भी पालन होता है।

(IX) इस विधि में अभ्यास के सिद्धान्त की प्रबलता पर अधिक बल दिया गया है। आधुनिक भाषा शिक्षा शास्त्री यह मानते हैं कि भाषा एक कौशल है और कौशल में निपुणता हेतु अभ्यास करना अत्यन्त आवश्यक और उपयोगी है। एक मनोवैज्ञानिक तथ्य के अनुसार शिक्षण की अपेक्षा सीखना अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है। सीखना अभ्यास पर निर्भर करता है क्योंकि जो व्यक्ति किसी भी कौशल को सीखने के लिये जितना अधिक अभ्यास करेगा वह उस कौशल में उतना ही अधिक निपुण होगा।

(X) संरचनात्मक विधि उच्चारण की शुद्धता पर भी बल देती है क्योंकि इस विधि में सुनने और बोलने पर अधिक से अधिक बल दिया जाता है जो स्वाभाविक बात है कि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

छात्राओं का उच्चारण शुद्ध होगा। भाषा शिक्षण में उच्चारण के शुद्ध होने का बहुत अधिक महत्त्व होता है। विदेशों में उच्चारण की शुद्धता हेतु प्रयोगशालाओं का निर्माण किया हुआ है और सप्ताह में दो बार एक-एक घण्टे की अवधि में बातचीत का अभ्यास कराया जाता है। लेकिन भारत में यह सुविधा नहीं है। इस पद्धति के अन्तर्गत लिपि की सहायता के बिना ही सुनने और बोलने के अभ्यास पर बल दिया जाता है। क्योंकि प्रारम्भ में ही अगर लिपि का ज्ञान दिया जाता है तो उच्चारण में शिथिलता आ जाती है। यह विधि शुद्ध उच्चारण हेतु इस बात का समर्थन करती है कि आदर्श वक्ताओं द्वारा दिये गये भाषणों के टेप बद्ध पाठ तैयार किये जाने चाहियें जिससे छात्र-छात्राएं उनको सुनकर अपने उच्चारण को शुद्ध करें।

(XI) संरचनात्मक विधि का छोटी कक्षाओं के अतिरिक्त माध्यमिक कक्षाओं के स्तर पर भी प्रयोग किया जा सकता है। यह विधि प्राथमिक कक्षाओं के लिये अति उत्तम है क्योंकि इस विधि के द्वारा बालक भाषण में निपुण हो जाते हैं। इस विधि के बारे में कुछ विद्वानों की यह गलत धारणा है कि छोटी कक्षाओं के लिये तो उपयोगी है लेकिन उच्च कक्षाओं के लिये इसका महत्त्व नहीं है। उनका ऐसा सोचना गलत है। वास्तव में प्राईमरी स्तर पर जो कार्य प्रारम्भ किया हुआ होता है उस कार्य को माध्यमिक स्तर जारी रखना चाहिये। प्राईमरी स्तर का और माध्यमिक स्तर का यह अन्तर रहता है कि संरचना प्राईमरी स्तर पर सहज एवं सरल होती है परन्तु माध्यमिक स्तर पर कठिन होती चली जायेगी।

संरचनात्मक विधि की सीमाएं
(Limitations of Structural Method/Approach)

(I) इस विधि के अन्तर्गत शिक्षकों से अधिक समय, अधिक मेहनत एवं निष्ठा और प्रतिभा अपेक्षित रहती है। सभी शिक्षकों में ये गुण नहीं होते।

(II) आवश्यकता से अधिक बार-बार एक ही बात को दोहराने अर्थात् अभ्यास करने से छात्र ऊबने लगते हैं और पाठ शिक्षण में नीरसता आने का भय बना रहता है।

(III) संरचनाओं के चयन, निर्माण और अभ्यास हेतु अधिक समय, परिश्रम, शक्ति और व्यय की आवश्यकता होती है इस लिये स्कूल की समय सारणी में इसे व्यावहारिक रूप देना कठिन होता है।

(IV) इस विधि की सफलता एवं उपयोगिता इस बात पर निर्भर करती है कि पाठ्य क्रम का निर्माण विधि के अनुसार क्रमबद्ध हो। वास्तव में ऐसा परिवर्तित पाठ्यक्रम में नहीं किया जाता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(V) सभी प्रकार के विषय और विशेष रूप से माध्यमिक स्तर के उच्च स्तर के विषयों जिनकी विषय सामग्री गम्भीर और व्यापक होती है, इस विधि के द्वारा शिक्षण नहीं किया जा सकता।

निष्कर्ष में यह कहना उचित होगा कि इस विधि की कुछ सीमाएं अवश्य हैं दोष नहीं हैं। इस पद्धति के लिये अवश्य ही कुछ बातों का होना आवश्यक है अन्यथा उनके अभाव में यह विधि सफल नहीं हो पायेगी। इस विधि की सफलता के लिये योग्य एवं प्रतिभावान शिक्षक, छोटे आकार की कक्षाएं, उपयुक्त श्रव्य-दृश्य सामग्री और इस विधि के अनुसार तैयार की हुई पाठ्य पुस्तकों की आवश्यकता होती है जिनकी जुटाना कुछ सीमा तक कठिन अवश्य हो जाता है लेकिन असम्भव नहीं है। संरचनात्मक पद्धति आधुनिक शिक्षण सिद्धान्तों और शिक्षण सूत्रों पर आधारित है। मनोविज्ञान भी इस विधि के प्रयोग का समर्थन करता है। इस लिये इस विधि का हिन्दी शिक्षण के लिये प्रयोग किया जाना चाहिये। हम पढ़ चुके हैं कि इस विधि के अनेक गुण हैं परन्तु खेद की बात यह है कि हिन्दी शिक्षण के लिये इस विधि को पूर्णरूप से व्यावहारिक रूप नहीं दिया गया है और इस विधि का प्रयोग अंग्रेज़ी शिक्षण के लिये ही किया जाता है। हिन्दी प्रेमियों को शोधकार्य करके इस विधि को व्यावहारिक दर्जा दिलवाने का प्रयास करना चाहिये।

अभ्यास के प्रश्न

1. संरचनात्मक पद्धति के उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए उसके गुणों पर प्रकाश डालिए।
2. संरचनात्मक पद्धति की प्रक्रिया से आपका क्या अभिप्राय है ? इस पद्धति की सीमाएं कौन-कौन सी है ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5

बालोद्यान शिक्षण पद्धति
(Kindergarten Method)

प्रसिद्ध दार्शनिक तथा शिक्षाशास्त्री फ्रोबेल पाठशाला को एक उद्यान मानता है। बालक उस उद्यान के पौधे हैं तथा शिक्षक उन पौधों की देखभाल करने वाला कुशल माली है।

बालोद्यान शिक्षण पद्धति के आधारभूत सिद्धान्त
(Basic Principles of Kindergarten Teaching Method)

इस शिक्षण पद्धति के निम्नलिखित सिद्धान्त हैं :–

1. स्वतन्त्रता– जब बालक स्वतन्त्र रूप से कार्य करते हैं तो वे उस बात को अधिक अच्छी तरह समझते हैं। बालकों के शिक्षण में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप बाधक होता है। इस विधि में बालक की स्वतन्त्रता का विशेष ध्यान रखा जाता है।

2. सामाजिकता– बालकों में सामाजिकता की भावना जाग्रत करने के लिए फ्रोबेल ने सामूहिक खेलों और कार्यों पर बल दिया है। सामाजिकता की भावना बालकों में सहयोग से कार्य करने की प्रवृत्ति का विकास करती है।

3. खेल प्रधान शिक्षा–स्वभाव से ही बालकों को खेल अच्छे लगते हैं। फ्रोबेल ने इस विधि में खेलों को महत्त्व दिया है और खेलों को दो भागों में विभाजित किया है। एक प्रकार के खेल वे हैं जिनमें एक विशेष प्रकार की समाग्री की आवश्यकता पड़ती है। दूसरे प्रकार के खेलों में किसी विशेष प्रकार की सामग्री की आवश्यकता नहीं होती। इन उपकरणों को फ्रोबेल ने उपहार (Gift) और व्यापार (Occupation) का नाम दिया है।

बालोद्यान शिक्षण विधि
(Kindergarten Teaching Method)

फ्रोबेल के अनुसार बालक खेल की क्रियाओं द्वारा अधिक सीख सकते हैं। इस विधि में ऐसे मनोरंजक खेलों को महत्त्व दिया गया है जो बालकों की कल्पना शक्ति का विकास कर सकें। इस विधि में 5 साधन प्रयोग में लाये जाते हैं। वे साधन अग्रलिखित हैं–

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

I. उपहार—ये संख्या में 20 होते हैं। इनमें लाल, पीले, नीले, हरे, नारंगी और जामुनी रंग की गेंदे, लकड़ी के गोले, आयत आदि होते हैं। इन उपहारों के आदान-प्रदान से बालकों को नये शब्दों का ज्ञान होता है।

II. व्यापार— इनमें लकड़ी, कागज़ आदि की बनी हुई वस्तुएँ होती हैं। इन पदार्थों के द्वारा बालक इनका आकार बदलने और सुधारने की क्रिया भी कर सकते हैं तथा कागज, मिट्टी आदि की भिन्न-भिन्न वस्तुएँ बनाकर शब्द ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

III. गीत—उपहारों के आदान प्रदान के समय अध्यापक बालकों के सामने कोई पद्य प्रस्तुत करता है। इनके द्वारा बालक सस्वर वाचन अर्थात् भाषा का मौखिक ज्ञान प्राप्त करते हैं और उनकी कविता में रुचि बढ़ती है।

IV. अभिनय— कहानी कहने व गीत गाने के साथ साथ बालक अभिनय भी करते हैं।

V. रचना— कही हुई कहानी का चित्र बनाकर तथा उसी आधार पर नयी कहानियों और पद्यों की रचना करा कर बालकों की रचनात्मक शक्ति को विकसित किया जाता है।

किन्डरगार्टन विधि का मूल्यांकन एवं हिन्दी शिक्षणागत उपयोगिता

बालक स्वतन्त्र वातावरण में अधिक सीख लेते हैं तथा खेल खेल में ही उनकी शिक्षा चलती रहती है। यह विधि छोटे बालकों (3 वर्ष से 7 वर्ष तक की आयु) के लिए ही अधिक लाभदायक है, बड़े बालकों के लिए नहीं।

भाषा शिक्षण की दृष्टि से छोटे बालकों के लिए यह विधि बहुत ही उपयोगी है क्योंकि भाषा शिक्षण के उद्देश्य-अर्थग्रहण, अभिव्यवित, तथा सृजनशक्ति तीनों साथ ही पूर्ण होते रहते हैं। उपहारों के आदान प्रदान में अर्थग्रहण, गीतों में अभिव्यक्ति तथा रचना में सृजनशवित सभी शक्तियों का एक ही साथ विकास होता रहता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. किण्डरगार्टन (बालोद्यान) विधि किस स्तर के बालकों के लिये उपयुक्त है ? इस विधि के गुण दोषों का विवेचन कीजिए।
2. आधुनिक शिक्षण प्रणालियों में आप छोटे बालकों के लिये किस विधि को उपयुक्त समझते हो, और क्यों ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6

माण्टेसरी विधि
(Montessori Method)

इटली की महिला मैरिया माण्टेसरी ने इस विधि का आविष्कार किया था। इ महिला के नाम पर इस विधि का नाम माण्टेसरी विधि रखा गया।

माण्टेसरी विधि के आधारभूत सिद्धान्त
(Basic principles of Montessori Method)

इस विधि के मुख्य आधारभूत सिद्धान्त निम्नलिखित हैं:–

I. बालक को स्वतन्त्रता (Freedom of Child)— मैडम माण्टेसरी के अनुसार ज बालक को पूर्ण स्वतन्त्रता मिलेगी तभी उसकी प्राकृतिक शक्तियों का विकास ठीक से सकेगा। स्कूल में बालक को स्वतन्त्र वातावरण दिया जायेगा तो बालक अपने व्यक्तित्व निर्माण स्वयं कर सकेगा। स्कूल में अनुशासन सम्बन्धी बातों को छोड़कर बालक को प लिखने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। बालक स्वशिक्षण (Self teaching) द्वारा विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

II. व्यक्तिगत विकास की शिक्षा (Education of Individual development)— बालक के व्यक्तिगत विकास का मतलब उसका सर्वांगीण विकास है। बालक के शारीरि मानसिक, सामाजिक, नैतिक एवं चारित्रिक विकास पर महत्त्व देना। शारीरिक विकास लिए बालकों को चलने-फिरने, दौड़ने-भागने, शारीकि व्यायाम आदि का अवसर दि जाता है। जिससे उनके शारीरिक अंगों का सही विकास हो सके। बालकों को आयु अनुसार ज्ञानेन्द्रियों, वस्तुओं के पहचानने आदि की शिक्षा दी जाती है इससे बच्चों मानसिक विकास होता है। सामाजिकता के लिए बालकों को दैनिक जीवन के कार्यों-ह मुंह धोना, एक दूसरे के साथ सहयोग के साथ कार्य करना आदि की शिक्षा दी जाती है नैतिक और चारित्रिक विकास के लिए बच्चों को बताया जाता है कि वे कौन से कार्य करें और कौन से कार्य नहीं करें।

III. खेल द्वारा शिक्षा (Education through play)— बालकों की रुचि खेल सबसे अधिक होती है इसलिए यदि बच्चों को खेल के द्वारा शिक्षा दी जाएगी तो वे बात को शीघ्र सीख लेते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

माण्टेसरी विधि में गणित तथा भाषा का ज्ञान खेल विधि द्वारा दिया जाता है।

माण्टेसरी पाठशाला
(Montessori School)

माण्टेसरी विधि पर आधारित पाठशालाओं को 'बाल भवन' कहा जाता है। इस पाठशाला में एक बड़ा कमरा तथा उसके साथ अन्य छोटे-छोटे कमरे होते हैं। बड़े कमरे को विशेष प्रकार की सामग्रियों और उपकरणों से सजाया जाता है। इन्हीं उपकरणों एवं सामग्रियों द्वारा बच्चों को शिक्षा दी जाती है। साथ लगे हुए छोटे-छोटे कमरों को भोजन तथा विश्राम आदि के लिए प्रयोग किया जाता है। बालकों को खेलने के लिए स्कूल के भवन के साथ एक बगीचा भी होता है। बालकों की शारीरिक क्षमता को ध्यान में रख कर मेज, कुर्सी आदि बनाए जाते हैं जिनका बालक आसानी से प्रयोग कर सकते हैं। बालकों की अवस्था के अनुसार खेल कूद का सामान होता है। बाल भवन में स्वयं अपने हाथ से ही बालक सभी सफाई के कार्य करते हैं।

माण्टेसरी शिक्षण पद्धति
(Montessori Teaching Method)

माण्टेसरी शिक्षण पद्धति के निम्नलिखित तीन भाग हैं:-

I. भाषा की शिक्षा (Education of Language)— माण्टेसरी के विचार में बच्चों को पहले लिखना सिखाना चाहिए और पढ़ना बाद में क्योंकि उनके अनुसार पढ़ने की अपेक्षा लिखना सरल होता है। माण्टेसरी द्वारा तैयार किये गये विभिन्न उपकरण बालक की कर्मेन्द्रियों की शिक्षा में सहायक होते हैं। बालक खेल ही खेल में कलम पकड़ना सीख लेते हैं।

II. कर्मेन्द्रियों की शिक्षा (Motor Education)— बाल भवन में सभी कार्यों को बालक स्वयं करते हैं। सफाई करना, कपड़े बदलना, हाथ मुँह धोना आदि सभी कार्यों को बालक अपने आप करते हैं इससे उनका शारीरिक व्यायास होता है और मासपेशियाँ मजबूत हो जाती हैं।

III. ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा (Sensory Education)— मैडम माण्टेसरी ने ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा के विषय में कहा है, "ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा सम्बन्धी क्रियाओं का यह उद्देश्य नहीं है कि बालकों को विभिन्न वस्तुओं के रूप गुण तथा वर्ण का ज्ञान हो जाए बल्कि इससे हम उनकी ज्ञानेन्द्रियों को परिष्कृत करना चाहते हैं, उनसे उनकी बुद्धि का विकास होता है।" अत: उनके विचार से बालकों को जितने अधिक ज्ञानेन्द्रियों के अनुभव होंगे, वे उतना ही अधिक सीखेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

माण्टेसरी पद्धति का मूल्यांकन एवं हिन्दी शिक्षण में उपयोगिता (Evaluation of Montessori Method and Utility in Hindi Taching)

माण्टेसरी विधि में बालक की वैयक्तिकता को ध्यान में रखा जाता है। साथ ही यह विधि ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों की शिक्षा, स्वयं शिक्षा, भाषा शिक्षण आदि की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। रस्क के शब्दों में "इस पद्धति की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता निर्देशन में वैयक्तिकता का स्थान है।"

इन गुणों के साथ-साथ माण्टेसरी विधि में कुछ दोष भी हैं। यह विधि बहुत खर्चीली है इसलिए निर्धन देशों के लिए उपयोगी नहीं है। इस विधि का उपयोग केवल छोटे बच्चों के लिए ही उचित है, उच्च स्तर के बालकों के लिए नहीं।

माण्टेसरी विधि का भाषा शिक्षण की दृष्टि से तब तक प्रयोग नहीं हो सकता जब तक बालकों की थोड़ी बहुत समझ उत्पन्न न हो जाय। कुछ बहुत बुद्धिमान बच्चों को छोड़कर 3 या 4 वर्ष और कभी कभी 5 वर्ष के बाद ही बच्चों में समझ उत्पन्न हो पाती है। साथ ही इस स्तर पर उच्चारण शुद्धि पर भी विशेष बल नहीं दिया जा सकता क्योंकि बच्चों की बोली में तोतलापन होता है और जब तक तोतलापन है तब तक बच्चा शुद्ध उच्चारण नहीं कर सकता। बच्चों से अक्षरों का चयन न भी कराया जाय तो भी अक्षरों के साथ-साथ जानी पहचानी वस्तुओं के चित्र बनाये जाएं जिनसे बच्चे परिचित हैं। उदाहरण के लिए 'क' के साथ कबूतर का चित्र, और 'ख' के स्थान पर खरगोश का चित्र। फिर बच्चों से 'क' एवं 'ख' को अलग न करा कर कबूतर और खरगोश का चित्र अलग करवाया जाये। धीरे-धीरे सम्बद्धता के नियम के आधार पर उन्हें क एवं ख का ज्ञान कराया जाए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

7

प्रोजेक्ट विधि
(Project Method)

सन् 1918 के फेडरल बोर्ड ऑफ वोकेशनल एजुकेशन में प्रोजेक्ट विधि का वर्णन किया गया है। इस विधि को व्यावहारिक रूप देने का श्रेय किलपैट्रिक को है। इसमें अध्यापक विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करता है। यह विधि कक्षा को नीरस, उद्देश्यहीन तथा निर्जीव अध्यापन से बचाती है।

प्रोजेक्ट विधि के आधारभूत सिद्धान्त
(Basic principles of Project Method)

1. निश्चित उद्देश्य—प्रजेक्ट प्रणाली में कार्य का एक निश्चित उद्देश्य और रूपरेखा होती है। उस कार्य को पूरा करे के लिए विद्यार्थी स्वयं योजना बनाता है तथा स्वाभाविक ढंग से कार्य करता है।

2. कार्य की जीवन से सम्बद्धता—इस विधि में कार्य बालक के जीवन से सम्बन्धित होते हैं। तथा बच्चे कार्य को रूचिपूर्वक पूरा करते हैं, बच्चों के कार्य करने का ढंग बनावटी न होकर स्वाभाविक होता है।

इसके अतिरिक्त प्रोजेक्ट विधि के अन्य तीन सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण हैं वे निम्नलिखित हैं—

I. क्रियाशीलता का सिद्धान्त (Principle of workability)

II. व्यावहारिकता का सिद्धान्त (Principle of practicability)

III. उपयोगिता का सिद्धान्त (Principle of utility)

प्रोजेक्ट दो प्रकार के होते हैं—

(अ) व्यक्तिगत प्रोजेक्ट (Individual Project)

(ब) सामूहिक प्रोजेक्ट (Group Project)

प्रोजेकट विधि में पाठशाला का स्वरूप

प्रोजेक्ट विधि में पाठशाला का कोई विशेष स्वरूप नहीं होता। फिर भी यह ध्यान [illegible]ा जाता है कि पाठशाला में घर जैसा वातावरण हो जहाँ बालक अपने जीवन से सम्बन्धित कार्यों को पूरा करने का प्रयत्न कर सके।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रोजेक्ट विधि
(Process of Project Method)

इस विधि के शिक्षण के चार चरण हैं :-

I. प्रयोजनशीलता (Purposefulness)

II. कार्य नियोजन (Planning)

III. कार्य सम्पादन (Execution) और

IV. मूल्यांकन (Evaluation)

प्रोजेक्ट का चयन करते समय यह ध्यान रखा जाता है कि उसके शैक्षिक मूल्य के साथ-साथ वह बालक के व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित हो। प्रोजेक्ट का चयन विद्यार्थी स्वयं करते हैं। प्रोजेक्ट का चयन करते समय अध्यापक यह ध्यान रखता है कि प्रत्येक प्रोजेक्ट का विशेष उद्देश्य हो। शिक्षक भी प्रयोजनशील प्रोजेक्टों का चुनाव करने में विद्यार्थियों की मदद कर सकता है।

यदि कार्य का नियोजन सही ढंग से किया जाता है तो प्रोजेक्ट में सफलता मिलती है। शिक्षक विद्यार्थियों को निर्देश देता है और विद्यार्थी कार्य का नियोजन स्वयं करते हैं। विद्यार्थियों पर ही कार्य का नियोजन करने का उत्तरदायित्व होता है।

कार्य सम्पादन का चरण शिक्षा की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। शिक्षक इस चरण में यह देखता है कि विद्यार्थी कार्य को सुचारु रूप से कर रहे हैं या नहीं। विद्यार्थियों को अपने कार्य में कहाँ तक सफलता मिली है। शिक्षक अह ध्यान रखता है कि कार्य का सम्पादन ठीक ढंग से हो।

प्रोजेकट विधि के अन्तिम चरण में प्रोजेक्ट का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन के द्वारा उचित सुधार के द्वारा वस्तु में आवश्यक परिवर्तन किया जा सकता है।

प्रोजेक्ट विधि का मूल्यांकन एवं हिन्दी शिक्षणागत उपयोगिता
(Evaluation of project method and utility in Hindi teaching)

प्रोजेक्ट विधि में कई गुण हैं। यह सीखने के नियमों-तत्परता का नियम (Law of Readiness), प्रभाव के नियम (Law of Effect) तथा अभ्यास के नियम (Law of Exercise) तीनों पर आधारित है। विद्यालय का सम्बन्ध वास्तविक जीवन से होता है। प्रजातन्त्रीय विधि पर बालक सहयोग से कार्य करते हैं और काम के प्रति उनकी श्रद्धा होती हैं। इसमें रटने के लिए कोई स्थान नहीं है । यह बालकों के व्यक्तिगत विकास के लिए बहुत लाभदायक है।

इन सभी विशेषताओं के बावजूद यह विधि बहुत खर्चीली है क्योंकि एक प्रोजेक्ट को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार की सामग्री की आवश्यकता होती है । इस विधि में समय भी अधिक लगता है। इसके द्वारा सभी विषयों का पूर्ण ज्ञान नहीं हो पाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कम खर्चीले प्रोजेक्टों को लेकर पद्धति की प्रयोगात्मक दृष्टि से परीक्षा की जा सकती है। भाषा शिक्षण की दृष्टि से इस विधि का विशेष महत्त्व नहीं है फिर भी परीक्षा के लिए इस का प्रयोग करके अवश्य देखना चाहिए।

हिन्दी शिक्षण की दृष्टि से यह विधि छोटी कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी नहीं है पर बड़ी कक्षाओं में इसका प्रयोग किया जा सकता है। इस विधि का तब तक कोई मूल्य नहीं जब तक बालकों में समझ उत्पन्न न हो जाये फिर भी परिस्थितियों एवं स्थानीय विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए :–

I. कविताओं का संकलन

II. कहानियों का संकलन

III. नाटकों का संकलन

IV. वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियां एवं उनका निराकरण

V. मौखिक अभिव्यक्ति

VI. समानार्थी शब्दों का संकलन आदि योजनाएँ हिन्दी में ली जा सकती हैं कक्षा स्तर के अनुसार इन योजनाओं का चयन करना चाहिए।

अभ्यास के प्रश्न

1. प्रोजेक्ट प्रणाली में भाषा की शिक्षा किस प्रकार दी जा सकती है ? इस विधि के गुण दोषों की व्याख्या कीजिए।

2. प्रोजेक्ट प्रणाली के मुख्य रूप से कौन–कौन से सोपान हैं ? इनकी विस्तार से व्याख्या कीजिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

8

बेसिक शिक्षण विधि और भाषा शिक्षण
(Basic Teaching Method and Language Teaching)

आजादी से पूर्व अंग्रेज़ी शिक्षा का माध्यम था जिससे भारत के कुछ ही बच्चे शिक्षा ग्रहण कर पाते थे। गाँधी जी को यह बात उचित नहीं लगी अतः गांधी जी के नेतृत्व में वर्धा में एक शिक्षा सम्मेलन किया गया जिसमें सात प्रान्तों के शिक्षा मन्त्रियों और कुछ शिक्षा विशेषज्ञों एवं विचारकों को बुलाया गया। इन सब ने मिलकर देश से दरिद्रता, निरक्षरता, परतन्त्रता को दूर करने के लिए एक शिक्षा योजना बनाई जो आगे चलकर बुनियादी शिक्षा के नाम से प्रसिद्ध हुई।

बुनियादी शिक्षा (Basic education) में मातृभाषा के महत्त्व को समझा गया। सभी विषयों की शिक्षा हस्तकला, सामाजिक कार्य एवं प्राकृतिक वातावरण के द्वारा इस विधि में दी जाती है। बच्चों को पढ़ना और लिखना सिखाने के लिए प्रयोग में लिये जाने वाले हस्त–कौशल सम्बन्धी उपकरणों पर उनका नाम लिख दिया जाता है इस प्रकार बच्चों के शब्द ज्ञान का विकास होता है। विश्लेषण विधि द्वारा बच्चों को शब्दों से अक्षरों का ज्ञान कराया जाता है। धीरे-धीरे बच्चे वाक्य पढ़ने और लिखने के योग्य हो जाते हैं। यह विधि व्यावहारिक एवं मनोवैज्ञानिक है परन्तु इस विधि द्वारा पढ़ना अथवा लिखना सिखाने में बहुत अधिक समय लगता है। इस विधि में भाषा की पाठ्य पुस्तकों की शिक्षा भी हस्तकौशल के द्वारा ही दी जाती है। उदाहरण के लिए–यदि बच्चों ने 'कताई' हस्तकौशल को चुना है तो बच्चों को कपास के बारे में, खेत की मिट्टी के बारे में लेख पढ़ा सकते हैं, कपास, कपड़े एवं खेत से सम्बन्धित कोई कविता पढ़ा सकते हैं। कुछ लिखित कार्य भी करवाये जा सकते हैं। जैसे–कपास मंगाने अथवा कता हुआ सूत भेजने के लिए व्यक्तियों से पत्त व्यवहार करना, कपास की खेती करने वाले किसानों पर निबन्ध लिखना आदि। कपास से सम्बन्धी कोई गीत लयपूर्वक गाना भाषा शिक्षण में सहायक होता है। कविता एवं गीतों के द्वारा बालकों में सौन्दर्यानुभूति जागृत होती है एवं कल्पना शक्ति का विकास होता है।

इस विधि में भाषा सिखाने के लिए सामाजिक पर्यावरण को महत्त्व दिया जाता है। सामाजिक पर्यावरण में त्योहारों एवं उत्सवों का मनाना, सफाई करना, रोगियों की सेवा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करना तथा गाँव में सुधार के कार्य करना आदि आते हैं। दशहरे, दिवाली के त्योहार मनाने के साथ राम के जीवन से परिचित कराया जा सकता है। राम के जीवन पर भाषण, कविता पाठ आदि करवाया जा सकता है। दशहरे, दिवाली पर निबन्ध लिखवाया जा सकता है। अध्यापक अनेक प्रकार के भाषा कार्य करा सकता है। गांवों की सफाई, रोगों की रोकथाम आदि विषयों पर परिचर्चा करवा सकता है।

प्राथमिक वातावरण के द्वारा भी भाषा शिक्षण किया जा सकता है। प्राकृतिक दृश्यों एवं वस्तुओं पर निबन्ध लिखवाया जा सकता है। प्राकृतिक दृश्यों पर कविता पढ़ाई जा सकती है। प्रकृति से मनुष्य का गहरा सम्बन्ध होता है। प्राकृतिक वातावरण से व्यक्ति को बहुत ज्ञान प्राप्त होता है।

बुनियादी शिक्षण प्रणाली लाभकारी अवश्य है पर व्यावहारिक रूप से इसका प्रयोग कम ही किया जाता है। इस प्रणाली में यदि कुछ परिवर्तन किया जाए तो यह सफल हो सकती है।

अभ्यास के प्रश्न

1. बेसिक प्रणाली और प्रोजेकट प्रणाली में क्या अन्तर है ? बेसिक प्रणाली किन सिद्धान्तों पर आधारित है ?
2. बेसिक प्रणाली से भाषा शिक्षण किस प्रकार से सम्भव है ? इस प्रणाली के गुण दोषों पर प्रकाश डालिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

9

समवाय विधि और भाषा शिक्षण
(Correlation Method and Language Teaching

गेस्टॉल्ट मनोवैज्ञानिकों ने प्रत्यक्षीकरण के दो नियम बताए हैं–

एक हम किसी वस्तु को पूर्ण रूप में देखते हैं दूसरा हम किसी वस्तु को किसी दू वस्तु के आधार पर ग्रहण करते हैं इससे यह पता चलता है कि ज्ञान एक पूर्ण इकाई है इसलिए अध्यापक को अलग–अलग विषयों को अलग–अलग न पढ़ाकर विभिन्न वि को सम्बन्धित करके पढ़ाना चाहिए। शिक्षण प्रक्रिया में इस प्रकार पढ़ाने की विधि समवाय, या सह–सम्बन्ध कहा जाता है।

I. लम्बीय सह–सम्बन्ध (Vertical Correlation)— पाठ्यक्रम में किसी एक वि विषय को पढ़ाते समय अध्यापक उस विषय के एक अंग का सम्बन्ध उसी विषय विभिन्न अंगों से जोड़ता है और उसका विकास एक साथ करता है तो उसे लम्बीय स सम्बन्ध कहते हैं। जैसे यदि अध्यापक भाषा का शिक्षण करते समय गद्य पाठ पढ़ाते मुहावरे, पर्यायवाची शब्द, रचना, व्याकरण के अन्य नियमों का ज्ञान भी देता है तो वह पाठ एवं व्याकरण के नियमों का विकास एक साथ करता है। इसे लम्बीय सह–सम्ब कहते हैं।

II. क्षितिज सह–सम्बन्ध (Horizontal Correlation)— जब किसी विषय पढ़ाते समय अध्यापक उस विषय का सम्बन्ध अन्य विषयों से जोड़ता है और उ विकास एक साथ करता है तो यह क्षितिज सह–सम्बन्ध कहलाता है। जैसे–भाषा शिक्ष राणा प्रताप का जीवन पढ़ाते समय अध्यापक राणा प्रताप से सम्बन्धित ऐतिहासिक घट का वर्णन (इतिहास) से ; राणा प्रताप की कर्म भूमि हल्दी घाटी की भौगोलिक स्थिति जलवायु (भूगोल) से जोड़ कर पढ़ाता है तथा भाषा के साथ–साथ इतिहास भूगोल का ज्ञान देता है तो इसे क्षितिज सह–सम्बन्ध कहा जाता है।

एक विषय के कई अंगों में भी समवाय किया जा सकता है और एक विषय का विषय के साथ या अनेक विषयों का आपस में सह–सम्बन्ध किया जा सकता है। परन्तु

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यह समवाय किसी विशेष स्तर के लिए निश्चित पाठ्यचर्या के समस्त विषयों एवं क्रियाओं के बीच एक साथ स्थापित किया जाता है तो यह सह-सम्बन्ध की अन्तिम सीमा होती है और इसे एकीकरण कहते हैं। इस प्रकार शिक्षण करने की विधि को एकीकरण विधि कहते हैं।

पाठ्यचर्या के किसी विषय या क्रिया को मुख्य केन्द्र मानकर समवाय किया जाता है या पाठ्यचर्या के समस्त विषयों या क्रियाओं ज्ञान तथा प्रशिक्षण किसी विषय, क्रिया अथवा व्यापार के इर्द-गिर्द विकसित किया जाता है तो उसे केन्द्रीयकरण (Concentration) कहते हैं। उदाहरण के लिए-

यदि साहित्य को केन्द्रीय विषय मानकर पाठ्यचर्या के अन्य विषयों-इतिहास, भूगोल, कला, संगीत आदि को साहित्य से सम्बन्धित करके विकसित किया जाए तो इसे केन्द्रीयकरण कहेंगे। इस प्रकार शिक्षण करने की विधि को केन्द्रीयकरण विधि कहते हैं।

एकीकरण और केन्द्रीयकरण सह-सम्बन्ध के ही प्रकार हैं परन्तु उनकी भिन्नता के कारण उन्हें अलग-अलग नाम दिया गया है। परन्तु यदि इन्हें लोग समवाय या सह-सम्बन्ध के नाम से पुकारते हैं तो यह भी गलत नहीं है।

समवाय विधि और भाषा शिक्षण
(Correlation Method and Language Teaching)

समवाय विधि के तीन रूप-सह-सम्बन्ध, एकीकरण और केन्द्रीयकरण हैं जिनका ऊपर वर्णन किया गया है। सह-सम्बन्ध और एकीकरण विधियों में केवल सीमा का अन्तर है। अब यहां भाषा के विभिन्न अंगों में सह-सम्बन्ध का वर्णन किया जा रहा है-

भाषा के विभिन्न अंगों में सह-सम्बन्ध

भाषा के दो रूप होते हैं-मौखिक एवं लिखित। बच्चों को मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान किये जाते हैं। गद्य, पद्य और साहित्य की अनेक विधाओं का शिक्षण किया जाता है। भाषा के व्याकरण के नियमों का ज्ञान देते हैं। परन्तु सह-सम्बन्ध विधि के द्वारा एक साथ ही इन सब बातों का सम्बन्ध करके पढ़ाया जाता है जैसे गद्य या पद्य पढ़ाते हुए ही व्याकरण के नियमों का ज्ञान देना, उन्हें मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति के अवसर देना। गद्य पढ़ाते समय पाठ को पढ़वाना, मौखिक चर्चा करना, कुछ लिखित कार्य करना आदि। इस प्रकार भाषा के एक अंग की शिक्षा देते समय उसके विविध अंगों का ज्ञान दें।

भाषा शिक्षण की चर्चित सभी विधियां बहुत लाभदायक हैं। यह बात सही है कि व्यय आदि सभी बातों को ध्यान में रखते हुए लगभग सभी विधियां सभी प्रकार से खरी नहीं उतरती। फिर भी भाषा की शिक्षा ऐसी शिक्षा है जो चलते फिरते, उठते-बैठते, परस्पर वार्तालाप करते हुए, आदि सभी हालात में बहुत सफलता से दी जा सकती है। सभी विधियों में थोड़े बहुत अन्तर के साथ मुख्य रूप से निम्न तीन बातों पर ध्यान दिया जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

I. बालक की स्वतन्त्रता (Freedom of the child)

II. बालक की रुचि (Interest of the child)

III. क्रियाशीलता (Workability)

छोटे बालकों को बोलने की यदि पूर्ण स्वतन्त्रता दी जाती है तो वह अवश्य ही कु न कुछ बोलेंगे। उनके बोलने में जो त्रुटियां होती हैं, उनमें सुधार करके सफल अभिव्य की शिक्षा दी जा सकती है। यदि बालकों को उनकी रुचि के अनुसार पढ़ने की स्वतन्त्र मिलती है तो वे उस सामग्री को अर्थ सहित समझने लगते हैं। इससे उनमें सृजनात्म शक्ति का विकास होता है। इस प्रकार शिक्षक अपनी सूझ-बूझ एवं कुशलता से इन विधि द्वारा भाषा का सफल शिक्षण कर सकता है। शिक्षक बालकों की रुचियों को ध्यान में रख हुए भाषा का शिक्षण करता है तो वह अवश्य ही शिक्षा में सफल होता है। एक कहावत कि आप घोड़े को पानी के पास लेजा सकते हो लेकिन पानी पीने के लिये विवश नहीं सकते जब तक कि घोड़े की पानी पीने में रुचि न हो। इस लिये बालकों को भी आप क भी बात सीखने के लिये विवश नहीं कर सकते जब तक कि उनकी सीखने की रुचि न हो इस लिये बालकों की रुचि को ध्यन में रखकर ही भाषा शिक्षण-पद्धति को अपना चाहिये। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि चर्चित विधियों का शिक्षक अनुकरण करते हु भाषा का शिक्षण करे। शिक्षक को तो समय और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उचित हो वही करना चाहिये। प्रत्येक शिक्षक को इस बात का विशेष रूप से ध्यान रख चाहिये कि शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक की अपेक्षा बालक अधिक सक्रिय रहे।

अभ्यास के प्रश्न

1. समवाय से आप क्या समझते हैं ? हिन्दी भाषा का समवाय अन्य भाषाओं किस प्रकार किया जा सकता है ?
2. समवाय विधि के माध्यम से हिन्दी गद्य के शिक्षण के साथ-साथ इस भाषा व्याकरण का शिक्षण किस प्रकार किया जा सकता है?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

10

हिन्दी शिक्षण के गुण
(Qualities of Hindi Teacher)

शिक्षक ही विद्यालय तथा शिक्षा पद्धति की वास्तविक गत्यात्मक शक्ति है । यह सत्य कि विद्यालय भवन, पाठ्यक्रम, पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएं, निर्देशन कार्यक्रम, पाठ्य-स्तकें आदि सभी वस्तुएँ शैक्षिक कार्यक्रम में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं पर जब तक नमें अच्छे शिक्षकों द्वारा जीवन शक्ति प्रदान नहीं की जायेगी, तब तक वे निरर्थक रहेंगी । क्षक ही वह शक्ति है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से आने वाली सन्ततियों पर अपना भाव डालती है । शिक्षक ही राष्ट्रीय एवं भौगोलिक सीमाओं को लांघकर विश्व व्यवस्था था मानव जाति को उन्नति के पथ पर अग्रसर करता है । अतः यह कहा जा सकता है कि नव समाज एवं देश की उन्नति उत्तम शिक्षकों पर ही निर्भर है । इस कथन की पुष्टि म्नलिखित उदाहरणों से होती है :-

हुमायूं कबीर का कथन है- "वे (शिक्षक) राष्ट्र के भाग्य निर्णायक हैं । यह कथन यक्ष रूप से सत्य प्रतीत होता है परन्तु अब इस बात पर अधिक बल देने की आवश्यकता कि शिक्षक ही शिक्षा के पुनर्निमाण की महत्त्वपूर्ण कुन्जी है । वह शिक्षा वर्ग की योग्यता है जो कि निर्णायक है ।"

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अपने प्रतिवेदन में लिखा है- "अपेक्षित शिक्षा के र्निमाण में सबसे महत्त्वपूर्ण तत्व शिक्षक, उसके व्यक्तिगत गुण, उसकी शैक्षणिक यताएं, उसका व्यावसायिक प्रशिक्षण और उसकी स्थिति जो वह विद्यालय तथा समाज जीवन पर उसका प्रभाव निःसन्देह रूप से उन शिक्षकों पर निर्भर है जो कि उस द्यालय में कार्य कर रहे हैं ।"

हुमायूं कबीर का मत है कि "शिक्षा पद्धति की कुशलता शिक्षकों की योग्यता पर र्भर है । अच्छे शिक्षकों के अभाव में सर्वोत्तम शिक्षा पद्धति का भी असफल होना वश्यम्भावी है । अच्छे शिक्षकों द्वारा शिक्षा पद्धति के दोषों को भी अधिकांशत दूर किया सकता है ।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस प्रकार शिक्षा का महत्त्व समाज तथा शिक्षा पद्धति दोनों में ही स्पष्ट है। शिक्षक न भावी नागरिकों का निर्माण करता है जिनके ऊपर राष्ट्र के उत्थान एवं पतन है ।

शिक्षक को मनुष्यों का निर्माता, राष्ट्र निर्माता, शिक्षा पद्धति की आधारशिला, को गति प्रदान करने वाला सब कुछ माना गया है । साधारणत: ऐसे शिक्षक में बाल समझने की शक्ति, उनके साथ उचित रुप से कार्य करने की क्षमता, शिक्षण योग्यत करने की इच्छा शक्ति और सहकारिता आदि गुणों की आशा की जाती है । ऐ सामान्यत: न तो प्रत्येक शिक्षक में मिलते हैं और न शिक्षण प्रत्येक व्यक्ति का है । वस्तुत: यह कार्य वही व्यक्ति कर सकता है जिसमें कुछ विशिष्ट शारीरिक, सामाजिक, नैतिक एवं संवेगात्मक गुण हों । शिक्षण एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है मस्तिष्क का मस्तिष्क से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है । इस सम्बन्ध की उपयुक्त अनुपयुक्तता बहुत कुछ शिक्षक के व्यक्तित्व पर निर्भर होती है । इस सम्बन्ध में समय पर अध्ययन किये गये हैं । संयुक्त राष्ट्र अमरीका में डा. एफ. एल. क्लैप ने में एक अध्ययन किया जिसके आधार पर उन्होंने अच्छे शिक्षक के व्यक्तित्व के निर्मा दस गुणों का उल्लेख किया है :

(1) सम्बोधन (2) वैयक्तिक आकृति (3) आशावादिता (4) संयम (5) (6) मानसिक निष्पक्षता (7) शुभ चिन्तन (8) सहानुभूति (9) जीवन शक्ति विद्वता ।

रेमाण्ट (Raymount) का मत है कि शिक्षक को उन सभी बातों का त्याग चाहिये जो तुच्छ एवं हीन हों क्योंकि उसी पर समस्त छात्रों की दृष्टि लगी रह शिक्षक स्वयं को अपने छात्रों पर अपना प्रभाव डालने से नहीं बचा सकता है । इसलि आवश्यक है कि वह सदैव उच्च आदर्शों एवं विचारों की मन, वचन तथा कर्म से में लाये जिनका बालकों पर सर्वोत्तम प्रभाव पड़े । राष्ट्र पिता गांधी जी ने खेद के सा था कि शिक्षकों के आदर्श एवं व्यवहार में प्राय: सामंजस्य नहीं हो पाता: वे कहते और करते कुछ और हैं ।

ऊपरलिखित विवेचन से पता चलता है कि किसी भी योग्य शिक्षक के लिये योग्यता के अतिरिक्त कुछ अन्य गुणों की आवश्यकता होती है । ठीक इसी प्रकार शिक्षक में भी वांछित गुणों का होना आवश्यक है । उदाहरण के लिये, यदि शि व्यवहार अपने छात्रों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण नहीं है तो वह छात्रों का विश्वास, उनकी प्रति श्रद्धा प्राप्त नहीं कर सकता । यह एक ऐसा गुण है जो सभी शिक्षकों में होना, चाहे वह इतिहास, भूगोल पढ़ाता हो, या कोई भाषा । इस प्रकार के गुणों के अतिरि ऐसे भी गुण होते हैं जो अन्य शिक्षकों की अपेक्षा भाषा शिक्षक में विशेष रूप

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हियें। उच्चारण की शुद्धता एक ऐसा ही गुण है । वे गुण जो सभी शिक्षकों में समान रुप होने चाहियें, शिक्षक के सामान्य गुण हैं और जो गुण अन्य विषयों के शिक्षकों में हों न्तु भाषा शिक्षक में अवश्य ही हों । ऐसे गुणों को भाषा शिक्षक के विशेष गुण मानने हियें । ऊपर दिये गये उदाहरणों में सद्व्यवहार भाषा शिक्षक का सामान्य गुण है जबकि चारण की शुद्धता उसका विशेष गुण हैं ।

हम भाषा शिक्षक के जिन गुणों का उल्लेख करने जा रहे हैं उनमें कुशल अभिव्यक्ति षा शिक्षक का विशेष गुण है, अन्य सभी सामान्य । किन्तु इसका अर्थ यह नहीं लेना हिए कि भाषा शिक्षक को छोड़कर अन्य शिक्षकों में अभिव्यक्ति की कुशलता है ही ं । अन्य शिक्षकों में यह कम या अधिक हो सकती है । किन्तु भाषा शिक्षक में तो होनी चाहिये । मातृभाषा हिन्दी शिक्षक में सामान्य या विशेष रूप से निम्नलिखित गुणों का ा आवश्यक है -

1. **विस्तृत ज्ञान-** विस्तृत ज्ञान से यहां यह नहीं समझना चाहिये कि प्रत्येक भाषा क्षक के पास हिन्दी भाषा की स्नातकोत्तर उपाधि हो । यह न तो सम्भव है और न ही योचित ही । शिक्षक के विस्तृत ज्ञान से यह तात्पर्य है कि शिक्षक को जिस कक्षा को ना है, उसे पढ़ाने के लिये यथा सम्भव योग्यता होनी चाहिये । विस्तृत ज्ञान के लिये भाषा के अध्ययन एवं अध्यापन में शिक्षक की विशेष रुचि और लगन होनी चाहिये और भाषा के तत्त्वों का ज्ञान हो ।

(I) मातृभाषा के प्रति रुचि- मनोवैज्ञानिक तथ्य यह है कि छात्र या व्यक्ति की जिस ु या बात में विशेष रुचि होती है, उसे वह पूर्ण रूप से जानने का प्रयत्न करता है । भाषा विस्तृत ज्ञान के लिये भी यह नियम समान रुप से लागू होता है । मातृभाषा शिक्षक में भाषा के प्रति रुचि होनी चाहिये ।

(II) लगन - किसी व्यक्ति या किसी बालक में कार्य के प्रति रुचि तो हो लेकिन कार्य ी की पूरी तरह से लगन न हो तो वो कार्य सम्पन्न नहीं होता । इसलिये भाषा के विस्तृत के लिये भी रुचि और लगन दोनों का होना आवश्यक है । कुछ नया पढ़ने, लिखने सृजन करने के लिये लगन का होना आवश्यक है ।

(III) भाषा के तत्वों का ज्ञान- भाषा के विस्तृत ज्ञान के लिये यह भी आवश्यक है शिक्षक को भाषा सम्बन्धी सभी तत्वों का पूर्ण ज्ञान हो । उदाहरण के लिये, व्याकरण नियमों को जाने बिना भाषा की शुद्धता सम्भव नहीं । इसलिये भाषा विज्ञान की जानकारी श्यक है ।

2. **कुशल अभिव्यक्ति-** छात्र-छात्राओं में अर्थ-ग्रहण की क्षमता का विकास करना कुछ अंशों में शिक्षक की कुशल अभिव्यक्ति पर आधारित है । मौखिक अभिव्यक्ति लिये शब्द-ज्ञान, सरल और सुस्पष्ट भाषा एवं शुद्ध उच्चारण आवश्यक है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(I) शब्द-ज्ञान- बिना शब्द-ज्ञान के यह सम्भव नहीं कि सभी शब्दों का स प्रयोग किया जा सके । हिन्दी में तीन प्रकार के शब्द छात्र-छात्राओं को भ्रम में डाल दे

प्रथम तो वे शब्द जिन शब्दों में समानता होती है लेकिन अर्थ भिन्न जैसे

सकल = समस्त, सारे । हँस = हँसना

शक्ल = सूरत हंस = एक पक्षी

दूसरी प्रकार के वे शब्द जिनमें केवल मात्रा परिवर्तन से अर्थ में बड़ा अन्तर पड़ है ।

जैसे- अलि = भौंरा अली = सखी

अनल = आग अनिल = हवा

तीसरे प्रकार के वे शब्द जिनका शाब्दिक अर्थ तो समान सा प्रतीत होता है तं उनका प्रयोग भिन्न परिस्थितियों में किया जाता है ।

जैसे - पवन = हवा

समीर = समुद्र के किनारे चलने वाली हवा

अमूल्य = जिसका मूल्य आंका न जा सके

बहुमूल्य = बहुत कीमती

छात्र-छात्राओं पर शिक्षक की बात का अमिट प्रभाव पड़ता है, इसलिये यदि शि को यह अन्तर स्पष्ट नहीं होगा तो वह छात्र-छात्राओं को कैसे समझा सकेगा । यह विचारणीय है । अतः शिक्षक को शब्दों में परस्पर जो भेद हैं उनका ज्ञान पूर्ण रुप से चाहिये ।

(II) सरल और सुस्पष्ट भाषा- अगर शिक्षक की भाषा सरल और सुस्पष्ट हो छात्र सुनने मात्र से अर्थ ग्रहण कर लेंगे ।

(III) उच्चारण की शुद्धता- मौखिक अभिव्यक्ति के लिये उच्चारण की शुद्ध होना बहुत अनिवार्य है । मौखिक अभिव्यक्ति का प्रमुख गुण उच्चारण ही है । शि शब्दों का जैसा उच्चारण करेगा, छात्र भी वैसा उच्चारण करेंगे । यदि शिक्षक का उच्च ही अशुद्ध होगा तो छात्र कभी भी शुद्ध उच्चारण नहीं कर सकेंगे । उच्चारण की शु शुद्ध लेखन का आवश्यक अंग है । प्रायः ऐसा देखने में आया है कि जो लोग अ उच्चारण करते हैं, वे अशुद्ध लिखते भी हैं । इसीलिये अहिन्दी भाषा-भाषी प्रान्तों के लिपि से सम्बन्धित अनेक भूलें करते हैं । इसलिये भाषा के शिक्षक को शुद्ध उच्चारण विशेष रूप से बल देना चाहिये ।

वैसे भी साहित्य सृजन के लिये भाषा का शुद्ध होना अत्यन्त अनिवार्य है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3. सद्व्यवहार- भाषा शिक्षक में अन्य शिक्षकों की अपेक्षा अधिक व्यवहार कुशलता का होना आवश्यक है । इसके निम्न कारण हैं-

(I) छात्र-छात्राओं को चरित्र-निर्माण की शिक्षा भाषा के द्वारा ही दी जाती है । नैतिकता से सम्बन्धित व्यावहारिक बातों का ज्ञान भी भाषा के माध्यम से ही दिया जाता है।

(II) छात्र-छात्राएं बहुत सी बातें जीवन में अनुकरण से ही सीखते हैं । दूसरों के साथ दैनिक जीवन में कैसा व्यवहार किया जाये इसकी शिक्षा छात्र-छात्राओं को अप्रत्यक्ष रुप से अपने शिक्षक से ही मिलती है ।

(III) शिक्षक का सद्व्यवहार छात्र-छात्राओं में नैतिक गुणों का विकास करता है जो उनके चरित्र निर्माण में सहायक सिद्ध होते हैं ।

छात्र-छात्राओं के प्रति शिक्षक के सद्व्यवहार में कम से कम निम्न दो गुणों का होना अत्यन्त आवश्यक है-

(क) सहानुभूति- शिक्षक अपने इस गुण के कारण छात्र-छात्राओं में अपने प्रति श्रद्धा के भाव जागृत कर सकता है । यदि शिक्षक का व्यवहार विद्यार्थियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण नहीं है तो उनमें कुछ ऐसे भाव जागृत हो जाते, जो उनकी अवनति में सहायक होते हैं । शिक्षक का रुखा या निर्दयतापूर्ण व्यवहार उसके प्रति विद्यार्थियों में घृणा उत्पन्न करता है और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, श्रद्धा । श्रद्धा सीखने में सहायक होती है और घृणा बाधक । अत: शिक्षक का सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार विद्यार्थियों को प्रगति के रास्ते पर अग्रसर करता है । जेम्स एस. रास ने कहा है- "एक व्यक्ति जिसे सहानुभूति का उपहार नहीं मिला है- उसे शिक्षक नहीं बनना चाहिये ।" "According to James S. Ross "A person from whom the gift of sympathy is with held, should not become a teacher."

(ख) सहयोग- जीवन में कोई भी कार्य जब आपसी सहयोग से होता है तो वो कार्य अधिक सुव्यवस्थित ढंग से और कम समय में सम्पन्न हो जाता है । शिक्षण कार्य विद्यार्थियों के सहयोग से सफल एवं सुचारु रुप से हो जाता है । शिक्षण क्षेत्र में सहयोग से अभिप्राय है कि छात्र-छात्राओं की व्यक्तिगत कठिनाइयों को ध्यान में रखकर शिक्षण अध्यापन कार्य करे । छात्र-छात्राओं की कठिनाइयों को ध्यान से सुनें और उन्हें दूर करने के लिये यथा सम्भव प्रयास करें ।

4. अन्य विषयों की जानकारी- हिन्दी शिक्षक अन्य विषयों की पूर्ण रूप से जानकारी प्राप्त नहीं कर सकता और न ही उससे ऐसी अपेक्षा रखनी चाहिये । हां अन्य विषयों के बारे में प्रारम्भिक जानकारी अवश्य होनी चाहिये, क्योंकि भाषा का शिक्षण करते समय कुछ ऐसे प्रसंग आ जाते हैं जिनका सम्बन्ध अन्य विषयों के साथ होता है। इसलिये हिन्दी शिक्षक को अन्य विषयों के ज्ञान से अनभिज्ञ नहीं होना चाहिये बल्कि उन विषयों का थोड़ा बहुत ज्ञान अवश्य होना चाहिये ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(I) मनोविज्ञान का ज्ञान- शिक्षक को मनोविज्ञान का ज्ञान अवश्य होना चाहिये अगर उसे मनोविज्ञान का ज्ञान नहीं होगा तो वह छात्र-छात्राओं के साथ कहां, कब, कि प्रकार का व्यवहार आवश्यक है, कब पढ़ना और पढ़ाना अधिक सार्थक होगा, कब नं और पढ़ाने में कौन से बाधक और सहायक तत्व हैं, इन सब बातों के बारे में नहीं ज सकेगा । यह सब जानकारी शिक्षक को मनोविज्ञान के अध्ययन से प्राप्त होती है । शिक्ष को यह जानकारी अध्यापक प्रशिक्षण कोर्स में दी जाती है ।

(II) दर्शन-शास्त्र का ज्ञान : किसी भी भाषा के साहित्य का दर्शन शास्त्र से पर्या रुप से सम्बन्ध होता है । इसलिये शिक्षक को मनोविज्ञान के ज्ञान के साथ-साथ दर्शन शा का भी ज्ञान होना चाहिये । शिक्षक को परिस्थितियों के अनुकूल कभी आदर्शवादी बन पड़ता है तो कभी यथार्थवादी । कभी वह काव्य में डूबकर प्रकृति की गोद में शरण लेता तो कभी वेदान्त का सहारा लेता है । कहने का अभिप्राय यह है कि शिक्षक को भिन्न-भि दार्शनिक पृष्ठभूमि में अपना शिक्षण कार्य निपुणता से करना होता है ।

इस प्रकार अन्य विषयों का भी साहित्य से थोड़ा बहुत सम्बन्ध अवश्य ही होता है भाषा के अध्ययन के बिना दूसरे विषयों का अध्ययन तो सम्भव ही नहीं लेकिन अ विषयों की जानकारी के बिना भी भाषा और साहित्य का ज्ञान भी कुछ अधूरा सा दिख देता है । इसलिये भाषा के शिक्षक को विभिन्न विषयों का मिश्रण कहा जाता है ।

किसी भाषा शास्त्री ने उचित ही कहा है-

"एक शिक्षक- कुछ समाजवादी, कुछ मनोवैज्ञानिक, कुछ प्रकृतिवादी, कुछ दार्शनि और न जाने कितने तत्वों का मिश्रण है ।" ("A teacher is a mixture of something socialogist, something of idealist, something of naturalist, something of philosoph and what not.")

ऊपरलिखित गुणों के अतिरिक्त शिक्षक में कलात्मकता, सृजन आदि अन्य गुणों भी होना जरूरी है।

वर्तमान में हिन्दी शिक्षक की दशा

आज हिन्दी शिक्षकों की दशा बहुत शोचनीय है । जहां समूचे देश का नैतिक प हुआ है वहां शिक्षकों का भी नैतिक पतन हुआ है । उनकी आर्थिक और सामाजि चिन्ताओं ने उनकी प्रसन्नता छीन ली है । ऐसा लगता है कि जैसे वे हंसना भूल गये अर्थात् उनमें जीवन का अभाव दिखाई देता है । इसलिये इन निराश शिक्षकों से सफ शिक्षण की आशा रखना व्यर्थ है । शिक्षण प्रक्रिया में जितना हिन्दी शिक्षकों का महत्व और योगदान है उतनी ही उनकी दशा दयनीय और शोचनीय है । वर्तमान स्थिति से यह स्प पता चलता है कि जो हिन्दी भाषा के शिक्षक हैं वे स्वयं हिन्दी के ज्ञान से वंचित हैं अ अध्ययन करने की प्रवृत्ति तो उनमें है ही नहीं । इस सब बातों के लिये केवल शिक्षा जिम्मेवार नहीं है बल्कि कुछ सीमा तक सामाजिक व्यवस्था भी इसके लिए जिम्मेव

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है । शिक्षकों को अध्ययन के लिये न तो समय मिलता है और न ही अवकाश । उदरपूर्ति के लिये उन्हें विद्यालयों में अतिरिक्त कार्य भी करने पड़ते हैं उनकी अनेक व्यक्तिगत और सामाजिक समस्यायें भी हैं ।

हिन्दी शिक्षकों के लिये सुचारू एवं व्यवस्थित ढंग से प्रशिक्षण देने के प्रबन्ध का भी अभाव है । लेकिन जो शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त कर लेते हैं वे भी आगे चलकर नवीन शिक्षण विधियों का प्रयोग न करके घिसी पिटी परम्परागत विधियों से ही जुड़े रहते हैं । आज भी हिन्दी शिक्षक कुर्सी पर बैठकर अर्थ कथन करने में ही विश्वास करते हैं । ऐसा करने से जो शिक्षक थोड़ा बहुत जानते भी हैं, वो छात्र-छात्राओं को दे नहीं पाते । इन सभी कारणों से ही हिन्दी का स्तर दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा है । फिर भी हमें निराश नहीं होना चाहिये क्योंकि अब भारत सरकार और बहुत से हिन्दी-प्रेमी इसकी दशा और दिशा को सुधारने के लिये सकारात्मक रुप से प्रयत्नशील हैं । यहां पर यह बात विशेष रुप से उल्लेखनीय और सकारात्मक है कि यदि हिन्दी के शिक्षक सच्चे देश भक्त हो जायें तो हिन्दी ही क्या हमारी समूची शिक्षा व्यवस्था सुदृढ़ हो जाये ।

हिन्दी शिक्षक की दशा और दिशा में सुधार हेतु उपाय

हिन्दी शिक्षकों की दशा और दिशा में सुधार लाने हेतु निम्न उपायों को अपनाना श्रेयस्कर रहेगा -

1. **हिन्दी शिक्षक का चयन-** हिन्दी शिक्षक का चयन करते समय यह देखना आवश्यक है कि उसमें वे सभी गुण हों जिनकी चर्चा हम कर चुके हैं । इस पवित्र व्यवसाय के लिये चरित्रवान पुरुषों का ही चयन किया जाना चाहिये । चरित्रवान पुरुष ही इस व्यवसाय के लिये उचित हो सकते हैं ।

2. **हिन्दी की योग्यता-** इसके लिये पहली बात तो यह आवश्यक है कि हिन्दी शिक्षण का कार्य उन्हीं शिक्षकों को दिया जाये जो हिन्दी भाषा पर मौखिक और लिखित रुप में अधिकार रखते हों और अगर ऐसे शिक्षक नहीं मिलते तो जो विकल्प रुप में मिलते हैं तो उन्हें हिन्दी भाषा का अच्छी तरह से प्रशिक्षण देना चाहिये और व्याकरण का स्पष्ट ज्ञान करा देना चाहिये ।

3. **विविध विषयों की योग्यता-** एक सफल शिक्षक के लिये यह आवश्यक है कि वह अपने विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों के प्रारम्भिक ज्ञान से भी परिचित हो । इसके लिये हिन्दी शिक्षकों को अध्ययन के लिये अवसर और वे सभी सुविधाएं प्रदान करनी चाहियें ताकि वे विभिन्न विषयों के बारे में आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकें ।

4. **प्रशिक्षण सुविधाएं-** सेवारत हिन्दी शिक्षकों को प्रशिक्षण की सुविधा दी जाये । प्रशिक्षण महाविद्यालयों में हिन्दी शिक्षकों को हिन्दी शिक्षण विधियों के साथ-साथ भाषा की विषय वस्तु का भी पूरा-पूरा ज्ञान देना चाहिये ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

5. परिचर्चाओं का आयोजन- हिन्दी शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के पश्चात् उनको समय-समय पर परिचर्चाओं में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये ताकि वे अपनी समस्याएं सामने रखकर उनका समाधान ढूंढ सकें । इसलिये उनके लिये परिचर्चाओं के आयोजन की व्यवस्था करनी चाहिये ।

6. सामाजिक मानमर्यादा- हिन्दी शिक्षकों को समाज में उचित मान सम्मान दिया जाना चाहिये । आज जो स्थिति है उसको देखते हुए शिक्षक प्रगति नहीं कर सकता क्योंकि विद्यालयों में हिन्दी शिक्षक को सबसे कम महत्त्व दिया जाता है । अन्य विषयों के शिक्षकों की यह धारणा होती है कि हिन्दी तो कोई भी पढ़ा सकता है अगर उनको इसी प्रकार हीन दृष्टि से देखा जाता रहा तो हिन्दी शिक्षकों में आत्मविश्वास एवं आत्म सम्मान का भाव नहीं आयेगा और हम ऐसे हालात में उनसे सफल शिक्षण की आशा नहीं कर सकते ।

7. आर्थिक स्थिति में सुधार- हिन्दी शिक्षकों की आर्थिक स्थिति में सुधार का होना अत्यन्त आवश्यक है । बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के बिना शिक्षक आत्म विश्वास और आत्म सम्मान के साथ शिक्षण कार्य नहीं कर सकता । भूखे पेट तो भगवान का नाम भी नहीं लिया जा सकता । उसकी आर्थिक समस्याओं को दूर करके आर्थिक स्थिति को बेहतर बना दिया जाता है तो उसका समाज में भी उचित सम्मान मिलेगा और खुशी-खुशी सफल शिक्षण कर सकेगा ।

अभ्यास के प्रश्न

1. हिन्दी के शिक्षक में कौन-कौन सी विशेषतायें होनी चाहियें ? उसकी मुख्य विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए ।
2. हिन्दी शिक्षक की वर्तमान स्थिति के बारे में आपका क्या मत है ? इस स्थिति में सुधार लाने हेतु उपाय सुझाइये ।
3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए ।

   (I) हिन्दी शिक्षक के कोई पांच गुण बताइये ।

   (II) हिन्दी शिक्षक का नैतिक शिक्षा देने में योगदान ।

   (III) हिन्दी शिक्षक और देश भक्ति ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

11

भाषा-शिक्षण के सिद्धान्त एवं सूत्र
(Principles and Maxims of Language Teaching)

शिक्षण की सफलता केवल शिक्षक की योग्यता पर ही आधारित नहीं होती बल्कि स बात पर भी निर्भर करती है कि छात्र-छात्राएं पढ़ने में रुचि लें और मन लगाकर पढ़ें। सी लिये छात्र-छात्राओं का ध्यान पाठ पर केन्द्रित करने के लिये कुछ आवश्यक बातों को यान में रखना आवश्यक है। उदाहरण के लिये, उस समय पढ़ाना उचित नहीं जिस समय ालक खेलना चाहते हों। उतना पढ़ाया जाये जितना कि बालक सुगमता और सरलता से मझ सकें। इस प्रकार की सभी बातों को शिक्षण सिद्धान्त के अन्तर्गत लिया जाता है और ाक्षक को शिक्षण करते समय शिक्षण सिद्धान्तों का पालन करना चाहिये। बहुत से शिक्षण द्धान्त तो सभी विषयों के पढ़ाने से सम्बन्धित हैं लेकिन कुछ शिक्षण सिद्धान्त भाषा ाक्षण से ही सम्बन्धित हैं।

1. लिपि से पूर्व मौखिक अभ्यास – स्वाभाविक रूप से बालक पहले बोलना ीखता है। प्रारम्भ में उसकी बोलने की भाषा में अस्पष्टता होती है लेकिन अभ्यास से ाषा में स्पष्टता आ जाती है। प्रारम्भ में बालक मम्मा, बाबा और पापा आदि कुछ शब्द ौखिक रूप से ध्वनित करने लगता है और इन शब्दों के पहचानने का प्रयास भी करता है।

इस प्रकार बार-बार एक शब्द की मौखिक अभिव्यक्ति से धीरे-धीरे शब्द समूह का कास होता है। फिर बालक को किसी सरल शब्द को बोलने के लिये कहा जाये तो वह से दुहरा सकता है किन्तु अगर उसी शब्द को लिखने के लिये कहा जाये तो वह लिख हीं सकता क्योंकि उसकी मासपेशियां कमज़ोर होती हैं। फिर यह भी सत्य है कि लिखने लिये जितने अभ्यास की आवश्यकता होती है उतनी बोलने के लिये नहीं होती।

इन सभी बातों का सारांश यह है कि बालकों को पहले बोलने अर्थात् मौखिक कार्य अभ्यास कराया जाये और फिर लिखने का अभ्यास कराया जाये। यह प्रकृति के मानुसार स्वाभाविक अनुसरण और मनोवैज्ञानिक तथ्य भी है। इस प्रकार पढ़ना भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

लिखने से सरल है। भाषा सीखने और सिखाने के क्रम में पहले सुनना, बोलना, पढ़ना और बाद में लिखना होता है।

2. मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति में अनुरुपता –प्राय: यह देखा गया है उच्च स्तर पर छात्र-छात्राएं लिखने में बहुत अशुद्धियां करते हैं। इसका मुख्य कारण है मैखिक और लिखित अभिव्यक्ति में सही अनुपात नहीं होता अर्थात् इन दोनों में अनुरुपता नहीं हो पाती। बोलना सीखने के बाद लिखने की आवश्यकता होती है। इस लिये भाषा शिक्षक को चाहिये कि वह छात्र-छात्राओं के बोलने और लिखने में सही अनुपात रखने के लिये छात्र-छात्राओं में ध्वनि के अनुसार लिखने और लिखे हुए को शुद्ध उच्चारण करने की योग्यता का विकास करे। इसके लगातार अभ्यास करने से अक्षर सम्बन्धी गलतियों एवं भूलों में सुधार हो सकता है। इस लिये प्रारम्भिक कक्षाओं बालकों को बोलकर सुलेख का अभ्यास करवाना चाहिये। इससे लिखने में अशुद्धियां कम होंगी और उनके लेख में सुन्दरता का पुट भी आ जायेगा।

3. रुचि का सिद्धान्त –यह सिद्धान्त मनोवैज्ञानिक तथ्य पर आधारित है। मनोविज्ञान के अनुसार जिस बात में छात्र-छात्राओं की रुचि होती उसको सहज एवं सरलता से जाते हैं और सीखी हुई बात को आसानी से नहीं भूलते। इस लिये शिक्षक का यह होना चाहिये कि वह पाठ्य वस्तु को अधिक से अधिक रुचिकर ढंग से प्रस्तुत करे। प्रश्न उठता है कि वह पाठ्य वस्तु को रुचिकर कैसे बनाये ? किसी भी पाठ को रुचि बनाने के लिये बहुत सी महत्त्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है। इनमें प्रथम यह है कि पढ़ाते समय छात्र-छात्राओं के स्तरानुकूल भाषा का प्रयोग किया जाये। शि का प्रयास यह नहीं होना चाहिये कि वह कितनी सुन्दर और अच्छी भाषा का प्रयोग सकता है अपितु उसका प्रयास यह होना चाहिये कि किसी पाठ को अपनी भाषा के कितने अच्छे ढंग से विषय सामग्री को छात्र-छात्राओं को समझा सकता है।

संक्षेप में पाठ को रुचिकर बनाने के लिये निम्न बातें अत्यन्त आवश्यक हैं-

(I) स्तरानुकूल भाषा और शैली का प्रयोग।

(II) शिक्षण क्रिया कलापों में विविधता और नवीनता।

(III) शिक्षण सार्थक हो अर्थात् सिखाये जाने वाली बातें छात्र-छात्राओं के जीवन सम्बन्धित हों।

शिक्षण क्रिया कलापों की विविधता–पाठ को दो प्रकार से रुचिकर बनाया जा है –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(अ) अस्थाई रूप से—छात्र-छात्राओं का ध्यान किसी बात पर केन्द्रित करने के लिये कुछ बाहरी क्रियाएं पाठ में छात्र-छात्राओं की रुचि तो पैदा करती हैं परन्तु अस्थाई रूप से। उदाहरण के तौर पर छात्र-छात्राओं को कोई हसी वाली बात कहकर बीच-बीच में हँसा देना आदि। लेकिन शिक्षक को यहां पर यह ध्यान रखना चाहिये कि हँसी वाली बात में किसी भी प्रकार का अश्लीलता का पुट नहीं होना चाहिये। बीच-बीच में हँसी वाली बात कर देने से छात्र-छात्राओं का ध्यान बाहरी बातों से हटकर पाठ पर केन्द्रित हो जाता है।

(ब) स्थाई रूप—शिक्षक अगर पाठ को स्थायी रूप से रुचिकर बनाना चाहता है तो पाठ में नवीनता और विविधता लाने का प्रयास करे क्यों कि नवीनता और विविधता का सम्बन्ध छात्र-छात्राओं की भावनाओं और उनकी मूल प्रवृत्तियों से होता है। बालक हर नई बात को पसन्द करते हैं। विविधता नवीनता को जन्म देती है और नवीनता रोचकता को जन्म देती है। इस लिये किसी भी पाठ को रोचक बनाने के लिये उसमें क्रियाओं की विविधता होनी चाहिये। जो बात छात्र-छात्राओं को किसी एक ढंग से समझ में न आये तो से दूसरे व तीसरे ढंग से उस समय तक बताता रहे जब तक वो छात्र-छात्राओं को भली भांति समझ न आ जाये। जैसे कि कठिन शब्दों के अर्थ वाक्य प्रयोग द्वारा स्पष्ट नहीं होते तो, हो सकता है कि उनके अर्थ सन्धिच्छेद से स्पष्ट हो जायें। इस प्रकार छात्र-छात्राओं को शुद्ध उच्चारण करवाने के लिये शिक्षक स्वयं उन शब्दों का स्पष्ट उच्चारण करके दिखाये या कर अन्य छात्रों से कराये।

4. व्यक्तिगत विभिन्नता का सिद्धान्त—यह भी मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि सभी छात्र-छात्राओं की रुचि, बुद्धि और कार्य करने की क्षमता एक जैसी नहीं होती। उनमें शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भावात्मक, सामाजिक एवं नैतिक दृष्टि से भिन्नता पाई जाती है। भाषा से सम्बन्धित कमजोरियों में भी अन्तर पाया जाता है। कोई छात्र उच्चारण में त्रुटि करता है तो कोई लिखने में गलती करता है। इस लिये शिक्षक को पढ़ाते समय सभी छात्र-छात्राओं को एक समान समझकर किसी एक विधि को अपनाना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उचित नहीं है। जो छात्र अशुद्ध लिखते हैं उनके लिखने में सुधार लाने की आवश्यकता होती है और जो अशुद्ध उच्चारण करते हैं उनके उच्चारण में शुद्धता लाने की आवश्यकता होती है। शिक्षक को छात्र-छात्राओं की व्यक्तिगत कमजोरियों का पता लगाकर उनको दूर करने का प्रयास करना चाहिये।

5. क्रियाशीलता का सिद्धान्त—एक कहावत के अनुसार यह कहा जाता है कि खाली मस्तिष्क शैतान का घर होता है। बालकों के पास जब कोई ठोस कार्य करने को नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

होता तो उनको शरारतें सूझती हैं। बालक का स्वभाव है कि कुछ न कुछ करना अर्थात् निठल्ला नहीं बैठ सकता। इस लिये शिक्षक को इस बात का ध्यान रखना चाहिये बालकों से ऐसी क्रियाएं करवाये जो पाठ से सम्बन्धित हों। शिक्षक को चाहिये कि समय पाठ से सम्बन्धित क्रियाओं में छात्र-छात्राओं को व्यस्त रखे। भाषा शिक्षण शिक्षक को छात्र-छात्राओं को सक्रिय रखना चाहिये। जैसे कि जिन छात्र-छात्राओं का में ध्यान न हो तो उनसे पाठ के बीच में पाठ से सम्बन्धित प्रश्न पूछकर उनका ध्यान केन्द्रित करे। इसके साथ ही साथ यदि पाठ समय से पहले समाप्त हो जाये तो लिखने का कार्य दे दे। कहने का अभिप्राय यह है कि जहां तक हो सके छात्र-छात्राओं पढ़ाते समय क्रियाशील रखा जाये। क्रियाशीलता का गुण शिक्षक में भी होना चाहिये। कोई बात छात्र-छात्राओं की समझ में नहीं आती तो शिक्षक स्वयं करके दिखाये। संवाद शिक्षा देने के लिये शिक्षक स्वयं किसी छात्र से अच्छे ढंग से संवाद का प्रदर्शन करे। छात्राओं से कक्षा में वार्तालाप करवा करके उनके उच्चारण को शुद्ध करे।

6. चयन का सिद्धान्त–पाठ्य पुस्तक में अनेक पाठ होते हैं और कक्षा में पढ़ाने के लिये पाठ का चयन शिक्षक करता है। इस लिये किसी भी पाठ का चयन करने से शिक्षक को बोधगम्यता की दृष्टि से यह विचार करना पड़ता है कि कौन सा पहले चाहिये और कौन सा पाठ बाद में। जैसे कि पाठ्य-पुस्तक में दीपावली का निबन्ध पाठ है तो उस पाठ का शिक्षण शिक्षक को त्यौहार के आस-पास के दिनों में ही चाहिये इससे पाठ का सम्बन्ध छात्र-छात्राओं के दैनिक जीवन के अनुभवों से जुड़ और पाठ का समझना सरल और सुगम हो जायेगा। पाठ्य-पुस्तक में कहानी भी होती निबन्ध भी। इनमें से कहानी का पहले पढ़ाना उचित है और निबन्ध का बाद में कहानी अपने आप में ही रुचिकर होती है और छात्रों को सरलता से समझ में आ जा चयन के लिये यह बात ध्यान में रखनी आवश्यक है कि सरलता और सुगमता की दृ कौन सा पाठ पहले पढ़ाना उचित है। इसके अतिरिक्त अगर कोई पाठ हर प्रकार से है तो उसको कभी भी पढ़ाया जा सकता है।

7. अभ्यास का सिद्धान्त–शिक्षण को चिर स्थायित्व प्रदान करने के लिए अ का सिद्धान्त बहुत आवश्यक है। अभ्यास करते रहने से सीखी हुई बात को भुलाया सकता। जैसे कहा भी गया है :–

करत-करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात ते, सिलपर परंत निसान ॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यह एक सामान्य सिद्धान्त है कि यदि अभ्यास नहीं किया जाता तो सीखी हुई बात छात्र-छात्राएं भूल जाते हैं। अमीर खुसरो ने अपनी पहेलियों में अभ्यास से सम्बन्धित कुछ विचार व्यक्त किये हैं जो निम्न हैं :-

एक ही वाक्य में उत्तर दीजिए :

घोड़ा अड़ा क्यों ?

पान सड़ा क्यों ?

रोटी जली क्यों ?

विद्या भूली क्यों ?

उत्तर है फेरा न था।

विद्या के सम्बन्ध में फेरा का अर्थ है-अभ्यास करना। कई बार बालकों को जब अपना सबक पूरी तरह से तैयार नहीं होता तो वे प्रायः कहते हैं कि मैं इसे एक बार और फेर लूँ। इस लिये यह बात पूरी तरह से स्पष्ट है कि जो बात छात्र-छात्राओं को सिखाई जाये बाद में उसके अभ्यास करने की आवश्यकता भी होती है। अभ्यास शिक्षण प्रक्रिया के चलते भी कराया जा सकता है। जैसे कोई छात्र प्रश्न का अशुद्ध उच्चारण करता है और वह प्रश्न के स्थान पर प्रसन्न कहता है तो शिक्षक को अपने शुद्ध उच्चारण से प्रश्न शब्द का सही उच्चारण करवाना चाहिये। यह कार्य अन्य छात्रों की सहायता से अभ्यास द्वारा करवाया जा सकता है। इस प्रकार शिक्षक अन्य कठिन शब्दों के अर्थ बताकर छात्र-छात्राओं से उन शब्दों का अलग-अलग वाक्यों में प्रयोग करवा कर अभ्यास करवा सकता है।

शिक्षण सूत्र

इस धरा पर हर मनुष्य का कार्य करने का अपना-अपना तरीका होता है। कोई उस कार्य को करने में पूर्ण रूप से सफल हो जाता है और कोई आंशिक रूप से सफल हो जाता है तो कोई असफल रहता है। यह बात शिक्षक पर भी पूर्ण रूप से लागू होती है। इस अन्तर का कोई विशेष कारण नहीं होता बल्कि थोड़ा सा समझ का फेर होता है। बहुत से शिक्षकों को यह ज्ञान नहीं होता कि छात्र-छात्राओं को कौन सी बात पहले बताई जाये और कौन सी बात बाद में बताई जाये ताकि छात्र-छात्राएं उसे सरलता से समझ सकें। इस लिये शिक्षक को पहले सरल पाठ पढ़ाना चाहिये और बाद में कठिन पाठ पढ़ाना चाहिये। अगर छात्र-छात्राओं को पहले कठिन बातों की जानकारी दी जाती है और बाद में सरल बातों की तो छात्र-छात्राएं समझ नहीं पायेंगे। इस प्रकार के नियमों को ही शिक्षण सूत्र का नाम दिया जाता है। इससे पहले हम सिद्धान्तों की चर्चा कर चुके हैं। अब हमारे लिये यह जानना भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आवश्यक है कि शिक्षण सिद्धान्तों और शिक्षण सूत्रों में क्या अन्तर है। बहुत से शि शिक्षण सिद्धान्तों और शिक्षण-सूत्रों के अन्तर से अनभिज्ञ होते हैं और इन दोनों को एक बात मान लेते हैं। इस भूल का निवारण अवश्य ही किया जाना चाहिये ताकि शि सिद्धान्तों एवं सूत्रों की पालना सही रूप में सही ढंग से हो।

शिक्षण सिद्धान्त और शिक्षण सूत्र में अन्तर

शिक्षण सिद्धान्त और शिक्षण सूत्र में सबसे बड़ा अन्तर यह है कि सिद्धान्तों में परि सम्भव है लेकिन सूत्रों में किस प्रकार का परिवर्तन नहीं होता। सिद्धान्त परिस्थितियों प्रभावित होते हैं परन्तु सूत्र प्रभावित नहीं होते। उदाहरण के रूप में किसी कक्षा में व्यक्ति भेद बहुत सबल हैं तो शिक्षक को अवश्य ही व्यक्तिगत विभिन्नता के सिद्धान्त को ध्यान रखना पड़ेगा और दूसरी अन्य कक्षा में होनहार छात्र-छात्राएं हैं तो वहां व्यक्तिगत विभि पर विशेष रूप से ध्यान देने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। लेकिन इन दोनों कक्षाओं सूत्र रूप में सरल से कठिन के नियम का ही पालन करना होगा।

शिक्षण-सूत्र जिनका अपनाना प्रत्येक शिक्षक के लिये लाभप्रद है-

1. ज्ञात से अज्ञात की ओर – मनोवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि छा छात्राएं जिन बातों को पहले से जानते हैं और ज्ञात बातों के आधार पर कोई नया ज्ञान किसी नई बात के बारे में बताया जाता है तो वे उसे शीघ्रता एवं सरलता से समझ सकें इस लिये छात्र-छात्राओं को जो भी नवीन ज्ञान दिया जाये तो उसे उनकी ज्ञात बातों से देना चाहिये। इस प्रकार वे नये पाठ को सरलता से समझ जाते हैं। उदाहरण के लिये आप छात्र-छात्राओं को 'परोपकार' शब्द का अर्थ बताना चाहते हैं तो इस शब्द को कभी वाक्य में प्रयोग करके इसके अर्थ समझने का प्रयास न करे बल्कि इस शब्द का सन्धि विच्छेद (पर+उपकार) करा के अर्थ समझाइये और छात्र तुरन्त पकड़ कर लेंगे।

2. मूर्त से अमूर्त की ओर – जिन वस्तुओं का मूर्त रूप है वे भौतिक रूप में इस पर विद्यमान हैं, अगर उनके बारे में पहले छात्र-छात्राओं को बताया जाये तो वे बहुत समझ जाते हैं। उदाहरण के रूप में अगर आप ग्रामीण स्कूल में फलों के बारे में जानका रहें और सेब फल का ज्ञान कराना चाहते हैं तो आप हाथ से उसकी आकृति बनाते हैं उसके बारे में जानकारी देना चाहते हैं तो हो सकता है बालकों को स्पष्टता न हो लें अगर आप सचमुच का सेब हाथ में लिये हुए हैं और फिर उसकी विस्तृत जानकारी दें तो बालक बहुत सरलता से जानकारी प्राप्त कर लेंगे और हो सकता इस प्राप्त ज्ञान कभी भी न भूलें। क्योंकि जो वस्तु सामने है उसकी अपेक्षा किसी काल्पनिक वस्तु समझना कठिन होता है। जैसे कहा भी गया है हाथ कंगन को आरसी क्या अर्थात् प्रत्यक्ष

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती। हर्बर्ट स्पेन्सर और पेस्टालॉजी भी इस विचार के समथर्क हैं। उनके अनुसार –

"हमारे पाठ का आरम्भ मूर्त से तथा उसकी समाप्ति अमूर्त से होनी चाहिये।"

– हर्बर्ट स्पेन्सर

"बालकों की शिक्षा सदा स्थूल वस्तुओं तथा तथ्यों से होनी चाहिये, शब्दों, परिभाषाओं तथा नियमों से नहीं।"

– पेस्टालॉजी

3. पूर्ण से अंश की ओर – इस सूत्र के अनुसार पहले पूर्ण के बारे में ज्ञान दिया जाये और बाद में अंग या अंश के बारे में जानकारी दी जाये। उदाहरण के रूप में पहले छात्र-छात्राओं को विशेषण के बारे में जानकारी दी जाये और फिर बाद में विशेषण के भेदों के बारे में जानकारी दी जाये। एक और अन्य उदाहरण प्रस्तुत है अगर आप किसी मशीन के सम्बन्ध में जानकारी देना चाहते हैं तो पहले मशीन से सम्बन्धित मोटी बातों के बारे में जानकारी दे देते हो और फिर बाद में मशीन के एक-एक पुर्जे के बारे में जानकारी देते हो।

4. विश्लेषण से संश्लेषण की ओर – व्याकरण के शिक्षण के अन्तर्गत आगमन और निगमन विधियों की चर्चा हम विस्तार से कर चुके हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार छात्रों को जो बात बतानी है पहले उसे भागों में बताया जाये और फिर बाद में उन भागों को जोड़कर छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाये। उदाहरण के लिये यदि संज्ञा के बारे में जानकारी देना चाहते हैं तो छात्र-छात्राओं को पहले वस्तु, स्थान और व्यक्ति से परिचित कराना चाहिये और बाद में संज्ञा की परिभाषा से।

5. सरल से कठिन की ओर – यह सूत्र पूर्ण रूप से व्यावहारिक और मनोवैज्ञानिक है। पहले छात्र-छात्राओं को उन शब्दों, वाक्यों, कविताओं और निबन्धात्मक पाठों को पढ़ाना चाहिये जिसे वे सहजता और सरलता से समझ सकें। इसके बाद फिर कुछ कठिन और फिर अधिक कठिन बातों के बारे में ज्ञान दिया जाना चाहिये। लेकिन पहले कठिन और बाद में सरल पढ़ायें, ऐसा करना कदापि भी उचित नहीं है। क्योंकि वे कठिन बातों को समझ नहीं पायेंगे और उन में हीनता की भावना आ जायेगी और आगे चलकर उनके लिये सरल बातों का समझना भी कठिन हो जायेगा।

6. सामान्य से विशेष की ओर – यह सूत्र शिक्षण सिद्धान्तों में पूर्ण रूप से सहायक है और मनोवैज्ञानिक तथ्य पर आधारित है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि बालक या व्यक्ति सामान्य बातों को सरलता से जान और समझ लेते हैं और विशेष बात को जानने के लिये उनमें उत्सुकता और जिज्ञासा बनी रहती है। इस लिये शिक्षक को शिक्षण प्रक्रिया को सशक्त और सक्रिय बनाने के लिये सामान्य बात पहले बतानी चाहिये और फिर विशेष बात को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पकड़ छात्र-छात्राएं अपने आप कर लेंगे। उदाहरण के लिये यदि छात्र-छात्राओं को विशे का ज्ञान कराना है तो शिक्षक बालकों से वस्तुओं की विशेषता के बारे में पूछे जैसे का पीला, हरा, भारी, हलका, मोटा, लम्बा चौड़ा आदि ये सब छात्र-छात्राएं आसानी से दंगे। बाद में उनको विशेषण की परिभाषा के बारे में सरलता से समझाया जा सकता है उनके लिये विशेष बात होगी।

अभ्यास के प्रश्न

1. मातृ-भाषा शिक्षण के सिद्धान्तों का विस्तार से उल्लेख कीजिए।
2. भाषा सीखने का स्वाभाविक क्रम क्या है ? भाषा सीखने के हेतु इस क्रम अपनाना क्यों आवश्यक है ?
3. शिक्षण सिद्धान्त और शिक्षण सूत्र में क्या अन्तर है ? शिक्षण सूत्रों की व्याख्या विस्तार से कीजिए।
4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए।
   (I) स्वाभाविक क्रम की व्याख्या।
   (II) शिक्षण सूत्र।
   (III) अभ्यास के सिद्धान्त की व्याख्या।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

UNIT III

वाचन व लेखन

(Reading and Writing)

(1) वाचन का प्रत्यय, अर्थ व महत्त्व
(Concept, Meaning and Importance of Reading)

(2) वाचन के प्रकार मौन/सस्वर, गहन व द्रुत (तीव्र)
(Types of Reading Silent/Loud/Entensive and Extensive)

(3) वाचन दोष व समाधान
(Reading defects and their Cure)

(4) अच्छे लेखन के गुण
(Quality of good handwriting)

(5) लेखन कौशल मे अशुद्धियां व समाधान
(Defects in writing Skill and their Improvement)

(6) संक्षेपीकरण व विस्तारीकरण
(Summarising and Elaborating)

(7) निबन्ध लेखन/पत्र लेखन
(Essay Writing/Letter Writing)

(8) हिन्दी पाठ्य क्रम निर्माण के सिद्धान्त और पाठ्यक्रम की समीक्षा
(Principles of the Construction of Hindi Curriculum and Critical Evaluation of Curriculum)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1

वाचन (पठन) की धारणा, अर्थ और महत्त्व
(Concept, Meaning and Importance of Reading)

वाचन (पठन) एक कला है। मनुष्य को सफल अभिव्यक्ति और अपने व्यक्तिगत विकास के लिये इस कला को समझना और सीखना चाहिये। वैसे भी अर्थ ग्रहण करते हुए वाचन करना भाषा शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य में से एक उद्देश्य है।

वाचन (पठन) शिक्षण के सम्बन्ध में अधिकांश विद्वानों का मत है कि लेखन की शिक्षा से पूर्व छात्र-छात्राओं को वाचन की शिक्षा दी जानी चाहिये। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी यह बात सही है कि बच्चे लिखने की अपेक्षा पढ़ना या वाचन अधिक जल्दी सीखते हैं। बहुत से ऐसे व्यक्ति होते हैं जिन्हें शुद्ध लिखना नहीं आता लेकिन सामान्य स्तर की पुस्तकों को अच्छी तरह पढ़ सकते हैं। पहले स्पष्ट किया जा चुका है कि मैडम माण्टेसरी के विचार से लेखन की शिक्षा वाचन से पूर्व दी जानी चाहिए, परन्तु यह विचार तर्क संगत नहीं क्योंकि बिना उच्चारण के पहले तो लिखना सिखाना सम्भव नहीं और यदि सिखा भी दिया जाये तो उसका कोई अस्तित्व नहीं जब तक कि उसका उच्चारण न बताया जाए। अत: लेखन से पूर्व वाचन की शिक्षा दी जानी चाहिए। परन्तु वाचन की शिक्षा देते समय बालकों की रूचि का विशेष ध्यान रखा जाए।

वाचन का अर्थ
(Meaning of Reading)

पढ़ने की शिक्षा हेतु पठन या वाचन दो शब्दों का प्रयोग किया जाता है। वाचन शब्द 'वाक्' धातु से बना है, जिसका अर्थ-शब्द, वाणी अथवा कथन से लिया जाता है। लिखित अथवा छपी हुई सामग्री का उच्चारण करना वाचन या पठन कहलाता है। लेकिन यह वाचन का संकुचित अर्थ है। विकसित अर्थों में वाचन या पठन से तात्पर्य लिखी हुई या छपी हुई सामग्री को अर्थ साहित ग्रहण करना है। कवि या लेखक के लिखित विचारों को जानने के लिए जिस साधन का उपयोग किया जाता है उसे वाचन कहते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वाचन की आवश्यकता एवं महत्त्व
(Need and Importance of Reading)

मौखिक वार्तालाप में व्यक्ति की शारीरिक उपस्थिति आवश्यक होती है परन्तु यह हमेशा सम्भव नहीं है। कभी हम ऐसे व्यक्तियों के विचारों को जानना चाहते हैं जो अब इस संसार में नहीं रहे। कभी ऐसे व्यक्तियों के विचारों को जानना आवश्यक होता है जो अब भी इस संसार में विद्यमान हैं लेकिन कारणवश वांछित स्थान पर उपस्थित नहीं हो सकते। कभी हम भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के विचारों को जानना चाहते हैं। इस प्रकार की सभी परिस्थितियों में यदि उस व्यक्ति विशेष के विचार हमें लिखित रूप में मिल जाते हैं तो उन्हें पढ़कर हम उस व्यक्ति के विचारों को जानते हैं। किन्तु यह तभी संभव है जब हम पढ़ना जानते हो। इसलिए किसी भी लिखित बात को पढ़ने के लिए वाचन की शिक्षा ग्रहण करना आवश्यक है।

खाली समय में, रेल यात्रा में अथवा अकेलेपन को दूर करने के लिए हम अनुभव करते हैं कि हमें एक ऐसे साथी की आवश्यकता है जिससे हम मन बहला सकें और निरर्थक विचारों में न पड़ें। यह साथी पुस्तक, अखबार आदि के रूप में हमारा साथ देता है। परन्तु पुस्तकों और अखबारों का लाभ हम तभी उठा सकते हैं जब हमें वाचन आता हो। इसलिए वाचन की सफल शिक्षा की आवश्यकता होती है।

अभ्यास के प्रश्न

1. वाचन से आप क्या समझते हैं ? वाचन का भाषा शिक्षण में क्या महत्त्व है ?
2. वाचन का अर्थ स्पष्ट करते हुए यह बताईये कि भाषा शिक्षण में इसका क्या महत्त्व है ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2

वाचन के प्रकार, सस्वर वाचन, मौन वाचन, विस्तृत एवं गहन वाचन (Types of Reading, Loud, Silent, Extensive and Intensive)

वाचन (पठन) दो प्रकार से किया जाता है- एक तो मुँह से ध्वनियों का उच्चारण करते हुए और दूसरा मौन रूप से। इस आधार पर वाचन दो प्रकार का होता है –

वाचन के प्रकार
Types of Reading

1. सस्वर वाचन (Loud reading)
2. मौन वाचन (Silent reading)

1. सस्वर वाचन – लिखित भाषा के ध्वन्यात्मक पाठ को मौखिक या सस्वर वाचन कहते हैं। बिना अर्थग्रहण किये पढ़ने को वाचन नहीं कहा जाता है। पठन में अर्थ ग्रहण करना आवश्यक होता है।

सस्वर वाचन के प्रकार
(Types of Loud reading)

सस्वर वाचन दो प्रकार का होता है।

1. व्यक्तिगत पठन – एक ही व्यक्ति किसी लिखित भाग का वाचन करे। उदाहरण के लिए, कथा-वाचक का वाचन, बालकों द्वारा एक एक करके किसी गद्य या पद्य पाठ का वाचन।

2. सामूहिक पठन– इसमें बहुत से बालक या व्यक्ति किसी भी लिखित सामग्री का एक साथ, एक स्वर के साथ वाचन करे। उदाहरण के लिए बालकों द्वारा किसी गद्य या पद्य पाठ का एक साथ मिल कर पढ़ना।

व्यक्तिगत वाचन शिक्षक द्वारा भी किया जाता है।

कक्षा शिक्षण में वाचन तीन प्रकार का होता है–

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

I. आदर्श पठन – शिक्षक द्वारा किए गए व्यक्तिगत वाचन को आदर्श पाठ (Model reading) कहा जाता है। आदर्श पठन अध्यापक द्वारा प्रस्तुत वह पठन है जिसे वह उचित ढंग से खड़े होकर शुद्ध उच्चारण, उचित ध्वनि एवं भावानुसार शब्दों पर बल देते हुए विराम का ध्यान रखते हुए उचित आरोह अवरोह के साथ करता है।

II. अनुकरण पठन (Imitation reading)— अध्यापक के आदर्श पाठ का बालक अनुकरण करते हुए पढ़ते हैं। यह अनुकरण वाचन व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों प्रकार का हो सकता है। बच्चों द्वारा किये गए अनुकरण पठन को अनुकरण पाठ कहते हैं।

III. समवेत पठन – समवेत पठन वह है जिसमें दो या दो से अधिक बच्चे साथ पठन करते हैं। समवेत पठन का यह लाभ होता है जिन बच्चों को पढ़ने में झिझक लगती है या जिन्हें पढ़ने का साहस नहीं होता, जिन्हें अपने उच्चारण पर विश्वास नहीं होता या जो उचित गति से पठन नहीं कर सकते वे भी पठन करने लग जाते हैं।

सस्वर वाचन का महत्त्व
(Importance of Loud Reading)

अच्छे सस्वर वाचन के द्वारा गद्य और पद्य का भाव समझ में आ जाता है। कविता का आनन्द तो उसके सस्वर पठन में ही होता है। भाषा शिक्षण की दृष्टि से भी सस्वर पठन का बहुत महत्त्व है। सस्वर पठन का महत्त्व निम्नलिखित बातों से है–

I. बालकों के अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध करने में सहायता मिलती है।

II. बालकों का संकोच एवं झिझक दूर होती है जो उनके सर्वांगीण विकास के लिए बहुत आवश्यक है।

III. लेखकों के विचारों से दूसरों को अवगत कराने हेतु सस्वर वाचन की आवश्यकता पड़ती है।

IV. सस्वर वाचन के द्वारा बालकों को सफल वक्ता बनाया जा सकता है।

V. कोई भी बात एक से अधिक व्यक्तियों को सस्वर वाचन द्वारा सुनाई जा सकती है।

VI. कक्षा शिक्षण की दृष्टि से अध्यापक के आदर्श सस्वर पठन से कक्षा में अनुशासन बना रहता है और जब बच्चे अध्यापक का अनुकरण करते हैं तो उनके कौशल में विकास होता है।

सस्वर वाचन के उद्देश्य
(Aims of Loud Reading)

सस्वर वाचन के विभिन्न उद्देश्य हैं –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

I. व्यक्तिगत वाचन के उद्देश्य – व्यक्तिगत वाचन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(क) बालकों की वाचन सम्बन्धी व्यक्तिगत कमियों को दूर करने में उनकी सहायता करना।

(ख) पढ़ने में अधिक कमजोर बालकों की व्यक्तिगत रूप से सहायता करना।

II. सामूहिक वाचन के उद्देश्य – सामूहिक वाचन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

(क) बालकों में किसी गद्य या पद्य को सामूहिक रूप से पढ़ने की प्रवृत्ति डालना।

(ख) संस्था गीत या भगवान् की प्रार्थना आदि को सामूहिक रूप से समवेत स्वर में ताल तथा गतिबद्ध रूप से एक साथ गाने का अभ्यास कराना।

(ग) कम समय में अधिक से अधिक व्यक्तियों को लाभान्वित करना।

III. आदर्श वाचन के उद्देश्य – कभी कभी बच्चे वातावरण के सम्पर्क से कुछ ब्दों के अशुद्ध उच्चारण सीख लेते हैं तो अध्यापक का कर्त्तव्य है कि वे आदर्श वाचन द्वारा च्चे के उच्चारण को शुद्ध करवाये। इस प्रकार आदर्श वाचन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

(क) छात्र छात्राओं को शब्द के उच्चारण का सही ज्ञान कराना ।

(ख) छात्र-छात्राओं को वाचन में यति, विराम, लय एवं गति का उचित ज्ञान देना ।

IV. अनुकरण वाचन के उद्देश्य- अनुकरण वाचन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :-

(क) बालक सही उच्चारण एवं वाचन सीखकर दोहरा सकें।

(ख) वे अपनी वाचन सम्बन्धी कमियों को दूर कर सकें।

(ग) बच्चे शुद्ध एवं स्पष्ट वाचन से सम्बन्धित सभी बातों को सीखकर अपना सके।

ऊपरलिखित सस्वर वाचन के उद्देश्य तभी पूर्ण हो पाएंगे जब बच्चों के उच्चारण में ता होगी। इसलिए अशुद्ध उच्चारण के दोषों का ज्ञान होना आवश्यक है।

सस्वर वाचन के गुण
(Merits of Loud Reading)

सस्वर वाचन के निम्नलिखित गुण हैं :-

1. शुद्ध उच्चारण – सस्वर वाचन में शब्दों एवं वर्णों का उच्चारण शुद्ध होना ए। शब्द में हर वर्ण का उच्चारण उचित स्थान से होना चाहिए। उच्चारण की अशुद्धि ब्द का अर्थ ही बदल जाता है जैसे गृह, गिरह, ग्रह और समान, सम्मान सामान आदि।

2. उचित ध्वनि निर्गम – मुख से जो भी अवयव ध्वनि निर्गम से सक्रिय होते हैं सही प्रयोग होना चाहिए। कंठ, तालु, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका आदि स्थानों से सही ढंग से उच्चरित होनी चाहिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3. उचित बल एवं विराम – वाचन करते समय बालक को इस बात का ज्ञान चाहिए कि कहाँ कम रुकना है, कहाँ अधिक, कहाँ प्रश्न ध्वनि का प्रयोग करना है। बल एवं विराम के नहीं होने से पाठ्य सामग्री का अर्थ बदल जाता है जैसे –

रोको, मत जाने दो।

रोको मत, जाने दो।

4. उचित लय एवं गति – किसी गद्य या पद्य का पाठ करते हुए विषय के उचित लय एवं गति के अनुसार पढ़ना चाहिए। वाचन न तो तीव्र गति से होना चाहिए ना ही मन्द गति से हो।

5. उचित हाव भाव – सस्वर वाचन करते समय विषय-वस्तु के भाव के अ हाव भाव का प्रदर्शन करना चाहिए। जैसे क्रोध का भाव, प्रेम का भाव, वीरता के भाव के अनुसार हाव भाव प्रदर्शन करना चाहिए।

6. उचित वाचन मुद्रा – सस्वर वाचन करते समय पाठक की मुद्रा ठीक चाहिए। पुस्तक आँख से एक फुट दूर होनी चाहिए। श्रोताओं की ओर वाचन करते हु बीच में देख लेना चाहिए।

7. स्वर माधुर्य – वाचन करते समय पाठक के स्वर में मधुरता होनी चाहिए का स्वर स्पष्ट सुनाई दे।

8. प्रभावोत्पादकता– वाचन में प्रभाव लाने के लिए पाठक की दृष्टि परिधि होनी चाहिए। उसकी दृष्टि केवल पुस्तक पर न होकर धारा प्रवाह गति के वाचन होनी चाहिए। ऐसा करने से वाचन में प्रभावोत्पादकता आती है।

9. स्वाभाविकता – वाचन करते समय पाठक को स्वाभाविक ढंग से पढ़ना वाचन करने में बनावटीपन नहीं होना चाहिए।

10. अंग संचालन– वाचन करते समय पाठक को अपने हाथ, पैर, सिर, आँ आदि का स्वाभाविक रूप से अंग संचालन करना चाहिए। इससे वाचन प्रभावशा है।

वाचन (पठन) शिक्षण की विधियाँ
(Methods of Reading)

वाचन की शिक्षा देने के लिए निम्नलिखित विधियों का प्रयोग करना चाहिए

I. अनुकरण विधि – इसमें अध्यापक एक एक शब्द का उच्चारण ध्यानपूर्व है और बालक अध्यापक के उच्चारण का अनुकरण कर के वाचन सीखता है।

II. भाषा शिक्षण यन्त्र विधि – इस विधि में भी बालक अनुकरण द्वारा सी भाषा के शुद्ध उच्चारण का रिकार्ड इस विधि में बजाया जाता है और बालक उ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सही अनुकरण करते है। परन्तु यह विधि खर्चीली है। निर्धन देश इसका प्रयोग नहीं कर सकते।

III. सामूहिक पठन विधि – यह विधि बाल गीतों का वाचन कराने के लिए अच्छी है। इस विधि में बालक शिक्षक के आदर्श पाठ का अनुकरण सामूहिक रूप से करते हैं। इस विधि से बालकों को स्वर का ज्ञान होता है और वे वाचन अच्छी तरह करते हैं।

IV. देखो और कहो विधि– इस विधि के अन्तर्गत बालकों को अक्षरों तथा ध्वनियों का ज्ञान कराने से पहले शब्दों का ज्ञान कराया जाता है। शब्दों का ज्ञान कराने के लिए उन्हें शब्दों से सम्बन्धित वस्तुएं दिखाई जाती हैं, लेकिन सभी वस्तुओं को दिखाना सम्भव नहीं होता इसलिए वस्तुओं के चित्र दिखाये जाते हैं। जिस वस्तु का चित्र होता है उसके नीचे उसका नाम लिखा होता है। चित्र में दिखाई गई वस्तु जानी पहचानी होती है। इसलिये बालक नीचे लिखे शब्द का उससे सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं तो फिर शिक्षक उस शब्द का उच्चारण करता है और बालक उसका अनुकरण करते हुए बोलते हैं। इसके बाद विश्लेषण द्वारा अक्षरों का उच्चारण करना सिखाते हैं।

V. साहचर्य विधि– इस विधि के द्वारा खिलौनों, चित्रों, विभिन्न प्रत्यक्ष वस्तुओं और शब्दों में साहचर्य स्थापित किया जाता है। उदाहरणार्थ शेर के चित्र के नीचे शेर लिखकर बालक को समझा दिया जाता है। फिर बालक से कहा जाता है कि वे नाम वाले कार्डों को ढूंढ ढूंढ कर सही चित्र के साथ लगायें। बालक इस प्रकार के कार्य रूचि लेकर करते हैं।

VI. ध्वनि साम्य विधि – इस विधि में समान उच्चारण वाले शब्दों को एक साथ सिखाया जाता है जैसे, राम, काम, नाम, महेश, नरेश, सुरेश आदि। इस विधि का यह दोष है कि ध्वनियों पर अधिक बल दिया जाता है न कि शब्दों के अर्थ पर। इस विधि द्वारा सीमित शब्दों को ही सिखाया जा सकता है।

VII. शब्द-शिक्षण विधि – इस विधि के अनुसार सार्थक शब्दों के पढ़ने की शिक्षा दी जाती है जैसे मामा, पापा, चाचा आदि। इस विधि द्वारा बालकों का मनोरंजन भी होता है इसलिये यह विधि मनोवैज्ञानिक भी होता है। बालक फिर धीरे-धीरे कठिन शब्दों को भी सीख लेते हैं। इस विधि के प्रयोग के लिये शिक्षक को कुशल होना चाहिए तभी वह बालकों को अच्छी तरह शब्दों का उच्चारण सिखा सकता है।

VIII. वर्ण शिक्षण विधि – इस विधि के अनुसार पहले स्वर फिर व्यंजन, मात्राएँ, संयुक्ताक्षर और सार्थक शब्द सिखाये जाते हैं। वर्तमान स्कूलों में इसी विधि द्वारा वाचन की शिक्षा दी जाती है। पर यह विधि सबसे पुरानी विधि है।

IX. वाक्य शिक्षण विधि – यह विधि अक्षर बोध विधि के विपरीत है। अक्षर बोध विधि में पहले अक्षर ज्ञान, फिर शब्द ज्ञान और फिर वाक्य ज्ञान कराया जाता है, परन्तु इस प्रणाली में पहले वाक्य ज्ञान, फिर शब्द ज्ञान और अन्त में अक्षर ज्ञान कराया जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार बालक अपनी दृष्टि पूर्ण वाक्य पर डालता है। इसलिए इस विधि में शिक्षण का क्रम है वाक्य – शब्द – अक्षर।

उपरोक्त विधियों में कोई भी विधि पूर्ण नहीं है प्रत्येक विधि में कुछ न कुछ कमी है। इसलिए शिक्षक के लिए यह बहुत कठिन होता है कि किस विधि को अपनाये ? शिक्षक को समय, सुविधा एवं परिस्थिति के अनुसार जो विधि उचित लगे उसे अपनाना चाहिए।

मौन वाचन
(Silent Reading)

लिपि बद्ध भाषा अर्थात् लिखित सामग्री को बिना किसी ध्वनि किये हुए मन ही मन में पढ़ने और साथ-साथ अर्थ ग्रहण करने की क्रिया को मौन वाचन कहते हैं। मौन वाचन में नेत्र लिखित सामग्री को जल्दी जल्दी पढ़ते हैं और मस्तिष्क में उस सामग्री के अर्थ को ग्रहण करता जाता है। मौन पाठ (वाचन) करते हुए पाठक के होंठ तक नहीं हिलते।

मौन पाठ (वाचन) का महत्त्व – सस्वर वाचन की भांति मौन पाठ का भी बहुत महत्त्व है जिसको हम निम्न प्रकार से समझ सकते हैं –

I. मौन वाचन छात्र-छात्राओं को किसी लिखित सामग्री के विचारों की गहराई तक पहुंचने में सहायता देता है।

II. यह छात्र-छात्राओं में चिन्तनशीलता का विकास करता है। जिससे उनकी कल्पना शक्ति का विकास होता है और साथ ही साथ उनकी बुद्धि का भी विकास होता है।

III. मौन वाचन में व्यक्तिगत क्षमता का महत्त्व होता है। कोई भी छात्र अपनी क्षमता के अनुसार कितना ही अधिक पढ़ सकता है।

IV. एकान्त के क्षणों में रूचिकर लेख व पुस्तक को पढ़कर उसका आनन्द उठाया जा सकता है।

V. इससे स्वाध्याय की आदत का विकास होता है।

VI. इसके माध्यम से द्रुत वाचन (तीव्र गति से वाचन) करके विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है।

मौन वाचन (पाठ) के उद्देश्य – मौन वाचन के निम्न उद्देश्य हैं–

1. छात्र कम से कम समय में अधिक से अधिक सामग्री को आत्मसात कर समय का सदुपयोग कर सके।
2. छात्रों में चिन्तन एवं तर्क-वितर्क शक्ति का विकास करना।
3. वे लिखित सामग्री को पढ़कर समझ सकें और अपनी कल्पना शक्ति का विकास कर सकें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4. उनको तीव्र गति से पढ़ने का अभ्यास कराना।

5. परिचित शब्दावली को सक्रिय रूप देना।

6. पाठ्य सामग्री का अर्थ ग्रहण करके उसके सार को समझने योग्य बनाना।

उपरोक्त उद्देश्य की प्राप्ति उस समय तक सम्भव नहीं जब तक कि वातावरण उनके अनुकूल न हो। वातावरण की अनुकूलता और कुछ अन्य बातें जो मौन वाचन में सहायक सिद्ध होती हैं, उनका उल्लेख निम्न है –

मौन वाचन (पाठ) में सहायक बातें – मौन वाचन करते हुए आवाज़ बिल्कुल नहीं होनी चाहिये। अत: बिना होंठ हिलाये मन ही मन में पढ़ना चाहिये। पढ़ते हुए एकाग्रता होनी चाहिये। पाठक का चित्र एकाग्र होने पर ही पाठ्य वस्तु का अर्थ व भाव ग्रहण किया जा सकता है।

मौन वाचन के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निम्न आवश्यक बातों को अवश्य ही ध्यान में रखा जाये –

(1) शान्तिपूर्ण वातावरण

(2) एकाग्रता

(3) विस्तृत शब्दावली

(4) व्याकरण के नियमों का ज्ञान

(5) समुचित ज्ञान

(6) तनाव रहित होना

जिन बातों का उल्लेख किया गया है, उनकी कितनी ही पूर्णता क्यों न हो, कुशल शिक्षण के उद्देश्य की प्राप्ति नहीं की जा सकती। इस लिये मौन वाचन करते समय शिक्षक को यह जानने का प्रयास करना चाहिये कि बालक कहां तक किसी लिखित भाषा को समझने में सफल हुए हैं ? कभी-कभी बालक पुस्तक के अक्षरों पर दृष्टि तो डालते रहते हैं परन्तु उनका ध्यान कहीं और होता है। शिक्षक को ऐसे बालकों और उनकी समस्या को समझने का प्रयास करना चाहिये। उसे बालकों से बीच बीच में प्रश्न पूछते रहना चाहिये ताकि छात्र-छात्राओं का ध्यान वाचन सामग्री की ओर रहे।

मौन पाठ (वाचन) की शिक्षा

मौन पाठ करना भी एक कला है और इस कला के लिये विकास के लिये छात्र-छात्राओं को अधिक से अधिक मौन पाठ के लिये अवसर प्रदान करना चाहिये । हमारे सामने अब प्रश्न यह उठता है कि अवसर कब और कैसे प्रदान किये जायें ? जहां तक मौन पाठ का सम्बन्ध है, यह तभी सम्भव हो सकता है जब भाषा पर छात्र-छात्राओं का कुछ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सीमा तक अधिकार हो जाये। भाषा पर अधिकार के साथ-साथ छात्र-छात्राओं की मानसिक दशा भी मौन पाठ के अनुकूल हो। स्पष्ट है कि आरम्भ की कक्षाओं में मौन पाठ नहीं कराया जा सकता, क्यों कि छोटे बालक बहुत चंचल होते हैं और वे किसी एक स्थान पर बैठकर दत्तचित होकर किसी भी कार्य को नहीं करते। दूसरी बात यह भी है कि उनको भाषा का ज्ञान बहुत सीमित सा होता है। अनुभव के आधार पर अगर देखा जाये तो कक्षा तीन से पहले कदापि भी मौन पाठ करवाना सम्भव नहीं है।

कक्षा तीन में भी छात्र-छात्राएं इस योग्य नहीं होंगे कि वे सही ढंग से मौन पाठ करने लगेंगे। इस स्तर पर भी इतना ही सम्भव है कि शिक्षक छात्र-छात्राओं को उचित स्थान पर बैठाकर उनको मौन पाठ करने के लिये प्रेरित अर्थात् मौन पाठ करने की आदल डाले। मौन पाठ के लिये अवसर दूसरे विषयों के अन्तर्गत भी मिलते हैं लेकिन भाषा की शिक्षा के सन्दर्भ में गद्य लेखों और सहायक पुस्तकों के लिये मौन पाठ करवाना अधिक उपयुक्त और लाभप्रद होता है। यहां पर विशेष रूप से इस बात पर ध्यान दिया जाये कि कविता पाठ में मौन पाठ नहीं करवाया जाता क्योंकि कविता के आनन्द का सम्बन्ध तो सस्वर वाचन से ही है। हाँ कक्षा चार के उपरान्त छात्र-छात्राओं को पुस्तकालयों और वाचनालयों में मौन पाठ के अवसर प्रदान किये जायें। इन स्थानों पर छात्र-छात्राओं की रूचि के अनुसार विषय सामग्री उपलब्ध होनी चाहिये। जो विद्यार्थी स्वेच्छा से उन्हें पढ़ना चाहें इसके लिये उनको अवसर उपलब्ध हों। यह सब कार्य शिक्षक की देख रेख में होना चाहिये। छात्र-छात्राएं अपनी रूचि की पत्र-पत्रिकाएं और पुस्तकें पढ़ें और उसके बाद उससे सम्बन्धित प्रश्न पूछे चाहियें। उनको अपनी बात को स्वतन्त्र रूप से कहने के अवसर भी दिये जायें। फिर बाद में कक्षा पांच के बाद इस बात पर भी जोर दिया जाये कि छात्र-छात्राएं जो कुछ मौन पाठ से समझें वे उसकी मौखिक अभिव्यक्ति भी कर सकें।

कक्षा छः से नियमित रूप से मौन पाठ का प्रशिक्षण व अभ्यास प्रारम्भ कर देना चाहिये और यह ध्यान रखा जाये कि मौन पठन के सभी तत्वों का उत्तरोत्तर विकास हो। शिक्षक का यह प्रयत्न रहना चाहिये कि छात्र-छात्राओं का मौन पठन की गति में निरन्तर विकास हो। छात्र-छात्राओं को मौन वाचन (पाठ) की क्रिया में प्रशिक्षित और अभ्यस्त करने के लिये यह आवश्यक है कि कक्षा में शान्त वातावरण हो और हवा और रोशनी का भी पर्याप्त प्रबन्ध हो।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य बातों को भी ध्यान में रखा जाये, जो इस प्रकार हैं -

I. मौन वाचन उसी सामग्री का करवाया जाये जिसे छात्र-छात्राएं समझ सकें।

II. विषय सामग्री भाव और भाषा की दृष्टि से बहुत कठिन नहीं होनी चाहिये। अगर कठिन है तो शिक्षक को मौन पाठ कराने से पहले उन कठिनाईयों को दूर कर देना चाहिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

III. जब छात्र-छात्राएं मौन पाठ करना शुरू कर दें तब शिक्षक को मौखिक रूप कोई अनुदेश नहीं देना चाहिये।

IV. शिक्षक को मौन वाचन (पाठ) करने से पहले निर्देश दे देने चाहियें।

V. मौन पाठ के बाद छात्र-छात्राओं को परस्पर वार्तालाप के अवसर दिये जायें। ऐसा करने से स्वाभाविक रूप से उनकी मौखिक अभिव्यक्ति का भी विकास होगा।

शिक्षक की भूमिका

सस्वर वाचन और मौन वाचन में शिक्षक की भूमिका एक जैसी नहीं रहती। मौन वाचन में शिक्षक की भूमिका में परिवर्तन हो जाता है। सस्वर वाचन में शिक्षक को मुख्य रूप से इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि कोई छात्र किसी शब्द का उच्चारण ठीक करता है या नहीं, यदि नहीं करता है तो उसका सही उच्चारण क्या होना चाहिये ? मौन पाठ (वाचन) में शिक्षक का ध्येय छात्र-छात्राओं के उच्चारण से हटकर उनके समझने की क्षमता पर केन्द्रित हो जाता है। मौन पाठ (वाचन) कराते समय शिक्षक के लिये यह जानना आवश्यक होता है कि छात्र-छात्राएं लिखित सामग्री को समझने में सफल हुए हैं या नहीं अगर सफल हुए हैं तो कहां तक ? कभी-कभी कई छात्र विषय सामग्री पर दृष्टि तो डालते रहते हैं परन्तु उनका ध्यान पाठ में न होकर कहीं ओर होता है। शिक्षक को ऐसे छात्र-छात्राओं को यथा सम्भव समझने का प्रयास करना चाहिये। ऐसी स्थिति में शिक्षक को छात्र-छात्राओं से उनकी कठिनाईयों के बारे में पूछते रहना चाहिये।

विस्तृत (द्रुत) वाचन और गहन वाचन
(Extensive and Intensive Reading)

सस्वर वाचन और मौन वाचन का सम्बन्ध पाठ्य पुस्तकों से है। मौन पाठ (वाचन) के अन्तर्गत हम दो प्रकार के वाचन की बात करते हैं- विस्तृत वाचन (द्रुत वाचन) और गहन (सूक्ष्म) वाचन। भाषा शिक्षण में दो प्रकार की पाठ्य पुस्तकें होती हैं। एक तो वे पुस्तकें जिनका अध्ययन पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आवश्यक होता है। इन पुस्तकों को गहन (सूक्ष्म) वाचन की श्रेणी में रखा जाता है और दूसरी पाठ्यक्रम के अतिरिक्त पुस्तकें जिनको सहायक पुस्तकें कहा जाता है। ऐसी सभी अतिरिक्त पुस्तकों को विस्तृत (द्रुत) वाचन की श्रेणी में रखा जाता है।

गहन (सूक्ष्म) वाचन से तात्पर्य – सूक्ष्म (गहन) वाचन से तात्पर्य प्रत्येक शब्द, प्रत्येक वाक्य, प्रत्येक पाठ का गहनता से अर्थात् सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन करना और इसके साथ ही साथ नये शब्दों के अर्थ का ज्ञान प्राप्त करना और वाक्यों के सही अर्थों का समझना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गहन पाठ (वाचन) अर्थात सूक्ष्म वाचन की पुस्तक शब्दावली, मुहावरे, नये भाव विचार, उच्चारण, रचना और व्याकरण की दृष्टि से अध्ययन का केन्द्र होती है।

छात्र-छात्राएं जब कम सामग्री को पढ़कर उसके अधिक अर्थ समझ सकें उसको वाचन या गहन वाचन कहा जाता है। इस प्रकार के वाचन का सम्बन्ध नियमित अध्ययन पाठ्य पुस्तकों से होता है।

विस्तृत वाचन (द्रुत वाचन) – छात्र-छात्राओं के लिये नियमित अध्ययन की पुस्तकों के अतिरिक्त सहायक पुस्तकें भी होती हैं जिनकी उनको आवश्यकता पड़ती है कि वे पुस्तकें पाठ्य पुस्तकों के लिये सहायक सिद्ध होती हैं। ऐसी पुस्तकों को शीघ्रत पढ़ा जाता है। इसी लिये ऐसी पुस्तकों को द्रुत पाठ या विस्तृत पाठ की पुस्तकें कहते इस प्रकार द्रुत पाठ या विस्तृत पाठ से यह तात्पर्य है कि कम से कम समय में अधिक अधिक वाचन या पाठ करना अर्थात् पढ़ना।

द्रुत वाचन (विस्तृत वाचन) का महत्त्व

1. द्रुत वाचन में सीखी हुई या अर्जित शब्दावली के प्रयोग का पर्याप्त अ होता है।
2. द्रुत पाठ की पुस्तकें पढ़ने से भाषा समझने की योग्यता एवं क्षमता का वि होता है।
3. पढ़ने की गति में तीव्रता आ जाती है जो दैनिक जीवन में अधिक पढ़ने के लाभप्रद उपयोगी सिद्ध होती है।
4. मौन पाठ का अधिक से अधिक अभ्यास होता है।
5. साहित्य में रूचि पैदा होती है और छात्र-छात्राएं स्वतन्त्र रूप से साहि अध्ययन करने लगते हैं।
6. भावी जीवन के लिये छात्र-छात्राओं को प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। उ अपने भावी जीवन में अधिक पढ़ने की आवश्यकता होती है।
7. ज्ञानोपार्जन में वृद्धि होती है।
8. महापुरुषों, विद्वानों और दार्शनिकों एवं वैज्ञानिकों के अमूल्य विचारों से प हो जाते हैं।
9. इससे देश, विदेश की घटनाओं की जानकारी प्राप्त होती है जिससे सामान्य ज्ञान का विस्तार होता है।
10. कहानी, उपन्यास या साहित्य की किसी अन्य विधा को पढ़कर मनोरंजन है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

11. इससे स्वतन्त्र रूप से स्वाध्याय करने की आदत का विकास होता है।

विस्तृत वाचन (द्रुत वाचन) के उद्देश्य

द्रुत वाचन के मुख्य रूप से दो उद्देश्य हैं जो निम्न हैं–

I. छात्र-छात्राओं में शीघ्रता से पढ़ने की आदत डालना ताकि वे इस योग्य हो जायें कि कम से कम समय में अधिक से अधिक पढ़ सकें।

II. छात्र-छात्राओं में स्वतन्त्र रूप से स्वाध्याय की आदत का विकास करना और साहित्यिक प्रवृत्ति को विकसित करना।

द्रुतवाचन की पुस्तकें या सहायक पुस्तकों के आवश्यक गुण

I. सहायक या द्रुत पाठ की पुस्तकों की शब्दावली परिचित और सरल होनी चाहिये।

II. भाषा भी कठिन नहीं होनी चाहिये क्योंकि द्रुत गति से वाचन तभी सम्भव हो सकता जब पढ़ने में किसी प्रकार की कोई कठिनाई न हो।

III. पठन सामग्री के विषय रूचिपूर्ण और छात्र-छात्राओं की अवस्था, आवश्यकता और स्तर के अनुकूल हो।

द्रुत (विस्तृत) वाचन की पुस्तकों के विषय निम्न प्रकार के हो सकते हैं–

(1) शिक्षा प्रद एवं रोचक कहानियां हों।

(2) महापुरुषों का जीवन चरित्र हो।

(3) छोटे उपन्यास और एकांकी के रूप में सामाजिक बुराईयों का चित्रण हो।

(4) वर्णानात्मक और व्यगांत्मक लेखों को सम्मिलित किया जा सकता है।

(5) आविष्कारों और वैज्ञानिक खोजों पर प्रकाश डालने वाली विषय सामग्री हो।

लेकिन इस बात का ध्यान अवश्य ही रखा जाये कि विषय-वस्तु छात्र-छात्राओं के मानसिक स्तर के अनुकूल हो।

द्रुतपाठ (Extensive Reading) से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण बातें जो निम्न हैं –

(1) विस्तृत पाठ (द्रुत पाठ) का अध्ययन स्थूल होता है न कि सूक्ष्म।

(2) द्रुत पाठ का सम्बन्ध नई शब्दावली के सीखने से न होकर बल्कि पहले अर्जित शब्दावली के संक्रिय उपयोग से होता है।

(3) द्रुत पाठ में सस्वर वाचन की आवश्यकता नहीं होती क्यों कि उच्चारण पर किसी प्रकार का ध्यान नहीं दिया जाता और केवल विषय सामग्री के अर्थ बोध का ध्यान रखा जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(4) इस प्रकार के वाचन या पाठ में व्याकरण के नियमों एवं रचना आदि पर भी ध्यान नहीं दिया जाता है।

(5) द्रुत पाठ में या विस्तृत पाठ में अर्थ ग्रहण करते हुए तीव्र गति से वाचन पर ही बल दिया जाता है।

द्रुत वाचन (विस्तृत वाचन) में शिक्षक की भूमिका

I. द्रुत वाचन सही ढंग से मौन वाचन के अन्तर्गत ही सम्भव हो सकता है। इसके लिये शिक्षक को समय का ध्यान रखना चाहिये ताकि वह यह जान सके कि छात्र-छात्राएं तीव्र गति से वाचन कर रहे हैं या नहीं।

II. शिक्षक को बीच-बीच में या द्रुत पाठ के अन्त में छात्र-छात्राओं से प्रश्न अवश्य पूछने चाहियें ताकि वे सतर्क रहें।

III. विस्तृत वाचन (द्रुत वाचन) में किसी प्रकार की छात्र-छात्राएं कठिनाई का अनुभव करें तो शिक्षक को उन कठिनाईयों को अवश्य ही दूर करना चाहिये।

IV. शिक्षक को चाहिये कि द्रुत वाचन के माध्यम से उन्हीं पाठों को पढ़ाये जो सरल एवं सुगम हों।

शैक्षणिक दृष्टि से वाचन की उपयोगिता

किसी भी तरह का कोई भी वाचन हो उसके लिये कोई भी नियम का बनाना सम्भव नहीं है। नियम बनाने का प्रयास भी नहीं करना चाहिये। जहां जिस वाचन की आवश्यकता हो वहीं पर उसका अवश्य ही प्रयोग होना चाहिये। इस दृष्टि से देखा जाये तो छोटी कक्षाओं में जितनी सस्वर वाचन की आवश्यकता होती है उतनी उच्च कक्षाओं में नहीं होती। क्योंकि उच्च कक्षाओं में पहुंचने तक छात्र-छात्राओं को उच्चारण का पर्याप्त रूप से अभ्यास हो चुका होता है। यहां पर ध्यान देने की एक बात यह भी है कि जिन शिक्षकों का अपना वाचन शुद्ध नहीं होता उनको आदर्श वाचन नहीं करना चाहिये क्योंकि इसका प्रभाव छोटे बालकों पर विपरीत ही पड़ेगा। अनुकरण वाचन के लिये भी किसी प्रकार का ऐसा नियम नहीं बनाना चाहिये कि कितनी विषय सामग्री का वाचन और कितने छात्र-छात्राओं से करवाना चाहिये। जो छात्र-छात्राएं शुद्ध वाचन करते हैं उनसे अल्प सामग्री का वाचन करवाना चाहिये। जो छात्र-छात्राएं वाचन में अधिक अशुद्धियां करते हैं उन से पर्याप्त विषय सामग्री का वाचन कराया जाना चाहिये। शिक्षक को वाचन किसी भी प्रकार के क्रम के अनुसार नहीं कराना चाहिये। सरल पाठों के लिये विस्तृत वाचन और पाठ्य पुस्तक के लिये गहन वाचन (सूक्ष्म वाचन) कराना उचित रहता है। सूक्ष्म अध्ययन के पाठों का आदर्श पाठ पहले शिक्षक को स्वयं करना चाहिये और फिर बाद में अनुकरण पाठ छात्र-छात्राओं से कराना चाहिये। दूसरों के लिये बिना वाधित हुए मौन पाठ का ... है। सभी सार्वजनिक स्थानों पर मौन पाठ ही किया जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by MoE-IKS

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अभ्यास के प्रश्न

1. वाचन किसे कहते हैं ? वाचन/पठन के प्रमुख रूपों का उल्लेख करते हुए वाचन का महत्त्व बतायें।
2. हिन्दी में उच्चारण दोष के कौन-कौन से कारण हैं ? इनको दूर करने के उपाय सुझाईये।
3. वाचन के कितने प्रकार हैं ? मौन पाठ की शिक्षा भावी जीवन के लिये किस प्रकार से कारगर है ? विस्तार से स्पष्ट कीजिए।
4. वाचन दोष के कौन-कौन से मुख्य कारण हैं और इनका निराकरण कैसे किया जा सकता है ? स्पष्ट कीजिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3

वाचन के दोष और उनका निराकरण
(Defects of Reading and their Cure)

बालकों में वाचन सम्बन्धी कई दोष पाए जाते हैं। वे जो वाचन सम्बन्धी अशुद्धि करते हैं उनमें सबसे प्रमुख कारण बच्चों के उच्चारण का अशुद्ध होना है। अशुद्ध उच्चारण के बहुत से कारण होते हैं जो निम्नलिखित हैं–

अशुद्ध उच्चारण के कारण – प्राय: बच्चे अशुद्ध उच्चारण या तो वातावरण के प्रभाव से सीखते हैं या जिन व्यक्तियों के सम्पर्क में आते हैं उनके अशुद्ध उच्चारण के प्रभाव के कारण अशुद्ध उच्चारण करने लगते हैं। अशुद्ध उच्चारण के कारणों को दो वर्गों में बाँट सकते हैं–

I. **व्यक्तिगत कारण** (Individuals reasons)— छात्र-छात्राओं में कई प्रकार की कमियाँ उसके उच्चारण पर प्रभाव डालती हैं- उदाहरण के लिए –

(क) शारीरिक कमी – प्रत्येक व्यक्ति के शरीर में एक ध्वनि यन्त्र होता है जिसकी सहायता से वह बोलता है। कभी कभी ध्वनि यन्त्र में कोई कमी आने के कारण व्यक्ति अशुद्ध उच्चारण करता है। कुछ बच्चे हकलाते हैं, कुछ नाक से बोलते हैं। इन कमियों को चिकित्सा के द्वारा दूर किया जा सकता है।

(ख) प्रयत्न लाघव – कई बार बच्चे शब्दों का उच्चारण अधूरा करते हैं जैसे मास्टर जी को 'मासजी' दादा जी को दादाई बोलना। बालक को पहले शब्दों के शुद्ध रूप का ज्ञान नहीं होता और फिर अशुद्ध उच्चारण की आदत पड़ जाती है। शिक्षक ऐसे अशुद्ध उच्चारणों को आसानी से शुद्ध करवा सकता है।

(ग) अज्ञान – कभी कभी छात्र-छात्राएं अज्ञानता के कारण अशुद्ध उच्चारण करते हैं। जैसे 'प्यास' को 'पिलास' बोलना। शिक्षक बच्चों को ऐसे शब्दों का शुद्ध उच्चारण बता कर उनमें सुधार कर सकता है।

II. **वातावरणीय प्रभाव** (Environmental effect)— कभी कभी छाभ-छात्राओं को वातावरण में ऐसे व्यक्तियों के सम्पर्क में आना पड़ता है ऐसे व्यक्तियों के अशुद्ध उच्चारण से बच्चे भी अशुद्ध उच्चारण करने लगते हैं। इसके निम्न कारण हैं –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(क) बोली का प्रभाव – बालक जिस वातावरण में रहता है उस जगह की बोली का उसके उच्चारण पर प्रभाव पड़ता है। पंजाबी, भाषी 'ण' का न उच्चरित करते हैं। कुछ लोग 'स्कूल' को सकूल बोलते हैं। कई क्षेत्रों में अध्यापक 'क' 'ग' 'घ' को कै, खै, गै, घै उच्चारण करते हैं अत: बालक सदैव के लिए अशुद्ध उच्चारण सीख लेते हैं। शिक्षक स्वयं शुद्ध उच्चारण करके बच्चों के अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध करा सकता है।

(ख) सामाजिक प्रभाव – छात्र-छात्राएं घर और समाज के अनुपयुक्त वातावरण के कारण अशुद्ध उच्चारण सीख लेते हैं। उदाहण के लिए कई व्यक्ति 'श' के स्थान पर 'स' और 'स' के स्थान पर 'श' का उच्चारण करते हैं जैसे 'शशी' की जगह 'ससी', समस्या की जगह 'शमस्या'। ऐसे व्यक्तियों के सम्पर्क में आकर बच्चा भी अशुद्ध उच्चारण सीख लेता है। ऐसी स्थिति में अध्यापक को बच्चों को शुद्ध उच्चारण का ज्ञान देकर शुद्ध बोलने का अभ्यास कराना चाहिए।

III. **उचित शिक्षा का अभाव –** कभी-कभी छात्र-छात्राओं को शुद्ध उच्चारण की सही शिक्षा नहीं मिलती। कई बार शिक्षक भी इस ओर ध्यान नहीं देते कि बालक अशुद्ध उच्चारण कर रहा है। शिक्षक लापरवाही बिना किए इस बात पर ध्यान दे कि बच्चा जो अशुद्ध उच्चारण कर रहा है उसे शुद्ध करवाये।

शिक्षक को बच्चों के अशुद्ध उच्चारण के कारणों एवं दोषों का पता लगाना चाहिए और फिर उन्हें शुद्ध करने का प्रयत्न करना चाहिए।

वाचन दोष के अन्य कारण

अशुद्ध उच्चारण के अतिरिक्त कुछ और भी कारण हैं जिनसे वाचन में दोष आते हैं। वे कारण निम्नलिखित हैं :-

I. वाचन की अनुचित विधियां जैसे पुस्तक अधिक निकट या अधिक दूर रखना या झुक कर पढ़ना।
II. उचित गति के साथ न पढ़ना, शब्द को अलग अलग करके धीरे धीरे पढ़ना।
III. दृष्टि दोष का होना जिसके कारण ठीक दिखाई न दे और अशुद्ध पढ़े जैसे 'देखता' को 'देखना' पढ़ना, 'संयम' को 'समय' पढ़ना।
IV. दृष्टि विराम का छोटा होना।
V. भावों के अनुसार ध्वनियों का उत्तार चढ़ाव न होना। प्रवाहपूर्ण न पढ़ना एवं रुक कर पढ़ना।
VI. शब्दों और वाक्यों का अर्थ न समझना।
VII. मौन वाचन न कर सकना।
VIII. श्रवण दोष के कारण अक्षरों की ध्वनियों को ठीक से न सुनने के कारण ध्वनियों के शुद्ध उच्चारण का ज्ञान न होना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

IX. जिह्वा तथा मुख का ठीक ढंग से संचालन न करने के कारण वाणी दोष के कारण वाचन में दोष आ जाता है।

X. बुद्धि का अल्प विकास मानसिक कारण है जिससे पढ़ने में अरूचि होती है जिससे वाचन में कमी आ जाती है।

XI. परिस्थिति दोष जैसे विद्यालय से कई मास के लिए अनुपस्थित होने के कारण वाचन का अभ्यास न रहना, घर की बुरी परिस्थितियां, कक्षा में अनुत्तीर्ण होने के कारण पढ़ने में रूचि न रहना, पढ़ाई में पीछे रह जाने पर, शिक्षक का ध्यान न देना।

XII. संवेगात्मक दोष जैसे अध्यापक, माता पिता का भय, पढ़ते समय अशुद्धियों के कारण संकोच, अनुत्तीर्ण होने का भय, असफलता के कारण निराशा, पढ़ने में मन न लगना।

XIII. कई बार बच्चों को अशुद्ध उच्चारण की आदत पड़ जाती है, फिर पढ़ने में वे अशुद्धियां करते हैं।

वाचन के दोष निराकरण के उपाय

वाचन के दोषों को दूर करने के लिए प्रारम्भ से ही ध्यान देना चाहिए। यदि कोई बच्चा वाचन करते समय अशुद्ध उच्चारण करता है तो उसके उच्चारण को शुद्ध करना चाहिए।

उच्चारण दोष निराकरण

I. **उच्चारण अवयव की चिकित्सा** – यदि बच्चे के किसी उच्चारण अंग में कोई विकार है तो उसकी चिकित्सा करानी चाहिए।

II. **मानसिक सन्तुलन** – जो छात्र मानसिक सन्तुलन के अभाव में अशुद्ध उच्चारण करते हैं उनके साथ प्रेम एवं सहानुभूति का व्यवहार करना चाहिए तब उनमें धीरे धीरे आत्म विश्वास बढ़ता है और वे शुद्ध उच्चारण करने लगते हैं।

III. **शुद्ध बोलने वालों की संगत**– बच्चों को शुद्ध बोलने वालों की संगत में रखा जाये तब बच्चे शुद्ध उच्चारण सीखेंगे। ग्रामोफोन, रेडियो, टेलीविजन द्वारा शुद्ध उच्चारण की शिक्षा दी जा सकती है।

IV. **ध्वनि तत्त्व का ज्ञान** – सर्वप्रथम अध्यापक को चाहिए कि वह बच्चों को वर्णों के उच्चारण स्थान का ज्ञान दें अर्थात् मुख के जिस स्थान से अक्षर बोला जाता है वह उस अक्षर का उच्चारण स्थान है। बच्चों को भाषा के ध्वनि तत्त्वों को समझा देना चाहिए।

V. उच्चारण सम्बन्धी नियमों का विस्तार से बच्चों को ज्ञान देना चाहिए।

VI. **बल, विराम तथा सुस्वर का अभ्यास** – बोलते और पढ़ते समय किस शब्द पर बल देना, कहाँ विराम करना है और सुस्वर कैसे पढ़ना है इन सब बातों का ज्ञान बच्चों को देना चाहिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

VII. **उच्चारण प्रतियोगिताएं** — कक्षा में उच्चारण प्रतियोगिताएं रखी जायें। कक्षा में कई टोलियाँ बना दी जायें। एक टोली चाक बोर्ड पर शब्द लिखे और दूसरी टोली उस शब्द का उच्चारण करे। इस प्रकार अशुद्ध उच्चारण का सही करवाया जा सकता है।

वाचन दोष निराकरण के अन्य उपाय

I. प्रत्येक छात्र के वाचन की कठिनाईयों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना। यदि किसी छात्र की दृष्टि कमजोर है तो उसे चश्मा लगवाने के लिए कहना।

II. प्रत्येक मन्द बुद्धि छात्रों के साथ शिक्षक प्रेम एवं सहानुभूति का व्यवहार करें, उसे दण्ड न दें वरन् उसके वाचन का शान्त भाव से सुधारे, उसकी अशुद्धियों एवं वाचन की कठिनाईयों को दूर करें।

III. यदि किसी छात्र में संवेगात्मक दोष है जैसे मन में किसी प्रकार का भय है तो उसको दूर करना, वाचन में रूचि बढ़ाना।

IV. शिक्षक उसी शिक्षण विधि को अपनाए जो छात्र के स्तर के अनुसार हो।

V. पहले अक्षर ज्ञान करवाना, फिर मात्राओं का और फिर संयुक्त अक्षरों का ज्ञान करवाना।

VI. फ्लैश कार्ड के द्वारा शब्दों की सामूहिक पहचान करवाना।

VII. कविता याद करवाना, फिर उसी कविता को पढ़वाना इससे छात्र में आत्मविश्वास बढ़ेगा।

VIII. कहानी मौखिक रूप से सुनाना और फिर बच्चों से उसी कहानी का वाचन करवाना।

IX. कठिन ध्वनियों का अभ्यास करवाना। गीत गवाना।

X. अनुच्छेद का बार-बार पढ़वाना जब तक उचित गति और प्रवाह से न पढ़ना आ जाये।

XI. छोटे-छोटे वाक्यों का वाचन करवायें और उन वाक्यों का प्रश्नों द्वारा अर्थ निकलवाना।

अभ्यास के प्रश्न

1. वाचन में दोष किन कारणों से होते हैं ? स्पष्ट कीजिये।
2. वाचन के दोषों को दूर करने के लिये उपाय सुझाईये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4

सुलेख के गुण
(Quality of Good Hand-Writing)

पठन और लेखन का पारस्परिक सम्बन्ध है। पठन लेखन की अपेक्षा सरल होता है। इस लिये पहले बालकों को पढ़ना सिखाया जाता है। लिखना सिखाना उसी समय उचित होता है जब बालकों की मासपेशियां पर्याप्त रूप से मज़बूत हो जायें अर्थात् उनका अपनी मास-पेशियों पर अधिकार हो जाये। लिखने की पहली सीढ़ी या सोपान चित्रकारी है। बालक प्रारम्भ में चित्रकारी करने के लिये बहुत उत्सुक रहते हैं। प्रारम्भ में शिक्षक को चित्रकारी करने के लिये बालकों को पूर्ण स्वतन्त्रता देनी चाहिये। बालकों को चाकबोर्ड पर लिखने के लिये प्रेरित करने से पहले स्वयं बड़े-बड़े अक्षर चाकबोर्ड पर लिखने चाहियें ताकि छोटे बालक उनको देखकर बड़े-बड़े चक्र बनाना प्रारम्भ कर दें। जब वे ऐसा करने लगेंगे तो वे अक्षरों की बनावट से परिचित हो जायेंगे और फिर निरन्तर अभ्यास से लेखन कौशल का धीरे-धीरे विकास होगा। जैसे-जैसे वे दक्षता प्राप्त करें वैसे-वैसे शिक्षक को चाहिये कि वो बालकों का ध्यान उनकी गलतियों की ओर आकर्षित करे और उनको बताये कि अक्षर केवल सरलता से पढ़े ही न जायें बल्कि आकर्षक भी होने चाहियें। शिक्षक को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि वह स्वयं जो कुछ भी लिखता हो वो आदर्श रूप में छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत होना चाहिये अर्थात् शिक्षक का स्वयं का लेख सुन्दर होना चाहिये। अगर शिक्षक का स्वयं का लेख सुन्दर होगा तो वह छात्र-छात्राओं को प्रभावित करके सुन्दर लेख अर्थात सुलेख लिखने के लिये प्रेरित कर सकेगा।

शिक्षक को सुलेख की शिक्षा देने हेतु सात या आठ प्रकार के लेख के नमूनों का संग्रह करना चाहिये और फिर बालकों को बताना चाहिये कि इनमें से कौन सा नमूना सर्वोत्तम है और कौन सा नमूना बिल्कुल निम्न स्तर का है।

हस्तलेख की त्रुटियां
(Demerits of Handwriting)

प्राय: छात्र-छात्राएं लिखने में निम्न त्रुटियां करते हैं-

(I) पंक्ति से हटकर लिखना—सीधी रेखा में न लिखकर ऊपर नीचे लिखना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(II) अक्षरों की ऊंचाई समान न होना– किसी अक्षर की ऊंचाई कम और किसी अक्षर की ऊंचाई का अधिक होना।

(III) अक्षरों की बनावट का एक जैसा न होना–कुछ अक्षर छोटे लिखने और कुछ बड़ा होना और इसी प्रकार मात्राओं की ऊंचाई में फर्क होने से शब्दों की बनावट बिगड़ जाती है।

(IV) अज्ञानता– ऐसा भी देखा जाता है कि जब बालकों को अक्षर का ज्ञान नहीं होता है तो वे कुछ ही लिख देते हैं और इसका लिपि की शुद्धता पर कुप्रभाव पड़ता है।

(V) अक्षरों की ऊपर की रेखा का सही न होना– अक्षरों की शीर्ष की रेखा का बीच-बीच में से टूटा होना लिखने का अनुचित ढंग होता है। टुकड़ों-टुकड़ों में रेखा खींचने से समय भी अधिक लगता और लेख की सुन्दरता पर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

(VI) समान आकार की रेखाओं का न होना–कलम जब ठीक प्रकार न बनी हुई हो तो कहीं तो रेखा की मोटाई अधिक होती है और कहीं छोटी होती है। कलम के पकड़ने के ढंग से भी रेखाएं एक जैसी नहीं रहतीं और इसका प्रभाव सुलेख पर पड़ता है।

(VII) पूर्ण शब्द का एक बार में न लिखा जाना– जब छात्र-छात्राएं पूरे शब्द को एक बार में न लिखकर बीच में स्थान छोड़ते हैं तो अक्षर बिखरे-बिखरे से लगेंगे और लिखने में समय अधिक लगेगा। वाक्य भी निरर्थक से लगेंगे।

(VIII) अक्षरों में फीकापन होना– अक्षर एक जैसी स्याही से लिखे हुए हों और उनमें कहीं पर भी फीकापन दिखाई नहीं देना चाहिये। अगर अक्षरों में फीकापन दिखाई देता तो लेख सुन्दर नहीं लगेगा और पढ़ने वाले को भी पढ़ने में कठिनाई होगी।

सुलेख

लेखन-शिक्षण उद्देश्य केवल लिखाई सिखाने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भी देखा जाये कि बालक सुन्दर ढंग से लिखें। प्रतिदिन के व्यवहार और परीक्षा में विशेषतः सुलेख का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। लेख के देखते ही परीक्षक के मन में परीक्षार्थी के लिये अनुकूल या प्रतिकूल भाव जागृत होते हैं। अतः सुन्दर लिखना विशेष गुण है। गांधी जी के अनुसार, "सुन्दर लेख के बिना शिक्षा अपूर्ण है।" सुन्दर लिखना अभ्यास से सम्भव होता है। लिखते समय निम्न बातों को अवश्य ही ध्यान में रखें।

(I) कभी भी लिखने में जल्दबाजी से काम न लें।

(II) लिखते समय हाथ को ढीला न छोड़े। ऐसा करने से अक्षरों में फूहड़पन आ जाता है अर्थात् भद्दे लगने लगते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(III) प्रत्येक अक्षर को पूरा लिखना चाहिये और उसके वास्तविक स्वरूप का
भी होना चाहिये।

(IV) यदि लेख सुन्दर नहीं है तो सुलेख पुस्तिका पर अच्छी कलम से अभ्यास
चाहिये।

(V) सुविधा के अनुसार छात्र-छात्राओं के लिये यह निश्चित करना आवश्यक
है कि अक्षर बाईं ओर झुके हुए लिखने हैं या दाईं ओर झुके हुए लिखने
फिर उसी ओर लिखने का अभ्यास बना रहना चाहिये। दोनों ओर की
झुके अक्षरों का लिखना उचित नहीं होता।

(VI) खुरदरे और घटिया कागज़ का प्रयोग कदापि भी न करें। इससे अच्छा लेख
असुन्दर लगने लगता है।

श्री मैक्की और श्री मैनरी ने अपने लेख में सुलेख शिक्षण से सम्बन्धित भाषा
शिक्षकों को दिये हैं जो निम्न हैं–

(I) लिखना सिखाना तभी आरम्भ करें, जब छात्र-छात्राओं की आवश्यकता
और वे लिखने की इच्छा भी प्रकट करें।

(II) लिखाना उन्हीं पूर्ण शब्दों से आरम्भ करें जिनको छात्र लिखना चाहता हो

(III) लिखने का क्रम सरल से कठिन शब्दों की ओर हो।

(IV) छात्र-छात्राओं का आंखों को ऐसा अभ्यास कराया जाये कि वे अक्षरों की
रेखा का भली-भांति अध्ययन कर लें।

(V) लिखने के प्रारम्भ में बड़े और दूर-दूर लिखे अक्षरों से परिचित करायें।
क्रमशः अक्षरों को पास लायें और आकार भी छोटा करें।

(VI) जिन वस्तुओं पर लिखा जाये उनकी सूची का क्रम यह है–जमीन पर
का फेरना, चाकबोर्ड पर चाक से, फिर स्लेट पर चिकनी पैन्सिल से कागज
और अन्त में स्याही और कलम के प्रयोग से।

(VII) हमेशा सही ढंग से बैठने और कलम पकड़ने पर ध्यान दिया जाये।

(VIII) लिखने की अवधि कम हो।

(IX) छात्र-छात्राओं की मित्रता को सदैव ध्यान में रखें।

(X) लिखने की अवधि में वही लिखने का कार्य कराया जाये जिसकी आवश्य
बाद के कालांश में पड़ सके।

(XI) लिखने में तेजी धीरे-धीरे लायें। प्राम्भ में तीव्र गति से लिखना उचित
रहता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(XII) छात्र-छात्राओं की रुचियों को ध्यान में रखते हुए, कक्षा में रुचिकर, कठिन शब्दों और अक्षरों की पुनरावृत्ति करायें।

सुलेख के गुण
(Quality of Good Handwriting)

सुलेख में कई गुणों का होना आवश्यक है। इसके लिये प्रारम्भ में बालकों को कलम से अभ्यास कराया जाये। कलम पर हाथ सध जाने के बाद वे पैन पैन्सिल से लिख सकते हैं। जो छात्र आरम्भ में पैन से लिखना शुरु कर देते हैं वे केवल लिखाई ही सीख सकते हैं, परन्तु सुन्दर लेख नहीं। कुछ अन्य बातें जो सुलेख के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं वे इस प्रकार हैं:-

(I) उपयुक्त वातावरण–लिखने के लिये उपयुक्त वातावरण का होना अत्यन्त आवश्यक है। कहने का अभिप्राय यह है कि बालक को किसी भी समय और किसी भी स्थिति में लिखना नहीं सिखाया जा सकता। छात्रों की रुचि को अवश्य ही ध्यान में रखना चाहिये।

(2) बैठने का आसन–बैठने के आसन का सम्बन्ध पढ़ने की अपेक्षा लिखने से अधिक है। लिखने की स्थिति में बैठने का आसन उचित नहीं है तो इसका लिखाई पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। उचित ढंग से न बैठने के कारण लिखाई पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके साथ ही साथ बालक के स्वास्थ्य पर भी कुप्रभाव पड़ता है। प्राय: देखा गया है कि लिखते समय उचित आसन से न बैठने पर लिखाई तो बिगड़ती ही है और झुककर बैठने वालों की रीढ़ में दर्द होने लगता है। बालक पढ़कर लिखता है और बहुत पास से पढ़कर लिखता है तो कुछ समय बीतने पर आंखों से कम दिखाई देने लगता है। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए लिखने समय, लेखन पुस्तिका तथा आंखों के बीच कम से कम 12 इंच की दूरी अवश्य हो। रीढ़ की हड्डी सीधी-सीधी रहनी चाहिये। लिखने के लिये डैस्क और कुर्सी का उपयोग अधिक उपयुक्त रहता है, पैरों को जमीन पर टिकाना चाहिये और कलम को पुस्तिका अभ्यास पर टिकायें।

(3) लेखन सामग्री–जहां तक लेखन की सुन्दरता का सम्बन्ध है वह केवल अच्छी कलम और अच्छे पैन से ही नहीं बल्कि यह भी देखना आवश्यक होता है कि जिस कागज़ या कापी पर पर लिख रहा है वो इतना कमज़ोर तो नहीं कि लिखते-लिखते फट जाता है या उस पर स्याही फैलती है। प्रारम्भ में मोटी कलम से पट्टी पर लिखवाना चाहिये और फिर बाद में अच्छी कलम और अच्छे कागज़ का प्रयोग करें। माध्यमिक कक्षाओं से पूर्व होल्डर तथा कागज का प्रयोग उचित रहता है। पैन से लिखना विश्वविद्यालय स्तर पर ही होना चाहिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(4) अक्षरों की बनावट–अक्षरों की बनावट सुलेख का आन्तरिक गुण है। अक्षरों की बनावट को सुलेख का आधार बताया गया है। बालकों का जब हाथ लिखने में सध जाता है तो बालकों में सुन्दर एवं सुडौल अक्षर लिखने की प्रवृत्ति का विकास करना चाहिये। सुन्दर और सुडौल अक्षर लिखवाने के लिये बालकों में तीन आदतों का डालना आवश्यक है। ये निम्न हैं–

(I) अक्षरों के भाग (अंग) ठीक अनुपात में हों। अक्षर न तो बहुत बड़े हों और न बहुत छोटे हों।

(II) शब्दों के विभिन्न अक्षरों तथा वाक्यों के विभिन्न शब्दों में उचित फासला (अन्तर) हो।

(III) लिखावट में तिरछापन न हो और लिखने की लाईन में भी तिरछापन न हो।

इनके अतिरिक्त सुलेख-कौशल के लिये

(क) अनुलिपि (Caligraphy),

(ख) प्रतिलिपि (Copying) और

(ग) सुलिपि मापदण्ड (Handwriting Scale) का प्रयोग किया जा सकता है।

अनुलिपि पुस्तकों में आदर्श रूप में सुडौल और सुन्दर अक्षर लिखे रहते हैं। छात्र उन्हीं का अनुकरण करके पूरे पृष्ठ को भरता है। किसी भाग या अंश को पुस्तक में ज्यों का त्यों उतार देना प्रतिलिपि कहलाता है। तीसरा तरीका या उपाय है कि सुलेख के कुछ नमूने कक्षा में बालकों के सामने रख दिये जाने चाहियें। बालक जिसे अच्छा समझेंगे प्रतिदिन उसका ही अभ्यास करेंगे। इसी को सुलिपि मापदण्ड कहा जाता है।

सुलेख मापक

सुलेख मापक एक ऐसा मानदण्ड होता है जो छात्र-छात्राओं व अध्यापकों के लिए एक जांच करने की कसौटी प्रस्तुत करता है, जिसके फलस्वरूप निर्णायों में फेर-बदल की किसी प्रकार की कोई गुजांईश (सम्भावना) नहीं होती। मापक की सहायता से छात्र-छात्राओं के सामने सुलेख का आदर्श नमूना रहता है और वे अपने सुलेख को आदर्श के समान बनाने का प्रयास करते हैं।

उपरोक्त कथन से ज्ञात होता है कि सुलेख मापक का भाषा-शिक्षण के लेखन कौशल में बहुत महत्त्व है।

सुलेख मापक का महत्त्व निम्न बातों से भी है–

(I) इसके माध्यम से विभिन्न स्कूलों के विद्यार्थीयों में लेख की तुलना सरल होती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(II) विभिन्न स्कूलों के लेखन स्तर में एकरूपता लाई जा सकती है।

(III) विभिन्न सुलेखों का सही ढंग से मूल्यांकन किया जा सकता है।

(IV) इसकी सहायता से छात्र-छात्राओं की प्रगति का लेखा जोखा रखा जा सकता है जिससे छात्र, शिक्षक और अभिभावकों को भी इस बात का पता चल जाता है कि लेख में किस सीमा तक सुधार हुआ है और इसको सर्वोत्तम लेख की श्रेणी में ले जाने के लिये कितना कुछ करना शेष है।

(V) इसके द्वारा मूल्यांकन करने से अधिक स्पष्टता और निश्चितता आ जाती है। इसके अभाव में शिक्षक आपनी धारणा में स्थिरता नहीं ला पाते और मूल्यांकन करने में उनको कठिनाई का अनुभव होता है। लेकिन मापक से वस्तुनिष्ठता बनी रहती है।

अभ्यास के प्रश्न

1. सुलेख का लेखन दृष्टि से क्या महत्त्व है ? सुलेख में कौन-कौन से गुण होने चाहियें ?
2. लेख सुलेख किन कारणों के कारण नहीं बन पाता। कारणों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
3. लेख को सुलेख बनाने के लिये किन-किन उपायों को ध्यान में रखना चाहिये? विस्तार से व्याख्या कीजिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5

लेखन कौशल में अशुद्धियां व सुधार (निराकरण)
(Defects in Writing Skill and their Improvement)

लेखन-शिक्षण (Teaching of Writing)— मौखिक अभिव्यक्ति को लिपिबद्ध करना लिखित अभिव्यक्ति कही जाती है। लिपि का ज्ञान प्राप्त करने के बाद भाषा के लिखित रूप का प्रयोग कर मनुष्य अपने भावों और विचारों को लेखन के माध्यम से स्था रूप प्रदान करता है। साहित्य के संरक्षक एवं समृद्धि का मुख्य आधार लिखित अभिव्यक्ति ही है।

वाचन शिक्षण से ही भाषा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती। वाचन के बाद लेखन का शिक्षण भी अवश्य होना चाहिये। लेखन-शिक्षण के बारे में विद्वानों के विभिन्न मत हैं। अधिकतर विद्वान तो यही मानते हैं कि लिखने से पहले पढ़ना सिखाना चाहिये। लेखन-शिक्षण से सम्बन्धित तीन मत हैं जिनका उल्लेख निम्न है-

I. पहला मत तो चह है कि लिखना वाचन से पहले सिखाना चाहिये क्योंकि लिखना पढ़ने की अपेक्षा सरल है। इस मत की समर्थक डॉ० मैडम माण्टेसरी हैं। उन्होंने अपनी शिक्षण विधि में लिखने का प्रावधान पढ़ने से पहले किया है।

II. कुछ विद्वानों का कहना यह है कि वाचन के बाद ही लेखन की शिक्षा दी जानी चाहिये।

III. इस मत के मानने वालों का कहना है कि पठन और लेखन की शिक्षा साथ-साथ चलनी चाहिये।

पढ़ने से पूर्व लेखन की शिक्षा देना माण्टेसरी का व्यक्तिगत विचार है। इसको न तो व्यावहारिक माना गया है और न ही मनोवैज्ञानिक माना गया है। तीसरे मत के अनुसार पढ़ाई और लिखाई करने की बात साथ-साथ कही गई है, इसके बारे में हम गहनता से विचार करें तो दो मानसिक क्रियाएं एक साथ नहीं चल सकतीं। उदाहरण के रूप में दो व्यक्तियों से हम एक साथ बात नहीं कर सकते क्यों कि एक साथ न तो उनकी बात समझी जा सकती और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

न ही एक साथ दोनों की बातों के उत्तर दिये जा सकते हैं। इसी प्रकार एक ही क्षणों में पठन और लेखन का कार्य सम्भव नहीं हो सकता। कुछ न कुछ दोनों में समय का अन्तर अवश्य ही होना चाहिये चाहे वह बिल्कुल ही कम हो। इस लिये पहले मत को ही स्वीकार किया जाता है कि पठन की क्रिया लेखन क्रिया से पहले ही होनी चाहिये क्योंकि ऐसा करना व्यावहारिक भी है और मनोवैज्ञानिक भी है।

लेखन का महत्त्व
(Importance of Writing)

शिक्षण का भाषा-शिक्षण में अत्यधिक महत्त्व है। इस महत्त्व की स्पष्टता निम्न बातों से भली भांति हो जाती है-

1. भाषा शिक्षण के उद्देश्यों में से एक उद्देश्य अभिव्यक्ति है। अभिव्यक्ति के दो ढंग हैं-बोलकर या लिखकर। लिखित अभव्यिक्ति तभी सम्भव है जब लेखन क्षमता हो।
2. किसी भी भाषा या विषय में पूर्ण दक्षता प्राप्त करने के लिये पढ़ना और लिखना दोनों ही अवश्यक हैं।
3. अपने भावों और विचारों को मूर्त रूप देने के लिये और उनको दूर तक पहुंचाने के लिये लेखन की आवश्यकता होती है । उदाहरण के रूप में पत्र, लेख या पुस्तक लिखकर विचारों को दूसरों तक पहुंचाना।
4. साहित्य एवं संस्कृति की सुरक्षा और विकास के लिये भाषा का लिखित रूप ही काम में आता है।
5. वक्ता के अभाव में किसी के विचारों से परिचित होने के लिये भाषा के लिखित रूप का होना आवश्यक है।
6. भाषा में संशोधन और स्थायित्व लेखन के द्वारा ही सम्भव है।
7. विभिन्न व्यक्तियों या राष्ट्रों में परस्पर अनुबन्ध और मैत्री लिखित भाषा के माध्यम से ही सम्भव हो सकती है।
8. लेखन में मस्तिष्क और उंगलियों का कार्य एक साथ होता है और इस प्रकार नियमित व्यायाम से दोनों पुष्ट हो जाते हैं।

लेखन-शिक्षण के उद्देश्य
(Objectives of Teaching Writing)

लेखन-शिक्षण के कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्य निम्न हैं-

1. लेखन की शिक्षा ग्रहण किये हुए विचारों की सफल अभिव्यक्ति है। यदि छात्रों को लेखन की शिक्षा न दी जाये तो वे अपने विचारों को लिखित रूप में अभिव्यक्त नहीं कर सकते।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. भाषा पर पूर्ण अधिकार करने के लिये वाचन और लेखन का समान रूप सीखना अत्यन्त आवश्यक है।
3. छात्र-छात्राएं व्याकरण के नियमों का पालन कहां तक करते हैं, इसकी पर एवं मूल्यांकन लेखन द्वारा ही सम्भव है।
4. इसका महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि हम अपने विचारों और प्राप्त किये ज्ञान को दूसरों तक पहुंचायें।

उपरोक्त सभी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये लेखन-शिक्षण की आवश्यकता है। ये सभी लेखन की शिक्षा के उद्देश्य हैं। अब हमारे समक्ष प्रश्न यह आता है कि ले की शिक्षा किस प्रकार दी जाये और शिक्षा देने हेतु कौन-कौन सी विधियों और साधनों प्रयोग में लाया जाये।

लेखन शिक्षण की विधियां
(Methods of Teaching Writing)

उद्देश्यों को प्राप्त करने और छात्र-छात्राओं को लेखन कला में निपुण करने हेतु विधियां सार्थक, उपयोगी और प्रचलित हैं, उनका उल्लेख यहां किया जा रहा है। लि सिखाने की इन विधियों या विधि को अपनाने से पूर्व इस बात का विशेष रूप से ध्यान जाये कि छात्र-छात्राएं उस विधि में रुचि लेते हों, अर्थात् लिखना सिखाने की मनोवैज्ञानिक और व्यावहारिक हो कि ताकि वे लिखना शीघ्रता से सीख सकें।

I. रेखाओं के द्वारा— प्राय: ऐसा देखा जाता है कि बालक बिना किसी ज्ञा जमीन पर, दीवारों पर या पैंसिल हाथ पड़ जाने पर कागज़ के ऊपर टेढ़ी-सीधी रे खींचते रहते हैं। शुरु में बालक और उसके माता-पिता आदि किसी के लिये भी इन रे का कोई महत्त्व नहीं होता, परन्तु यदि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण किया जाये तो रेखाओं का बड़ा मूल्य है। जो ऐसी रेखाएं खींचने में जितना अधिक भाग लेगा,

||	||	||	||	||	||	||	||
\\	\\	\\	\\	\\	\\	\\	\\
//	//	//	//	//	//	//	//

उसकी मासपेशियां उतनी ही पुष्ट हो जायेंगी और वह उतना ही शीघ्र लिखाई सकेगा। रेखाओं द्वारा लिखना सिखाने में इसी बात को ध्यान में रखा जाता है। पहले बा को सीधी, टेढ़ी रेखाएं खींचना सिखाया जाता है, जैसा ऊपर चित्र में दिखाया गया है।

पुन: वृत्त और अर्द्धवृत्त बनाना बताया जाता है, जैसे–

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

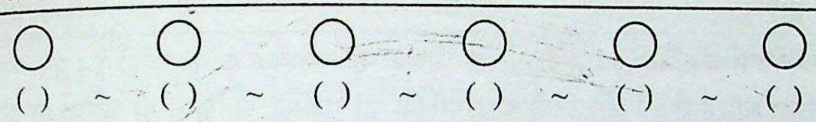

इन्हीं के आधार पर सभी अक्षरों का ज्ञान करा दिया जाता है, जैसे एक पड़ी, एक खड़ी रेखा और एक तिरछी रेखा से र बनता है।

र

इसी प्रकार पड़ी और खड़ी एक वृत्त से ठ बन जाता है।

ठ

इतना सीखने पर बालक अक्षरों के आकार की समानता का स्वतः धीरे-धीरे अभ्यास कर लेते हैं। इस विधि में शिक्षक को एक और ध्यान रखना चाहिये। पहले वह सरल अक्षरों में 'प' 'व', 'त' को ले पुनः इनसे कुछ कठिन 'फ', 'ल' 'झ' आदि को सिखाये और अन्त में सबसे कठिन अक्षरों 'क्ष' 'ज्ञ' 'श्र' आदि की शिक्षा देनी चाहिये। इस विधि का दूसरा नाम 'पेस्टालॉजी' की रचनात्मक विधि भी है।

II. अनुकरण विधि– इस विधि के अनुसार बालक दो प्रकार से अनुकरण करके लिखना सीखता है–

(1) रूपरेखानुकरण द्वारा,

(2) स्वतन्त्र अनुकरण द्वारा।

रूप रेखा अनुकरण में शिक्षक हल्के हाथ से स्लेट या कापी पर अक्षरों की आकृति बना देता है। बालक सधे हुए हाथ से उन्हीं को पुष्ट बना देते हैं। यह बहुत पुरानी विधि है और बहुत से स्थानों पर आज भी प्रचलित है। इस विधि से अक्षर सीखने का अभ्यास करने के लिये विशेष प्रकार की अभ्यास-पुस्तिकाएं भी उपलब्ध होती हैं। इनमें बिन्दुओं द्वारा अक्षरों की आकृतियां बना दी जाती हैं। बालक उन्हीं पर स्याही फेरकर लिखना सीखते हैं जैसे–

प भ व त न र

स्वतन्त्र अनुकरण में शिक्षक अक्षरों को स्लेट या कागज पर लिख देता है। बालक उन अक्षरों का अनुकरण करके अभ्यास कर लेते हैं। स्वतन्त्र अनुकरण के लिये भी अभ्यास-पुस्तिकाएं उपलब्ध होती हैं।

III. मॉण्टेसरी विधि–लिखना सिखाने के लिये यह बड़ी रोचक विधि है। परन्तु अंग्रेज़ी के अक्षर सिखाने के लिये यह विधि जितनी सरल है, हिन्दी के अक्षर सिखाने के लिये उतनी सरल नहीं है। इस विधि के अनुसार शिक्षक किसी मेज पर अक्षरों की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE 2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आकृत्तियां बना देता है। उन्हें बालक शिक्षक की सहायता से काट लेते हैं। पुनः बालक पैंसिल बगैरह से इन आकृतियों को उंगलियों की सहायता से किसी भी कागज पर अंकित कर लेता है। इसमें बालक निम्न तीन बातों का अभ्यास कर सकता है–

(1) लेखनी पकड़ने का अभ्यास–अक्षरों की कटी हुई आकृतियों में बालक जब स्याही या पैंसिल से रंग भरता है तो उसे लेखनी पकड़ने का अभ्यास हो जाता है।

(2) अक्षरों को समझने का अभ्यास–अक्षरों पर उंगली फेरने के साथ-साथ बालक इन अक्षरों को मुंह में भी उच्चरित करता है। बार-बार अभ्यास करने पर वह अक्षरों की ध्वनि को पूर्णतः समझ लेता है।

IV. जेकटॉट विधि–इस विधि के द्वारा शिक्षक किसी भी पठित वाक्य को लिखने के लिये बालकों को दे देता है। बालक उस वाक्य का एक-एक शब्द लिखकर शिक्षक द्वारा लिखित मूल प्रति से मिलाते जाते हैं और अशुद्धियों का संशोधन स्वयं ही करते जाते हैं। जब बालक वाक्य में आये हुए सभी शब्दों को लिखने में समर्थ हो जाते हैं तब शिक्षक बालकों की स्मृति के आधार पर उसी वाक्य को उनसे बिना देखे हुए लिखवाता है। इस प्रकार वे बहुत से वाक्यों की लिखाई का अभ्यास कर लेने के पश्चात् वे स्वयं लिखना सीख जाते हैं।

लेखन-शिक्षण सम्बन्धी आवश्यक बातें

लेखन-शिक्षण की शिक्षा चाहे किसी भी विधि से हो पर कुछ ऐसी आवश्यक बातें हैं, जिन्हें, प्रत्येक शिक्षक को हर परिस्थिति में ध्यान में रखना ही चाहिये। ये बातें निम्न हैं–

(I) बालक जिस समय लिखने में रुचि लें उसी समय उनको लिखने के लिये कहा जाये।

(II) अक्षरों को कठिनाई के क्रम में लिखना सिखाया जाये। प, व, र, भ आदि अर्थात् सबसे सरल अक्षर सबसे पहले तथा क्ष, त्र, ज्ञ आदि सबसे कठिन अक्षर सबसे बाद में लिखवाए जायें। शब्दों और वाक्यों को लिखवाने में भी 'सरल से कठिन की ओर' के नियम का पालन किया जाये।

(III) शुरु में लिखने की गति पर विशेष ध्यान न देकर, अक्षरों, शब्दों और वाक्यों की शुद्धता पर ध्यन दिया जाये।

(IV) आरम्भ में अक्षरों का आकार का यथासम्भव बड़ा हो, तत्पश्चात् धीरे-धीरे करके उनके आकार को छोटा किया जाये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(V) लिखने का कार्य उतनी ही देर तक कराया जाये जितनी देर तक बालक उसमें रुचि लें। लेखन के प्रति उनमें उदासीनता नहीं होनी चाहिये।

(VI) जहां तक सम्भव हो, लेखन का कार्य पढ़े हुए अक्षरों, शब्दों और वाक्यों पर आधारित हो। इससे दो लाभ होते हैं। एक तो बालक पढ़ी हुई बात को अधिक आसानी से लिख सकेंगे। दूसरे, पढ़ी हुई बात का ज्ञान और भी अधिक पुष्ट हो जाता है।

(VII) सभी बालक लिखने का कार्य समान रूप से नहीं कर सकते। इस लिये लिखवाते समय उनकी व्यक्तिगत विभिन्नताओं को अवश्य ही ध्यान में रखा जाये।

अशुद्धियों के प्रकार

भाषा--शिक्षण का लेखन-शिक्षण महत्त्वपूर्ण अंग है। लेखन का शुद्ध होना बहुत आवश्यक है अन्यथा पढ़ने वाले पर इसका उचित प्रभाव नहीं पड़ता। शुद्ध लेखन से तात्पर्य है लेखन सम्बन्धी अशुद्धियों का न होना। शुद्ध लेखन के लिये मुख्य रूप से तीन बातों पर विचार करना बहुत आवश्यक है जो निम्न हैं–

I. अशुद्धियों के प्रकार,

II. अशुद्धियों के कारण और

III. अशुद्धियों का निराकरण।

अशुद्धियों के प्रकार

लेखन में अशुद्धियां कई प्रकार से हो सकती हैं। उनमें से कुछ का उल्लेख निम्न है–

1. पूर्ण वर्ण सम्बन्धी अशुद्धियां–बहुत से छात्र-छात्राएं कुछ वर्णों के उच्चारण भेद को भली भांति नहीं समझते और वे अकसर एक अक्षर के स्थान पर उसी से मिलते जुलते अक्षर को लिख देते हैं। उदाहरण के रूप में–'शर' और 'सर' दोनों का अर्थ एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न है। पूरे वर्ण को कुछ से कुछ लिखकर छात्र-छात्राएं जो अशुद्धियां करते हैं, वे निम्न प्रकार की हैं।

(I) **'ब' और 'व' की अशुद्धियाँ** जैसे-दिवस और दिबस, बालक और वालक आदि।

(II) **'छ' और 'क्ष' की अशुद्धियां** जैसे–'छात्र' और 'क्षात्र', 'क्षमा' और छमा आदि।

(III) **ड और ड़ की अशुद्धियां**–ये भी इसी प्रकार अशुद्धियाँ जैसे-'बड़ा' और 'बडा' 'झाड़ना' और झाडना आदि।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(IV) 'रि' और 'ऋ' की अशुद्धियां–कई बार बालक 'ऋ' के स्थान पर 'रि' लि देते हैं जैसे 'ऋतु' की जगह 'रितु' लिखना।

(V) 'श' और 'ष' की अशुद्धियां–अक्सर विद्यार्थी इस प्रकार की अशुद्धि लिखते हैं जैसे-'दृश्य' के स्तान पर दृष्य, विषय के स्थान पर 'विशय' आदि

(VI) 'ष' और 'ख' की अशुद्धियाँ–जैसे 'वर्षा' की जगह 'बरखा', 'पुरुष' की जगह 'पुरुख' लिखना गलत है पर अब इस प्रकार की अशुद्धियां कम मिल हैं।

(VII) 'ष' और 'स' की अशुद्धियां– जैसे वर्ष की जगह 'वरस', 'शासन' की जगह 'शाषन' लिखना अशुद्ध है।

2. अर्द्धवर्ण सम्बन्धी अशुद्धियां–हिन्दी में पूर्ण वर्ण का जितना महत्त्व है उतना ही आधे वर्ण का भी महत्त्व होता है। बालकों को यदि आधे वर्ण का शुद्ध ज्ञान नहीं होता तो वह अशुद्ध लिखते हैं जैसे-प्रश्न को प्रशन, स्कूल को सकूल लिखना।

इस प्रकार की कुछ अशुद्धियां निम्नलखित हैं–

(I) आधे 'र्' की अशुद्धियाँ–जैसे 'धर्म' कर्म को धरम, करम लिखना अशु है।

(II) 'ऋ' और 'र्' की अशुद्धियाँ–बालक इन दोनों वर्णों के भेद को नहीं सम पाते इसलिए वे इस प्रकार की गलती करते हैं। जैसें–'गृह' को 'ग्र 'पृथक' को 'प्रथक' लिखना।

(III) 'त्र' और 'तृ' की अशुद्धियाँ–इसके कुछ उदाहरण हैं–मातृ को मात्र, 'चि को' 'चितृ' लिखना।

(IV) 'क्ष' और 'कछ' की अशुद्धियाँ–इस प्रकार की अशुद्धियाँ निम्नलिखित हैं नक्षत्र को नक्छत्र, वृक्ष को 'वृक्छ' लिखना।

(V) 'ज्ञ' और 'ग्य' की अशुद्धियाँ–जैसे 'ज्ञान' को 'ग्यान', 'आज्ञा' को 'आ लिखना।

(VI) हलन्त की अशुद्धियाँ–अर्द्ध वर्ण को लिखने के लिये हलन्त का प्रयोग कि जाता है। कई बार अर्द्ध वर्ण को अन्त में आने पर हलन्त ही लगाया जाता जैसे अर्थात्। पश्चात् का पश्चात, सम्यक् का सम्यक लिखना अशुद्ध है।

3. मात्रा और वर्ण सम्बन्धी अशुद्धियाँ–मात्रा और वर्ण से सम्बन्धी कुछ अशुद्धि निम्नलिखित हैं–

I. 'आ' तथा 'वा' की अशुद्धियाँ–जैसे ... लिखते ... हुआ ...

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE 2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

II. **'ई' तथा 'यी' का अशुद्धियां**–अधिकांश विद्यार्थी 'गई' और 'गयी', पढ़ायी और पढ़ाई, लिखाई और लिखायी में अन्तर नहीं समझते और इस प्रकार की अशुद्धियाँ लिखते हैं।

III. **'ए' तथा 'ये' की अशुद्धियाँ**–जैसे गये और गए, पढ़ाये और पढ़ाए आदि।

IV. **'ए' तथा 'ऐ' की अशुद्धियाँ**–प्राय: बच्चे 'ए' के स्थान पर 'ऐ' का या इसके विपरीत प्रयोग लिखते हैं जैसे–'ऐसा' की जगह 'एसा', हुए के स्थान पर हुऐ का प्रयोग अशुद्ध होता है।

4. अनुस्वार सम्बधी अशुद्धियाँ–ये अशुद्धियाँ दो प्रकार की होती हैं–

I. अनुस्वार एवं संयुक्त अक्षर की अशुद्धियां–बच्चे अनुस्वार और संयुक्त अक्षर के अन्तर को नहीं समझ पाते इसलिए इस प्रकार की अशुद्धियाँ लिखते हैं। जैसे–दिनाङ्क और दिनांक, डण्डा और डंडा, चन्दा और चंदा आदि।

II. अनुस्वार और चन्द्र बिन्दु की अशुद्धियाँ– जैसे–हँस को हंस, चाँद को चांद आँख की आंख आदि।

5. लिंगभेद की अशुद्धियाँ–जिन व्यक्तियों की हिन्दी भाषा और ज्ञान नहीं है। जो अहिन्दी भाषा में रहते हैं वे लोग इस प्रकार की अशुद्धियां लिखते हैं जैसे– 'लड़की जा रहा है।' 'छात्रा पढ़ रहा है।' महोदया के स्थान पर महोदय का प्रयोग आदि।

6. वचन की अशुद्धियाँ–जब बच्चों को वचन के नियमों का ज्ञान नहीं होता और एकवचन, बहुवचन में वे अन्तर नहीं करते तब इस प्रकार की अशुद्धियाँ लिखते हैं। जैसे– 'चिड़ियाँ' उड़ रही है। 'लड़के खेल रहा है।' बेटियों के स्थान पर बेटिआँ लिखना अशुद्ध है।

7. विभक्ति सम्बन्धी अशुद्धियाँ–जिन बालकों को विभक्ति का सही ज्ञान नहीं होता वे इस प्रकार की अशुद्धियाँ करते हैं जैसे 'ने' के स्थान पर को का प्रयोग, 'में' के स्थान पर 'से' का प्रयोग आदि।

अशुद्धियों के कारण

बालक जो लिखने में अशुद्धियाँ करते हैं उसके निम्नलिखित कारण होते हैं–

I. अशुद्ध उच्चारण–हिन्दी भाषा बहुत वैज्ञानिक है। इसमें हर अक्षर की ध्वनि अलग होती है। इसमें जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाता है। यदि विद्यार्थी अशुद्ध उच्चारण करेगा तो अशुद्ध ही लिखेगा जैसे श्याम को स्याम लिखना, समस्या को शमस्या लिखना। जो बालक 'श' और 'स' में अन्तर नहीं समझते वे गलत उच्चारण के कारण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अशुद्ध लिखते हैं। यदि अध्यापक का उच्चारण अशुद्ध है तो उसे सुनकर विद्यार्थी भी अशुद्ध लिखते हैं जैसे परीक्षा की जगह परीच्छा, बाहर की जगह बहार लिखना।

II. प्रान्तीय भाषा–अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में प्रान्तीय भाषा के प्रभाव के कारण लिखने में अशुद्धियाँ होती हैं। जैसे बंगला भाषी लोग 'स' को 'श', बोलते हैं, कशमीरी लोग 'भ' को 'ब', 'झ' को 'ज' बोलते हैं। बंगाली भाषी साँप को शाँप, सड़क को शड़क बोलते और हिन्दी में अशुद्ध लिखते हैं। कशमीरी 'भाई' को 'बाई' 'झाड़ू' को 'जाड़ू' लिखते हैं। राजस्थान में जहाँ हिन्दी बोली जाती है वे लोग लघु और दीर्घ मात्राओं की गलती किया करते हैं जैसे, सूक्ति को सुक्ति, 'दुकान' को 'दूकान' लिखते हैं। पंजाब प्रान्त में 'ण' के स्थान पर 'न' का प्रयोग करते हैं जैसे 'परिणाम' के स्थान पर 'परिनाम' 'कारण' के स्थान पर 'कारन' लिखना।

III. असावधानी– कभी-कभी विद्यार्थी शीघ्रता में असावधानी के कारण अशुद्ध लिखते हैं। कभी अक्षर छूट जाता है कभी मात्रा गलत लगा देते हैं। जैसे-'अध्ययन' के स्थान पर 'अध्यन', 'भारतीय' के स्थान पर भारीय, नमक के स्थान पर 'मनक', 'कमल' के स्थान पर 'कलम' लिखना।

IV. उर्दू एवं अन्य भाषाओं का प्रयोग– उर्दू एवं अन्य भाषाओं के प्रभाव से हिन्दी के उच्चारण एवं लिखने में विद्यार्थी अशुद्धियाँ करते हैं। उर्दू के प्रभाव से 'प्रताप' को 'परताप', अंग्रेजी के प्रभाव से 'गुप्त' को 'गुप्ता' लिखते हैं जो अशुद्ध है।

V. मात्राओं का उचित ज्ञान न होना–बालको ह्रस्व एवं दीर्घ मात्राओं का सही ज्ञान नहीं होता। बहुत से शिक्षक भी मात्रा सम्बन्धी अशुद्धियाँ करते हैं ऐसे अध्यापक विद्यार्थियों को मात्राओं का सही ज्ञान, नहीं दे पाते। वे इस प्रकार की अशुद्धियाँ करते हैं-'बीमार' को 'बिमार', 'परीक्षा' को 'परिक्षा', 'चाहता' को चहाता। लिखते हैं।

VI. लिपि का अधूरा ज्ञान– बच्चों को हिन्दी वर्णमाला के सभी अक्षरों की लिपि का पूर्ण ज्ञान नहीं होता इसलिए वे अशुद्ध लिखते हैं। जैसे 'रेफ' की अशुद्धि के कारण बच्चे आशीर्वाद की जगह आर्शीवाद लिखते हैं। बच्चों को यह स्पष्ट नहीं होता कि वे 'रेफ' उच्चारण स्थान से आगे वाले अक्षर पर लगाया जाता है इसलिए वे अशुद्ध लिखते हैं। बच्चों को अनुनासिक और अनुस्वार में अन्तर नहीं पता होता। उन्हें इनका पूर्ण ज्ञान नहीं होता, इसलिए वे 'अहिंसा' को 'अहिन्सा', संसद को 'सन्सद' लिखते हैं। इसी प्रकार बच्चों को अनुस्वार एवं चन्द्रबिन्दु का भी ज्ञान नहीं होता। आजकल ज्यादातर लोग चन्द्रबिन्दु की जगह अनुस्वार का प्रयोग करते हैं परन्तु कई जगह चन्द्रबिन्दु की जगह अनुस्वर का प्रयोग करने से शब्द का अर्थ ही बदल जाता है जैसे हँस को हंस लिखना। संस्कृति के स्थान पर संस्कृति लिखना अशुद्ध है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अशुद्धियों का निराकरण

ऊपरलिखित अशुद्धियों के कारण को पढ़ने के बाद यह आवश्यक हो जाता है कि विद्यार्थियों के लेखन में जो अशुद्धियाँ होती हैं उनका सुधार किया जाना चाहिए। अत: अशुद्धियों के निराकरण के लिए निम्नलिखित बातों को अपनाना चाहिए–

I. शुद्ध उच्चारण की शिक्षा–जैसा पहले लिखा गया है कि हिन्दी भाषा को जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाता है। इसलिए यदि बच्चे शुद्ध उच्चारण करेंगे तो शुद्ध लिखेंगे। अत: अध्यापकों को बच्चों को शुद्ध उच्चारण की शिक्षा देनी चाहिए। शिक्षक विद्यार्थियों को स्वर और व्यंजन के उच्चारण का सही ज्ञान दें।

II. पढ़ने के अवसर–विद्यार्थियों को पढ़ने के अधिक से अधिक अवसर प्रदान किये जायें। बच्चों को ध्यानपूर्वक पढ़ने के लिए कहा जाये और अधिक से अधिक पढ़ने का अभ्यास करवायें तभी बालकों को शब्दों का सही ज्ञान: प्राप्त होगा और वे सही लिख सकेंगे।

III. मात्राओं, अनुस्वर, अनुनासिक एवं चन्द्र बिन्दु का स्पष्ट ज्ञान–हिन्दी भाषा की लिपि वैज्ञानिक है परन्तु कुछ बातें ऐसी हैं जिनके कारण विद्यार्थियों को मात्राओं का स्पष्ट ज्ञान नहीं होता जैसे 'इ' की मात्रा (ि) व्यन्जन से पहले, ई (ी) की मात्रा व्यन्जन की बाद, 'उ' की मात्रा सभी व्यन्जनों के नीचे लगती है जैसे कु, गु, फु आदि में पर 'र' अक्षर के बीच में (रू) लगती है, रेफ की मात्रा उच्चारण स्थान के बाद वाले अक्षर पर लगती है– जैसे कर्म। इन सब बातों का बच्चों को स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए तभी लिपि में अशुद्धियाँ दूर हो सकेंगी। इसी प्रकार अनुस्वार, अनुनासिक एवं चन्द्र बिन्दु का स्पष्ट ज्ञान देना चाहिए।

IV. व्याकरण का ज्ञान–विद्यार्थियों को व्याकरण का ज्ञान अच्छी प्रकार कराया जाये। व्याकरण नियमों से परिचित कराये। शब्द रचना सम्बन्धी ज्ञान दिया जाए।

V. लिखित कार्य का संशोधन–अध्यापक विद्यार्थियों से जो भी लिखित कार्यकराएं उनका संशोधन अच्छी तरह करें। यदि संशोधन ठीक से नहीं होगा तो विद्यार्थी अशुद्ध शब्दों को बार-बार लिखेंगे और फिर वे उन्हीं के अभ्यस्त हो जाते हैं । उसके बाद अशुद्ध शब्दों को शुद्ध कराना कठिन होता है।

VI. अनुलेख, श्रुतलेख एवं प्रतिलेख–अध्यापक विद्यार्थियों से अनुलेख, प्रतिलेख और श्रुतलेख लिखवाये जिससे उन्हें लिखने की शिक्षा मिले। विद्यार्थियों को ध्यानपूर्वक लिखने के लिए कहे इससे उन्हें शुद्ध लिखने का अभ्यास होगा।

VII. शब्द कोश का प्रयोग– विद्यार्थियों को शब्द कोश का प्रयोग करना सिखाना चाहिए। जब भी उन्हें किसी शब्द के बारे में कोई शंका हो तो वे शब्द कोश देख कर अपनी शंका का समाधान कर सकते हैं तथा शुद्ध शब्द का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

VIII. शब्द पुस्तिकाएँ–विद्यार्थियों को शब्द पुस्तिकाएं बनवा देनी चाहिएं जिनमें वे उन शब्दों को लिखें जिन्हें प्रायः बच्चे अशुद्ध लिखते हैं। तथा बच्चे उन शब्द पुस्तिकाओं में नये-नये पढ़े हुए शब्दों को लिखें इनसे बच्चों के शब्द ज्ञान में वृद्धि होगी और वे शुद्ध शब्द लिखना भी सीखेंगे।

IX. कुशल अध्यापक–पाठशाला में हिन्दी अध्यापक ऐसा हो जिसका भाषा पर पूर्ण अधिकार हो। शिक्षक बालकों को मात्राओं वर्णों का सही ज्ञान देने के लिए पर्याप्त अभ्यास कराये। क्षेत्रीय प्रभाव के कारण जो बच्चे अशुद्ध लिखते हैं व्याकरण के सही ज्ञान के अभ्यास से उनकी अशुद्धियाँ दूर हो सकती हैं।

अभ्यास के प्रश्न

1. लेखन-कौशल से क्या तात्पर्य है ? उसका महत्त्व बताते हुए लेखन-शिक्षण के उद्देश्य स्पष्ट करें।
2. प्राथमिक कक्षा के बालकों में लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास करने के लिये किन विधियों का प्रयोग करोगे ?
3. लेखन में अशुद्धियाँ किन-किन कारणों से होती हैं और उन अशुद्धियों का निवारण कैसे किया जा सकता है?
4. लिखना सिखाने के लिये कौन-कौन सी विधियां प्रचलित हैं ? हिन्दी लेखन शिक्षण के लिये आप किस विधि को उपयुक्त समझते हैं?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6

संक्षेपीकरण और विस्तारीकरण
(Summarising and Elaborating)

संक्षेपीकरण का अर्थ – किसी भी लिखित एवं मौखिक रूप से अभिव्यक्त विषय-वस्तु को इस प्रकार सांक्षिप्त करना कि उसके मूल विचार और भावों को ज्यों का त्यों रखने को संक्षेपीकरण अथवा संक्षेपण कहते हैं।

संक्षेपीकरण का महत्त्व – संक्षेप में अपनी बात को कहना और लिखना मनुष्य का सबसे बड़ा गुण है। आज के युग में संक्षेपीकरण का बहुत महत्त्व है। बिना किसी प्रकार की अनावश्यक विषय वस्तु प्रयोग के सही शब्दों में अपने भाव व विचार व्यक्त करने से अपना भी समय बचता है और श्रोता एवं पाठक के समय की बचत होती है। संक्षेपीकरण के अभ्यास से भाषा की शक्तियों का विकास होता है और अभिव्यक्ति की कुशलता बढ़ती है। इससे किसी विषय को ध्यानपूर्वक समझने, पढ़ने और विचारों को केन्द्रित करने के गुण का विकास होता है। संक्षेपीकरण गागर में सागर भरने की क्षमता का विकास करता है। इससे अभिव्यक्ति सार्थक, सशक्त और सारपूर्ण होती है और व्यर्थ का घुमाव फिराव नहीं होता।

आज ज्ञान का भण्डार अत्यन्त विस्तृत है जो विभिन्न भाषाओं के माध्यम से लिखित रूप में उपलब्ध है। लेकिन आज के व्यस्त मानव के पास पढ़ने के लिये इतना समय नहीं है कि वह ज्ञान के बड़े-बड़े ग्रन्थों का अध्ययन कर सके। ऐसी स्थिति में हमें संक्षेपीकरण का सहारा लेकर विस्तृत रूप में प्रकट ज्ञान को संक्षिप्त रूप में दूसरों तक पहुंचा सकते हैं। ज्ञान का प्रचार मानवता के प्रति बड़ा उपकार माना जाता है। इसी प्रकार विस्तृत भाषणों को ज्यों का त्यों पढ़ना भी बहुत कठिन हो जाता है क्योंकि पाठकों के पास इतना समय नहीं होता। इस लिये आवश्यकता इस बात की होती है कि इन विस्तृत भाषणों को मूल तथ्यों सहित संक्षिप्त रूप में लोगों के सामने प्रस्तुत करें जिससे वे कम समय में काम की बातें पढ़ सकें। यह सब कुछ तभी सम्भव हो सकता है जब हम संक्षेपीकरण करना जानते हों। इस लिये छात्र-छात्राओं को संक्षेपीकरण की शिक्षा का देना बहुत आवश्यक है। आज कार्यालयों में भी संक्षेपीकरण के ढंग को अपना कर कार्य किया जाता है। शिक्षक, पत्रकार, वकील, न्यायाधीश आदि के लिये तो संक्षेपीकरण अत्यन्त लाभप्रद है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

संक्षेपीकरण की शिक्षा के उद्देश्य

संक्षेपीकरण की शिक्षा के कुछ मुख्य उद्देश्य निम्न हैं –

I. छात्र-छात्राओं को विस्तृत लेख और विस्तृत भाषणों को पढ़कर उनका विश्लेषण कर महत्त्वपूर्ण तथ्यों की पकड़ में निपुण करना।

II. उनको विस्तृत बातों को संक्षिप्त में कहने और लिखने के कौशल में प्रशिक्षित करना ।

III. उनमें तर्क-वितर्क, अवलोकन, विवेक, विश्लेषण एवं संश्लेषण, मनन आदि शक्तियों का विकास करना।

IV. छात्र-छात्राओं को सार रूप में मौखिक एवं लिखित सामग्री को ग्रहण करने और अभिव्यक्त करने की आदत डालना।

V. छात्र-छात्राओं को कार्यालयों के कार्यों की विधि और पत्रकारिता के गुणों से अवगत कराना।

संक्षेपीकरण की शिक्षा की विधि

संक्षेपीकरण की शिक्षा कक्षा आठ के बाद ही प्रारम्भ करनी चाहिये। इससे पहले छात्र-छात्राएं इस योग्य नहीं होते कि वे गहनता या सूक्ष्मता के साथ भावों और विचारों का विश्लेषण एवं संश्लेषण कर सकें।

संक्षेपीकरण एक कला है। यह कला अनुकरण से नहीं सीखी जा सकती जितनी कि अभ्यास के माध्यम से सीखी जा सकती है। इसके लिये लिखने वाले छात्र-छात्रा की सूझ-बूझ, आवश्यक-अनावश्यक का निर्णय करने की विवेक-शक्ति और भाषा की समाहार शक्ति का होना अनिवार्य है। किसी भी विषय-सामग्री का संक्षेपीकरण विधि के अन्तर्गत निम्न बातों पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है –

I. जिस सामग्री का संक्षेपीकरण करना हो उसका सावधानीपूर्वक मौन पाठ करें और उसको समझने का प्रयास करें। अगर एक बार का पढ़ना पर्याप्त न हो तो पुनः पढ़ने के बाद केन्द्रीय भाव को समझें।

II. महत्त्वपूर्ण अंशों, शब्दों, बिन्दुओं को चिन्हबद्ध कर लें।

III. चिन्हबद्ध बिन्दुओं के आधार पर उस विषय को अपनी भाषा में संक्षिप्त कर लें।

IV. इसके बाद यह निश्चित कर लें कि इसमें सभी मौलिक तथ्यों का समावेश हो गया है या नहीं।

V. संक्षेपीकरण में वाक्य छोटे-छोटे और भाषा सरल हो और अधिक को कम में व्यक्त करने का गुण हो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

VI. केवल उपयोगी तथ्यों और आंकड़ों पर ही ध्यान दिया जाना चाहिये।

VII. फिर एक बार पुनः मौन पाठ करके यह देख लें कि कोई महत्त्वपूर्ण बात तो नहीं रह गई है। अगर रह गई है तो तुरन्त सुधार कर लें।

VIII. बनाये हुए प्रारूप को पढ़कर अनावश्यक बातों को निकाल देना चाहिये और भाषा को संक्षिप्त करने का प्रयास करना चाहिये। जहां कहीं सम्भव हो वहां वाक्य के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग करें।

IX. संक्षेपीकरण में अपनी ओर से कुछ नहीं लिखना चाहिये।

X. संक्षेपण भी अपने आप में एक स्वतन्त्र, सुगठित, सार्थक और प्रवाहपूर्ण संक्षिप्त लेख ही होता है।

XI. शिक्षक को चाहिये कि वो सभी छात्र-छात्राओं को लेख को संक्षिप्त रूप में लिखने के लिये कहे। वह यह भी निरीक्षण करे कि सभी छात्र-छात्राएं स्वतन्त्रता पूर्वक अपना कार्य कर रहे हैं या नहीं।

XII. छात्र-छात्राओं द्वारा किये गये संक्षेपीकरण की जांच व संशोधन शिक्षक द्वारा अवश्य ही किया जाना चाहिये। अगर ऐसा नहीं होगा तो विद्यार्थियों की अशुद्धियों का पता नहीं चल पायेगा। शिक्षक को सामूहिक अशुद्धियों का निराकरण सामूहिक रूप से और व्यक्तिगत अशुद्धियों का निराकरण व्यक्तिगत रूप से करना चाहिये।

सरल लेख का संक्षेपण (सार) छात्र-छात्राओं को स्वतन्त्र रूप से करने के लिये अनुमति देनी चाहिये। ऐसा करने से विद्यार्थियों को अभ्यास का अवसर मिलता है।

XIII. गद्य पाठों का शिक्षण करते समय कभी-कभी शिक्षक छात्र-छात्राओं को मूल पाठ को संक्षिप्त रूप में घर से लिखकर लाने के लिये कहे। इससे गृहकार्य में नवीनता आयेगी और उनको संक्षेपीकरण का अधिक अभ्यास होगा।

संक्षेपण में ध्यान देने योग्य आवश्यक बातें

I. मूल लेख के सभी तथ्यों को प्रस्तुत किया जाना चाहिये और अनावश्यक सामग्री को निकाल देना चाहिये।

II. संक्षिप्त सामग्री में मूल लेख की भाषा का प्रयोग न करके अपनी भाषा-शैली का प्रयोग होना चाहिये। भाषा शैली सशक्त, सार्थक एवं प्रवाहपूर्ण होनी चाहिये। भाषणों के संक्षेपण में वक्ता की भाषा का प्रयोग करना उचित है।

III. संक्षिप्त लेख क्रम बद्धता से होना चाहिये अर्थात् भावों और विचारों का क्रम से प्रस्तुतीकरण हो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

IV. यह मूल लेख का अधिक से अधिक एक तिहाई भाग होना चाहिये।

V. मूल लेख के बारे में अपनी ओर से किसी प्रकार की नोंक-जोख, टीका टिप्पणी नहीं करनी चाहिये।

VI. संक्षिप्त लेख अपने आप में पूर्ण और स्पष्ट लेख होना चाहिये। संक्षेप कर लेने के बाद एक बार ध्यान से देख लेना चाहिये और अगल कोई विशेष बात छूट गई हो तो उसे लिखकर सुधार कर लेना चाहिये। भाषा में किसी प्रकार की अस्पष्टता दिखाई पड़े तो उसमें भाव के अनुसार परिवर्तन कर देना चाहिये।

VII. संक्षेपण अन्य पुरूष में होना चाहिये अगर ऐसा करने में कहीं किसी प्रकार की कठिनाई आती हो तो फिर कोष्ठक के माध्यम से स्पष्ट कर दें।

VIII. मूल लेख का शीर्षक का चयन करते समय यह बात अवश्य ध्यान में रखें कि शीर्षक सम्पूर्ण लेख से सम्बन्धित हो।

IX. सार लेख किसी भी दृष्टि से कठिन एवं जटिल नहीं होना चाहिये क्योंकि ऐसा होने से तथ्यों का समझना कठिन हो जायेगा।

विस्तारीकरण का अर्थ

जब किसी मूल लेख या भाषण की विस्तार से व्याख्या की जाती है तो उसे विस्तारीकरण कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि सार रूप में लिखित अभिव्यक्ति या मौखिक अभिव्यक्ति की विस्तार से व्याख्या करने की कला को विस्तारीकरण कहा जाता है।

विस्तारीकरण का महत्त्व

मनुष्य को अपनी सुविधा के लिये जीवन में कभी संक्षेपीकरण की आवश्यकता पड़ती है तो कभी उसे विस्तृत व्याख्या की भी आवश्यकता होती है। मनुष्य की यह भी प्रवृत्ति होती है कि अपनी बात को नपे तुले शब्दों में अर्थात् संक्षिप्त रूप से कहते हैं। महान दार्शनिक, शिक्षा शास्त्री, विचारक और विद्वान एवं साहित्यकार प्रायः ऐसा ही करते हैं। उनकी संक्षिप्त रूप में कही गई बातों को जनसाधारण तक पहुंचाने के लिये उसका विस्तरीकरण करना आवश्यक होता है अन्यथा जनसाधारण उनकी बातों (कथनों) को समझ नहीं पायेगा। भाषा के साहित्यिक क्षेत्र में अनेक कथन, सूक्तियां, मुहावरे और सुन्दर कहावतें सुनने और पढ़ने को मिलती हैं, और हमें जीवन में इनके विस्तारीकरण की आवश्यकता पड़ती है। सा‌हित्य के क्षेत्र में विस्तारीकरण की आवश्यकता अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक पड़ती है। साहित्य की मुख्य रूप से दो विधाएं हैं – गद्य और पद्य। इन दोनों के सही ढंग से अर्थ, भाव एवं विचारों को समझने और फिर सरल और सुगम ढंग से इनकी अभिव्यक्ति करने हेतु विस्तारीकरण करना पड़ता है। उदाहरण के रूप चन्द्रगुप्त नाटक में जयशंकर प्रसाद द्वारा पात्र से कहलवाये गये ये शब्द जो वाक्य रूप में प्रस्तुत हैं–

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2023-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"महत्वाकांक्षा का मोती निष्ठुरता की सीपी में पलता है"।

उपरोक्त कथन की जब तक विस्तार से व्याख्या न की जाये तो इसका समझना अत्यन्त कठिन है। शिक्षक को इसके अर्थ समझने के लिये छात्र-छात्राओं के समक्ष विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करनी ही पड़ेगी।

विस्तारीकरण की शिक्षा के उद्देश्य

I. छात्र-छात्राओं को मौन पाठ के द्वारा स्वाध्याय करने के लिये प्रेरित करना।

II. उनको दूसरों द्वारा सार रूप में कहे गये कथनों को पूर्ण रूप से समझना।

III. उनको दूसरों के सार रूप में लिखित एवं मौखिक वचनों को ग्रहण करके विस्तार से लिखना या मौखिक रूप से अभिव्यक्त करने के लिये प्रशिक्षित करना।

IV. छात्र-छात्राओं को किसी बात के पक्ष या विपक्ष में अपनी बात को विस्तृत रूप में प्रस्तुत करने के लिये प्रोत्साहित करना।

V. उनको व्यास शैली में अर्थात् बाल की खाल उतारते हुए अपनी बात या पढ़ी हुई बात या किसी अन्य से सुनी हुई बात को विस्तृत रूप में प्रस्तुत करने की कला में निपुण करना।

विस्तारीकरण की विधि

संक्षेपीकरण (सार लेखन) की भांति विस्तारीकरण भी एक कौशल है। विस्तारीकरण का कौशल संक्षेपीकरण की अपेक्षा कुछ सुगम है। यही कारण है कि विस्तारीकरण की शिक्षा कक्षा पांच से पहले ही प्रारम्भ कर दी जाती है। जबकि संक्षेपीकरण की शिक्षा कक्षा आठ के बाद आरम्भ की जाती है। विस्तारीकरण की शिक्षा के लिये भी छात्र-छात्राओं को पर्याप्त रूप से भाषा का ज्ञान होना चाहिये और उनमें विश्लेषण एवं संश्लेषण, तर्क-वितर्क और निर्णय शक्तियों का भी कुछ सीमा तक विकास होना चाहिये। स्वाभाविक रूप से छोटे बालक जो कुछ अनुभव करते हैं और अपने दैनिक जीवन में जो घटनायें घटती हुई देखते हैं तो उनके बारे में दूसरों को खुल कर बताने की प्रवृत्ति होती है। शिक्षक का कार्य तो उस प्रवृत्ति का विकास करते हुए बालकों को विस्तारीकरण के लिये निपुण करना है। हम अपने दैनिक जीवन में आठ दस साल के बालकों को अपनी बात को समझा-समझा कर कहते हुए देखते हैं। इस लिये इस आयु स्तर के बालकों को विस्तारीकरण की शिक्षा देनी प्रारम्भ कर देनी चाहिये।

बाद में जैसे-जैसे बालकों का स्तर उच्च होता जाये वैसे-वैसे बालकों को विस्तारीकरण के लिये विषय कुछ गम्भीर देने चाहियें। प्रारम्भ में शिक्षक को कठिन शब्दों के अर्थ समझा कर विस्तारीकरण की ओर प्रेरित करना चाहिये और फिर धीरे-धीरे कठिन वाक्यों को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तोड़कर विस्तृत व्याख्या करने के लिये उनका मार्ग दर्शन करना चाहिये। उच्च कक्षाओं में पहुंचने तक छात्र-छात्राएं स्वयं इस योग्य हो जायेंगे कि वे किसी विषय को लेकर उसके पक्ष अथवा विपक्ष में कुछ सीमा तक विचार प्रकट करने लगेंगे। ऐसी स्थिति में शिक्षक को छात्र-छात्राओं को अपने विचार सूझ-बूझ, मनन और विवेक शक्तियों के आधार पर प्रस्तुत करने के अभ्यास का सुअवसर प्रदान करना चाहिये।

विस्तारीकरण की शिक्षा का अलग से देने की कोई आवश्यकता नहीं होती। इसकी शिक्षा अनुभवी शिक्षक अपनी सूझ-बूझ से काम लेते हुए गद्य और पद्य शिक्षण के अन्तर्गत स्वाभाविक ढंग से दे सकते हैं। यह ढंग निम्न है –

(I) शिक्षक द्वारा विषय-वस्तु का आदर्श पाठ।

(II) छात्र-छात्राओं द्वारा अनुकरण पाठ।

(III) कठिन शब्दों की व्याख्या (गद्य पाठ में)।

(IV) भाव-विचार विश्लेषण एवं सौन्दर्यानुभूति (पद्य पाठ में)।

(V) मौन वाचन (पाठ) गद्य पाठ में।

(VI) पुनः आदर्श पाठ (पद्य पाठ में)।

(VII) बोध प्रश्न (गद्य पाठ में)।

(VIII) सौन्दर्य बोध हेतु सौन्दर्यात्मक प्रश्न (पद्य पाठ में)।

(IX) समानान्तर कविता पाठ (कविता पाठ में)।

(X) सक्षिप्त आवृत्ति या पुनरावृत्ति (गद्य पाठ में)।

(XI) गृहकार्य एवं संशोधन कार्य (गद्य पद्य- दोनों पाठों में)।

छात्र-छात्राओं को विस्तारीकरण में प्रशिक्षित एवं निपुण करने हेतु शिक्षक को चाहिये कि यथा अंश में निहित तथ्यों और गूढ़ रहस्यों का विश्लेषण कर उनकी स्पष्ट व्याख्या कर दे। विचारों से सम्बन्धित छात्र-छात्राओं के अनुभवों को एकत्रित किया जायें, दूसरों के अनुभवों से उन्हें परिचित कराया जाये, पक्ष और विपक्ष में प्रमाण प्रस्तुत किये जाये, कठिन सन्दर्भों को स्पष्ट किया जाये और उस सम्बन्ध में छात्र-छात्राओं को अपना मत प्रकट करने हेतु प्रेरित किया जाये। छात्र-छात्राओं को किसी गद्य अथवा पद्य के अंश का पूर्ण भाव स्पष्ट करने के बाद ही उस अंश का प्रंसग सहित विस्तारीकरण करने के लिये कहना चाहिये। शिक्षक इस कार्य को घर से करके लाने के आदेश भी दे सकता है। शिक्षक को छात्र-छात्राओं के लिखित कार्य की अच्छी तरह से जांच करनी चाहिये और भाषा सम्बन्धित एवं विषय सम्बन्धित अशुद्धियों का संशोधन करे। शिक्षक फिर उनको अशुद्धियों का निवारण करते हुए विस्तार से लिखने के लिये कहे। इस प्रकार छात्र-छात्राएं विस्तारीकरण के कौशल में निपुण होते जायेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

माध्यामिक स्तर पर छात्र-छात्राओं को स्वाध्याय के माध्यम से आत्मनिर्भर बनाने हेतु प्रयास करना चाहिये। इस स्तर पर छात्र छात्राएं किसी गद्य अथवा पद्य के अंश को स्वयं पढ़ें और उसके भावों को सूक्ष्मता (गहनता) से समझें और शब्द कोश से कठिन शब्दों के अर्थ स्वयं ढूंढें और फिर अपने अनुभवों के आधार पर विस्तारीकरण करें, ऐसा करना आवश्यक होता है।

विस्तारीकरण से सम्बन्धित आवश्यक बातें

(I) विस्तारीकरण के लिये सबसे अहम् बात यह है कि मूल लेख के सभी शब्दों के अर्थ पूर्ण रूप से स्पष्ट होने चाहियें।

(II) मूल लेख की भाषा का कदापि भी प्रयोग नहीं किया जाना चाहिये।

(III) विस्तारीकरण करने हेतु मूल भावों को छांट कर क्रमबद्धता से लगाकर क्रमशः उनका स्पष्टीकरण करना चाहिये।

(IV) मूल पाठ के भिन्न भिन्न विचारों को सही क्रम में अलग-अलग अनुच्छेदों में बांट कर अभिव्यक्त करना चाहिये।

(V) मूल विषय-वस्तु यथा अंश में प्रयोग में आये हुए सभी मुहावरों, कहावतों, सूक्तियों और कथनों को अवश्य ही स्पष्ट करना चाहिये।

(VI) स्पष्टीकरण हेतु जहां कहीं उदाहरण, उपमा और दृष्टान्त की आवश्यकता पड़े तो इनका प्रयोग अवश्य करना चाहिये।

(VII) यह बात हमेशा ध्यान में रखनी चाहिये कि विस्तार की कोई सीमा नहीं होती। इस लिये शिक्षक को चाहिये कि यह बात छात्र-छात्राओं को स्पष्ट कर दे कि जितना लिखने से बात पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती हो उतना ही विस्तारीकरण के लिये प्रयास करें। आवश्यकता से अधिक लिखने का कोई औचित्य नहीं होता।

(VIII) विस्तारीकरण करते हुए हमेशा यह बात भी ध्यान में रखी जाये किसी बात, विचार, शब्द को बिना किसी कारण के दोहराया न जाये।

(IX) विस्तृत रूप में प्रस्तुत की गई विषय-वस्तु किसी भी रूप में अशुद्ध, निरर्थक और भ्रम में डालने वाली नहीं होनी चाहिये।

(X) अनावश्यक बातों को बिल्कुल छोड़ देना चाहिये क्योंकि निरर्थक बातों के प्रयोग से लेख की सुन्दरता प्रभावित होती है।

(XI) किसी भी दशा में मूलभावों से किसी प्रकार की छेड़छाड़ किये बिना उनको मूल रूप में ही प्रकट करना चाहिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(XII) यह बात सही है कि विस्तार करने वाले को लेखक के विचारों पर टीका टिप्पणी करने की छूट दी जाती है परन्तु लेखक के विचारों का स्पष्टीकरण होना अत्यन्त आवश्यक होता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. संक्षेपीकरण से क्या तात्पर्य है ? संक्षेपीकरण की शिक्षा देते समय शिक्षक को किन बातों को ध्यान में रखना चाहिये ?
2. विस्तारीकरण से आप क्या समझते हैं ? इसके महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए यह स्पष्ट कीजिए कि छात्र-छात्राओं को विस्तारीकरण की शिक्षा प्रकार दी जाये ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

7

निबन्ध लेखन/पत्र लेखन
(Essay Writing/Letter Writing)

साहित्य के मुख्य रूप से दो रूप हैं या हम यूँ कह सकते हैं कि दो विधाएं हैं – पद्य और गद्य। गद्य साहित्य की अनेक विधाएं हैं जैसे कहानी, नाटक, एकांकी, उपन्यास, निबन्ध और निबन्धात्मक पाठ। इन सब को हम साहित्यिक रचना की संज्ञा भी दे सकते हैं। रचना शब्द अंग्रेजी शब्द Composition का पर्यायवाची है। किन्तु यह ध्यान रहे कि रचना शब्द निबन्ध का पर्यायवाची शब्द नहीं है। रचना के अनेक प्रकार हैं। रचना के अनेक प्रकारों में से निबन्ध एक है। रचना शब्द बहुत व्यापक है। जैसा कि हमने बताया रचना के अनेक प्रकार हैं जैसे कहानी, नाटक, उपन्यास, पत्र लेखन, वार्तालाप, कई प्रकार के लेख, पुस्तकों की समालोचना, विस्तारीकरण, संक्षेपीकरण, शब्दानुवाद आदि आदि। इन सभी प्रकार की रचनाओं में निबन्ध का अपना विशेष स्थान है और इस बात में कोई दो मत नहीं हैं।

निबन्ध

निबन्ध एक ऐसी गद्य रचना है जिसमें किसी भी विषय का वर्णन किया गया हो। निबन्ध गद्य साहित्य की एक ऐसी महत्त्वपूर्ण विधा है जिसके माध्यम से कोई भी लेखक किसी भी विषय के बारे में अपने विचारों और भावों को बड़े प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करता है। यह गद्य साहित्य की सबसे कठिन विद्या है। निबन्ध के सम्बन्ध में आचार्य रामचन्द्र शुकल ने कहा है कि "अगर गद्य कवियों की कसौटी है तो निबन्ध गद्य की कसौटी है।" कहने का तात्पर्य यह है कि अच्छा निबन्ध लिखना साहित्यकार के लिये सबसे कठिन कार्य होता है। उत्तम निबन्ध रचना स्वयं में एक कला है। निबन्ध में लेखक को अपने मौलिक व्यक्तित्व एवं गागर में सागर भरने की शक्ति का परिचय देना होता है। एक अच्छे निबन्ध लेखक को विषय का पूरा ज्ञान होना चाहिये और भाषा पर उसकी पकड़ होनी चाहिये। संक्षिप्त रूप में निबन्ध की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है। किसी एक विषय पर विचारों को क्रम बद्ध कर सुन्दर, सुगठित और सुबोध भाषा में लिखित रचना को निबन्ध कहते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनेक विद्वानों ने निबन्ध की अलग-अलग व्याख्या की है जो निम्न हैं -

(I) निबन्ध ऐसी रचना या लेख है जिसमें किसी गहन विषय पर विस्तृत एवं सूक्ष्म ढंग से विचार किया जाता है।

(II) सीमित समय और सीमित शब्दों में क्रमबद्ध रूप से विचारों की प्रस्तुति ही निबन्ध है।

(III) मन की स्वतन्त्र उड़ान को निबन्ध कहते हैं।

(IV) निबन्ध अनियमित और असीमित असम्बन्ध रचना है।

(V) मानसिक संसार में बुद्धि व्यायाम को निबन्ध कहते हैं।

निबन्ध की विशेषतायें –

I. निबन्ध की भाषा विषय के अनुकूल होनी चाहिये।

II. विचारों में सुसम्बध होना चाहिये।

III. निबन्ध का निश्चित लक्ष्य और विषय विशेष होना चाहिये।

IV. निबन्ध के विषय से सम्बन्धित सभी पहलुओं पर चर्चा की जानी चाहिये।

V. निबन्ध लिखते समय शब्दों की सीमा पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिये।

VI. निबन्ध में लेखक के व्यक्तित्व की झलक का होना आवश्यक है।

VII. निबन्ध विस्तृत न होकर सीमित होना चाहिये।

VIII. निबन्ध लेखन में विचारों की अखण्डता एवं अभिव्यक्ति में प्रवाह होना चाहिये।

IX. अक्षर विन्यास में शुद्धता और विराम चिन्हों का उचित प्रयोग होना चाहिये।

X. निबन्ध के अन्त में सभी चर्चित बातों का सारांश लिखना चाहिये।

निबन्ध के सोपान

मुख्य रूप से निबन्ध के तीन सोपान हैं –

1. भूमिका, 2. विस्तार और 3. उपसहांर

1. भूमिका – भूमिका का सम्बन्ध विषय प्रवेश से होता है। इसमें विषय से अवगत कराया जाता है। यहीं से निबन्ध का आरम्भ होता है। यह जितना आकर्षक और प्रभावशाली होगा, उतना ही पाठकों को निबन्ध के पढ़ने में आनन्द आयेगा। भूमिका छोटी सार्थक और सारपूर्ण होनी चाहिये। भूमिका ऐसी हो जो पाठक को पूरा निबन्ध पढ़ने के लिये विवश कर दे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. विस्तार (विषय का विकास)– यह निबन्ध का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सोपान (अंग) है। इसमें विषय का यथा आवश्यकता विस्तार होता है और विवेचन होता है। इसमें विषय-वस्तु को क्रमबद्ध करके अनुच्छेदों में विभाजित करके प्रकट करना होता है। विषय सामग्री के विवेचन में क्रमबद्धता का पूर्ण रूप से ध्यान रखा जाता है। प्रत्येक अनुच्छेद का दूसरे अनुच्छेद से तार्किक ढंग से और विवेकपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।

3. उपसंहार – यह निबन्ध का अन्तिम सोपान (अंग) है। यहां तक पहुंचते-पहुंचते विषय की चर्चा समाप्त हो जाती है। उपसहार में निबन्ध में कही गई बातों का सारांश होता है।

निबन्धों के प्रकार

विषय-वस्तु के प्रतिपादन की दृष्टि से निबन्ध के चार प्रकार हैं जो निम्न हैं –

1. वर्णानात्मक निबन्ध,
2. विवरणात्मक निबन्ध,
3. विचारात्मक निबन्ध और
4. भावात्मक निबन्ध

1. वर्णानात्मक निबन्ध – इस प्रकार के निबन्धों में ऋृतुओं, वस्तुओं, स्थानों, दृश्यों त्यौहारों का वर्णन किया जाता है – जैसे दिवाली, होली, दशहरा आदि।

2. विवरणात्मक निबन्ध – इन निबन्धों में घटनाओं, उत्सवों, यात्राओं और महान पुरुषों के परिचयात्मक निबन्ध लिखे जाते हैं। उदाहरण के रूप में नौका विहार, रेल यात्रा, संस्था का वार्षिक उत्सव, राष्ट्रीय पर्व, लाल बहादुर शास्त्री आदि विषयों पर लिखे निबन्ध इस श्रेणी में आते हैं।

3. विचारात्मक निबन्ध – इसमें किसी विचार, समस्या, मनोभाव आदि के विषय में परिचयात्मक, व्याख्यात्मक अथवा विश्लेषणात्मक लेखन विचारात्मक निबन्ध कहलाता है। जैसे परिश्रम सफलता की कुंजी है, दूरदर्शन और शिक्षा, एकता में बल है, निरक्षरता एक अभिशाप, मित्रता आदि इसी प्रकार के निबन्ध हैं।

4. भावात्मक निबन्ध – इस प्रकार के निबन्धों में भावों की प्रधानता होती है। इस प्रकार के निबन्धों में परोपकार, मन के हारे हार है, मन के जीते जीत, दया धर्म का मूल है, पराधीन सपने सुख नाहिं आदि निबन्ध सम्मिलित किये जा सकते हैं।

निबन्ध-लेखन में निम्न महत्त्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है –

1. निबन्ध लेखन से पूर्व विषय से सम्बन्धित सारी विषय-वस्तु मस्तिष्क में जुटा ली जाये और फिर उस पर गहनता से विचार किया जाये।
2. विषय-वस्तु के एकत्रित करने के पश्चात् निबन्ध की रूप रेखा तैयार की जाये।
3. निबन्ध रचना (लेखन) के तीन महत्त्वपूर्ण सोपान है –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(I) प्रस्तावना (भूमिका)

(II) विस्तार (विवेचना)

(III) उपसंहार (अन्त)

4. प्रस्तावना (भूमिका) निबन्ध का महत्त्वपूर्ण अंग है। यह बहुत सार्थक, सशक्त आकर्षक, प्रभावपूर्ण और रोचक होना चाहिये।
5. विस्तार (विवेचना) करते समय अत्यन्त सचेत जागरूक एवं सजग रहने की आवश्यकता होती है। इसमें अपने विचारों को विभिन्न अनुच्छेदों में विभाजित कर लेना चाहिये और फिर प्रत्येक विचार को अलग-अलग अनुच्छेद में लिखना चाहिये।
6. भूमिका (प्रस्तावना) के समान उपसंहार भी सार्थक/सशक्त और प्रभावशाली होना चाहिये। निबन्ध का अंत इस प्रकार किया जाना चाहिये कि निबन्ध का केन्द्रीय भाव पाठक के मन-मस्तिष्क में छा जाये।
7. निबन्ध में फालतू बातों को किसी प्रकार का कोई स्थान नहीं देना चाहिये।
8. विचारों की सुसम्बन्धता (तालमेल) निबन्ध विशेष और आवश्यक गुण है।
9. निबन्ध की भाषा शुद्ध, सरल, सुबोध, साहित्यिक प्रभावपूर्ण परिमार्जित होनी चाहिये। भाषा को आकर्षक और सशक्त बनाने हेतु यथा आवश्यकता मुहावरों एवं सूक्तियों का प्रयोग करना चाहिये।
10. निबन्ध का विस्तार आवश्यकता से अधिक नहीं करना चाहिये। हमेशा गागर में सागर भरने का प्रयास करना चाहिये।

निबन्ध-शिक्षण के उद्देश्य

निबन्ध की प्रकृति एवं स्वरूप के आधार पर निम्न उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं –

1. छात्र-छात्राओं में अपने विचारों को क्रमबद्ध करने की योग्यता विकसित करना।
2. उनके शब्द-भण्डार, मुहावरों तथा सूक्तियों के भण्डार में वृद्धि करना।
3. छात्र-छात्राओं में अपने विचारों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने की योग्यता विकसित करना।
4. उनमें अपने विचारों को कलात्मक भाषा में व्यक्त करने की योग्यता विकसित करना।
5. विद्यार्थियों को विभिन्न लेखन शैलियों से परिचित कराना और उन शैलियों में प्रयोगात्मक अभ्यास के अवसर प्रदान करना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6. उनमें निरीक्षण तर्क, कल्पना और विवेक शक्तियों को विकसित करना।
7. उनमें अध्ययन, चिन्तन तथा मनन की योग्यतायें एवं रूचियां विकसित करना।
8. उनको उचित एवं प्रसंगानुकूल शैली में व्यावहारिक लेखन-कार्य करने के योग्य बनाना।
9. छात्रों में कम से कम भाषा में अधिक से अधिक विचार व्यक्त करने की निपुणता का विकास करना।
10. छात्र-छात्राओं को साहित्य सृजन की प्रेरणा देना।

निबन्ध-शिक्षण के ये सभी उद्देश्य छात्र-छात्राओं में रचनात्मक-शक्तियों के विकास के प्रतीक हैं। बालकों में कई रचनात्मक शक्तियां निहित होती हैं। 'निबन्ध-शिक्षण' के द्वारा उन शक्तियों को विकसित करने के पर्याप्त रूप से अवसर मिलते हैं। इस लिये शिक्षकों को निबन्ध-शिक्षण की ओर भी पर्याप्त ध्यान देना चाहिये और अपने कुशल शिक्षण से छात्र-छात्राओं की रचनात्मक शक्तियों को पहचान कर उन्हें विकसित करने के लिये पर्याप्त रूप से प्रयास करने चाहियें।

निबन्ध-शिक्षण की विधियां

भाषा शिक्षण में निबन्ध-शिक्षण से तात्पर्य है छात्र-छात्राओं को लिखित रूप से अपने विचार प्रकट करने के योग्य बनाना। निबन्ध-शिक्षण द्वारा छात्र-छात्राओं को इस योग्य बनाया जाता है कि वे –

(1) अपने विचारों को क्रमबद्ध करके उन्हें सार्थक एवं कलात्मक रूप से लिपिबद्ध कर सकें।

(2) साहित्य सृजन की ओर अग्रसर हो सकें।

(3) विभिन्न लेखन-शैलियों का यथा आवश्यकता प्रयोग कर सकें।

निबन्ध शिक्षण के इन महत्त्वपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति के लिये शिक्षक को अपना शिक्षण कार्य कुशलतापूर्वक, सशक्त एवं प्रभावशाली ढंग से करना चाहिये।

निबन्ध शिक्षण की विधियां

निबन्ध शिक्षण की प्रमुख विधियां निम्न हैं-

(I) प्राथमिक स्तर पर – निबन्ध शिक्षण प्राथमिक स्तर से ही प्रारम्भ हो जाना चाहिये। मौखिक अभिव्यक्ति, वाचन और लिपि का शिक्षण प्रदान करने के बाद लिखित-रचना शिक्षण अर्थात् निबन्ध शिक्षण की ओर अग्रसर होना एक स्वाभाविक क्रम है। लिपि ज्ञान के पश्चात् छात्र-छात्राओं में लिखकर अपने विचार प्रकट करने की इच्छा जागृत होने लगती है। इस इच्छा को ध्यान में रखते हुए निबन्ध शिक्षण आरम्भ करना चाहिये। प्राथमिक स्तर पर निबन्ध शिक्षण के लिये निम्न विधियां अपनाई जा सकती हैं-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1. प्रश्नोत्तर विधि – इस विधि में शिक्षक, सम्बन्धित विषय 'जिस पर नि... लिखवाना हो' पर प्रश्न पूछता है और छात्र-छात्राएं उनके उत्तर देते हैं। प्रश्नोत्तर माध्यम... शिक्षक सम्बन्धित विषय की विभिन्न बातों पर प्रकाश डालता है और छात्र-छात्राओं... उत्तरों में भाषा एवं तथ्य सम्बन्धी संशोधन भी करता जाता है। इस प्रकार पहले मौखि... कार्य सम्पन्न होता है और उसके पश्चात् छात्र-छात्राओं को लिखने के लिये कहा जाता है... छात्र-छात्राओं से सम्बन्धित अनुभवों और समीपवर्ती वस्तुओं एवं दृश्यों पर आरम्भि... निबन्ध लिखवाने चाहियें।

2. भाषा-यन्त्र प्रणाली (विधि) – इसमें निबन्ध शिक्षण के लिये ग्रामोफोन, भा... के रिकार्ड, वर्णन-चित्र आदि साधनों का प्रयोग किया जाता है। इसमें पहले सम्बन्धि... विषय के चित्रों को क्रमशः प्रदर्शित करके विद्यार्थियों को तथ्य समझाये जाते हैं। फि... ग्रामोफोन पर सम्बन्धित रिकार्ड बजाकर विद्यार्थियों को सुनाया जाता है। रिकार्ड के सा... तालमेल स्थापित करते हुए शिक्षक चित्रों को भी दिखाता रहता है। उसके पश्चात प्रश्नों... सहायता से निबन्ध-विषय का मौखिक वर्णन किया जाता है। अन्त में विद्यार्थियों... निबन्ध कार्य करने के लिये कहा जाता है। यह विधि पाश्चात्य शिक्षा शास्त्रियों की दे... इसकी उपयोगिता में किसी प्रकार का कोई सन्देह नहीं है क्योंकि इसमें छात्र आँखों... कानों का सक्रिय प्रयोग करते हैं। ये दोनों इन्द्रियां ज्ञान-प्राप्ति का महत्त्वपूर्ण साधन हैं, ... इसमें सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें खर्च बहुत आता है। इस लिये यह सामान्य छा... छात्राओं की पहुंच से दूर है।

3. चित्रवर्णन प्रणाली (विधि)–इस विधि के अन्तर्गत शिक्षक छात्र-छात्राओं... सामने किसी चित्र को प्रस्तुत करता है। उस चित्र पर क्रम विशेष से प्रश्न पूछता है। ... प्रकार चित्रों तथा प्रश्नों के माध्यम से वह किसी कहानी या निबन्ध को विकसित कर... चित्रों को देखने से छात्र-छात्राओं में निरीक्षण शक्ति का विकास होता है और प्रश्नों का... देने से उनकी तर्क शक्ति एवं अभिव्यक्ति-शक्ति का विकास होता है। चित्रों और प्र... माध्यम से सम्बन्धित विषय की मौखिक अभिव्यक्ति के पश्चात् विद्यार्थियों को उसे लि... के लिये कहा जाता है।

प्राथमिक स्तर पर उपरोक्त विधियों का लाभ तभी होगा। जब विषय छात्र-छा... की मानसिक एवं बौद्धिक योग्यताओं के अनुसार सरल, परिचित, दैनिक अनुभ... समीपवर्ती स्थितियों से सम्बन्धित होंगे। इसी प्रकार भाषा भी सरल और साधारण... चाहिये। कहने का अभिप्राय यह है कि छोटे बालकों के लिये विषय, भाषा और ... विधि रोचक तथा आनन्दप्रद होनी चाहिये। तभी निबन्ध लेखन की ओर उनकी ... विकसित होगी।

(II) माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर–प्राथमिक स्तर के पश्चात... छात्राओं के निबन्ध कार्य में कुछ गहनता लाने की आवश्यकता होती है जो उत्तरोत्त...

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रहनी चाहिये। इस स्तर पर छात्र-छात्राओं से विवरणात्मक, वर्णानात्मक, विचारात्मक एवं भावात्मक निबन्ध लिखवाये जाते हैं। उनसे विभिन्न कहानियां लिखवाई जाती हैं। यदि स्कूल से कोई पत्रिका निकलती है तो उन्हें उस पत्रिका के लिये कुछ रोचक लिखने के लिये कहा जाता है। इस प्रकार माध्यमिक स्तर पर विविध प्रकार का और विविध विषयों पर निबन्ध रचना कार्य होता है। इस स्तर पर निबन्ध शिक्षण के लिये शिक्षक निम्न विधियों का प्रयोग कर सकता है :-

1. उद्बोधन विधि–इस विधि में सम्बन्धित विषय की सामग्री को छात्र-छात्राओं से निकलवाया जाता है। इस प्रकार छात्र-छात्राओं को प्रस्तुत विषय पर स्वयं सोचने, विचारों को क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित करने तथा अपनी भाषा में लिखने के लिये प्रेरित किया जाता है। उद्बोधन-विधि में शिक्षक चित्रों, प्रश्नों या किसी घटना विशेष का प्रयोग कर सकता है।

2. वर्णन प्रणाली (विधि)– इस विधि में शिक्षक किसी विषय पर पहले स्वयं बोलता है। सम्बन्धित विषय के बारे में अपेक्षित जानकारी प्रदान करता है और उसके बाद छात्र-छात्राओं को लिखने के लिये कहता है।

3. तर्क या वाद-विवाद विधि–यह विधि उन विषयों पर लेखन कार्य करवाने के लिये उपयोगी है जिन पर तर्क-वितर्क की सम्भावना हो। इस विधि में विद्यार्थियों के दो दल बना दिये जाते हैं। एक दल विषय के पक्ष में सामग्री तैयार करता है और दूसरा दल विषय के विपक्ष में सामग्री तैयार करता है। दोनों पक्ष वाद-विवाद के माध्यम से विचार विमर्श करते हैं। दोनों दलों की तैयारी में शिक्षक मार्ग दर्शन प्रदान करता है। वाद-विवाद के अन्त में शिक्षक अपना निर्णय भी दे सकता है। इस प्रकार पहले मौखिक अभिव्यक्ति होती है और फिर बाद में छात्र-छात्राएं लिखित कार्य करते हैं। उच्च कक्षाओं में सामाजिक एवं राजनैतिक विषयों पर इसी विधि द्वारा निबन्ध लेखन की शिक्षा देना उपयोगी है।

4. सुझाव प्रणाली (विधि)– इस विधि के अन्तर्गत निबन्ध के विषय का सूत्रों के रूप में विद्यार्थियों को सुझाव देता है। सामग्री संकलन के लिय वह कुछ पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं का सुझाव भी दे देता है। छात्र उन पुस्तकों से सामग्री एकत्रित करते हैं और उसे क्रमबद्ध कर निबन्ध लिखते हैं।

5. रूप रेखा विधि– इस विधि में प्रश्नोत्तर, उद्बोधन और सुझाव विधियों का समन्वय होता है। इसमें शिक्षक सम्बन्धित विषय अथवा प्रकरण की रूप रेखा प्रस्तुत करता है। प्रश्नोत्तर और उद्बोधन विधियों द्वारा छात्र-छात्राओं की सहायता से सम्बन्धित विषय की रूप-रेखा चाक-बोर्ड पर तैयार की जाती है। उस रूप-रेखा को विकसित करने के लिये शिक्षक कुछ पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं को सुझाव भी देता है। रूप-रेखा को विकसित करने के लिये छात्र-छात्राओं को विचार-विमर्श का अवसर भी दिया जाता है। इन सभी सोपानों से गुजरने के बाद निबन्ध लिखते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6. मार्गदर्शन विधि– निबन्ध शिक्षण मार्गदर्शन विधि डाल्टन विधि पर आधारित है। इसमें निबन्ध कक्षा में नहीं लिखवाया जाता बल्कि छात्र-छात्राओं को निबन्ध लेखन के लिये कुछ समय दे दिया जाता है। शिक्षक विषय बता देता है और सामग्री के लिये पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएं भी बता देता है। छात्र-छात्राएं स्वतन्त्रतापूर्वक उन पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ते हैं। सामग्री को एकत्रित करने और क्रमबद्ध करने में शिक्षक से मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं और निर्धारित समय में निबन्ध लेखन का कार्य समाप्त करते हैं। यह विधि महाविद्यालय स्तर के छात्र-छात्राओं के लिये उपयोगी है।

7. समवाय प्रणाली (विधि)– इस विधि के अन्तर्गत भाषा के विभिन्न अंगों तथा अन्य विषयों में समवाय (Correlation) स्थापित करके निबन्ध लेखन का शिक्षण दिया जाता है। इसमें शिक्षक साहित्य की विभिन्न विधाओं–कहानी, नाटक, कविता आदि पढ़ाते समय ऐसे प्रश्नों की रचना करता है जिनके लिये निबन्धात्मक शैली में उत्तर देने की अपेक्षा रहती है। ऐसे प्रश्नों के उत्तर में छात्र-छात्राओं को दूसरे विषयों–इतिहास, राजनीति शास्त्र, अर्थ-शास्त्र, विज्ञान आदि से भी सहायता लेने को कहता है। इस प्रकार निबन्ध लेखन कार्य में भाषा की विभिन्न विधाओं और अन्य विषयों में समवाय-स्थापित करने का प्रयास किया जाता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि शिक्षक को उपरोक्त किस शिक्षण-प्रणाली का प्रयोग करना चाहिये। इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि शिक्षक किसी भी विधि का प्रयोग करने में स्वतन्त्र है। शिक्षण विधियां साधन हैं, साध्य नहीं। छात्र-छात्राओं की स्वतन्त्र लेखन अभिव्यक्ति की योग्यता विकसित करने के लिये शिक्षक किसी भी शिक्षण-विधि को अपना सकता है। परन्तु अपने शिक्षण को सार्थक उद्‌देश्यपूर्ण, प्रभावशाली और रोचक बनाने के लिये उसे निम्न बातों की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिए :–

(1) निबन्ध शिक्षण में शिक्षण सूत्रों (Maxims of Teaching) का ध्यान रखना चाहिये, जैसे 'सरल से कठिन की ओर', 'ज्ञात से अज्ञात की ओर', 'मूर्त से अमूर्त की ओर', आदि। छात्र-छात्राओं को पहले सरल वाक्य लिखने का शिक्षण देना चाहिए फिर मिश्रित वाक्य लिखवाने चाहिये। उसके बाद अनुच्छेद और फिर लम्बे-लम्बे लेख लिखवाने चाहियें।

(2) निबन्ध-शिक्षण में अधिकांश रूप से उन शब्दों तथा मुहावरों का प्रयोग करना चाहिये जिन्हें छात्र-छात्राएं पहले से जानते हों। नये शब्दों एवं मुहावरों का कम प्रयोग होना चाहिये।

(3) निबन्ध के विषय छात्र-छात्राओं के प्रत्यक्ष अनुभव से सम्बनिधत हों और उनकी रुचियों के अनुकूल हों।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(4) अध्ययन लेखन का पहला सोपान है। छात्र-छात्राओं को निबन्ध लेखन की Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu ओर अग्रसर करने से पहले उन में स्वाध्याय की आदत विकसित करनी चाहिये। उस के लिये छात्र-छात्राओं को दैनिक पत्रों पत्रिकाओं और विभिन्न प्रकार की पुस्तकें पढ़ने के लिये प्रेरित करना चाहिये।

(5) निबन्ध-लेखन कार्य करने से पहले मौखिक अभिव्यक्ति के लिये पर्याप्त अवसर प्रदान करने चाहियें।

(6) छात्र-छात्राओं को तर्क-वितर्क और विचार-विमर्श के लिये पर्याप्त अवसर प्रदान करने चाहियें।

(7) शिक्षक की स्वयं की भी निबन्ध लेखन में रुचि होनी चाहिये। उसे रचना की निबन्ध शैलियों का ज्ञान होना चाहिये। उसकी स्वयं की रुचि छात्र-छात्राओं में रुचि उत्पन्न एवं विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

(8) शिक्षक को छात्र-छात्राओं के लिखित कार्यों की जांच अवश्य करनी चाहिये। भाषा एवं व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियों को अवश्य शुद्ध करना चाहिये।

उपरोक्त बातों की ओर ध्यान देने से निबन्ध-शिक्षण को उपयोगी, प्रभावपूर्ण और सार्थक बनाने में सहायता मिलती है।

निबन्ध-शिक्षण में संशोधन-कार्य का महत्त्व

निबन्ध शिक्षण में 'संशोधन कार्य' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। निबन्ध-शिक्षण का मुख्य उद्देश्य छात्र-छात्राओं को भाषा के शुद्ध प्रयोग के योग्य बनाना तथा उनके अभिव्यक्ति कौशल को विकसित करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये वह विभिन्न प्रकार की निबन्ध-शिक्षण विधियों का प्रयोग करता है। किसी भी शिक्षण विधि का प्रयोग क्यों न किया जाये, यह निश्चित है कि छात्र लेखन कार्य में अशुद्धियां अवश्य ही करते हैं। संशोधन कार्य से शिक्षक को प्रत्येक छात्र की अशुद्धियों का ज्ञान होता है और उसे मालूम होता रहता है कि भाषा के शुद्ध प्रयोग में कौन सा छात्र कहां तक विकास कर रहा है ? इस प्रकार संशोधन कार्य प्रत्येक छात्र के उपलब्धि स्तर की ओर संकेत करता है और शिक्षक के लिये प्रत्येक छात्र की ओर ध्यान देना सम्भव होता है। इसके अतिरिक्त अशुद्धियाँ दूर होने की स्थिति में छात्र छात्राओं को शुद्ध लिखने की आदत पड़ जाती है। इस प्रकार संशोधन कार्य एक ओर शिक्षक के शिक्षण को प्रभावशाली और उद्देश्यपूर्ण बनाता है और दूसरी ओर छात्र-छात्राओं में आत्म-विश्वास एवं उत्साह पैदा करता है। शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों के लिये संशोधन कार्य उपयोगी है। इसलिये संशोधन कार्य निबन्ध शिक्षण का अनिवार्य अंग माना जाता है।

छात्र-छात्राओं द्वारा की गई सामान्य अशुद्धियां

सामान्यता छात्र-छात्राएं निबन्ध लेखन में निम्न अशुद्धियां करते हैं :-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(I) अक्षरों की अशुद्ध बनावट।

(II) अक्षर-विन्यास (वर्तनी) की अशुद्धियाँ।

(III) शब्दों का अशुद्ध प्रयोग।

(IV) मुहावरों का अशुद्ध प्रयोग।

(V) वाक्य रचना की अशुद्धियाँ।

(VI) व्याकरण से सम्बन्धित अशुद्धियाँ।

(VII) भावों और विचारों की अस्पष्टता।

(VIII) विचारों का क्रमबद्ध न होना।

(IX) निबन्ध का उचित अनुच्छेदों में विभक्त न होना।

(X) अनावश्यक सामग्री का समावेश।

संशोधन का कार्य कैसे किया जाये ?

संशोधन कार्य करने के लिये शिक्षक को निम्न बातों की ओर ध्यान देना चाहिये-

(1) जहां तक हो सके छात्र-छात्राओं के निबन्ध लेखन कार्य का संशोधन व्यक्ति रूप से किया जाना चाहिये। प्रत्येक छात्र को अपने पास बुलाकर उसकी का की जांच करनी चाहिये और उसकी गलतियां उसके सामने निकालनी चाहि गलतियां निकालना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि गलतियां छात्र को समझ चाहियें और यह सब कुछ व्यक्तिगत संशोधन द्वारा ही हो सकता है।

(2) यदि व्यक्तिगत रूप से छात्र-छात्राओं के निबन्ध लेखन कार्य का संशो सम्भव न हो तो शिक्षक को कापियाँ एकत्रित करके अपने खाली समय संशोधन कार्य करना चाहिये।

(3) संशोधन कार्य को सरल बनाने हेतु यदि कुछ विशेष चिन्ह बनाकर उन प्रयोग करें तो अच्छा रहता है जैसे-

अ = अक्षर विन्यास की अशुद्धि।

ल = लिपि की अशुद्धि।

क = कारक की अशुद्धि।

× = गलत शब्द का प्रयोग आदि।

शिक्षक जिन संकेतों का प्रयोग करे उसका ज्ञान छात्र-छात्राओं को भी होना चा ताकि वे अशुद्धियों को भली भाँति समझ सकें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(4) छात्र-छात्राओं की सामान्य अशुद्धियों और व्यक्तिगत अशुद्धियों को अलग-अलग कर देना चाहिये। सामान्य अशुद्धियों को चाकबोर्ड सामूहिक रूप से समझा देना चाहिये और व्यक्तिगत अशुद्धियों को सम्बन्धित छात्र को बुलाकर समझनी चाहिये।

(5) शिक्षक को संशोधन कार्य धैर्य के साथ करना चाहिये।

(6) शिक्षक का व्यवहार सहानुभूतिपूर्ण होना चाहिये। उसे किसी भी हालत में छात्र को डराना और धमकाना नहीं चाहिये।

(7) शिक्षक के लिये अशुद्धियां निकालना ही पार्यप्त नहीं बल्कि यह भी देखना चाहियें कि छात्र अशुद्धियों का निवारण करते हैं या नहीं।

(8) अशुद्धियों के निराकरण के बाद अभ्यास कार्य विधिवत रूप से कराया जाना चाहिए।

(9) कई छात्र-छात्राएं लापरवाही और शीघ्रता के कारण अशुद्धियां करते हैं। निबन्ध लेखन के समय उनकी ओर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये।

(10) संशोधन कार्य करते हुए शिक्षक को उन कारणों को भी खोजना चाहिये जिनके कारण छात्र अशुद्धियां करते हैं। उन कारणों का पता लगाकर शिक्षक को उन कारणों को दूर करने का प्रयास करना चाहिये।

निबन्ध लेखन में मौलिकता लाने हेतु उपाय

भाषा के शुद्ध रूप को सुरक्षित बनाये रखने और छात्र-छात्राओं को उचित वाक्यों की रचना करने में समर्थ बनाने के साथ-साथ उनको मौलिक अभिव्यक्ति के क्षेत्र में प्रशिक्षित करने की आवश्यकता होती है। ऐसा करने हेतु निम्न बातों को अपनाना अत्यन्त आवश्यक

(I) छात्र-छात्राओं को अवलोकन और स्वाध्याय के लिये अधिक से अधिक अवसर प्रदान करने चाहियें।

(II) उनको स्वतन्त्र रूप से सोचने, मनन करने और अभिव्यक्ति के लिये अवसर दिये जायें।

(III) छात्र-छात्राओं को अपनी बात अपने ढंग से प्रस्तुत करने के लिये पूर्ण रूप से स्वतन्त्रता दी जाये। शिक्षक को केवल सामान्य नियमों का ही ध्यान रखना चाहिये।

(IV) उनको विभिन्न लेखन शैलियों से परिचित कराया जाये ताकि वे उनमें से किसी भी शैली का अपनी रुचि के अनुसार चयन कर सकें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(V) छात्र-छात्राओं से केवल निबन्ध रचना ही न करवाई जाये बल्कि उनको कहानी, कविता, नाटक और व्यंग लेख लिखने के लिये भी प्रेरित करना चाहिये।

(VI) समय-समय संस्था में कहानी, कविता और निबन्ध लेखन की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाना चाहिए।

(VII) स्कूल में छात्र-छात्राओं से मौलिक लेख, कहानी, कविता लिखने के लिये कहा जाये और उन सभी रचनाओं को स्कूल की पत्रिका में छपवाना चाहिये

(VIII) छात्र-छात्राओं को लिखने के लिये जो विषय दिये जायें और उन विषयों से सम्बन्धित पुस्तकें भी पढ़ने के लिये कहा जाये। शिक्षक को फिर देखना चाहिये छात्र तर्क सहित अपनी भाषा शैली में अपनी बात कहने में सक्षम हैं या नहीं।

निबन्ध शिक्षण में ध्यान देने योग्य बातें

(1) निबन्ध लेखन के लिये विषय का चयन छात्रों की प्रत्यक्ष अनुभव परिधि के आधार पर हो।

(2) विषय उनकी रुचि के अनुसार हों।

(3) विषय ऐसे हों जिनका वर्णन छात्र-छात्राएं मौखिक रूप से कर सकें।

(4) विषय छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल हों।

(5) विषय अगर प्रत्यक्ष अनुभव के न हों तो शिक्षक को पहले मौखिक रूप चर्चा करवा लेनी चाहिये।

(6) जो कुछ भी छात्र-छात्राओं से लिखने के लिये कहा जाये उससे उनके निरीक्षण (अवलोकन), तर्क वितर्क, मनन और निर्णय शक्ति का विकास हो चाहिये।

(7) अभिव्यक्ति की दृष्टि से पूर्ण स्वतन्त्रता देनी चाहिये।

(8) निबन्ध लिखते समय छात्र-छात्राओं में किसी प्रकार का भय, क्रोध और ... नहीं होना चाहिये। इस लिये शिक्षक को प्रेम और सहानुभूतिपूर्वक व्यव... करना चाहिये।

(9) निबन्ध लेखन के प्रोत्साहन हेतु पारितोषिक वितरण को बढ़ावा देना चाहिये

(10) निबन्ध लेखन का कार्य उतना ही देना चाहिये जिसकी जांच शिक्षक सन्तोषजनक ढंग से कर सके।

(11) निबन्ध रचने के अतिरिक्त छात्र-छात्राओं को साहित्य की अन्य विधाओं रचना के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(12) छात्र-छात्राओं को लिखने की अन्य शैलियों के आधार पर अपनी शैली निर्माण और लिखने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये।

(13) शिक्षक को चाहिये कि वह ऐसी विधि का प्रयोग कर जिस के द्वारा छात्र-छात्राओं की कल्पना शक्ति का अधिक से अधिक विकास हो।

निबन्ध पाठ योजना

अनुक्रमांक — कक्षा : नवम

विषय : हिन्दी (निबन्ध) — अवधि : 40 मिनट

उप विषय : समाचार पत्र के लाभ — तिथि :

सहायक सामग्री :

विभिन्न समाचार पत्र और समाचार पत्र के विभिन्न क्षेत्रों के शीर्षक काटकर चार्ट पर चिपकाये टुकड़े।

सामान्य उद्देश्य :

1. द्रुत वाचन करने की क्षमता का विकास करना।
2. मौन वाचन एवं स्वाध्याय की आदत डालना।
3. हिन्दी में सोचने एवं मनन करने की शक्ति का विकास करना।
4. शब्द भण्डार में वृद्धि करना।
5. लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास करना।
6. प्राप्त किये गये अनुभवों का क्रमबद्धता से वर्णन करने की योग्यता का विकास करना।

विशिष्ट उद्देश्य

1. छात्र-छात्राओं को समाचार के विभिन्न अंगों एवं विभिन्न प्रकार के समाचार शीर्षकों से परिचित कराना।
2. छात्र-छात्राएं निम्न शब्दों और मुहावरों के बारे में जानकारी प्राप्त कर इनका वाक्यों में प्रयोग कर सकेंगे।

दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, विज्ञापन, व्यंग्य, दिल दहल जाना, उड़न छू, नौ दो ग्यारह, आश्चर्य, कमर कसना, सम्पादकीय, लेने के देने पड़ गये, सवांददाता, चकित होना, खून का खून, बाल-बाल बचना आदि।

पूर्व ज्ञान : छात्र-छात्राएं कई समाचार पत्रों के नाम जानते हैं और बीते दिन के कुछ समाचार के बारे में पता है ।

पूर्व ज्ञान परीक्षा (प्रस्तावना)

1. बीते कल की कोई एक मुख्य घटना बताओ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. विदेश की मुख्य घटना कौन सी थी ?
3. स्वदेश की मुख्य घटना बताओ।
4. प्रान्त की मुख्य घटना बताओ।
5. इन घटनाओं के बारे में कैसे पता चला ?
6. इन सभी साधनों में से सबसे पुराना और सुलभ साधन कौन सा है ?

उद्‌देश्य कथन : 'समाचार पत्र' पर निबन्ध लिखेंगे।

प्रस्तुतीकरण : निम्न ढंग से निबन्ध पाठ का प्रस्तुतीकरण किया जायेगा और पाठ का विकास प्रश्नोत्तर विधि के द्वारा किया जायेगा।

छात्राध्यापक क्रिया	छात्र क्रिया	चाकबोर्ड कार्य
किन-किन छात्रों के घर दैनिक समाचार पत्र आता है ?	कुछ छात्र हाथ खड़ा कर के बतायेंगे।	दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, दैनिक ट्रिब्यून, पंजाब केसरी, हिन्दुस्तान।
आप विभिन्न समाचार पत्रों के नाम बताओ ।	छात्र समाचार पत्रों के नाम बता देते हैं जैसे दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, पंजाब केसरी, दैनिक ट्रिब्यून, हिन्दुस्तान ।	
आप कौन सा समाचार पत्र मंगवाते हो ?	अलग-अलग छात्र अलग-अलग समाचार पत्रों के नाम बताते हैं।	
समाचार पत्र अगर किसी दिन नहीं आता तो कैसा लगता है ?	कुछ अटपटा लगता है। जैसे कि कुछ रह गया है जिसकी हमें आवश्यकता थी।	अटपटा लगने का कारण है कि यह हमारे दैनिक जीवन का अंग बन गया है ।
इससे मनुष्य की किस प्रकार की भूख शान्त होती है ?	एक दो छात्र बताने में असमर्थ रहते हैं और तीसरा छात्र बताता है कि मानसिक भूख शान्त होती है।	मानसिक भूख
सवेरे-सवेरे हर व्यक्ति समाचार पत्र पढ़ने के लिये उतावला क्यों होता है ?	एक होशियार छात्र बताता है कि हर मनुष्य में जिज्ञासा होती है और वह जानना	जिज्ञासा और उत्सुकता के कारण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

	चाहता है कि देश विदेश में क्या घटित हो रहा है ?	
समाचार पत्र की उत्सुकता से आप कब प्रतीक्षा करते हो ?	एक मेधावी छात्र बताता है कि जब परीक्षा का परिणाम समाचार में घोषित होना होता है।	
संचार साधन के रूप में समाचार की क्यों आवश्यकता है ?	यह सुलभ और सस्ता है। यह कहीं भी और किसी समय भी पढ़ा जा सकता है।	समूचे अखबार (समाचार पत्र) को सम्भाल कर रखा जा सकता है।
अन्य संचार साधनों की अपेक्षा इसकी लोकप्रियता अधिक क्यों है ?	इसमें समाचारों की विविधता होती है और इसको कहीं भी आसानी.से ले जाया जा सकता है। महत्त्वपूर्ण समाचारों को सम्भाल कर रखा जा सकता है।	
समाचार एकत्रित करने के साधन बताओ।	आकाशवाणी, दूरदर्शन, टेलीफून, पत्र ।	
समाचार पत्रों की क्या उपयोगिता है ?	इससे हमें देश-विदेश के समाचार पढ़ने को मिलते हैं और मानसिक भूख शान्त होती है।	मानसिक भूख शान्त होती है ।
समाचार पत्र किन लोगों के लिये अधिक उपयुक्त है ?	समाचार पत्र का लाभ शिक्षित लोग ही उठा सकते हैं।	
अशिक्षित लोग समाचार पत्रों का लाभ किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं ?	वे दूसरे से सुनकर या दूरदर्शन और आकाशवाणी के द्वारा।	दूरदर्शन आकाशवाणी
समाचार पत्र का पूरी तरह से लाभ उठाने के लिये अशिक्षित व्यक्ति को क्या करना चाहिये?	उसको पढ़ना लिखना चाहिये।	
अच्छे समाचार की क्या विशेषता होती है ?	जब कोई समाचार साधारण समाचार से हटकर हो- जैसे मनुष्य ने सांप को काटा।	लीक से हटकर समाचार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्या समाचार पत्र में केवल समाचार होते हैं ?	समाचार पत्रों में विज्ञापन भी होते हैं, कविता होती है, लेख होते हैं । शिक्षाप्रद सूक्तियां भी होती हैं।	विज्ञापन सूक्तियां
समाचार पत्रों की आय का साधन मुख्य रूप से समाचार का कौन सा भाग है ?	विज्ञापन वाला भाग ।	
समाचार पत्र फीका कब लगता है ?	जब उसमें विशेष समाचार या लकीर से हटकर समाचार न हो ।	विशेष लकीर से हटकर
क्या सभी समाचार दैनिक होते हैं ?	नहीं, कई साप्ताहिक होते हैं तो कई पाक्षिक भी होते हैं।	

बोध प्रश्न :

1. समाचार पत्र संचार साधनों में सबसे लोक प्रिय साधन क्यों है ?
2. आप समाचार पत्र क्यों पढ़ते हैं ?
3. समाचार पत्र की उत्सुकता से प्रतीक्षा कब होती है ?
4. व्यंग्य चित्र से क्या झलक मिलती है ?
5. समाचार पत्रों का छात्र-छात्राओं को विशेष रूप से क्या लाभ है ?
6. कौन से वर्ग के लोग समाचार पत्रों के लाभ से वंचित रहते हैं ।

गृहकार्य : छात्र-छात्राएं इस निबन्ध को अपनी भाषा में घर से लिखकर लावें।

अभ्यास के प्रश्न

1. निबन्ध लेखन से क्या तात्पर्य है ? निबन्ध लेखन के सामान्य उद्देश्य विस्तार से चर्चा कीजिए।
2. निबन्ध शिक्षण की कौन-कौन सी विधियां हैं ? माध्यमिक कक्षाओं में किन-किन विधियों का प्रयोग करेंगे और क्यों ?
3. निबन्ध शिक्षण में संशोधन क्यों आवश्यक है ? आप विद्यार्थियों की रचना संशोधन किस प्रकार करेंगे?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4. कक्षा सात के छात्र-छात्राओं को होली पर निबन्ध पढ़ाने हेतु पाठ योजना तैयार कीजिए।

5. निम्नलिखित में से किन्हीं दो पर टिप्पणी लिखिए।

(I) मौखिक रचना लिखित रचना की आधारशिला है।

(II) निबन्ध रचना के आवश्यक अंग।

(III) निबन्ध रचना कराते समय क्या-क्या सावधानी बरतनी चाहिये।

(IV) लिखित रचना में संशोधन।

(V) निबन्ध रचना का महत्त्व।

पत्र-लेखन
(Letter-Writing)

पत्र-लेखन एक कला है। छात्र-छात्राओं के लिये इस कला को सीखना बहुत आवश्यक है। आज के अति व्यस्त युग में मनुष्य के सरोकार बहुत अधिक बढ़ गये और भविष्य में और भी बढ़ेंगे। उसे अपने दैनिक जीवन में प्रतिदिन कितने ही व्यक्तियों, सम्बन्धियों, कार्यालयों से सम्पर्क करना पड़ता है। हर स्थान पर वह व्यक्तिगत रूप से उपस्थित नहीं हो सकता। इसलिये उसे पत्र का सहारा लेना पड़ता है। पत्र के द्वारा हम दूर बैठे किसी भी व्यक्ति से वार्तालाप कर सकते हैं। अपने भावों और विचारों को प्रकट कर सकते हैं और दूरस्थ व्यक्ति के भावों और विचारों को ग्रहण कर सकते हैं। पत्र सन्देश वाहक होता है, बिन बोले ही सब कुछ कह देता है। पत्र पर बहुत कुछ निर्भर करता है। पत्र लिखते समय बहुत सावधानी से काम लेना पड़ता है अन्यथा तनिक सी भूल राई का पहाड़ है बना देती है, अर्थ से अनर्थ हो जाता है। दूरस्थ व्यक्ति कुछ का कुछ समझ जाता है और उसके मन में ऐसी गांठ पड़ जाती है कि खोलने से नहीं खुलती।

पत्र मनुष्य की बुद्धि का परिचायक होता है, इसलिये पत्रों से सम्बन्धित बातों का जानना अत्यन्त आवश्यक है।

प्राचीन युग में यातायात की सुविधायें न होने के कारण पत्र व्यवहार बहुत महंगा पड़ता था। दूसरे साधारण व्यक्ति का निर्वाह घर बैठे बड़ी सुगमता से हो जाता था, इसलिये इतने पत्रों की आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। हां कभी-कभी राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये राज घराने के बड़े लोगों के विवाह, मरणादि की सूचना देने के लिये दूतों द्वारा पत्र भेजे जाते थे परन्तु आज के जीवन में पत्र साधारण व्यक्ति की भी बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है।

पत्रों के गुण

पत्र लिखते समय इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये कि लेख बिना कष्ट के पढ़ा जा सके। इस लिये पत्र में अग्रलिखित गुणों का होना आवश्यक है –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1. शुद्धता
2. सुन्दरता
3. स्पष्टता
4. प्रभावशीलता
5. संक्षिप्तता

पत्रों के प्रकार

पत्र अनेक प्रकार के होते हैं लेकिन विद्यालयों के छात्र-छात्राओं की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पत्र मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं :

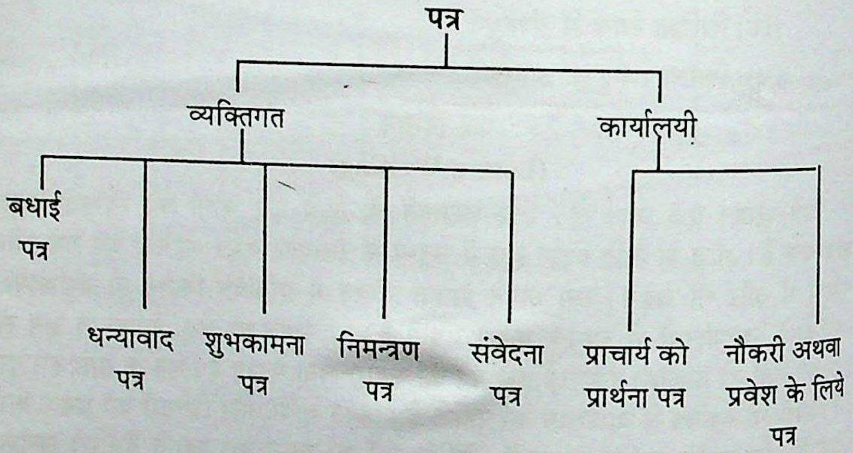

व्यक्तिगत-पत्र

1. व्यक्तिगत पत्र :- व्यक्तिगत रूप से अपने माता-पिता, पुत्र-पुत्री, मित्र अन्य सम्बन्धियों को लिखे गये पत्र व्यक्तिगत पत्र कहलाते हैं। ये पत्र विविधतापूर्ण होते हैं। इनमें सूचनाओं के साथ-साथ भावनाओं का भी आदान-प्रदान होता है। ये भावनाएं निजी होती हैं, वैसे ही इन पत्रों की लेखन-शैली में भी निजीपन (अपनापन) होता है। इनमें सम्बोधन, अभिवादन, औपचारिकता, शिष्टाचार आदि का ध्यान रखा जाता है।

व्यक्तिगत पत्रों में निम्नलिखित गुण होने चाहियें -

1. व्यक्तिगत पत्र स्वाभाविक बातचीत की शैली में लिखा होना चाहिये। ऐसा लगे मानो पत्र लेखक पत्र प्राप्तकर्त्ता से बातचीत कर रहा हो।
2. इसमें सामान्य शिष्टाचार का पालन होना चाहिये। सम्बोधन और अभिवादन में शिष्टाचार अवश्य झलकना चाहिये।
3. पत्र में किसी प्रकार के अपशब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिये।
4. पत्र लिखने वाले को विद्वता दिखाने हेतु कठिन शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

व्यक्तिगत पत्र-लेखन विधि

निम्न प्रकार से होनी चाहिये –

प्रेषक का पता तथा दिनांक – पत्र के ऊपर दाईं ओर पत्र-लेखक को अपना नाम तथा पता लिखना चाहिये। कुछ व्यक्ति व्यवसायी तथा पदाधिकारी, जिन्हें अधिक पत्र लिखने पड़ते हैं, अपने 'लैटर पैड' छपवा लेते हैं। उन पैडों पर उनका नाम, व्यवसाय, पता दूरभाष न. आदि दाईं ओर ऊपर छपा होता है।

नाम तथा पते के ठीक नीचे पत्र लिखने की तिथि लिखी रहनी चाहिये। नाम, पते तथा दिनांक का आरम्भ एक सीधी रेखा में होना चाहिये।

सम्बोधन और अभिवादन

सम्बोधन और अभिवादन दोनों महत्त्वपूर्ण होते हैं। इनमें पत्र-लेखक को सावधानी, कुशलता और सहृदयता का परिचय देना चाहिये। सम्बोधनों में विशेषणों का भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। उदाहरण के तौर पर कुछ सम्बोधन और अभिवादन निम्न तालिका में दिये गये हैं।

सम्बन्ध	सम्बोधन	अभिवादन
1. दादा, पिता	श्रद्धेय दादा जी	सादर चरण स्पर्श
	पूजनीय/पूज्य दादा जी	सादर नमस्कार
		चरण वन्दना
2. चाचा, फूफा	आदरणीय.......जी	सादर नमस्कार
मामा मौसी	पूज्य...... जी	सादर प्रणाम
	पूजनीय ....जी	चरण स्पर्श
3. दादी, नानी, माता	पूजनीय .... जी	चरण स्पर्श
4. बड़ा भाई, बहन	आदरणीय भाई साहिब	सादर प्रणाम
	आदरणीय बहन जी	सादर प्रणाम
5. मित्र	मित्रवर, प्रियवर	सस्नेह नमस्कार
	स्नेही मित्र	मधुर स्मृति
6. छोटा भाई, छोटी बहन	प्यारे/प्रिय	सस्नेह, स्नेह, प्रेम
	स्नेहमयी	
7. पुत्र, पुत्री	चिंरजीव/प्रिय पुत्र	सुखी रहो
	आयुष्मती	सुखी रहो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुख्य विषय

पत्र का मुख्य विषय सहज-स्वाभाविक होना चाहिये। उसमें रिशतों की मधुर सुगन्ध होनी चाहिये। विषय में औपचारिकता, बनावट की बजाय हृदय की सच्चाई प्रकट होनी चाहिये। जिस कार्य हेतु पत्र लिखा गया हो उसका वर्णन अवश्य होना चाहिये। विषय के आरम्भ में परिवारजनों का हाल-चाल पूछना चाहिये और अन्त में उनके लिये उचित आदर या स्नेह प्रकट करना चाहिये।

विषय का आरम्भ

तुम्हारा पत्र मिला। पढ़कर हाल मालूम हुए। आशा है तुम स्वस्थ और प्रसन्न होंगे।

विषय का अन्त

माता-पिता को मेरी ओर से नमस्कार कहना। अनुज को स्नेह। स्मिता को प्यार। चाची जी को प्रणाम कहें।

सभी परिवारजनों को यथायोग्य प्रणाम कहें। शेष शुभ। शेष मिलने पर, आज इतना ही। अच्छा, फिर मिलेंगे।

उपसहांर

पत्र के अन्त में पत्र-लेखक दाईं ओर नीचे आत्मीयता प्रदर्शित (बताता) हुआ अपना नाम लिखता है।

जैसे-आपका सुपुत्र, भवदीय, आपका अनुज, तुम्हारा प्रिय, तुम्हारा अपना, तुम्हारा अभिन्न मित्र, आपका ही, तुम्हारा ही।

व्यक्तिगत पत्रों के पांच प्रकार होते हैं।

1. बधाई-पत्र
2. धन्यवाद-पत्र
3. शुभकामना-पत्र
4. निमन्त्रण-पत्र
5. संवेदना-पत्र

कार्यालयी-पत्र

प्राचार्य को प्रार्थना-पत्र- विधि-प्राचार्य को प्रार्थना-पत्र लिखने की निश्चित शैली होती है। ऐसे पत्र छात्रों द्वारा लिखे जाते हैं, इस लिये उनमें आदरपूर्वक प्रार्थना करने का भाव होता है। इन पत्रों की रूप रेखा इस प्रकार होती है –

सेवा में,

प्राचार्य महोदय,

विद्यालय का नाम,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नगर का नाम

विषय - जो भी हो

सविनय निवेदन है कि --

आपकी अति कृपा होगी

धन्यवाद

प्रार्थी/आपका आज्ञाकारी/

आज्ञाकारी शिष्य/शिष्या

अपना नाम लिखें

कक्षा-जो भी हो

अनुक्रमांक- जो भी हो

दिनांक: जो भी हो

आवेदन-पत्र विधि- नौकरियों के लिये आवेदन करने की प्राय: दो विधियां होती हैं-

1. व्यक्तिगत आवेदन शैली
2. निर्धारित प्रपत्र शैली

व्यक्तिगत आवेदन शैली – इसमें नौकरी की इच्छा रखने वाला प्रार्थी अपनी योग्यता का परिचय देता है। इसमें नियुक्ति करने वाले को अपनी योग्यता एवं कार्य क्षमता का विश्वास दिलाया जाता है और नौकरी का अवसर देने की व्यक्तिगत रूप से प्रार्थना की जाती है। इसका उदाहरण प्रस्तुत है –

कम्पनी में क्लर्क के रिक्त पद की पूर्ति के लिये आवेदन पत्र

कम्पनी सचिव,

कम्पनी का नाम,

शहर का नाम।

विषय : क्लर्क पद के लिये आवेदन

महोदय

मुझे समाचार पत्र 'नवभारत टाईम्स' विज्ञापन क्रम ---दिनांक --- को पढ़कर पता चला कि आपके कार्यालय में क्लर्क के तीन पद रिक्त हैं। मैं इस पद के लिये अपने को उपयुक्त समझकर प्रस्तुत करता हूँ। मेरा परिचय और शैक्षणिक योग्यता निम्न है –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

यहां पर योग्यता का ब्यौरा लिख दिया जायेगा।

मेरा नाम पता निम्न है और सम्बद्ध प्रमाण पत्र संलग्न हैं।

प्रार्थी

दिनांक

नाम और पता

व्यक्तिगत पत्र की यह परम्परागत शैली बहुत कम अपनाई जा रही है और इसके स्थान पर आजकल प्रपत्रात्मक शैली अपनाई जा रही है। इस शैली में पूरा परिचय आंकड़ों के माध्यम से दिया जाता है। आवेदन करता कोई विशेष बात अपने बारे में कहना चाहता है तो एक दो वाक्य में लिख देता है।

इसका उदाहरण प्रस्तुत है-

सेवा में

सचिव,
बैंकिंग सेवा भर्ती बोर्ड,
शहर का नाम।

विषय :
लिपिक पद भर्ती हेतु

महोदय

मैंने हिन्दी के 'नवभारत टाईम्स' में पढ़ा विज्ञापन न. ---- के अनुसार मैं इस पद के लिये आवेदन कर रहा हूँ। मेरा परिचय और शैक्षणिक योग्यता निम्न है -

नाम -----

पिता का नाम -----

जन्म तिथि ------

पता ------

शैक्षणिक योग्यता

कक्षा	विद्यालय का नाम	बोर्ड का नाम	उत्तीर्ण वर्ष	प्राप्तांक	विषय
1. मैट्रिक	---	---	---	---	----
2. 10 + 2	--	---	---	----	----

हिन्दी टाईप स्पीड -----

अंग्रेजी टाईप स्पीड -----

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनुभव: 2 वर्ष

मैं आशा करता हूँ आप साक्षात्कार का अवसर अवश्य देंगे ताकि मैं अपनी योग्यता एवं क्षमता का परिचय दे सकूं।

धन्यवाद
आवेदक/प्रार्थी
नाम :
पता :

संलग्न :

1. मैट्रिक का प्रमाण-पत्र
2. 10+2 का प्रमाण-पत्र
3. अनुभव प्रमाण-पत्र
4. चरित्र प्रमाण-पत्र

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

8

हिन्दी पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त और पाठ्यक्रम की समीक्षा (Principles of the Construction of Hindi Curriculum and Critical Evaluation of Curriculum)

हिन्दी पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त

पाठ्यक्रम के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए यह बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि पाठ्यक्रम का निर्माण करना एक गम्भीर एवं दायित्वपूर्ण कार्य है। समूचा शिक्षण कार्य पाठ्य क्रम पर ही आधारित होता है। यदि पाठ्यक्रम में कोई भी दोष होगा तो वह पूरे शिक्षण कार्य एवं शिक्षा प्रणाली को प्रभावित करेगा। इसलिए पाठ्यक्रम का निर्माण कार्य विशेषज्ञों के हाथ में होना चाहिए जो शिक्षण कर रहे अध्यापकों के सक्रिय सहयोग से इसे सम्पन्न करें।

अच्छा पाठ्यक्रम बनाने के लिए निम्नलिखित सिद्धान्तों को अपनाना चाहिए-

(I) शिक्षा के उद्देश्यों के अनुकूल– पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय शिक्षा के उद्देश्यों को सामने रखना चाहिए। ये उद्देश्य पाठ्यक्रम में प्रतिबिम्बित होने चाहिएं और पाठ्यक्रम की प्रत्येक इकाई किसी विशिष्ट उद्देश्य पर आधारित होनी चाहिए।

(II) विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुसार–प्रत्येक विषय का पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुसार होना चाहिए। भाषा शिक्षण में विद्यार्थियों को दूसरों के विचारों को ग्रहण करने तथा अपने विचारों को व्यक्त करने के योग्य बनाना होता है। विभिन्न शिक्षा स्तरों पर विद्यार्थियों की ग्रहणशीलता तथा अभिव्यक्ति का स्तर अलग अलग होता है। पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय विद्यार्थियों के शिक्षा स्तर को ध्यान में रखना चाहिए।

(III) मनोवैज्ञानिक आधार–पाठ्यक्रम निर्माण का आधार मनोवैज्ञानिक होना चाहिए। पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय विद्यार्थियों की मानसिक एवं बौद्धिक योग्यताओं को ध्यान में रखना चाहिए। प्राय: इस बात पर जोर दिया जाता है कि शिक्षा विद्यार्थी केन्द्रित होनी चाहिए। यह तभी हो सकता है जब पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय विद्यार्थियों की मानसिक एवं बौद्धिक योग्यताओं तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को सम्मुख रखा जाए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(IV) सन्तुलित– पाठ्यक्रम सन्तुलित होना चाहिए अर्थात् विषय के विभिन्न अंगों तथा पहलुओं को पाठ्यक्रम में उचित स्थान मिलना चाहिए। भाषा शिक्षण में विद्यार्थियों को शुद्ध उच्चारण, मौखिक अभिव्यक्ति, लेखन कार्य, वाचन आदि का शिक्षण दिया जाता है तथा उनकी साहित्यिक अभिरुचियों को विकसित किया जाता है। पाठ्यक्रम के निर्माण में भाषा के इन सभी अंगों का शिक्षा स्तर के अनुकूल ध्यान रखना चाहिए और पाठ्यक्रम में उन्हें उचित स्थान देना चाहिए।

(V) पाठ्यक्रम न अधिक कठिन न अधिक सरल होना चाहिए– पाठ्यक्रम निर्माण करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कोई भी दो व्यक्ति एक जैसे नहीं होते। उनके बौद्धिक स्तर एवं मानसिक स्तर में भिन्नता होती है। यद्यपि एक कक्षा में एक ही उम्र वर्ग के बच्चे होते हैं परन्तु उनके बौद्धिक स्तर में भिन्नता होती है। कई बच्चे तेज बुद्धि के होते हैं, कुछ सामान्य बुद्धि के तो कुछ मन्द बुद्धि हैं। पाठ्यक्रम के प्रति सभी विद्यार्थियों की रुचि उत्पन्न करने के लिए आवश्यक है कि पाठ्यक्रम न अधिक कठिन हो और न अधिक सरल हो।

(VI) जीवन के विभिन्न पहलुओं का प्रतिबिम्ब–पाठ्यक्रम में जीवन की विभिन्नता प्रतिबिम्बित होनी चाहिए। निर्धारित पाठ्यक्रम की विभिन्न पृष्ठ भूमि तथा विभिन्न वातावरण से सम्बन्धित विद्यार्थी पढ़ते हैं। इसीलिये पाठ्यक्रम में जीवन के विभिन्न पहलू उजागर होने चाहिएं। इससे विद्यार्थियों को जीवन की विविधता की झलक मिलेगी और विविधता में जीवन का पूर्णता का अनुभव विकसित होगा।

(VII) भावी जीवन के निर्माण में सहायक– विद्यार्थियों को भावी जीवन के लिए तैयार करना भी शिक्षा का उद्देश्य है। इसलिए पाठ्यक्रम में भावी जीवन की आशाएँ तथा आकांक्षाएँ समाहित होनी चाहिएं। पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों का समावेश होना चाहिए जिनसे विद्यार्थियों के मन में भावी जीवन के प्रति आस्था उत्पन्न हो और उनमें सामाजिक जीवन जीने की योग्यता विकसित हो।

(VIII) लचीला–पाठ्यक्रम कठोर नहीं होना चाहिए। पाठ्यक्रम इतना संकुचित एवं संकीर्ण नहीं होना चाहिए कि वह अध्यापक के लिए विकसित ज्ञान प्रदान करने में बाधक सिद्ध हो। उसमें लचक होनी चाहिए ताकि अध्यापक आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्तन एवं परिवर्द्धन कर सके।

(IX) उचित विकास क्रम–पाठ्यक्रम में उचित विकास क्रम होना चाहिए। किसी भी कक्षा का पाठ्यक्रम पिछली कक्षा का स्वाभाविक विकास क्रम हो। किसी भी कक्षा का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पाठ्यक्रम बनाते समय पिछली कक्षा के पाठ्यक्रम को ध्यान में रखना चाहिए ताकि विषय वस्तु में निश्चित विकास क्रम बना रहे।

(X) निर्धारित समय के अनुकूल–पाठ्यक्रम बनाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पाठ्यक्रम को कितने समय में समाप्त करना है। अध्यापक को उस के लिए रोज कितने पीरीयड पढ़ाने को मिलते हैं और वर्ष में इन पीरीयडों की कुल संख्या कितनी होती है। निर्धारित समय के अनुकूल बनाया गया कार्यक्रम न बहुत लम्बा होता है और न बहुत छोटा। वह इतना लम्बा होना चाहिए कि निर्धारित समय पर आसानी से समाप्त हो सके अत: पाठ्यक्रम निर्धारित समय के अनुकूल हो।

(XI) इकाइयों में विभाजित– पाठ्यक्रम छोटी-छोटी इकाइयों में विभाजित होना चाहिए। इससे पाठ्यक्रम को सुबोध, सुस्पष्ट तथा संग्रह्य बनाने में सहायता मिलती है। प्रत्येक इकाई के उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिएं। इससे अध्यापक को किसी प्रकार का भ्रम नहीं होता और वह उन उद्देश्यों को सम्मुख रख कर अपने शिक्षण-कार्य को कुशलतापूर्वक संगठित कर सकता है।

(XII) निर्देशों एवं सूचनाओं का उल्लेख– अध्यापक को पाठ्यक्रम के अनुसार अपने शिक्षण कार्य को आयोजित करना होता है। ऐसा तभी हो सकता है जब पाठ्यक्रम में अध्यापक के लिए आवश्यक निर्देशों एवं सूचनाओं का उल्लेख हो-जैसे प्रत्येक पाठ के सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों, पौराणिक एवं ऐतिहासिक सन्दर्भों की संक्षिप्त व्याख्या, उचित शिक्षण-साधन, विषय-सामग्री से सम्बन्धित सहायक क्रियाएं, शिक्षण के दौरान आने वाली समस्याएं तथा उनके समाधान आदि।

निष्कर्ष रूप में सामान्य सिद्धान्तों को सम्मुख रख कर बनाया गया पाठ्यक्रम उपयोगी, प्रभावशाली तथा क्रियाशील सिद्ध हो सकता है। अत: इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पाठ्यक्रम का निर्माण ऐसे हाथों में न सौंपा जाए जिन्हें इन मूलभूत सिद्धान्तों का ज्ञान न हो। वास्तव में पाठ्यक्रम का निर्माण किसी एक व्यक्ति का काम नहीं। इसके लिये विशेषज्ञों की एक समिति बनाई जानी चाहिए। इस समिति को शिक्षण कार्य कर रहे अध्यापकों से विचार विमर्श कर के शिक्षा के बदलते हुए उद्देश्यों के अनुरूप उचित पाठ्यक्रम का निर्माण करना चाहिए। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि पाठ्यक्रम का निरन्तर मूल्यांकन होता रहे। इसके लिए अध्यापकों, विद्यार्थियों तथा समाज के विभिन्न वर्गों की पाठ्यक्रम के प्रति प्रतिक्रिया जाननी चाहिए और उन प्रतिक्रियाओं पर विचार विमर्श करके पाठ्यक्रम को समय-समय पर परिवर्तित करते रहना चाहिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पाठ्यक्रम की समीक्षा

पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों के वर्णन के बाद अब यह प्रश्न उठता है कि पाठ्यक्रम के लिए जो सिद्धान्त निर्धारित किये गये हैं उनका पाठ्यक्रम के अन्तर्गत कहां तक निर्वाह हुआ है ? यदि उनका निर्वाह हुआ है तो किस सीमा तक और यदि नहीं तो कैसे होना चाहिए ? इन सब बातों का आलोचनात्मक ढंग से विवेचन करना ही पाठ्यक्रम की समीक्षा है।

पाठ्यक्रम की समीक्षा करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये–

(1) पाठ्यक्रम छात्र–छात्राओं के लिये होता है और न कि छात्र–छात्राएं पाठ्यक्रम के लिये होते हैं। इसलिये पाठ्यक्रम की समीक्षा के अन्तर्गत यह देखना आवश्यक हो जाता है कि पाठ्यक्रम जिस स्तर के लिये बनाया गया है उसमें उस स्तर के छात्र–छात्राओं की रुचियों, क्षमताओं और योग्यताओं को ध्यान में रखा है या नहीं।

(2) यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि सभी छात्र–छात्राओं की योग्यता और क्षमता एक जैसी नहीं होती चाहे उनकी आयु एक समान ही हो। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह देखना आवश्यक हो जाता है कि पाठ्यक्रम में विभिन्नता को ध्यान में रखकर विभिन्न प्रकार के पाठों का समावेश किया गया है या नहीं।

(3) पाठ्यक्रम उस स्तर के छात्र–छात्राओं की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला भी हो। इसलिये यह भी देखना चाहिए कि निर्धारित पाठ्यक्रम से छात्र–छात्राओं की आवश्यकता की पूति होती है या नहीं।

(4) वही पाठ्यक्रम उपयोगी माना जाता है जिसका सम्बन्ध जीवन से है। इस दृष्टि से निर्मित पाठ्यक्रम की उस स्तर के छात्र–छात्राओं के लिये जीवन में उपोयोगिता है या नहीं।

(5) समीक्षा की दृष्टि से यदि शिक्षण उद्देश्यों पर ध्यान दिया जाये तो पाठ्यक्रम में यह देखना चाहिये कि जिन उद्देश्यों को निर्धारित किया था उनका सफलतापूर्वक निर्वाह हुआ है या नहीं।

(6) पाठ्यक्रम छात्र–छात्राओं में अच्छी आदतों का निर्माण करने में सहायक सिद्ध होता है या नहीं।

(7) पाठ्यक्रम छात्र–छात्राओं के सामाजिक जीवन से सम्बन्धित है या नहीं।

(8) पाठ्यक्रम की समीक्षा करते समय यह जानना आवश्यक होता है कि पाठ्यक्रम में ऐसे पाठों का चयन किया है या नहीं जिनका सम्बन्ध छात्र–छात्राओं के सर्वांगीण विकास से है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

निष्कर्ष रूप में यह कहना उचित एवं सार्थक होगा कि जिस कक्षा के लिये पाठ्यक्रम का निर्माण किया है उस की समीक्षा करने के लिये ऊपरलिखित प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास करें। अगर अधिकतर प्रश्नों का उत्तर हां में है तो यह मानकर चलिये कि पाठ्यक्रम पर्याप्त रूप से अच्छा है। जिन प्रश्नों का उत्तर ना में है तो यह मानिये कि पाठ्यक्रम में कुछ कमी है और सुधार की आवश्यकता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. मातृभाषा के पाठ्यक्रम का निर्माण किन सिद्धान्तों के आधार पर करना चाहिये?
2. मातृभाषा पाठ्यक्रम की विस्तार से समीक्षा कीजिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

UNIT IV

पद्य व गद्य शिक्षण

(Teaching of Poetry and Prose)

(1) कविता शिक्षण व कविता पाठ योजना
(Teaching of Poetry and Lesson Planning)

(2) गद्य शिक्षण व पाठ योजना
(Teaching of Prose and Lesson Planning)

(3) मूल्यांकन का प्रत्यय व अर्थ
(Concept and Meaning of Evaluation)

(4) अच्छे भाषा परीक्षण का आधार
(Criteria of a Good Language Test)

(5) अशुद्धि विश्लेषण व उपचारात्मक शिक्षण
(Error Analysis and Remedial Teaching)

(6) हिन्दी शिक्षण में पाठ्यक्रम सहगामी गतिविधियां
(Co-curricular Activities in Hindi Teaching)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1

कविता शिक्षण व कविता पाठ योजना
(Teaching of Poetry and Lesson Planning)

कविता शिक्षण

कविता क्या है ?

सामान्य रूप से हिन्दी साहित्य में काव्य, पद्य और कविता प्रायः पर्यायवाची शब्दों के रूप में प्रयोग किये जाते हैं परन्तु इनमें थोड़ा सा अन्तर पाया जाता है। काव्य शब्द संस्कृत भाषा का शब्द है और इसका अर्थ व्यापक रूप में लिया जाता है। व्यापक रूप में इसका अर्थ साहित्य से है। संस्कृत साहित्य में काव्य के दो रूप माने गये हैं – पद्य काव्य और गद्य काव्य। पद्य से कविता इस लिये भिन्न है कि कविता छन्दोबद्ध भी हो सकती है और छन्द रहित भी हो सकती है। इसलिये पद्य रचना को कविता कहा जा सकता है लेकिन प्रत्येक कविता को पद्य कहा जाये यह आवश्यक नहीं।

काव्य साहित्य के अनेक विद्वानों ने कविता को परिभाषा में बांधने का प्रयास किया है। कविता से सम्बन्धित पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों के द्वारा दी गई परिभाषाएं निम्न हैं–

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाएं –

1. ''कविता छन्दोमय रचना है''। – जानसन
2. ''कविता संगीतमय विचार है''। – कार्लाइल
3. ''कविता कल्पना की अभिव्यक्ति है''। – शैले
4. ''कविता उत्तमोत्तम शब्दों का उत्तमोत्तम क्रम विधान है''। – कोलरिज़
5. ''कविता मूल में जीवन की आलोचना है''। – मैथ्यू आर्नोल्ड
6. कविता कल्पना और मनोवेगों द्वारा जीवन की ''आलोचना है''। – हडसन

भारतीय विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाएं

1. ''ऐसे शब्द और अर्थ को कविता कहते हैं जिसमें दोष न हो, गुण हो, अलंकार हों और कभी कभी अलंकार न हो।'' – मम्मट
2. रसात्मक वाक्य को कविता कहते हैं। –विश्वनाथ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3. "रमणीय अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य कहते हैं" - जगन्नाथ

4. "हृदय की मुक्ति की साधना के लिये मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती है उसे कविता कहते हैं"। - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

5. "कलात्मक रीति से सजी हुई भाषा जिसमें भावों का व्यंजन होता है"। - श्याम सुन्दर दास

6. "जलकर चीख उठा वह कवि था" ? - प

7. "वियोगी होगा पहला कवि,
आह, से उपजा होगा गान ।
उमड़कर आंखों से चुपचाप,
बही होगी कविता अनजान ।।" - प

परिभाषाओं के आधार पर कविता के सामान्य लक्षण निम्न हैं –

1. कविता में जीवन का सुन्दर चित्रण और जीवन की आलोचना होती है।
2. कविता में भावों की प्रधानता होती है और विचार गौण होते हैं।
3. कविता में कल्पना की प्रधानता होती है क्योंकि कविता का सामान्य गुण कल्पना होता है।
4. कविता की भाषा संगीतमय होती है।
5. रसवादियों के अनुसार आलौकिक आनन्द ही काव्य की आत्मा है क्योंकि कविता के पाठ से आनन्द की अनुभूति होती है।
6. कविता के मुख्य रूप से चार तत्त्व होते हैं- भाव तत्त्व, कल्पना तत्त्व, बुद्धि तत्त्व और शैली तत्त्व।

कविता शिक्षण का महत्त्व एवं उसके उद्देश्य

मानव जीवन के लिये कविता का बड़ा महत्त्व है। मानव जीवन केवल खाने कमाने के लिये ही नहीं है बल्कि रस मग्न होना, आनन्द से झूमना, भाव तरंगों में डूब जाना, मानव संवेदना का अनुभव करना और भौतिक स्तर से ऊपर उठकर आलौकिक एवं आध्यात्मिक स्तर के आनन्द की अनुभूति करना जीवन के उच्च लक्ष्य हैं। वैसे भी मानव जाति के किसी भी साहित्य में काव्य का विशेष स्थान होता है। हमारे धर्म, संस्कृति और दर्शन की अभिव्यक्ति भी काव्य के रूप में अभिव्यक्त की गई है। 'गीता' और 'रामचरित मानस' काव्य की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ हैं। इसलिये कहा गया है कि जो शक्ति तलवार में नहीं होती वो शक्ति कवि की कलम में होती है। काव्य का सीधा सम्बन्ध मानव हृदय की तन्त्रियों से होता है जो हृदय को झंकृत कर देती है। कविता के माध्यम से सुख दुःख अनुभूतिमय सजीव हो उठती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कविता पाठक को जीवन के सौन्दर्य और मधुर पक्ष का अनुभव कराती है। पाठक अपने भावों को मूर्तरूप में देखकर अपनी आत्मा से साक्षात्कार करता है। कविता सुन्दर शब्दों में सन्देश और उपदेश देती है। ये सन्देश रमणी के समान मधुर और बहुत प्रभावोत्पादक होते हैं। कविता के प्रभाव से हृदय का विस्तार, सात्विक भावनाओं का उद्‌बोधन, वासनाओं का शमन, चरित्र का निर्माण और विश्व प्रेम की भावना का विकास और प्रसार होता है। एक महान विचारक के कथनानुसार कविता का आरम्भ आनन्द से और अन्त बुद्धिमता से होता है।

कविता के महत्त्व को समझने के पश्चात कविता शिक्षण के सामान्य उद्‌देश्यों और विशेष उद्‌देश्यों को निर्धारित करना सहज हो जाता है।

कविता शिक्षण के सामान्य उद्‌देश्य

1. छात्र-छात्राओं में स्वर-प्रवाह तथा भावों के अनुरूप कविता-पाठ करने की योग्यता विकसित करना।
2. उनमें सौन्दर्यानुभूति को विकसित करना।
3. उनमें रागात्मक प्रवृत्तियों को संशोधित करना।
4. छात्रों में सात्विक भावनाओं को जागृत करके उन्हें मानव-कल्याण की ओर अग्रसर करना।
5. विद्यार्थियों में दूषित भावनाओं को परिष्कृत करके उनके मनोविकारों को उदात्त बनाना।
6. उनमें कल्पना शक्ति का विकास करना।
7. छात्र-छात्राओं को इस योग्य बनाना कि वे पूरे मनोयोग के साथ कविता को सुनकर उसका अर्थ ग्रहण कर सकें और भावों का अनुभव कर सकें।
8. उनमें भावानुसार तथा उचित गति एवं आरोह-अवरोह के साथ कविता-पाठ करने और उससे रसानुभूति प्राप्त करने की योग्यता विकसित करना।
9. छात्र-छात्राओं में काव्य सौन्दर्य परखने की योग्यता विकसित करना।
10. छात्रों में कविता का समीक्षात्मक अध्ययन करने की योग्यता विकसित करना।
11. उनको विभिन्न काव्य शैलियों का सम्यक ज्ञान प्रदान करना।
12. उनको इस योग्य बनाना कि वे कवि की भावनाओं के साथ अपनी भावनाओं का तादात्मय स्थापित कर सकें।
13. छात्र-छात्राओं को विभिन्न शब्द-शक्तियों शब्द-योजना, छन्दों, अलंकारों तथा विविध रसों का शास्त्रीय ज्ञान प्रदान करना।
14. उनमें कविता के प्रति आकर्षण एवं रूचि विकसित करके उन्हें काव्य साहित्य के अध्ययन की ओर अग्रसर करना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

15. उनमें सृजनात्मक शक्तियों को विकसित करके उन्हें काव्य रचना के लिये प्रेरित करना।

16. छात्र-छात्राओं में मानवीय संवेदनायें विकसित करके उन्हें चारित्रिक-उच्चता की ओर अग्रसर करना।

विशेष उद्देश्य

विभिन्न स्तरों की पाठ्य पुस्तकों में कुछ कविताएं भी सम्मिलित की जाती हैं। हाई स्तर पर कविता की अलग से पाठ्य पुस्तक निर्धारित होती है। प्रत्येक कविता को पढ़ाते समय अध्यापक को कुछ विशेष उद्देश्य सम्मुख रखने पड़ते हैं। मुख्य रूप से ये विशेष उद्देश्य निम्न हैं –

1. छात्र-छात्राओं को कविता-विशेष के भावों को समझने तथा आत्मसात करने के योग्य बनाना।
2. उनको इस योग्य बनाना कि वे कविता विशेष में व्यक्त विचारों को समझ सकें।
3. उनमें कविता-विशेष के अनुरूप सौन्दर्यानुभूति एवं रसानुभूति को विकसित करना।
4. कविता-विशेष में निहित सन्देश से छात्र-छात्राओं को अवगत कराना।
5. उनको इस योग्य बनाना कि वे कवि विशेष में प्रयुक्त काव्यशैली को समझकर उसका आनन्द ले सकें।
6. उनको इस योग्य बनाना कि वे कविता विशेष में की गई जीवन का आलोचना को समझ सकें।
7. छात्रों को सम्बन्धित कवि की अन्य रचनाएं पढ़ने के लिये प्रेरित करना।
8. सम्बन्धित कवि की काव्यगत विशेषताओं को समझने तथा उनकी समीक्षा करने की योग्यता विकसित करना।

कविता के रस-पाठ और बोध-पाठ में अन्तर

कविता-शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों में कविता के रस-पाठ और बोध-पाठ का अन्तर निहित है। कविता की सौन्दर्यानुभूति, आनन्दानुभूति एवं रसानुभूति उसके रस-पाठ के साथ सम्बन्धित है। वस्तुतः इन दोनों को अलग नहीं किया जा सकता। इसमें कोई सन्देह नहीं कि कविता का जन्म भावों से होता है परन्तु यह भी सत्य है कि कवि की वाणी से उसके विचार भी प्रस्फुटित होते हैं। कविता में प्रयुक्त शब्दों के अर्थों तथा उसमें निहित भाव भंगिमाओं को समझे बिना सच्ची रसानुभूति नहीं हो सकती। छात्र-छात्राओं में रसानुभूति तथा आनन्दानुभूति की योग्यता विकसित करना कविता शिक्षण की पूर्ति में कविता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के बोध पाठ की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। कविता का भावनाओं के अनुरूप उचित स्वर प्रवाह के साथ पाठ करना रसानुभूति की ओर अग्रसर होना है, परन्तु कविता में प्रयुक्त शब्दों, अलंकारों आदि की व्याख्या करना कविता के बोध पाठ की ओर अग्रसर होना है। दोनों कविता के प्रभावशाली शिक्षण में एक दूसरे के पूरक हैं। इतना सब कुछ होने पर भी कविता का ज्ञान पाठ की श्रेणी में न रखकर इसको सौन्दर्यात्मक पाठ की श्रेणी में ही रखते हैं क्योंकि कविता पाठ का प्रमुख उद्देश्य छात्र-छात्राओं को आनन्दानुभूति, रसानुभूति और सौन्दर्यानुभूति कराना है।

गद्य और पद्य में अन्तर

जैसे कि पहले चर्चा की जा चुकी है कि गद्य पाठ को बोध पाठ के रूप में पढ़ाया जाता है और कविता पाठ को सौन्दर्यात्मक पाठ के रूप में पढ़ाया जाता है क्योंकि गद्य का सम्बन्ध ज्ञान प्रदान करने से है और कविता का सम्बन्ध सौन्दर्यानुभूति से है। पद्य छन्दोबद्ध रचना होती है और गद्य में ऐसा नहीं है। पद्य में लय बद्धता का पूरा-पूरा ध्यान रखना आवश्यक है लेकिन गद्य में इसकी आवश्यकता नहीं होती। पद्य में भावों की प्रधानता होती है और गद्य में विचारों की प्रधानता होती है। परन्तु इसका यह अर्थ कदापि भी नहीं लेना चाहिये कि पद्य विचार रहित है और गद्य भाव रहित है क्योंकि इस बात की पुष्टि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के इस कथन से होती है कि, ''यात्रा के पथ पर निकलती रही है बुद्धि हृदय को साथ लेकर''। अर्थात साहित्य में बुद्धि और हृदय का समन्वय होना बहुत आवश्यक है।

पद्य की भाषा अलंकारों से अलंकृत होती है गद्य की भाषा अलंकृत नहीं होती। पद्य की भाषा में संगीतात्मकता होती और गद्य की भाषा में संगीतात्मकता का पुट नहीं होता। इनके अतिरिक्त एक अन्तर यह है कि पद्य में कल्पना की उड़ान भरी जाती है और गद्य में यथार्थ का ही चित्रण होता है।

कविताओं के प्रकार

छात्र-छात्राओं को कविताएं उनके मानसिक स्तर, रूचि, अभिरूचि और भाषा ज्ञान के अनुसार ही पढ़ानी चाहियें। सभी स्तर पर कविताओं का स्तर समान नहीं हो सकता। विद्यालय के भिन्न-भिन्न स्तर के अनुसार कविताओं को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. प्राथमिक कक्षाओं के लिये बाल गीत
2. माध्यमिक कक्षाओं के लिये वर्णनात्मक गीत
3. उच्च कक्षाओं के लिये साहित्यिक गीत

1. बाल गीत की विशेषतायें

1. ये अत्यन्त सरल होते हैं और इनके वाक्यांश बहुत छोटे होते हैं।
2. ये वास्तविक रूप में कविताएं न होकर तुक बन्दियां होती हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3. इन बाल गीतों का सम्बन्ध बाल जीवन से सम्बन्धित घटनाओं, वस्तुओं, मनोरंजक कहानियों, प्रार्थना, पशु–पक्षी और महान पुरूषों के जीवन चरित्र एवं प्रशंसा से होता है।
4. इनमें वर्णन की गई बातें बालकों द्वारा प्राप्त किये गये अनुभवों से जुड़ी होती हैं।
5. इन बाल गीतों का सम्बन्ध संगीत और अभिनय से होता है।
6. ये गीत बालकों के लिये रूचिकर होते हैं।
7. इन गीतों की कड़ियां बहुत छोटी होती हैं।
8. ये कण्ठस्थ किये जा सकते हैं क्योंकि ये बहुत छोटे होते हैं।

2. वर्णनात्मक गीत की विशेषतायें

1. वर्णनात्मक गीतों की भाषा बालगीतों की अपेक्षा अधिक कठिन और अपरिचित होती है।
2. ये गीत कल्पनापूर्ण होते हैं।
3. इन गीतों में थोड़ा गम्भीर भावों का पुट पाया जाता है।
4. ये पद्यमय रचनाएं तो अवश्य होती हैं परन्तु साहित्यिक कविताएं नहीं होतीं।
5. इन गीतों का सम्बन्ध सामान्यत: वीर, करुण, दया भाव से सम्बन्धित कथाओं से होता है। इनके अतिरिक्त इन गीतों में प्रकृति चित्रण, देश भक्ति और भक्ति काल के कवियों की सरलतम कविताएं भी सम्मिलित की जा सकती हैं।

3. उच्च कक्षाओं की साहित्यिक कविताओं की विशेषतायें

1. इनकी भाषा शैली में नवीनता और मौलिकता हो।
2. इनके विषय गम्भीर भावों से युक्त हों।
3. इनका सम्बन्ध प्राचीन और आधुनिक कवियों की साहित्यिक कविताओं से हो अर्थात शुद्ध रूप में साहित्यिक कविताएं ही हों।
4. इस स्तर पर खड़ी बोली की आधुनिक कविताओं के साथ–साथ भक्तिकाल और रीतिकाल की कविताएं भी पढ़ानी चाहियें इससे छात्र–छात्राओं को कविता की विभिन्न धाराओं से अवगत कराया जा सकता है।
5. इस स्तर भी कविताएं अधिक लम्बी नहीं होनी चाहियें। इस स्तर पर छोटी–छोटी विविध विषयों से सम्बन्धित और विभिन्न कवियों की कविताएं पढ़ानी चाहिये।
6. इन कविताओं में भावपक्ष और कला पक्ष दोनों ही प्रबल होते हैं।
7. ये कविताएं बुद्धि की परख, कल्पना की दौड़ तथा भावों की गहराई के साथ अलंकार, रस, छन्द आदि से युक्त होती हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

8. कविताओं का भाग गद्य भाग की तुलना में बहुत कम होना चाहिये। अगर कविता का भाग गद्य भाग का एक चौथाई हो तो उसे उचित माना जाता है। अधिक बार अधिक भाग होने से अध्यापक कविता का पाठ जल्दी-जल्दी करके समाप्त करना चाहता है और वह गहनता से पढ़ाने में सफल नहीं होता।

9. इस स्तर पर हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों की कविताओं के अतिरिक्त भारत की अन्य प्रादेशिक भाषाओं के प्रमुख कवियों की कविताओं को पढ़ाना श्रेयस्कर रहता है इससे उनको भारतीय साहित्य की भी कुछ जानकारी हो जाती है।

10. उच्च स्तर पर भारतीय कवियों के अतिरिक्त संसार के प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का हिन्दी अनुवाद भी दिया जाना चाहिये इससे छात्र-छात्राओं का साहित्यिक दृष्टिकोण विकसित होगा।

कविता का पाठ्यक्रम में विशेष स्थान

कविता का पाठ्यक्रम में महत्त्वपूर्ण स्थान होना चाहिये। कविता मानव को सत्य शिव सुन्दर की ओर प्रेरित करती है। मनुष्य जीवन का अन्तिम और महान उद्देश्य होता है सत्य की खोज, कल्याण की कामना और सुन्दर का रसपान करना। शिक्षा का शाश्वत और अन्तिम उद्देश्य भी यही है। कविता में इन तीनों का सुन्दर समन्वय है। इस लिये शिक्षा को सार्थक एवं मूल्यवान बनाने और मानव जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु कविता शिक्षण अत्यन्त आवश्यक और उपयोगी है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी अगर हम गहनता से अवलोकन करें तो व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर छात्र-छात्राओं की रूचियां भी भिन्न-भिन्न होती हैं। किसी छात्र-छात्रा को कहानी पसन्द है तो किसी को व्याकरण, किसी को गीत पसन्द है तो किसी को शान्तिपूर्वक विचारों पर मनन करना। कविता ही एक ऐसी अनूठी रचना है जिसमें कहानी, व्याकरण, गेयता और विचारों की गहनता का समावेश होता है। यही कारण है कि छात्र-छात्राओं को कविता का पढ़ना बहुत प्रिय लगता है।

कविता की लोकप्रियता इस लिये भी है कि हर मनुष्य दुःख के क्षणों में मन के भार को हल्का करने के लिये कविता को माध्यम बनाकर कुछ कहना भी चाहता और रोना भी चाहता है। इस प्रकार कविता गायन और रूदन का माध्यम बनती है। इसके अतिरिक्त कविता में मनोरंजन भी निहित है और कर्त्तव्य परायणता भी। इन सब बातों के साथ-साथ कविता में भाव सौन्दर्य और कला सौन्दर्य का सुन्दर समन्वय होता है।

सार रूप में यह कहना उचित होगा कि शाश्वत मूल्यों की प्राप्ति और जीवनोपयोगी बातों को ग्रहण करने की दृष्टि से पाठ्यक्रम में कविता शिक्षण का विशेष महत्त्व है। इस लिये कविता का शिक्षण प्रभावपूर्ण ढंग से सफलतापूर्वक किया जाना चाहिये।

कविता चयन के लिये ध्यान देने योग्य बातें

कविता-शिक्षण आनन फानन में नहीं किया जा सकता अर्थात् हिन्दी का शिक्षक किसी भी कक्षा में कोई भी कविता पढ़ा दे ऐसा करना उचित नहीं है। शिक्षक को कविता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पढ़ाने के लिये कुछ मूलभूत बातों को अवश्य ही ध्यान में रखना चाहिये तभी वह कविता का सार्थक एवं सफल शिक्षण कर सकता है।

कविता के चयन हेतु शिक्षक को निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

1. कविता की भाषा व स्तर छात्रों के मानसिक स्तरानुकूल हो- छात्र-छात्राओं के मानसिक स्तर को ध्यान में रखते हुए प्राईमरी कक्षाओं में बालगीत, माध्यमिक कक्षाओं के लिये वर्णनात्मक गीत और उच्च कक्षाओं के लिये साहित्यिक कविताओं को पढ़ाना उपयुक्त रहता है। अगर ऐसा नहीं होगा तो छोटी कक्षाओं में कठिन और उच्च कक्षाओं में सरल कविताएं प्रायः निरर्थकता और नीरसता का कारण बन जाती हैं।

2. कविता के विषय विद्यार्थियों के जीवन से सम्बन्धित हों- मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर यह बात देखने को मिलती है कि जिस बात का छात्र-छात्राओं के जीवन से सम्बन्ध होता है वे उसको जल्द से जल्द और अधिक से अधिक सीखने का प्रयास करते हैं। इस लिये पढ़ाई जाने वाली कविताएं उनके अनुभव के घेरे और इनके जीवन से सम्बन्धित होंगी तो वे उसमें अवश्य ही रूचि लेंगे और सीखने के लिये अथक प्रयास करेंगे।

3. कविताओं में विविधता- छात्र-छात्राएं पढ़ने लिखने में परिवर्तन चाहते हैं। मानव स्वभाव विविधता पसन्द करता है। यही कारण है कि छात्र-छात्राएं एक बात या एक जैसे पाठ को बार-बार दुहराने में रूचि नहीं लेते। इस लिये कविता के विषयों में विविधता का होना जरूरी है। कविता के विषयों की विविधता से छात्र-छात्राओं में सुनने और सीखने की उत्सुकता बनी रहती है। इस लिये एक ही रस से सम्बन्धित कविता न पढ़ाकर शिक्षक को विभिन्न रस जैसे वात्सल्य, श्रृंगार, भक्ति, वीर और हास्य रस की कविताएं पढ़ानी चाहियें।

4. कविता में जीवन दर्शन की झलक- कविता में शाश्वत मूल्यों की झलक होनी चाहिये। कविता छात्र-छात्राओं को सदमार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हुए जीवन के उच्च व अन्तिम उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु प्रेरित करें। ऐसी कविताओं के माध्यम से छात्र-छात्राएं जीवन, समाज, राष्ट्र, धर्म, संस्कृति के प्रति उचित व सकारात्मक दृष्टिकोण बनाने में सफल हो सकते हैं।

5. कविता रोचक हो- यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जो बात बालकों के लिये रूचिकर होती है तो उनका ध्यान उस ओर केन्द्रित होता है। इस लिये शिक्षक को कविता का चयन और पढ़ाते समय छात्र-छात्राओं की रूचि को ध्यान में रखना चाहिये। जो कविता रोचक होती है तो विद्यार्थी स्वयं ही उसमें रूचि लेने लगते हैं और वे उसको सार्थकता से समझने में सफल हो जाते हैं। कई बार देखने में आया है कि कविता रूचिकर नहीं होती और वह कविता पाठ्यक्रम में होने के कारण पढ़ानी पड़ती है। ऐसी स्थिति में शिक्षक को तुलना विधि का सहारा लेकर कविता का शिक्षण करना चाहिये। ऐसा करने से अरूचिकर कविता को रूचिकर बनाया जा सकता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कविता शिक्षण की विभिन्न विधियां

कविता-शिक्षण के लिये किसी भी शिक्षण विधि का एक मात्र उद्देश्य यह होता है कि जो कुछ शिक्षक पढ़ाये उसे छात्र-छात्राएं अर्थ एवं भाव सहित ग्रहण कर सकें और उनको कविता विशेष पाठ की रसानुभूति एवं आनन्दानुभूति हो। इसके लिये तीन बातों का होना बहुत आवश्यक है जो निम्न हैं-

1. शिक्षक की कुशलता
2. विद्यार्थियों की एकाग्रता और पाठ में रूचि
3. सशक्त पाठन प्रणाली

इनमें से जहां तक पाठन प्रणाली का सम्बन्ध है इसके लिये निश्चित रूप से यह कहना कठिन होगा कि अमुक प्रणाली सर्वश्रेष्ठ है। क्योंकि छात्र-छात्राओं में व्यक्तिगत विभिन्नताओं के कारण न तो यह कहना उचित होगा कि सभी शिक्षक एक ही पाठ्य प्रणाली का अनुसरण करें और न यह कहना उचित होगा कि अमुक प्रणाली के माध्यम से पढ़ाने पर छात्र-छात्राएं अच्छी तरह समझ कर सीख सकेंगे। इस लिये शिक्षक को व्यक्तिगत विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए उसी प्रणाली को प्रयोग में लाना चाहिये जिस से विद्यार्थी पाठ को भली भांति समझ सकें यही प्रणाली शिक्षक के लिये उचित और सशक्त रहेगी।

कविता शिक्षण की कई विधियां प्रचलित हैं। छात्र-छात्राओं के मानसिक एवं शैक्षिक स्तर को ध्यान में रखते हुए पता चलता है कि किसी स्तर पर कहीं कोई प्रणाली उपयुक्त सिद्ध होती है तो कहीं कोई दूसरी प्रणाली उचित होती है। प्राईमरी, माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक और उच्च कक्षाओं के लिये अलग-अलग विधियों का प्रयोग किया जाता है जो निम्नलिखित हैं -

1. गीत तथा नाट्य (अभिनय) प्रणाली- मानव स्वभाव से कर्णप्रिय बातों को सुनना ही पसन्द करता है। मधुर गीत सुनना सभी को प्रिय लगता है। विशेषकर छोटे बालकों को तो गीत सुनना बहुत ही अच्छा लगता है। इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को ध्यान में रखते हुए शिक्षक का यह उद्देश्य होता है कि बालक स्वर, ताल संगीत से परिचित होते हुए गीत गायें। वे सुस्वर से गीत गाते हुए अभिनय करें और आनन्द प्राप्त करें। इस प्रकार गीत बालकों के लिये खेल और मनोविनोद के साधन बनते हैं। बाल गीतों को पढ़ाने की सर्वश्रेष्ठ प्रणाली गीत तथा नाट्य (अभिनय) प्रणाली है। कविता को सरल राग में गवाने का प्रयास करना चाहिये और साथ-साथ बालकों से ताली बजवानी चाहिये। गीत में संगीतात्मकता लाने के लिये हारमोनियम का प्रयोग भी किया जा सकता है। छोटे बालक समस्त गीत को रटते हैं और राग ताल युक्त गाते हैं। इस विधि से बच्चों में कविता के प्रति आकर्षण हो जाता है। जिस गीत में अभिनय की आवश्यकता होती है उसको बालक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अभिनय के साथ पढ़ते हैं। अभिनय व्यक्तिगत रूप और सामूहिक रूप-दोनों से ही हो सकता है।

यह कविता-शिक्षण विधि छोटी कक्षाओं के लिये बहुत लाभप्रद है। कविता में रुचि उत्पन्न करने का यह प्रथम साधन है। बालक इस विधि से कविता को कण्ठस्थ करने में सफल होते हैं और भावानुकूल वाचन करते हुए समस्त कविता को खेल-खेल में सीख लेते हैं।

उदाहरण के लिये बाल गीतों की कुछ पंक्तियां निम्नलिखित हैं।

नन्हा मुन्ना राही हूँ,
देश का सिपाही हूँ।

एक-एक यदि पत्थर जोड़ो, तो तुम महल बना दोगे।
एक-एक यदि पेड़ लगाओ, तो तुम बाग बना दोगे।
एक-एक यदि पैसा जोड़ो, तो तुम बन जाओगे धनवान।
एक-एक यदि अक्षर जोड़ो, तो तुम बन जाओगे विद्वान।

जल्दी सोना, जल्दी उठना
नियम बहुत ही अच्छा है।
जो भी इसका पालन करता
वह ही अच्छा बच्चा है।

पंख अगर मिलते तितली के
दूर-दूर उड़ जाती मैं,
कंठ अगर पाती कोयल का
मीठे गीत सुनाती मैं।
पर मम्मी-पापा कहते मैं
तितली से भी प्यारी हूँ,
राज कुमारी से भी बढ़कर
उनकी राजदुलारी हूँ।
रंग-बिरंगी फ्राक पहन कर
जब मैं गीत सुनाती हूँ,
सब कहते मैं कोयल से भी
बढ़ कर मीठा गाती हूँ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपरलिखित कविताओं की भिन्न-भिन्न पक्तियां अभिनय के साथ गवाई जा सकती हैं। अभिनय व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से हो सकता है।

इस बात में कोई दो मत नहीं कि यह प्रणाली बड़ी सहज, सरल और रूचिकर हैं। इस प्रणाली में बालक स्वत: ही अनेक गीत कंठस्थ कर लेते हैं। लेकिन इस प्रणाली में एक छोटी सी कमी यह है कि अभिनय के लिये अभ्यास की आवश्यकता होती है, परन्तु सभी बालक अभिनय कर सकें यह सम्भव नहीं। दूसरे, अभिनय छोटे बालकों के लिये तो उपयुक्त और शोभायमान लगता है लेकिन उच्च कक्षाओं के छात्र-छात्राओं के लिये नहीं। इस लिये यह प्रणाली छोटे बालकों के लिये नितान्त उपयोगी है परन्तु सभी कक्षाओं के छात्र-छात्राओं के लिये नहीं।

2. अर्थबोध या शब्दार्थ विधि- इस प्रणाली का प्रयोग माध्यमिक स्तर पर किया जाता है। विद्यालयों में अधिकांश शिक्षक इसी प्रणाली का ही प्रयोग करते हैं। शिक्षक के लिये सबसे सरल प्रणाली यही है। इस प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षक कविता को एक छात्र से पढ़वाता है और स्वयं उसका अर्थ कह देता है, या अन्य छात्रों से अर्थ करवा देता है। दूसरे, इस बात को इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि कविता का सरल शब्दों में अनुवाद बता दिया जाता है। इस प्रणाली में शिक्षक का यह उद्देश्य रहता है कि छात्र-छात्राएं गद्य पाठ के समान पद्य का अर्थ समझ सकें। वास्तविकता यह है कि अधिकतर स्कूलों में यही प्रणाली प्रचलित है। लेकिन यह प्रणाली दोषपूर्ण है।

इस प्रणाली के माध्यम से पढ़ाये जाने पर छात्र-छात्राएं कविता के अर्थ तो भली भांति समझ लेते हैं लेकिन कविता के भावों को समझने में समर्थ नहीं होते। दूसरे, इस प्रणाली में शिक्षक अधिक सक्रिय होता है और विद्यार्थी सक्रिय नहीं होते। इस लिये यह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी उचित नहीं है। इसके अतिरिक्त कविता शिक्षण का मुख्य रूप से सम्बन्ध सौन्दर्यानुभूति, रसानुभूति और आनन्दानुभूति से होता है, न कि केवल शब्दार्थ कथन से। इस लिये इस प्रणाली का समर्थन करना उचित नहीं होगा।

3. खण्डान्वय प्रणाली- इस प्रणाली को प्रश्नोत्तर प्रणाली भी कहा जाता है। इस प्रणाली के अनुसार शिक्षक छात्र-छात्राओं से प्रश्न करते हुए विषय सामग्री का विश्लेषण और संश्लेषण करता है। फिर पृथक किये गये विचारों को जोड़कर उनका अर्थ समझा देता है। यह प्रणाली वास्तव में गद्य शिक्षण के लिये ही उचित है। जैसे गद्य को खण्डों में विभाजित करके प्रश्न किये जाते हैं और फिर उसको अगले विचार से जोड़ देते हैं, वैसे ही पद्य में भी करते हैं और अगर कोई बात विद्यार्थियों को समझ नहीं आती तो वो उनको समझा दी जाती है।

यह प्रणाली गद्य पढ़ाने के लिये तो उपयुक्त है लेकिन कविता शिक्षण के लिये उपयुक्त नहीं है। इस प्रणाली का प्रयोग गहन भावों युक्त कविताओं के पढ़ाने के लिये नहीं किया जा सकता, हाँ इस प्रणाली का प्रयोग लम्बी ऐतिहासिक एवं वर्णनात्मक कविताओं के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिये किया जा सकता है। यह प्रणाली दोष से मुक्त नहीं है क्योंकि इस प्रणाली के द्वारा पढ़ाने से सम्बन्धित शिक्षकों में अनेक भ्रम हैं। अधिकतर शिक्षक एक साथ प्रश्नों को पूछते जाते हैं और अन्त में उसका स्पष्टीकरण करते हैं। ऐसा करने से छात्र-छात्राएं प्रश्नों में ही उलझ कर रह जाते हैं । भाषाविदों का कहना है कि कविता को खण्ड-खण्ड में विभाजित करके पढ़ाना उचित नहीं है। फिर भी अगर शिक्षक इस प्रणाली को कविता पढ़ाने के लिये अपनाते हैं तो निम्न बातों को अवश्य ही ध्यान में रखें –

1. छात्र-छात्राओं को पहले प्रश्न के स्पष्ट होने पर ही दूसरा प्रश्न पूछना चाहिये।
2. प्रश्नों के उत्तर में छात्र-छात्राओं का पूरा-पूरा सहयोग प्राप्त करना चाहिये।
3. आवश्यकतानुकूल और अवसरानुकूल छात्र-छात्राओं को प्रेरित किया जाये और उनसे पूरक प्रश्न पूछ कर पाठ का विकास किया जाये।

4. व्याख्या विधि- व्याख्या विधि शब्दार्थ कथन प्रणाली का विकसित और सर्वश्रेष्ठ रूप है। यह माध्यमिक कक्षाओं में कविता पढ़ाने के लिये उपयुक्त विधि है। इस विधि के अन्तर्गत शिक्षक छात्र-छात्राओं को केवल कविता के अर्थ ही नहीं समझाता बल्कि उन्हें कविता में निहित भाव, छन्द अलंकार आदि की भी पूर्ण रूप से जानकारी देता है। इसमें कविता के दोनों भाव पक्ष और कलापक्ष से भी अवगत कराया जाता है।

कविता-शिक्षण के लिये यह उपयुक्त विधि है क्योंकि इस विधि से छात्र-छात्राओं को काव्यनन्द की सौन्दर्यानुभूति और रसानुभूति होती है। परन्तु यह प्रणाली छोटी कक्षाओं के लिये उचित नहीं है। इस विधि में इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि शिक्षक व्याख्या में नीरसता न आने दे। इस लिये शिक्षक को व्याख्या आवश्यकतानुकूल छात्र-छात्राओं की सहायता से करनी चाहिये।

व्याख्या विधि के तीन उपभेद हैं

1. व्यास विधि
2. तुलना विधि
3. समीक्षा विधि

1. व्यास विधि – इस विधि को यह नाम कथावाचक व्यासों को ध्यान में रखकर दिया गया है क्योंकि व्यास कथा को रूचिकर बनाने हेतु कथा को सुनाते हुए भाषा, भाव, काव्य की विशेषताएं, शैली आदि की विस्तृत व्याख्या करते हैं। वे एक-एक शब्द के अनेक पयार्यवाची शब्दों पर प्रकाश डालते हैं और इसके साथ ही साथ कविता के एक-एक पद को लेकर उसके विभिन्न पक्षों की व्याख्या करते हैं। अगर शिक्षक भी इसी प्रकार कविता के बाल की बाल की खाल उतारते हुए व्याख्या करे तो कविता पाठ का उद्देश्य प्राप्त करने में सफल हो जाता है। परन्तु इस विधि में अधिक समय की आवश्यकता पड़ती है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिक्षकों के पास इतना समय नहीं होता। व्यास विधि व्याख्या की चरमसीमा है और इसमें व्याख्या की दृष्टि से किसी प्रकार की कोई कसर नहीं रहती। यह प्रणाली महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के छात्र-छात्राओं को पढ़ाने के लिये उपयुक्त हो सकती है, परन्तु विद्यालय की कक्षाओं के लिए उपयुक्त नहीं है।

2. तुलना प्रणाली – इस विधि में शिक्षक एक पद की तुलना विभिन्न भाषाओं के अथवा एक ही भाषा के विभिन्न कवियों के विभिन्न पदों के साथ करता है जहां भाव साम्य हो, जैसे कबीर की ये पंक्तियां :–

"पानी केरा बुद बुदा, अस मानस की जात।
देखत ही छिप जायेगा, ज्यों तारा परिभात।।"

शिक्षक पढ़ाते समय इसी भाव से सम्बन्धित किसी अन्य कवि की पंक्तियाँ प्रस्तुत करेगा और साम्य भाव की तुलना करायेगा जैसे –

महादेवी जी के जीवन की क्षण भंगुरता के बारे में विचार

"इस नभ का कोई कोना,
कभी न मेरा अपना होना।
परिचय था इतना इतिहास यही,
उमड़ी कल थी मिट आज चली।।"

कबीर की ये पंक्तियां पढ़ाते हुए :-

"माटी कहे कुम्हार को,
तू क्यों रोंदे मोय।
एक दिन ऐसा आयेगा,
मैं रोंदूंगी तोय।।"

शिक्षक इन पंक्तियों के भाव को समझाने के लिये तुलनात्मक रूप में शायर उमर ख्याम की निम्न पंक्तियों को प्रस्तुत कर सकता है –

"मैं देखता रहा एक हसीन कूजागर।
मिट्टी को मथ रहा था लातों से कूदकर।।
मिट्टी जुबाने हाल से गोया यह कहती थी।
कुछ गुलरूखों की खाक है मुझमें भी बेखबर।।"

यदि शिक्षक कुशाग्र और कुशल हो तो वह व्याख्या प्रणाली द्वारा कवि के विचारों को कवियों के विचारों से तुलना करते हुए कक्षा वातावरण को काव्यमय एवं रोचक बना देता है। ऐसा करने से छात्र-छात्राओं का पर्याप्त रूप से मनोरंजन भी होता है। हमें यह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बात नहीं भूलनी चाहिये की तुलना प्रणाली अपने आप में स्वतन्त्र प्रणाली न होकर व्याख्या प्रणाली का ही अंग अर्थात् व्याख्या प्रणाली की सहायक है। इस प्रणाली का प्रयोग उच्च कक्षाओं के लिये ही होना चाहिये। छोटी कक्षाओं के लिये बिल्कुल भी उचित नहीं है। माध्यमिक कक्षाओं में इस का सीमित प्रयोग करना ही सही रहता है।

3. समीक्षा प्रणाली- इस प्रणाली के अन्तर्गत कविता को काव्य के सिद्धान्तों की कसौटी पर कस कर परखते हैं अर्थात् कविता विशेष का शिक्षण की दृष्टि से मूल्यांकन करते हैं। इस विधि में शिक्षक कविता के गुण दोषों की विवेचना करने में, छन्द अलंकारों, शब्द-शक्तियों, बुद्धि तत्त्व कल्पना तत्त्व आदि कविता के मुख्य अंगों की परख और मूल्यांकन करने में छात्र-छात्राओं के लिये सहायक बनता है। विद्यालयों के छात्र-छात्राओं को काव्य शास्त्र के सिद्धान्तों का पहले से कोई ज्ञान नहीं होता अर्थात् उनको काव्य शास्त्र के सिद्धान्तों से अवगत नहीं कराया जाता, इस लिये यह प्रणाली इन कक्षाओं के लिये उपयुक्त नहीं है। यह प्रणाली तो स्नातकोत्तर छात्र-छात्राओं के लिये ही उचित एवं सार्थक है।

सभी विधियों का सूक्ष्म अध्ययन करने के उपरान्त यह कहना उचित होगा कि कोई भी प्रणाली अपने आप को हर प्रकार से पूर्ण नहीं है। सभी प्रणालियों में थोड़ी बहुत कमी अवश्य देखने को मिलती है। इसलिये शिक्षक को चाहिये कि छात्र-छात्राओं के मानसिक स्तर और कविता विशेष के अनुकूल उपयुक्त एवं सार्थक प्रणाली पर निर्भर करें। प्रत्येक प्रणाली का अपना-अपना महत्त्व है, जैसे प्राईमरी कक्षाओं में गीत नाट्य प्रणाली, शब्दार्थ कथन एवं खण्डान्वय प्रणाली (प्रश्नोत्तर प्रणाली)। भाव एवं विचार प्रधान कविताओं के शिक्षण के लिये व्याख्या प्रणाली कभी-कभी साम्य भाव की तुलना करने हेतु तुलना प्रणाली का प्रयोग करना श्रेयस्कर होता है। महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों की कक्षाओं के लिये व्यास और समीक्षा प्रणाली का प्रयोग करना बहुत लाभप्रद होता है।

निष्कर्ष में वही प्रणाली उचित और सार्थक है जो कविता पाठ शिक्षण के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध हो। इन सभी प्रणालियों की स्पष्टता हेतु प्रस्तुत है तालिका निम्न है-

कविता-शिक्षण विधियाँ

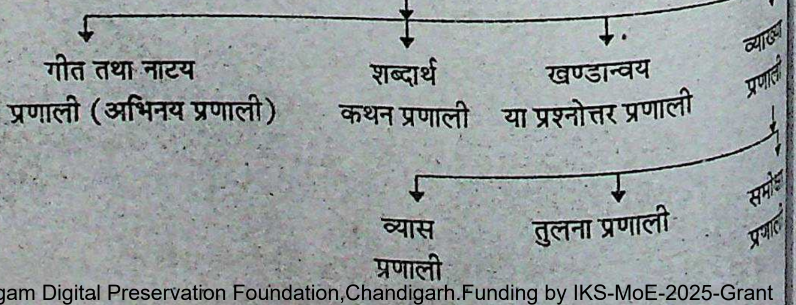

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कविता-शिक्षक के गुण

कविता-शिक्षक के लिये अपने विषय का सम्पूर्ण ज्ञान और विद्वता ही पर्याप्त नहीं होती अपितु उसमें और भी अनेक गुण होने चाहियें जैसे वाणी की मधुरता, कंठ की कोमलता, स्वभाव की सरलता, हृदय की सरसता और दृष्टिकोण में उदारता, भावों और विचारों की गहनता की पकड़ के लिये स्वाध्याय, चिन्तन और मनन की भी आवश्यकता होती है। शिक्षक की गुणवत्ता का आधार निम्न गुण होने चाहियें-

1. विषय का व्यापक ज्ञान एवं आत्म विश्वास- विषय के व्यापक ज्ञान के बिना शिक्षक आत्म विश्वास के साथ छात्र-छात्राओं को कविता की रसानुभूति एवं सौन्दर्यानुभूति नहीं करा सकता, क्योंकि कविता की रसानुभूति के लिये यह बहुत आवश्यक है कि छात्र-छात्राएं कविता में निहित गहन भावों और विचारों को उचित ढंग से समझ सकें और काव्यानन्द की अनुभूति करें। कविता के व्यापक ज्ञान हेतु शिक्षक में काव्य के प्रति अनुराग और काव्य का विस्तृत अध्ययन होना चाहिये अन्यथा वह कविता का शिक्षण भली भांति नहीं कर सकेगा।

2. छात्र-छात्राओं का ज्ञान- छात्र-छात्राओं के ज्ञान से तात्पर्य यहां उनके मनोभावों की जानकारी से है। शिक्षक छात्र-छात्राओं के मनोभावों को समझने में सफल और समर्थ होता है तो उसको यह समझने में देर नहीं लगती कि छात्र-छात्राएं किस स्तर पर किस प्रकार की कविता पसन्द करेंगे ? उसको इस बात का भी ज्ञान होना चाहिये कि वह छात्र-छात्राओं में किस प्रकार से काव्य के प्रति रूचि जागृत कर सकता है ? विद्यार्थियों के मनोभावों को समझने वाला शिक्षक ही भली भांति यह जान सकता है कि किस स्तर के विद्यार्थियों के लिये किस प्रकार की कविता का पढ़ाना उचित रहेगा।

3. भावानुकूल आदर्श पाठ की क्षमता- कविता शिक्षण में आदर्श पाठ का बहुत अधिक महत्त्व होता है। आदर्श पाठ किये बिना कोई भी शिक्षक कविता पढ़ाने में सफल नहीं हो सकता। कविता में गद्य की तुलना में स्वर, ताल, लय, विराम और उचित आरोह-अवरोह का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। उचित लय, ताल, गति आदि के अनुसार आदर्श पाठ में कविता के आधे भावों को छात्र सरलता से ग्रहण करने में सफल हो जाता है। आदर्श भावानुकूल पाठ करते हुए शिक्षक की मुख मुद्राओं में परिवर्तन होता रहता है। दुःख भरी कविता पढ़ाते हुए शिक्षक की सूरत में निराशा की झलक और सुखान्त कविता पढ़ाते हुए उल्लास की झलक होनी चाहिये। प्रसिद्ध शिक्षाविद हैडो (Haddow) ने भी इस बात की पुष्टि की है। उनके अनुसार कविता कर्णप्रिय होनी चाहिये।

4. प्रभावोत्पादक एवं सशक्त अभिव्यक्ति- वैसे तो यह गुण सभी विषयों के शिक्षकों में होना चाहिये परन्तु भाषा शिक्षक के लिये यह गुण अत्यन्त आवश्यक है। अगर भाषा का शिक्षक कविता का शिक्षण करते समय अपनी अभिव्यक्ति का छात्र-छात्राओं पर कोई किसी प्रकार का प्रभाव नहीं छोड़ता तो छात्र-छात्राएं कभी भी कविता के गहन भावों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
और गम्भीर विचारों को नहीं समझ सकते। गहन भावों और गम्भीर विचारों के स्पष्टीकरण हेतु प्रभावोत्पादक एवं सशक्त अभिव्यक्ति अत्यन्त आवश्यक है।

5. स्वभाव की सरलता एवं सरसता- कविता का पढ़ाना अन्य विषयों के पढ़ाने से अलग है। अन्य विषयों के शिक्षक विषय सम्बन्धी आवश्यक तत्त्वों का ज्ञान देते हैं परन्तु कविता का सम्बन्ध मानवीय संवेदनाओं और अनुभूतियों से है। इस लिये शिक्षक के स्वभाव में सरलता एवं सरसता का होना बहुत आवश्यक है। शिक्षक के व्यक्तित्व से छात्र-छात्राएं अवश्य ही प्रभावित होते हैं। यदि शिक्षक का स्वभाव सरल और उसकी वाणी में सरसता है तो छात्र-छात्राएं कविता में स्वत: रूचि लेने लगते हैं और कविता के भावों और विचारों की गहनता का आनन्द लेते हुए रसास्वादन करते हैं। इन गुणों के अतिरिक्त कविता शिक्षक का दृष्टिकोण सकारात्मक और उत्साहपूर्ण होना चाहिये ताकि वह बिना किसी संकोच के छात्र--छात्राओं को कविता पढ़ा सके और उनका सही मार्ग दर्शन कर सके।

कविता शिक्षण के अंग (सोपान)

कविता शिक्षण के लिये कक्षा में काव्यमय वातावरण का होना बहुत आवश्यक है। इस लिये शिक्षक को चाहिये कि कविता पढ़ाने से पूर्व कक्षा में समानान्तर कविता के माध्यम से या कविता की कुछ पक्तियों को सुनाकर उचित वातावरण उत्पन्न करे ताकि छात्र-छात्राएं कविता पढ़ने के लिये उत्सुक हो जायें।

कविता शिक्षण के अंग (सोपान) निम्न हैं :-

1. प्रस्तावना – प्रस्तावना का सम्बन्ध छात्र-छात्राओं के पूर्वज्ञान से होता है और इसका लक्ष्य विद्यार्थियों में पाठ के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करना है। इसके द्वारा छात्र अर्जित ज्ञान से पाठ की पकड़ करते हैं। कविता अपने आप में रोचक और सौन्दर्यपूर्ण होती है इस लिये प्रस्तावना का कविता शिक्षण में गद्य शिक्षण की तुलना में कम महत्त्व है। कविता शिक्षण में प्रस्तावना का सम्बन्ध कविता के अनुकूल वातावरण, समानान्तर कविता पाठ से ही होना चाहिये। यह शिक्षक पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार समानान्तर कविता का पाठ करके पढ़ाई जाने वाली कविता को छात्र-छात्राओं के समक्ष प्रस्तुत करे।

2. पठन – पठन कविता शिक्षण का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सोपान है। कुछ भाषाविदों का तो यहां तक कहना है कि कविता के अच्छे और सशक्त पठन से कविता का कुछ सीमा तक भाव स्पष्ट हो जाता है। शिक्षाविद् हैडो ने कविता को कर्णप्रिय बताया है। इस लिये कविता पाठ की सफलता सुन्दर पठन पर ही निर्भर करती है। कविता का सम्बन्ध स्वर, लय, ताल, छन्द और हृदय के भावों से होता है और इसी कारण पठन ही एक ऐसा सशक्त साधन है, जिसके माध्यम से कविता के सौन्दर्य की अनुभूति होती है। इस लिये कविता शिक्षण में पठन पर ही विशेष रूप से बल देना चाहिये। कविता पाठ दो रूप में किया जा सकता है जो निम्न हैं –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(I) आदर्श पाठ – कविता-शिक्षण का प्रारम्भ वास्तविक रूप से आदर्श पाठ से ही होता है। आदर्श पाठ शिक्षक द्वारा स्वर सहित लय ताल के समन्वय से किया जाता है। अगर शिक्षक भावों के अनुसार स्वर, लय, ताल, उचित आरोह, अवरोह को ध्यान में रखते हुए आदर्श पाठ करता है तो वह छात्र-छात्राओं के कविता के भावों को स्पष्ट कराने में सफल रहता है। इस लिये शिक्षक को आदर्श पाठ करने में पूर्णरूप से प्रवीण और अभ्यासशील होना चाहिये। उसकी पठन विधि रूचिकर, आकर्षक, प्रभावपूर्ण एवं मुख मुद्रा संचालित होनी चाहिये। लेकिन मुख मुद्रा का संचालन आवश्यकतानुकूल ही होना चाहिये।

(II) अनुकरणपाठ (सस्वर पाठ) – शिक्षक समस्त कविता के आदर्श पाठ के उपरान्त छात्र-छात्राओं को कविता के अनुकरण पाठ (सस्वर पाठ) करने के लिये कहता है। अनुकरण पाठ कराते हुए शिक्षक को यह बात अवश्य ही ध्यान में रखनी चाहिये कि मधुर भाषी और शुद्ध उच्चारण करने वाले छात्र-छात्राओं से ही स्वर, लय, ताल का ध्यान रखते हुए अनुकरण पाठ कराया जाये और अन्य छात्र-छात्राओं को अनुकरण पाठ का अवसर बाद में दिया जाये। छोटी कविता का पाठ एक बार एक ही विद्यार्थी से कराया जाये। अगर कविता लम्बी है तो उसका अनुकरण पाठ कई छात्र-छात्राओं से करवाया जा सकता है। अनुकरण पाठ में की गई उच्चारण अशुद्धियों को शिक्षक आदर्श पाठ के माध्यम से ही शुद्ध कराने का प्रयास करे। उच्च कक्षाओं में व्यक्तिगत रूप से अनुकरण पाठ करवाना ही उचित रहता है और छोटी कक्षाओं में सामूहिक रूप से ही अनुकरण पाठ करवाना चाहिये। कविता का शिक्षण रसास्वादन और सौन्दर्यानुभूति के लिये किया जाता है इस लिये इसमें मौन पाठ का कोई स्थान नहीं है।

3. भाव-विचार विश्लेषण और सौन्दर्यानुभूति– कविता का मुख्य उद्देश्य काव्यानन्द की अनुभूति और सौन्दर्यानुभूति है। शब्दार्थ कथन पर जोर नहीं देना चाहिये क्यों कि शब्दों के अर्थ व उनका विवेचन करने से कविता के रसास्वादन में बाधा उत्पन्न होती है। कविता में आये कठिन छन्दों की व्याख्या आवश्यकतानुकूल शिक्षक को ही कर देनी चाहिये। शिक्षक को भाव-विचार विश्लेषण करते हुए छात्र-छात्राओं को कविता के महत्त्वपूर्ण अंगों (भाव पक्ष और कलापक्ष) की सौन्दर्यानुभूति करानी चाहिये। कविता में कई प्रकार का सौन्दर्य होता है जो इस प्रकार है –

I. ध्वनि-सौन्दर्य

II. शैली-सौन्दर्य

III. कल्पना-सौन्दर्य

IV. भाव-सौन्दर्य

V. विचार-सौन्दर्य

इस प्रकार कविता के पांच सौन्दर्य तत्त्वों की स्पष्टता का होना अत्यन्त आवश्यक है। छोटी कक्षाओं में भाव स्पष्टता ही पर्याप्त है परन्तु उच्च कक्षाओं में इन पांचों सौन्दर्य तत्त्वों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की स्पष्टता एवं अनुभूति के अहसास का होना आवश्यक है। कविता अपने आप में पूर्ण इकाई होती है और इसे पूर्ण रूप में ही कंठस्थ किया जाता है। इस लिये कविता की पूर्ण आनन्दानुभूति के लिये इसे समस्त रूप में पढ़ाना चाहिये न कि इसे खण्डों में विभाजित करके पढ़ाया जाये। सौन्दर्यतत्त्वों की पहचान कराने हेतु साम्य भाव से सम्बन्धित समानान्तर कविता का पाठ श्रेयस्कर रहता है।

4. पुनः आदर्श पाठ – कविता के भाव-विचार विश्लेषण और सौन्दर्य तत्त्वों की स्पष्टता एवं पहचान करवाने के पश्चात् छात्र-छात्राओं में एकाग्रता लाने के लिये शिक्षक द्वारा पुनः आदर्श पाठ आवश्यक है। ऐसा करने से छात्र-छात्राएं कविता की पूर्ण रूप से रसानुभूति का आनन्द उठा सकते हैं।

5. सौन्दर्यात्मक प्रश्न – इस बात को जानने के लिये कि जो कविता छात्र-छात्राओं को पढ़ाई गई है वे इस कविता के भावार्थ पूर्ण रूप से समझ गये हैं और अपनी भाषा में कविता की व्याख्या कर सकते हैं, इस लिये उनसे सौन्दर्यात्मक प्रश्नों को पूछा जाता है।

6. समानान्तर कविता – सौन्दर्यात्मक प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर प्राप्त करने के बाद शिक्षक पढ़ाई गई कविता के समानान्तर पंक्तियों या कविता को सुनाने के लिये छात्र-छात्राओं से कहेगा। अगर छात्र-छात्राएं सुनाने में सफल नहीं होते तो शिक्षक स्वयं समानान्तर पंक्तियों या कविता का पाठ करेगा। ऐसा करने से छात्र-छात्राएं नवीन एवं रमणीय कविताएं कंठस्थ करने की प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

गृहकार्य

शिक्षक छात्र-छात्राओं को अपनी भाषा में कविता के भावार्थ लिखकर लाने के लिये कहेगा।

कविता में रूचि उत्पन्न करने के साधन

जब हम किसी भी बात को भली भांति समझ लेते हैं तो स्वतः हमारी उसमें रूचि हो जाती है। लेकिन फिर भी कुछ ऐसे अन्य साधन हैं जिनके द्वारा हम छात्र-छात्राओं की कविता में रूचि जागृत कर सकते हैं। इस बात में कोई दो मत नहीं हो सकते कि छात्र प्रत्येक वस्तु और बात का मूल्यांकन उस वस्तु या बात की जीवन में उपयोगिता के आधार पर करता है और उसकी कुछ अपनी इच्छाएं होती हैं जो अवसरानुकूल अर्थात सही अवसर पर जागृत होती हैं। जैसे नाटक देखकर उसकी इच्छा होती है कि वह अभिनय करे और इसी प्रकार कवि सम्मेलन में कवियों को सुनकर कवि बनने की इच्छा प्रकट करता है। इस मनोवैज्ञानिक तथ्य के आधार पर छात्र-छात्राओं में कविता में रूचि उत्पन्न करने के कुछ साधन निम्नलिखित हैं –

1. कविता कण्ठस्थ कराना – शिक्षकों को सर्वप्रथम साधन यह अपनाना चाहिये कि वह विद्यार्थियों को अच्छी कविताओं को कण्ठस्थ करने की आदत डाल लेते हैं तो वे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अवसर पाकर कविता को मौखिक रूप से अभिव्यक्त करने का प्रयास भी करते हैं। इस प्रकार काव्य के प्रति उनका प्रेम जागृत होता है।

2. कवि जयन्ती – विद्यालयों में कवियों की जयन्ती का आयोजन किया जाना चाहिये। इस प्रकार छात्र–छात्राएं कवि विशेष की रचनाओं के बारे में जानने के लिये उत्सुक होंगे।

3. कवि सम्मेलन – कवि सम्मेलन में अनेक कवि अपनी रचनाएं सुनाते हैं। उनकी कविताएं उनके स्वयं के मुख से सुनकर जितना आनन्द प्राप्त होता है, उतना पढ़ने से नहीं होता। कुछ कविताएं तो ऐसी होती हैं जिन्हें सुनकर श्रोतागण झूमने लगते हैं। वाह, कमाल कर दिया, बहुत अच्छे आदि प्रेरणादायक शब्दों से काव्यमय वातावरण गुंजित हो उठता है और बहुत से छात्र–छात्राओं के हृदय में ऐसे भाव उठने लगते हैं कि वे भी कवि बनकर सम्मान प्राप्त करें। कवि सम्मेलन उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिये ही प्रेरणादायक और लाभप्रद सिद्ध होते हैं।

4. कवि समादर – कवि समादर कवि सम्मेलन का लघु रूप होता है। इसमें कवि विशेष को आमन्त्रित करके छात्र–छात्राओं के समक्ष उसकी कविताओं या उसके प्रवचन का आयोजन किया जाता है। इस प्रकार छात्र–छात्राएं कवि के मुख से उसकी कविताओं के पाठ को सुनकर स्वत: ही उसमें रूचि लेने लगते हैं।

5. कवि-दरबार – कवि–दरबार में छात्र–छात्राएं भिन्न–भिन्न कवियों की वेषभूषा धारण करके उनकी कविताओं का पाठ करते हैं। उदाहरण के लिये कोई छात्रा महादेवी वर्मा, कोई छात्र सुमित्रानन्दन पन्त, कोई निराला की वेषभूषा में अपने दरबार को सजाते हैं और कविता पाठ करते हैं। ऐसा आयोजन करना उनके लिये बहुत प्रेरणा प्रद होता है।

6. अन्ताक्षरी प्रतियोगिता – यह प्राईमरी स्तर के छोटे बालकों की कविता के प्रति रूचि जागृत करने का सबसे सरल, श्रेष्ठ और रूचिक साधन है। इस प्रकार की प्रतियोगिता में प्रतियोगियों को दलों में विभाजित कर दिया जाता है। एक दल का कोई भी छात्र किसी भी कंठस्थ की हुई चौपाई, दोहा या पद को बोलता है। फिर दूसरे दल का छात्र अन्त के अक्षर से प्रारम्भ होने वाले पद को बोलता है। उदाहरण के रूप में –

बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर ।।

इसकी समाप्ति होते ही दूसरे दल का छात्र र से प्रारम्भ होने वाले किसी भी पद का उच्चारण करेगा जैसे –

रात गंवाई सोयकर, दिवस गवायो खाय।
हीरा जन्म अनमोल था, कोड़ी बदले गवाए।।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस प्रतियोगिता की यह विशेषता है छात्र-छात्राएं स्वत: रूचि लेने लगते हैं और कम समय में बहुत सी चौपाई, दोहे और पद कंठस्थ कर लेते हैं।

7. सुभाषित प्रतियोगिता – समय-समय पर छात्र-छात्राओं के लिये सुभाषित प्रतियोगिता का आयोजन किया जाना चाहिये और इच्छुक विद्यार्थियों को सुन्दर ढंग से कविता प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करना चाहिये। इसके साथ ही साथ उनको कविता लिखने और तुकबन्दियों को जोड़ने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये। ऐसी प्रतियोगिताएं छात्र-छात्राओं में कविता लेखन की रूचि का विकास करती हैं।

8. कवि-गोष्ठियों का आयोजन – विद्यालयों में हिन्दी साहित्य परिषदों की स्थापना की जानी चाहिये और इन परिषदों द्वारा समय-समय पर कवि गोष्ठियों का आयोजन किया जाना चाहिये। इस प्रकार की गोष्ठियों में कवियों की जीवनी, कला और उनकी विशेष देन की चर्चा के साथ-साथ छात्रों और शिक्षकों को अपनी स्वरचित कविताओं के पठन का अवसर देना चाहिये।

9. समस्या पूर्ति – छात्र-छात्राओं में कविता रचना हेतु प्रेरित करने के लिये समस्या पूर्ति अति उत्तम साधन है। समस्या पूर्ति के अन्तर्गत कोई भी सार्थक पंक्ति समस्या के रूप में छात्र-छात्राओं को दे दी जाती है। विद्यार्थी अपनी बुद्धि और कल्पना का प्रयोग करके उस पंक्ति को साधारण तुक बन्दी या कविता के रूप में परिवर्तित करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार की प्रतियोगिता में भाग लेने के लिये छात्र में सफल अभिव्यक्ति, उच्च कल्पना शक्ति और कवित्व शक्ति का होना आवश्यक है। इस लिये इसमें साधारण बालक भाग नहीं ले सकते। प्रतिभाशाली छात्रों में कविता के प्रति रूचि उत्पन्न करने का यह सर्वश्रेष्ठ साधन है।

10. कविता संग्रह – उत्तमोत्तम कविताओं को उत्तमोत्तम ढंग से अभिव्यक्त करने हेतु उत्तम कविताओं को संग्रह करने के लिये प्रेरित करना चाहिये क्योंकि अच्छी कविताओं के चयन और संग्रह की आदत से उनमें मानवीय गुणों का विकास होता है।

कविता-पाठ एवं पढ़ाने हेतु ध्यान देने योग्य बातें

1. कविता पाठ के लिये संक्षिप्त भूमिका पर्याप्त होती है।
2. शिक्षक कविता-पाठ का आदर्श नमूना प्रस्तुत करे जिसके सुनने मात्र से कविता का भाव स्पष्ट हो जाये।
3. कविता-पाठ में शब्दार्थ-कथन और व्याकरण पर बल नहीं देना चाहिये। कविता पाठ का सम्बन्ध सौन्दर्यात्मक पाठ से है।
4. कविता का पाठ बार-बार करना चाहिये ताकि कविता के सौन्दर्य की स्पष्टता हो सके।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5. कविता को पढ़ाते समय अवधि विशेष में समाप्त करने का प्रयास न किया जाये। कविता का जितना भाग सूक्ष्म ढंग से पढ़ाया जा सके उतना ही पढ़ाना उचित है और शेष भाग अगले दिन पढ़ाया जाये।
6. कविता की भावाभिव्यक्ति पर विशेष रूप से बल दिया जाना चाहिये।
7. कविता का सस्वर पाठ अत्यन्त आवश्यक है। इससे संगीतात्मकता में स्पष्टता आती है और आनन्द की भी प्राप्ति होती है।
8. कविता का शिक्षण शान्त स्वभाव से होना चाहिये किसी प्रकार की मस्तिष्क में जल्दबाजी नहीं होनी चाहिये।
9. कविता पाठ हेतु काव्यमय और काव्यानुकूल वातावरण बनाने के लिये समानान्तर भाव की कविता का पाठ करना चाहिये।
10. कविता-पाठ के लिये मुख मुद्रा और अंग संचालन में किसी भी प्रकार का बनावटीपन नहीं होना चाहिये।

कविता पाठ योजना

अनुक्रमांक :

कक्षा: आठवीं

विषय:- हिन्दी (कविता)

औसत आयु: 13

उपविषय: 'हम पंछी उन्मुक्त गगन के'

अवधि: 40 मिनट

तिथि:

सहायक सामग्री: चार्ट जिस पर साम्य भाव की कविता लिखी हुई हो ।

अनुदेशनात्मक उद्देश्य	विशिष्ट उद्देश्य
1. छात्र कविता का सस्वर पाठ करने में समर्थ होंगे।	1. कवि द्वारा कविता में दिये गये सन्देश स्वतन्त्रता के महत्त्व को समझकर अनुभव कर सकेंगे।
2. वे कविता का रसास्वादन और आनन्दानुभूति करेंगे।	2. छात्र शिक्षक द्वारा किये गये आदर्श पाठ को ध्यानपूर्वक सुनकर कविता विशेष के भाव ग्रहण करेंगे।
3. वे कविता में निहित भावों और विचारों को ग्रहण करेंगे।	3. छात्र उन्मुक्त पुलकित, कटुक, पिंजरबद्ध, फुनगी आदि शब्दों के भाव सहित अर्थ समझ सकेंगे।
4. छात्र कविता का पाठ स्वर, लय, ताल और आरोह-अवरोह को ध्यान में रखते हुए कर सकेंगे।	
5. कविता के भाव पक्ष और कलापक्ष की पहचान कर सकेंगे।	

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पूर्वज्ञान

छात्र इस बात को भली भांति समझते हैं कि स्वतन्त्रता सुखदायक है और पराधीनता में दु:ख है।

प्रस्तावना (पूर्वज्ञान परीक्षा)

छात्र-शिक्षक पूर्वज्ञान जानने हेतु और छात्र-छात्राओं को नवीन पाठ प्रस्तुत करने के लिये साम्य भाव की कविता का पाठ करते हुए चार्ट दिखाकर प्रश्न पूछेगा जो निम्न है :-

चार्ट पर लिखी हुई कुछ पंक्तियां

"चिड़िया को लाख समझाओ,
कि पिंजड़े के बाहर
धरती बहुत बड़ी है, निर्भय है
बाहर बहेलिए का डर है, यहां निर्द्वन्द कंठ स्वर है ।
फिर भी चिड़िया, मुक्ति का गाना गायेगी ।
पिंजड़ा टूट जाने या खुल जाने पर उड़ जायेगी।"

1. चिड़िया को पिंजड़े के बाहर क्या डर दिखाया गया है ?
2. पिंजड़े में चिड़िया कैसा अनुभव करती है ?
3. चिड़िया के गाने में निहित भाव कैसा है ?

उद्देश्य कथन

छात्राध्यापक कक्षा में घोषणा करेगा कि आज शिवमंगल सिंह 'सुमन' की कविता 'हम पंछी उन्मुक्त गगन के' का पाठ करेंगे।

प्रस्तुतीकरण

1. छात्राध्यापक छात्रों को पुस्तक निकालने के लिये कहेगा और सही पृष्ठ खोलने के लिये कहते हुए कविता के सार के बारे में जानकारी देगा।
2. छात्राध्यापक पाठ का विकास छात्र-छात्राओं के सहयोग से करेगा।

कविता की पाठ्य वस्तु

हम पंछी उन्मुक्त गगन के, पिंजर बद्ध न गा पायेंगे।
कनक तीलियों से टकराकर पुलकित पंख टूट जायेंगे।
हम बहता जल पीने वाले, मर जायेंगे भूखे प्यासे,
कहीं भली है कटुक निबौरी, कन कटोरी की मैदा से।
स्वर्ण शृंखला के बंधन में, अपनी गति उड़ान सब भूले,
बस सपने में देख रहे हैं, तरू की फुनगी पर के झूले।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऐसे थे अरमान की उड़ते नीले नभ की सीमा पाने,
लाल किरण सी चोंच खोल चुगते तारक-अनार के दाने।

आदर्श पाठ

छात्राध्यापक उचित स्वर, लय, हाव-भाव एवं आरोह-अवरोह का ध्यान रखते हुए कविता का आदर्श पाठ करेगा।

अनुकरण पाठ

छात्राध्यापक चार या पांच छात्र-छात्राओं को आदर्श पाठ का अनुकरण करते हुए सस्वर वाचन करने के लिये कहेगा।

कठिन शब्दों के अर्थ का स्पष्टीकरण :-

महत्त्वपूर्ण कठिन शब्दों के अर्थ का स्पष्टीकरण किया जायेगा। ये शब्द निम्नलिखित हैं :

शब्द	अर्थ
उन्मुक्त	खुला हुआ, स्वतन्त्र
पिंजरबद्ध	पिंजरे में बंद
पुलकित	प्रसन्नचित, रोमांचित, हर्षित
कटुक	कड़वी
फुनगी	वृक्ष या शाखा का सिरा

विचार-भाव विशलेषण एवं सौन्दर्यानुभूति

छात्राध्यापक एक-एक पद का आदर्श पाठ करते हुए कविता के गहन विचारों और भावों का विश्लेषण करते हुए छात्र-छात्राओं को कविता के सौन्दर्यात्मक तत्त्वों से अवगत करायेगा ताकि उनको कविता आनन्दानुभूति और रसास्वादन हो।

पुनः आदर्श पाठ

विचारों और भावों की एकाग्रता और कविता के पूर्ण रसास्वादन हेतु छात्राध्यापक पुनः आदर्श पाठ करेगा।

सौन्दर्यात्मक प्रश्न

छात्राध्यापक सौन्दर्यात्मक प्रश्न इस बात की जांच करने के लिये पूछेगा कि छात्र-छात्राओं को कविता के भाव एवं विचारों का स्पष्टीकरण किस सीमा तक हुआ है और कहां तक वे कविता का रसास्वादन करने में सफल हुए हैं।

1. पंछी के क्या अरमान हैं ?
2. इस कविता के माध्यम से कवि क्या कहना चाहता है ?
3. कवि ने इस कविता के द्वारा क्या सन्देश दिया है ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4. स्वतन्त्रता और परतन्त्रता शब्द किस बात का संकेत देते हैं?

5. 'पराधीन सपने सुख नाहि' इस पंक्ति का क्या भाव है ?

समानान्तर कविता

छात्राध्यापक छात्र-छात्राओं को समानान्तर कविता या कुछ पंक्तियां सुनाने के लिये कहेगा उनके न सुना पाने पर स्वयं सुनायेगा।

"बस एक दिन की दासता, शत कोटि नरक समान है।
क्षण मात्र की स्वाधीनता, शत स्वर्ग की मेहमान है। ।"

गृहकार्य :– प्रस्तुत कविता के भावार्थ घर से लिखकर लाने के लिये कहा जायेगा।

अभ्यास के प्रश्न

1. कविता की परिभाषा देते हुए कविता शिक्षण के अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को विस्तार से स्पष्ट कीजिए।
2. गद्य पद्य का अन्तर स्पष्ट करते हुए गद्य पद्य शिक्षण के उद्देश्यों का अन्तर स्पष्ट कीजिए।
3. कविता-शिक्षण की विधियों का उल्लेख कीजिए और यह स्पष्ट करें कि प्राथमिक स्तर पर कौन-कौन सी विधि उपयुक्त है ?
4. कविता सौन्दर्य से क्या तात्पर्य है ? कविता में रूचि उत्पन्न करने के कौन-कौन से उपयुक्त और कारगर साधन हैं ?
5. कविता से क्या तात्पर्य है ? कविता का शिक्षण करते समय शिक्षक को किन-किन बातों को ध्यान में रखना चाहिये ?
6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।
   (I) कविता का शिक्षक
   (II) तुलना विधि
   (III) कविता चयन
   (IV) कविता पाठ योजना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2

गद्य-शिक्षण और पाठ-योजना

(Teaching of Prose and Lesson Planning)

हिन्दी-शिक्षण में 'गद्य-शिक्षण' का अनिवार्य स्थान है। गद्य के बिना हिन्दी पाठ्य-क्रम तथा हिन्दी पाठ्य-पुस्तक की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस में सन्देह नहीं कि गद्य इतना सरल और आनन्ददायक नहीं होता जितना पद्य, परन्तु 'गद्य-शिक्षण' के बिना 'हिन्दी-शिक्षण' का आरम्भ ही सम्भव नहीं है। वर्णमाला पढ़ाने के पश्चात् बच्चों को जो छोटे-छोटे वाक्य पढ़ाये जाते हैं वह वस्तुतः गद्य-शिक्षण की ओर ही पहला कदम होता है। गद्य-शिक्षण द्वारा ही विद्यार्थियों के शब्द भण्डार में वृद्धि की जाती है, उन के ज्ञान-भण्डार को संबृद्ध बनाया जाता है, उन्हें गद्य-अभिव्यक्ति की विभिन्न शैलियों से परिचित किया जाता है और उन्हें रचनात्मक लेखन कार्यों की ओर प्रेरित किया जाता है। गद्य की व्यावहारिक उपयोगिता के कारण पाठ्य-पुस्तकों में प्रायः पद्य की अपेक्षा गद्य अधिक होता है। पद्य यदि सौन्दर्यानुभूति एवं रसास्वादन का स्रोत है तो गद्य जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का ज्ञान प्रदान करने का स्रोत है। हिन्दी शिक्षण में वाचन तथा मौखिक-अभिव्यक्ति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन दोनों का आरम्भ गद्य-शिक्षण से होता है।

माध्यमिक स्तर पर गद्य-शिक्षण के लिए प्रायः सूक्ष्म एवं गहन पाठ (Intensive Reading) तथा द्रुत-पाठ (Extensive Reading) को आधार बनाया जाता है। द्रुत-पाठ (Extensive Reading) के लिए प्रायः सहायक पुस्तकें निर्धारित की जाती हैं। परन्तु गहन एवं सूक्ष्म पाठ (Intensive Reading) के लिए पाठ्य-पुस्तक में संकलित गद्य-पाठों को आधार बनाया जाता है।

गद्य-शिक्षण के उद्देश्य

'हिन्दी-शिक्षण' के अन्तर्गत पद्य, गद्य, व्याकरण, रचना कार्य आदि भाषा एवं साहित्य के विभिन्न तत्त्वों तथा रूपों का शिक्षण प्रदान किया जाता है। इन में दो प्रकार के उद्देश्य निहित होते हैं – एक सामान्य उद्देश्य तथा दूसरा विशिष्ट उद्देश्य। सामान्य उद्देश्यों की परिधि व्यापक होती है और विशिष्ट उद्देश्यों का सम्बन्ध उस पाठ के साथ होता है जिसे कक्षा में पढाया जाता है। इस प्रकार गद्य-शिक्षण के भी दो प्रकार के उद्देश्य हैं :-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

1. सामान्य उद्देश्य (General Aims)

2. विशिष्ट उद्देश्य (Specific Aims)

आइए, इन का बारी-बारी उल्लेख करें।

1. गद्य-शिक्षण के सामान्य उद्देश्य- गद्य-शिक्षण के सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

(i) विद्यार्थियों में शुद्ध-उच्चारण की योग्यता विकसित करना।

(ii) विद्यार्थियों को देव-नागरी लिपि का ज्ञान प्रदान करना।

(iii) विद्यार्थियों की वाचन में योग्यता विकसित करना।

(iv) उन्हें इस योग्य बनाना कि वे पूरे मनोयोग के साथ सुन कर अर्थ ग्रहण कर सकें।

(v) विद्यार्थियों के शब्द-भण्डार में वृद्धि करना। उन्हें इस योग्य बनाना कि वे ज्ञात शब्दों का सक्रिय प्रयोग कर सकें।

(vi) विद्यार्थियों के सूक्ति-भण्डार में वृद्धि करना।

(vii) विद्यार्थियों को विभिन्न गद्य-शैलियों से परिचित कराना और उन्हें इस योग्य बनाना कि वे इन शैलियों का उचित प्रयोग कर सकें।

(viii) विद्यार्थियों की बोध-शक्ति, कल्पना-शक्ति तथा विवेचना-शक्ति विकसित करना।

(ix) विद्यार्थियों के व्यावहारिक ज्ञान में वृद्धि करना।

(x) विद्यार्थियों को इस योग्य बनाना कि वे भाषा के माध्यम से अन्य विचारों का ज्ञान प्राप्त कर सकें।

(xi) विद्यार्थियों में मौन वाचन तथा अध्ययन की योग्यताएं विकसित करना।

(xii) विद्यार्थियों में साहित्यिक रूचियों को विकसित करना।

(xiii) विद्यार्थियों में रचनात्मक एवं सृजनात्मक शक्तियों को विकसित करना।

(xiv) विद्यार्थियों में बौद्धिक, तार्किक एवं मानसिक शक्तियों को विकसित करना।

(xv) उन में साहित्य की 'गद्य' विद्या से आनन्द प्राप्त की योग्यता विकसित करना।

(xvi) गद्य-साहित्य की सहायता से उन्हें चारित्रिक-विकास की ओर अग्रसर करना।

2. गद्य-शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य- गद्य-शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य पाठ के विषय के अनुसार निर्धारित किये जाते हैं। गद्य-साहित्य की कई विधाएं हैं जैसे - कहानी, संवाद, निबन्ध, लघु-निबन्ध, जीवनी आदि। इन विधाओं के विभिन्न विषय होते हैं, जैसे सामाजिक, पारिवारिक, प्राकृतिक, राजनैतिक, नैतिक आदि। इन्हीं विषयों के अनुसार गद्य-शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं। यदि किसी कहानी का विषय नैतिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

होगा तो उस के द्वारा विद्यार्थियों में नैतिक आदर्शों को जागृत करना, उस के शिक्षण का विशिष्ट उद्देश्य होगा। यदि किसी निबन्ध का विषय 'प्राकृतिक' होगा तो विद्यार्थियों में प्रकृति प्रेम उत्पन्न करना उस के शिक्षण का विशिष्ट उद्देश्य होगा। यदि किसी निबन्ध, कहानी या संवाद का विषय 'वैज्ञानिक' है तो उस के शिक्षण का विशिष्ट उद्देश्य विद्यार्थियों में वैज्ञानिक रूचियां विकसित करना होगा – आदि। इसी प्रकार विभिन्न विषयों तथा गद्य की विविध विधाओं के अनुसार गद्य-शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं।

'गद्य-शिक्षण' में अध्यापक की दृष्टि पाठ के विशिष्ट उद्देश्यों की ओर रहती है। सामान्य उद्देश्य स्वतः शिक्षण में समाहित हो जाते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि अध्यापक को समय-समय पर इस बात की जांच करते रहना चाहिए कि उस का 'गद्य-शिक्षण' किन सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हो सका।

गद्य-शिक्षण के शिक्षण-सोपान एवं शिक्षण-विधियां

किसी गद्य-पाठ के सूक्ष्म एवं गहन अध्ययन के लिए उसे एक ही पीरीयड में पढ़ाना असम्भव सा प्रतीत होता है क्योंकि उसी पाठ के माध्यम से अध्यापक को कई सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करना होता है। अतः गद्य-पाठ के शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए 'इकाई-योजना' का प्रयोग करना चाहिए अर्थात् समूचे पाठ को विभिन्न इकाइयों में बांट कर प्रत्येक इकाई के लिए शिक्षण-योजना तैयार करनी चाहिए। शिक्षण-योजना को प्रत्येक सोपान में विभिन्न शिक्षण-विधियों का प्रयोग करते हुए शिक्षण-कार्य को सम्पूर्णता की ओर ले जाना चाहिए। यदि गद्य-पाठ छोटा है तो उसे एक पीरीयड में भी समाप्त किया जा सकता है। यदि गद्य-पाठ लम्बा है तो उसे एक से अधिक पीरीयडों में समाप्त करना चाहिए और प्रत्येक पीरीयड में एक इकाई का शिक्षण समाप्त करना चाहिए।

एक शिक्षा-विचारक **हर्बर्ट** (Herbert) ने शिक्षण-योजना के लिए पांच सोपानों का सुझाव दिया है। ये पांच सोपान इस प्रकार हैं :-

1. प्रस्तावना
2. विषय प्रवेश
3. तुलना एवं व्यवस्था
4. नियमीकरण
5. अभ्यास

ये पांचों सोपान गद्य-शिक्षण में सहायक तो हो सकते हैं, **परन्तु इन्हें आदर्श नहीं** मान लेना चाहिए। भाषा-शिक्षण के दृष्टिकोण से तीसरा तथा चौथा सोपान **विशेष उपयोगी** सिद्ध

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
नहीं होते। 'नियमीकरण' व्याकरण पढ़ाते समय तो उपयोगी हो सकते हैं परन्तु पद्य या गद्य शिक्षण में नहीं।

गद्य-शिक्षण में निम्नलिखित छः सोपान उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं –

1. प्रस्तावना
2. प्रस्तुतीकरण या वाचन
3. व्याख्या
4. विचार-विश्लेषण
5. आवृत्ति
6. गृह-कार्य

आइए, गद्य-शिक्षण के इन सोपानों का बारी-बारी वर्णन करें।

1. प्रस्तावना – गद्य-शिक्षण के इस पहले सोपान का उद्देश्य विद्यार्थियों में पढ़ने के प्रति रूचि उत्पन्न करना तथा शिक्षण के लिए प्रेरक वातावरण का निर्माण करना है। एक प्रसिद्ध शिक्षण-सूत्र है – 'ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ना' (From known to unknown)। प्रस्तावना में इस शिक्षण-सूत्र का अनुकरण करते हुए विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान का परीक्षण करना चाहिए। विद्यार्थियों के पूर्व-ज्ञान परीक्षण के लिए अध्यापक को छोटे-छोटे प्रश्नों का निर्माण करना चाहिए। प्रश्नों की अपेक्षा उत्तर छोटा होना चाहिए और प्रश्न क्रमशः उद्देश्य-कथन की ओर अग्रसर होने चाहिएं। पूर्व ज्ञान परीक्षण का अन्तिम प्रश्न ऐसा होना चाहिए जिसे पाठ के उद्देश्य कथन के साथ सम्बन्धित किया जा सके। अन्तिम प्रश्न के उत्तर में अध्यापक को सम्बन्धित पाठ का उद्देश्य बताना चाहिए और विषय के प्रस्तुतीकरण की ओर बढ़ाना चाहिए।

पूर्व-ज्ञान परीक्षण के अतिरिक्त अन्य किसी विधि से भी अध्यापक विद्यार्थियों को पढ़ने के लिए प्रेरित कर सकता है और शिक्षण के लिए उपयोगी वातावरण का निर्माण कर सकता है जैसे – लेखक का परिचय दे कर, किसी घटना का वर्णन कर के, किसी शिक्षण-सहायक उपकरण का प्रयोग कर के आदि, परन्तु प्रस्तावना सरल, स्पष्ट, रूचिकर एवं प्रेरक होनी चाहिए। इस के लिए शिक्षा-शास्त्री प्रायः 'पूर्व-ज्ञान परीक्षण' का ही समर्थन करते हैं।

2. प्रस्तुतीकरण – शिक्षण के लिए उचित वातावरण तथा विद्यार्थियों को प्रेरित करने के पश्चात् अध्यापक को उद्देश्य कथन करना चाहिए और तत्पश्चात वाचन द्वारा विषय-प्रवेश करना चाहिए। 'वाचन' गद्य-शिक्षण के प्रस्तुतीकरण' सोपान का महत्त्वपूर्ण अंक है।

'वाचन' में निम्नलिखित तीन प्रकार का वाचन सम्मिलित है :-

(क) अध्यापक द्वारा आदर्श-पाठ

(ख) विद्यार्थियों द्वारा अनुकरण-पाठ (सस्वर-वाचन)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(ग) विद्यार्थियों द्वारा मौन-पाठ।

आइए, इन का विस्तृत वर्णन करें।

(क) अध्यापक द्वारा आदर्श-पाठ- गद्य-शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थियों में शुद्ध उच्चारण तथा गति के साथ-साथ पढ़ने की योग्यता विकसित करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अध्यापक को पहले आदर्श-पाठ प्रस्तुत करना चाहिए। उसे शुद्ध उच्चारण, उचित हाव-भाव तथा स्वर के उचित आरोह-अवरोह के साथ गद्यांश का पाठ करना चाहिए ताकि विद्यार्थी उस का अनुकरण करते हुए शुद्ध वाचन के लिए उत्साहित हो सकें। अध्यापक द्वारा आदर्श पाठ की कई उपयोगिताएं हैं, जैसे –

(i) अध्यापक का आदर्श-वाचन सुन कर विद्यार्थी जब उस का अनुकरण करते हुए वाचन करते हैं तो उन में अशुद्धियों की सम्भावना कम हो जाती है।

(ii) आदर्श-वाचन से विद्यार्थियों को पढ़ाये जा रहे पाठ का कुछ परिचय प्राप्त हो जाता है और पाठ के प्रति उनकी रूचि और अधिक जागृत हो उठती है।

(iii) आदर्श-वाचन अध्यापक को शिक्षण में सक्रिय बनाता है और उसकी सक्रियता विद्यार्थियों को भी सक्रिय बनने की प्रेरणा देती है।

(iv) अध्यापक के आदर्श-वाचन से विद्यार्थियों की एकाग्रता में विकास होता है।

(v) अध्यापक के आदर्श-वाचन से विद्यार्थियों को पाठ्य-सामग्री का अर्थ कुछ कुछ समझ आने लगता है जो आगे चल कर अर्थ-व्याख्या तथा विचार विश्लेषण में सहायक सिद्ध होता है।

चैम्पीयन महोदय (Champion) ने आदर्श-पाठ के महत्त्व का उल्लेख करते हुए कहा है :-

"आदर्श रूप में शिक्षक को पाठ के आरम्भ में ही पढ़ना चाहिए और इसका उद्देश्य यह हो कि विद्यार्थी गद्यांश का सामान्य प्रवाह तथा उद्देश्य समझ जायें।"

(ख) विद्यार्थियों द्वारा अनुकरण-पाठ (सस्वर-वाचन)— अध्यापक के आदर्श-पाठ के पश्चात् विद्यार्थियों को सस्वर वाचन (Loud Reading) कराना चाहिए। सस्वर-वाचन करते हुए विद्यार्थी अध्यापक के आदर्श-वाचन का अनुकरण करते हैं और यथा सम्भव उचित प्रवाह तथा शुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ने का प्रयास करते हैं। केवल एक या दो विद्यार्थियों से सस्वर वाचन कराना पर्याप्त नहीं बल्कि ज्यादा से ज्यादा विद्यार्थियों को इसका अवसर प्रदान करना चाहिए। पहले अच्छे विद्यार्थियों से पढ़वाना चाहिए। बाद में दूसरे विद्यार्थियों से पढ़वाना चाहिए।

विद्यार्थियों के सस्वर-पाठन में निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान देना जरूरी है :-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(i) वाचन करते समय विद्यार्थी को यथा-सम्भव बीच में नहीं टोकना चाहिए। वाचन के लिए आवश्यक निर्देश पहले दे देने चाहिएं।

(ii) वाचन में हो रही अशुद्धियों को वाचन के पश्चात् विद्यार्थियों की सहायता से दूर करना चाहिए।

(iii) वाचन के दौरान अध्यापक को सम्पूर्ण कक्षा की ओर ध्यान देना चाहिए।

(ग) विद्यार्थियों द्वारा मौन वाचन— विद्यार्थियों द्वारा सस्वर-वाचन के पश्चात् उन्हें कुछ समय मौन-वाचन के लिए भी देना चाहिए। मौन-वाचन से विद्यार्थियों को तेज़ गति से पढ़ने और विचार-ग्रहण करने का शिक्षण मिलता है। इस से उनकी बौद्धिक क्षमताओं का विकास होता है।

मौन-वाचन के पश्चात् गद्य-शिक्षण का वाचन-क्रम समाप्त हो जाता है और अध्यापक अगले शिक्षण-सोपान 'व्याख्या' (Explanation) की ओर बढ़ता है।

3. व्याख्या (Explanation) — पठित गद्यांश की अर्थ एवं भाव ग्रहण कराने के लिए अध्यापक को कठिन शब्दों, लोकोक्तियों, मुहावरों तथा वाक्यांशों की व्याख्या करनी होती है। इसके लिए निम्नलिखित शिक्षण-विधियों का प्रयोग किया जा सकता है :-

(क) उद्‌बोधन-विधि (Eliciting Method)

(ख) प्रवचन-विधि (Telling Method)

(ग) स्पष्टीकरण-विधि (Elucidating Method)

आइए, इन शिक्षण विधियों का बारी-बारी वर्णन करें।

(क) उद्‌बोधन-विधि (Eliciting Method) -- इस विधि के द्वारा अध्यापक कठिन शब्दों का अर्थ स्वयं नहीं बताता बल्कि विभिन्न साधनों से अर्थ उद्‌बोधित करता है। विद्यार्थी प्रत्यक्ष, अनुमान या कल्पना के द्वारा अर्थ तक पहुंचने का प्रयास करते हैं, जैसे - अध्यापक वास्तविक वस्तु का प्रत्यक्ष दर्शन करा कर 'अर्थ' समझा सकता है। उदाहरण के तौर पर 'छाता' शब्द का अर्थ समझाने के लिए वह 'छाता' नामक वस्तु विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष रूप से दिखा सकता है : 'छाता' का चित्र या मॉडल प्रस्तुत कर सकता है। किसी क्रिया या अर्थ उद्‌बोधित करने के लिए वह उस क्रिया को करके दिखा सकता है ; अंग संचालन द्वारा विभिन्न शब्दों के अर्थ समझा सकता है। इस प्रकार विभिन्न साधनों का प्रयोग करते हुए वह उद्‌बोधन विधि द्वारा वह विद्यार्थियों को कठिन शब्दों का अर्थ समझा सकता है।

(ख) प्रवचन विधि (Telling Method) — किसी शब्द का अर्थ उद्‌बोधित न हो सकने की स्थिति में अध्यापक को स्वयं उसका अर्थ बता देना चाहिए। इसे प्रवचन विधि कहते हैं। इसके लिये अध्यापक मुख्यतः निम्नलिखित रीतियां अपना सकता है, जैसे :-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(i) **पर्यायवाची शब्दों द्वारा** (By means of Synonyms) — **नियति** (भाग्य), शशि (चन्द्रमा), काष्ठ (लकड़ी), नरेश (राजा) आदि।

(ii) **कठिन शब्दों के अर्थ-विस्तार द्वारा** (By explanation of meaning of difficult words) — कलिंग का विजेता वीर – जिस ने कलिंग को जीता हो अर्थात् अशोक ; कोल्हू का बैल जो कोल्हू में काम करे। परन्तु वह व्यक्ति जो दिन-रात काम करे उसके लिए 'कोल्हू का बैल' मुहावरा प्रयुक्त किया जाता है।

(iii) **अनुवाद द्वारा** (By translation) — विद्यार्थियों की मातृ-भाषा या अन्य किसी भाषा के प्रचलित शब्दों में अनुवाद कर के भी विद्यार्थियों को कठिन शब्दों के अर्थ समझाये जा सकते हैं :-

परमाणु बम : Atom Bomb

चिकित्सालय : अस्पताल

(ग) स्पष्टीकरण विधि (Elucidating Method) — इस विधि के द्वारा कठिन शब्दों को ज्यादा से ज्यादा स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है। स्पष्टीकरण के लिए कई रीतियों का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे :-

(i) **व्युत्पति द्वारा** (By etymology) — 'विद्या' शब्द की उत्पति 'विद्' धातु से हुई है।

(ii) **तुलना द्वारा** (By comparison and contrast) — शब्दों की उनके पर्यायवाची तथा विलोम शब्दों से तुलना करके उनके अर्थ समझाये जा सकते हैं।

जैसे – कायर – वीर, दानी – कंजूस, अर्वाचीन – प्राचीन आदि।

(iii) **प्रत्यय द्वारा** (By concept) — शब्दों में आने वाला शब्दांश 'प्रत्यय' कहलाता है। क्रिया के अन्त में आने वाला शब्द 'कृत' प्रत्यय कहलाता है, जैसे – पढ़ना-पढ़ाई। संज्ञा तथा विश्लेषण के अन्त में आने वाला शब्दांश 'तद्धित' प्रत्यय कहलाता है, जैसे – वसुदेव - वासुदेव; शिव – शैव आदि।

(iv) **उपसर्गों द्वारा** (By prefixes) — शब्द रचना में उपसर्गों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। उपसर्ग निम्नलिखित तीन प्रकार के हैं :-

(1) संस्कृत उपसर्ग – अप, उप, प्रति, परा, सम आदि।

(2) हिन्दी सपसर्ग – अ, उन, बिन, कु आदि।

(3) उर्दू उपसर्ग – गैर, बद, हन, ख़श आदि।

प्रत्ययों तथा उपसर्गों के योग से शब्दार्थ में जो परिवर्तन होता है उसका ज्ञान विद्यार्थियों को कराना चाहिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(v) सन्धि एवं समास द्वारा (By union and syntax) — सन्धि और समास के प्रयोग से भी विद्यार्थियों को शब्दों का अर्थ स्पष्ट करने में बहुत सहायता मिलती है :-

समास – कर-कमल, पंसेरी, घुड़-दौड़

सन्धि – रत्नाकर, रमेश, विद्यालय

कठिन शब्दों का अर्थ समझाने के लिए विद्यार्थियों की मानसिक एवं बौद्धिक योग्यताओं के अनुसार उपयुक्त विधियों का प्रयोग करना चाहिए। छोटी कक्षा के विद्यार्थियों के लिए उद्‌बोधन-विधि उपयोगी रहेगी और माध्यमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए 'प्रवचन विधि' तथा 'स्पष्टीकरण विधि' का प्रयोग उपयोगी रहेगा।

कठिन शब्दों के अतिरिक्त विद्यार्थियों को मुहावरों, सूक्तियों तथा लोकोक्तियों के अर्थ भी समझाने होते हैं, इसके लिए आवश्यकतानुसार कहीं 'वाक्य-प्रयोग विधि' का प्रयोग करना चाहिए अर्थात् मुहावरे को वाक्य में प्रयोग करके समझाना चाहिए ; कहीं आधारभूत कथा को स्पष्ट करके लोकोक्ति अथवा सूक्ति को समझाना चाहिए जैसे – 'घर का भेदी लंका ढाए' समझाने के लिए विभीषण की कथा सुनानी चाहिए ; कहीं लाक्षणिक अर्थ को स्पष्ट करके अर्थ समझाना चाहिए जैसे 'पगड़ी उछालना', 'मुट्ठी गरम करना' मुहावरों को स्पष्ट करने के लिए इनके लाक्षणिक अर्थ बताने होंगे। इसी प्रकार अध्यापक को विद्यार्थियों के मानसिक एवं बौद्धिक स्तर के अनुकूल विभिन्न विधियों द्वारा मुहावरों आदि के अर्थ स्पष्ट करने चाहिएं।

4. विचार-विश्लेषण (Analysis of Thought) — 'गद्य-शिक्षण' द्वारा मुख्यतः विद्यार्थियों के भाषा-ज्ञान में वृद्धि की जाती है और उनकी विचार-शक्ति को विकसित किया जाता है। 'वाचन' और 'व्याख्या' द्वारा पहले उद्‌देश्य की पूर्ति होती है अर्थात् विद्यार्थियों के भाषा-ज्ञान में वृद्धि होती है। 'विचार-विश्लेषण' द्वारा विद्यार्थियों की विचार-शक्ति का विकास होता है। गद्यांश में आये विचारों के विश्लेषण के लिए अध्यापक प्रश्नोत्तर, उदाहरण, तुलना, स्पष्टीकरण आदि विभिन्न विधियों का प्रयोग कर सकता है।

विचार-विश्लेषण के लिए निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान देना चाहिए :-

(i) गद्यांश के विचारों के साथ विद्यार्थियों का तादात्मय स्थापित किया जाना चाहिए।

(ii) विद्यार्थियों के पूर्व अनुभवों के साथ जीवन अनुभवों का सम्बन्ध जोड़ना चाहिए।

(iii) लेखक का संक्षिप्त परिचय भी देना चाहिए। इस से विद्यार्थियों को लेखक के विचार समझने में सहायता मिलती है।

(iv) जटिल विचारों को दृष्यन्तों एवं उदाहरणों की सहायता से स्पष्ट करना चाहिए।

(v) विचार-विश्लेषण के पश्चात् विद्यार्थियों से कुछ प्रश्न पूछ कर उनका बोध परीक्षण करना चाहिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'व्याख्या' तथा 'विचार विश्लेषण' में अध्यापक को श्याम-पट्ट का ज्यादा प्रयोग करना चाहिए। समास, सन्धि, पर्यायवाची, विलोम-शब्द आदि जितना अच्छी तरह श्याम-पट्ट पर लिख कर समझाये जा सकते हैं उतना जबानी नहीं। श्यामपट्ट अत्यन्त उपयोगी साधन है। इसका ज्यादा से ज्यादा प्रयोग करना चाहिए।

4. आवृत्ति – गद्य-शिक्षण के इस सोपान पर पढ़े हुए गद्यांश की आवृत्ति करनी होती है। आवृत्ति के मुख्यत: दो लाभ हैं। एक तो पठित-गद्यांश की संक्षिप्त दोहराई हो जाती है और दूसरे अध्यापक को ज्ञात हो जाता है कि विद्यार्थियों के भाषा-ज्ञान में कहां तक वृद्धि हुई है तथा गद्यांश के विचार एवं भाषा को उन्होंने कहा तक समझा है। आवृत्ति विद्यार्थियों की सहायता से होनी चाहिए। छोटे-छोटे प्रश्नों के माध्यम से गद्यांश के महत्त्वपूर्ण अंशों की आवृत्ति की जानी चाहिए। यदि समूचे पाठ को विभिन्न गद्यांशों की इकाइयों में बांट गया हो तो प्रत्येक गद्यांश के शिक्षण के पश्चात् उसकी आवृत्ति होनी चाहिए और पाठ की सभी इकाइयां समाप्त होने पर समूचे पाठ की आवृत्ति होनी चाहिए ताकि विद्यार्थी सभी इकाइयों में सम्बन्ध स्थापित करके समूचे पाठ के विचारों को समझ सकें।

'आवृत्ति' सोपान पर विद्यार्थियों को रचनात्मक कार्यों की ओर भी प्रेरित किया जा सकता है। उन्हें प्रेरणा देनी चाहिए कि ये गद्यांश के विचारों की स्वतन्त्र रूप से टिप्पणी करें और उन पर अपने विचार प्रकट करें।

5. गृह कार्य – यह गद्य-शिक्षण का अन्तिम सोपान है। इसमें विद्यार्थियों को घर पर करने के लिए काम दिया जाता है। गृह-कार्य में विद्यार्थियों को गद्यांश का सार लिखने को कहा जा सकता है ; उसके आधार पर कुछ प्रश्नों के उत्तर लिख कर लाने के लिए कहा जा सकता है ; गद्यांश के विचारों पर अपनी प्रतिक्रिया लिखने को कहा जा सकता है – आदि। कुछ विद्वानों का विचार है कि बच्चों को गृह-कार्य नहीं देना चाहिए। घर में स्वतन्त्र रह कर वे अपने रोचक कार्यों (Hobbies) को विकसित करें, खेल-कूद में भाग लें तथा घर के काम-काज में अपने माता-पिता का हाथ बंटायें।

जो गृह-कार्य के पक्ष में हैं उनका विचार है कि गृह-कार्य में विद्यार्थियों को स्वतन्त्रतापूर्वक अभ्यास करने का अवसर मिलता है जिसके परिणामस्वरूप उसके ज्ञान को स्थायित्व प्राप्त होता है और उसे स्वतन्त्रतापूर्वक काम करने की प्रेरणा मिलती है। दोनों दृष्टिकोण उचित हैं। दोनों में समन्वय स्थापित होना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि विद्यार्थियों को इतना गृह-कार्य दिया जाना चाहिए जिसे वे दूसरे काम करते हुए आसानी के साथ कर सकें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गद्य-पाठ योजना

अनुक्रमांक — कक्षा: नौवीं (नवम्)

विषय: हिन्दी (गद्य) — औसत आयु: 14

उपविषय: उत्साह — अवधि: 40 मिनट

दिनांक:

सहायक सामग्री:

लाला लाजपत राय, भगत सिंह और चन्द्र शेखर आजाद के चित्र

अनुदेशनात्मक उद्देश्य

1. छात्र उचित गति, शुद्ध उच्चारण तथा विराम चिन्हों का ध्यान रखते हुए प्रभावपूर्ण ढंग से गद्यांश का वाचन कर सकेंगे।
2. वे नवीन शब्दों के अर्थ ग्रहण कर सकेंगे।
3. ग्रहण किये हुए नवीन शब्दों को अपने सामान्य रूप से वाक्यों में प्रयोग कर सकेंगे।
4. उत्साह की परिभाषा समझने में सफल होंगे।
5. नये ग्रहण किये हुए मुहावरों, सूक्तियों और लोकोक्तियों को अपने वाक्य में प्रयोग कर सकेंगे।
6. मिश्रित वाक्यों के सरल और सरल वाक्यों के मिश्रित वाक्य बना सकेंगे।

विशिष्ट उद्देश्य

1. रामचन्द्र शुक्ल द्वारा रचित 'उत्साह' निबन्ध के सार को ग्रहण करेंगे।
2. गद्यांश के मुख्य अंशों की व्याख्या करने में समर्थ होंगे।
3. रामचन्द्र शुक्ल की लेखन शैली की विशेषतायें बता सकेंगे।
4. पाठ से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर दे सकेंगे।

विषय सामग्री (विषय वस्तु)

दुःख के वर्ग में जो स्थान भय का है, वही स्थान आनन्द वर्ग में उत्साह का है। भय में हम प्रस्तुत कठिन स्थिति के नियम से विशेष रूप से दुःखी और कभी कभी उस स्थिति से अपने को दूर रखने के लिये प्रयत्नवान भी होते हैं। उत्साह में हम आने वाली कठिन स्थिति के भीतर अवश्य प्रयत्नवान होते हैं। उत्साह में हम आने वाली कठिन स्थिति के भीतर साहस के अवसर के निश्चय द्वारा कर्म-सुख की उमंग से अवश्य प्रयत्नवान होते हैं। उत्साह में कष्ट या हानि सहने की दृढ़ता के साथ साथ कर्म में प्रवृत्त होने के आनन्द का योग रहता है। साहसपूर्ण उमंग का नाम उत्साह है। कर्म सौन्दर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहलाते हैं। जिन कर्मों में किसी प्रकार का कष्ट या हानि सहने का साहस अपेक्षित होता है उन सबके प्रति आनन्द उत्साह के अन्तर्गत लिया जाता है। कष्ट या हानि के भेद के अनुसार उत्साह के भेद भी हो जाते हैं। साहित्य मीमांसकों ने इस दृष्टि से युद्धवीर, दानवीर, दया वीर इत्यादि भेद किये हैं। इनमें सबसे प्राचीन और प्रधान युद्ध वीरता है, जिसमें आघात, पीड़ा क्या मृत्यु तक की परवाह नहीं रहती। इस वीरता का प्रयोजन अत्यन्त प्राचीन काल से चला आ रहा है जिसमें साहस और प्रयत्न दोनों चरम उत्कर्ष पर पहुंचते हैं।

पूर्वज्ञान परीक्षा (प्रस्तावना) छात्र-छात्राओं ने वीर एवं महान पुरुषों के बारे में पढ़ा हुआ है और बहुत कुछ सुना हुआ भी है।

1. लाला लाजपत राय को शेरे पंजाब क्यों कहा जाता है ?
2. शहीद भगत सिंह और चन्द्र शेखर आजाद की प्रतिमा को लोग श्रद्धा सुमन क्यों अर्पित करते हैं ?
3. इन महान पुरुषों ने अपने देश की स्वतन्त्रता के लिये प्राण न्योछावर करते हुए कौन से भाव को प्रकट किया ?
4. उत्साह किस भाव का प्रतीक है ?

उद्देश्य कथन – छात्राध्यापक कहेगा कि आज आचार्य राम चन्द्र शुक्ल द्वारा रचित 'उत्साह' नामक पाठ पढ़ाया जायेगा।

प्रस्तुतीकरण – पाठ प्रस्तुतीकरण में व्याख्या, विश्लेषण और समीक्षात्मक विधि को अपनाया जायेगा।

आदर्श वाचन – छात्राध्यापक शुद्ध उच्चारण, उचित गति, विराम चिन्हों का ध्यान रखते हुए प्रभावशाली ढंग से गद्यांश का आदर्श वाचन प्रस्तुत करेगा।

अनुकरण वाचन (सस्वर वाचन) – छात्राध्यापक तीन या चार छात्र-छात्राओं से आदर्श पाठ का अनुकरण करते हुए पाठ का सस्वर वाचन करने के लिये कहेगा।

शब्दोच्चारण– पाठ में आये हुए कठिन शब्दों में उच्चारण में त्रुटि होने पर उन शब्दों का स्वयं सही उच्चारण करवायेगा। ऐसा करने के लिये छात्राध्यापक किसी अन्य छात्र की सहायता भी ले सकता है।

कठिन शब्दों की व्याख्या– पाठ में आये हुए कठिन शब्दों की व्याख्या वाक्य में प्रयोग कर के करेगा।

कठिन शब्द

शब्द	अर्थ
प्रयत्नवान	प्रयत्न करने वाला
प्रवृत्त	लीन
उपासक	पुजारी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मीमांसक	समीक्षा करने वाला
आघात	चोट
उत्कर्ष	ऊंचा

भाव व विचार विश्लेषण – पाठ से सम्बन्धित गहन भावों व विचारों की उदाहरण एवं दृष्टान्त की सहायता से स्पष्टीकरण करेगा।

मौन पाठ – छात्राध्यापक छात्रों को गद्यांश का मौन पाठ करने के लिये कहेगा।

बोध प्रश्न

1. उत्साह के क्या लक्षण हैं ?
2. महान पुरुष में विशेष रूप से किस गुण का होना आवश्यक है ?
3. भय की स्थिति में मनुष्य क्या करता है ?
4. भय और उत्साह में क्या अन्तर है ?
5. दुःखी वर्ग में किस प्रकार के भाव उठते हैं?
6. जीवन में सफलता पाने के लिये मनुष्य की सोच कैसी होनी चाहिये?
7. 'उत्साह' शब्द की व्याख्या कैसे करेंगे ?

गृहकार्य : छात्राध्यापक छात्र-छात्राओं को 'उत्साह' शीर्षक पर संक्षिप्त टिप्पणी लिख कर लाने के लिये कहेगा।

अभ्यास के प्रश्न

1. गद्य पद्य शिक्षण में क्या अन्तर है ? गद्य शिक्षण के कौन-कौन से अंग (सोपान) हैं ? स्पष्ट कीजिए।
2. गद्य पाठ में आये हुए कठिन शब्दों की व्याख्या किस प्रकार करनी चाहिये। पाठ में आये किन्हीं दस शब्दों की व्याख्या किन-किन विधियों से करोगे ?
3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए।
   (I) गद्य शिक्षण के उद्देश्य
   (II) मौन पाठ के उद्देश्य
   (III) गद्य शिक्षण की विधियां

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3

मूल्यांकन का प्रत्यय व अर्थ
(Concept and Meaning of Evaluation)

इस धरा पर मनुष्य क्रियाशील प्राणी है और वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कुछ न कुछ कार्य करता रहता है। उसका कोई भी कार्य निरर्थक नहीं होता अर्थात् वह जो भी कार्य करता है उसका कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। कहने का अभिप्राय यह है कि इस संसार में जितने भी कार्य होते हैं, उनके पीछे कोई न कोई उद्देश्य किसी न किसी रूप में अवश्य ही निहित होता है। दूर ना जाकर शिक्षा के कार्य क्षेत्र में ही लीजिए शिक्षक विद्यार्थियों को शिक्षा केवल शिक्षा देने के लिये नहीं देते बल्कि इस शिक्षण प्रक्रिया के पीछे यह उद्देश्य निहित होता है कि छात्र-छात्राओं के व्यवहार में परिवर्तन आये और वे अपने जीवन को सुखमय बनाने के साथ-साथ अपने समाज और राष्ट्र का विकास कर सकें। उद्देश्य जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में निर्धारित तो अवश्य किये जाते हैं लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति प्रत्येक क्षेत्र में हो । कभी तो उद्देश्य की प्राप्ति हो भी जाती है और कभी नहीं होती और कभी उद्देश्य की प्राप्ति पूरी तरह से न होकर आंशिक रूप से होती है। जिस साधन से हम यह जान पाते हैं कि निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हो गई है उसे मूल्यांकन कहते हैं।

मूल्यांकन की परिभाषा

'मूल्यांकन' का सीधा-सादा अर्थ है किसी का मूल्य लगाना। शिक्षण में मूल्यांकन द्वारा इस बात का अंकन किया जाता है कि छात्र-छात्राओं ने विभिन्न विषयों के किस स्तर तक ज्ञान प्राप्त किया है। शिक्षा के जिन उद्देश्यों को निर्धारित किया गया था उन उद्देश्यों की प्राप्ति कहां तक हुई और शिक्षक अपने शिक्षण कार्य में कहां तक सफल हुआ। मूल्यांकन के लिये परीक्षायें आयोजित की जाती हैं। छात्र-छात्राएं परीक्षा की तैयारी करते हैं। निश्चित समय पर परीक्षाएं देते हैं। परीक्षा भवन में छात्र-छात्राओं को प्रश्न पत्र बांटे जाते हैं और उनकी उत्तर-कापियों को जांच कर उनका मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन के अर्थ की स्पष्टता हेतु शिक्षाविदों ने भिन्न भिन्न परिभाषाएं दी हैं जो विचारणीय हैं-

1. कलार एवं स्टार के अनुसार, "मूल्यांकन वह निर्णय एवं विश्लेषण है जो विद्यार्थी के कार्य से प्राप्त सूचनाओं से निकाला जाता है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. सी. सी. रास के शब्दों में, ''मूल्यांकन जो मापन से अलग है, का प्रयोग अकसर बालक के समूचे व्यक्तित्व अथवा शिक्षा की समूची स्थितियों की जांच प्रक्रिया के लिये किया जाता है।''

3. डा. हिल के विचारों में, ''पुरानी प्रणाली समूचे पाठ्यक्रम तथा शिक्षण-विधि को निर्देशित किया करती थी जब कि नई प्रणाली में परीक्षण एवं शिक्षण दोनों विशिष्ट शिक्षण-उद्देश्यों द्वारा निर्धारित किये जायेंगे। अतः इन्हीं पर समूची शिक्षा एवं मूल्यांकन निर्धारित होने चाहियें।''

4. जे. डब्लयू राईटस्टोन के विचारानुसार, ''मूल्यांकन में व्यापक व्यक्तित्व से सम्बन्धित परिवर्तनों तथा शिक्षा कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों पर बल दिया जाता है। इसमें केवल विषय वस्तु का मूल्यांकन ही सम्बन्धित नहीं बल्कि दृष्टिकोणों, रूचियों, आदर्शों, चिन्तन-विधियों, काम की आदतों तथा वैयक्तिक एवं सामाजिक समायोजन योग्यताओं का मूल्यांकन भी सम्मिलित है।''

ऊपर दी गई परिभाषाओं से स्पष्ट है कि मूल्यांकन एक ऐसी विधा है जो छात्र-छात्राओं की उपलब्धियों शिक्षण-विधियों तथा शिक्षण उद्देश्यों की जांच करती है। इन कार्यों में इसकी विशिष्ट एवं व्यापक उपयोगिताओं की ओर भी संकेत किया है। ये उपयोगितायें परीक्षण एवं मूल्यांकन को शिक्षा-पद्धति का अनिवार्य अंग बना देती है।

मापन और मूल्यांकन में अन्तर

देखने में ऐसा आया है कि कुछ शिक्षक भ्रमवश या जाने अनजाने में मापन और मूल्यांकन को एक दूसरे का पर्यायवाची मान लेते हैं। लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है। अर्थ शास्त्र के दृष्टिकोण से अगर देखें तो जो अन्तर मूल्य और कीमत में है, ठीक उसी प्रकार का अन्तर मापन और मूल्यांकन में है। जब किसी वस्तु को पैसे देकर खरीदा जाता है और हम जितने पैसे देते हैं वह उस वस्तु की कीमत होती है परन्तु उस वस्तु को दूसरी वस्तु देकर लिया जाये तो यह उस वस्तु का मूल्य होता है। मुख्य अन्तर यह हुआ कि कीमत निश्चित होती है मूल्य निश्चित नहीं होता। इस प्रकार मापन का अर्थ किसी वस्तु या व्यक्ति के गुणों का मापना है जबकि मूल्यांकन का अर्थ है उसका मूल्य निर्धारित करना। मापन का सम्बन्ध यान्त्रिक क्रिया है जिसमें व्यक्ति की अपनी अच्छी या बुरी राय का कोई महत्त्व नहीं होता परन्तु किसी वस्तु या व्यक्ति का मूल्यांकन उसमें निहित सभी गुणों एवं राय के आधार पर किया जाता है।

संक्षिप्त में मापन और मूल्यांकन में निम्न अन्तर हैं।

1. मापन संकुचित है और मूल्यांकन का केवल अंग मात्र है। मूल्यांकन का क्षेत्र बहुत विकसित होता है। मूल्यांकन के अन्तर्गत विद्यार्थी के शारीरिक, मानसिक सामाजिक, नैतिक, भावात्मक आदि सभी गुणों को ध्यान में रखा जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. हम मापन के आधार पर बालक के भविष्य के बारे में कुछ नहीं कह सकते लेकिन मूल्यांकन के आधार पर बालक के बारे में भविष्यवाणी की जा सकती है।
3. मापन करने में इतने समय की आवश्यकता नहीं होती जितने समय की मूल्यांकन के लिये आवश्यकता पड़ती है।

मूल्यांकन की शिक्षा में उपयोगिता

मूल्यांकन शिक्षा के क्षेत्र में अत्यन्त उपयोगी है। इसकी उपयोगिता निम्न कारणों से है-

1. मूल्यांकन से ज्ञानोपार्जन होता है – शिक्षा के अनेक उद्देश्य होते हैं। इन सभी उद्देश्यों की प्राप्ति तभी संभव हो सकती है जब शिक्षक का ज्ञान सभी क्षेत्रों के बारे में विस्तृत हो। यदि शिक्षक को उन सभी क्षेत्रों का ज्ञान नहीं है तो वह अवश्य ही वांछित ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करेगा। दूसरी तरफ छात्र-छात्राओं को यह ज्ञान होगा कि उनका मूल्यांकन केवल परीक्षा में प्राप्त किये हुए अंक तक सीमित नहीं है, बल्कि अन्य सभी गुणों के आधार पर भी होता है तो छात्र-छात्राएं वांछनीय गुणों को व्यावहारिक जीवन में अपनायेंगे।

2. मूल्यांकन से शिक्षण विधियों और पाठ्यक्रम में सुधार होता है – मूल्यांकन के द्वारा यह भी ज्ञात हो सकता है कि शिक्षक जिन शिक्षण विधियों के माध्यम से शिक्षण कर रहा है वे शिक्षण परिस्थितियों में कितनी कारगर हैं और कितनी कारगर नहीं हैं। इससे शिक्षण विधियों के निर्बल और सबल बिन्दुओं का ज्ञान हो जाता है। इस प्रकार निर्बल बिन्दुओं को दूर करके शिक्षण विधियों को अधिक सार्थक और सशक्त बनाया जा सकता है।

3. मूल्यांकन सही मार्ग दर्शन करता है – मूल्यांकन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके द्वारा छात्र-छात्राओं की व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से कमियों की जानकारी प्राप्त हो सकती है और इस जानकारी के आधार पर उनका सही दिशा की ओर उचित मार्ग दर्शन किया जा सकता है।

4. मूल्यांकन छात्र-छात्राओं के वर्गीकरण में सहायक – मनोविज्ञान के तथ्यों के आधार पर हम इस बात से भली भांति परिचित हैं कि सभी छात्र-छात्राओं में एक जैसी क्षमताएं और योग्यताएं नहीं होतीं वे एक दूसरे से भिन्न होते हैं। किसी में कोई गुण अधिक और किसी में कम होता है। इस आधार पर छात्र-छात्राओं का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जा सकता है। एक वर्गीकरण तो यह हो सकता है कि जिनमें समान योग्यता के सभी छात्र एक कक्षा में रहें। इस प्रकार के वर्गीकरण को क्षैतिजीय वर्गीकरण (Horizontal Classification) कहते हैं। दूसरी प्रकार के वर्गीकरण में विभिन्न योग्याओं के मिले जुले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

छात्र एक कक्षा में रखे जायें। इस प्रकार के वर्गीकरण को लम्बीय वर्गीकरण (Vertical Classification) कहते हैं।

5. मूल्यांकन निदान और भविष्यवाणी में सहायक सिद्ध होता है – मूल्यांकन की सबसे बड़ी एक उपयोगिता यह भी है कि छात्र-छात्राओं की कमियों को जानने के बाद उसके कारणों को जाना जा सकता है। कारण जानने के पश्चात उसके उपचार का प्रावधान किया जा सकता है और बहुत से छात्र-छात्राओं की भली भांति योग्यताओं की जांच पड़ताल करने के उपरान्त उनके बारे में भविष्यवाणी की जा सकती है।

शिक्षा में मूल्यांकन का महत्त्व

दार्शनिकों, शिक्षाविदों और शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा की परिभाषाएं भिन्न-भिन दी हैं। इन परिभाषाओं के आधार पर शिक्षा के उद्देश्य भी अलग-अलग बताये गये हैं। किसी के अनुसार चरित्र का निर्माण करना ही शिक्षा है तो किसी के अनुसार व्यवसाय के लिये तैयार करना ही शिक्षा का उद्देश्य है। आज शिक्षा के सर्वांगीण विकास को शिक्षा का अच्छा उद्देश्य माना जाने लगा है। परन्तु बालक का सर्वांगीण विकास तभी सम्भव है जब वह सीखे हुए ज्ञान को व्यवहार में लाये। वर्तमान में जो छात्र-छात्राओं के लिये परीक्षाएं आयोजित की जाती हैं तो वे केवल छात्र-छात्राओं के अर्जित ज्ञान की जांच करती हैं न कि उस ज्ञान के सदुपयोग की। वर्तमान में जिन परीक्षाओं का चलन है वे केवल मूल्यांकन की अंग मात्र हैं।

यहां एक बात स्पष्ट करने की यह है कि शिक्षक यह समझता है कि उसने शिक्षा के जो उद्देश्य निर्धारित किये थे, वह उन्हें प्राप्त कर रहा है। दूसरी तरफ छात्र-छात्राएं यह समझते हैं कि जो कुछ शिक्षक पढ़ा रहा है वे उसे ग्रहण कर रहे हैं और अभिभावक इस बात से सन्तुष्ट हैं कि उनके बच्चे विद्यालय में जाकर समय का सही ढंग से सदुपयोग कर रहे हैं और साथ ही साथ शिक्षा भी ग्रहण कर रहे हैं। लेकिन तीनों को अपने-अपने स्थान पर तब तक सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिये जब तक वे मूल्यांकन रूपी कसौटी पर खरे न उतरें। इन्हीं सब बातों की जांच के लिये मूल्यांकन करना चाहिये। निम्न बातों को देखते हुए मूल्यांकन का बहुत महत्त्व है।

1. विद्यार्थियों की उपलब्धियों को जांचने में सहायक – परीक्षा एवं मूल्यांकन से विद्यार्थियों की उपलब्धियां जांचने में सहायता मिलती है। हर साल वार्षिक परीक्षा आयोजित करने का मुख्य प्रयोजन यह होता है कि कौन सा विद्यार्थी किस स्तर के योग्य है- इसका निर्णय परीक्षण एवं मूल्यांकन से किया जाता है। उत्तीर्ण विद्यार्थियों में से कौन सा विद्यार्थी दूसरों से अधिक योग्य है- इसका निर्णय भी परीक्षण एवं मूल्यांकन से होता है।

2. विद्यार्थियों की कमजोरियों को जानने में सहायक – विद्यार्थियों में विभिन्न प्रकार की कमजोरियां उनकी वास्तविक योग्यताओं के विकास में बाधक बनती रहती हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
इन कमजोरियों के ज्ञान के बिना उन्हें विकास के मार्ग पर अग्रसर नहीं किया जा सकता। विद्यार्थियों की इन कमजोरियों का ज्ञान परीक्षण एवं मूल्यांकन से होता है।

3. विद्यार्थियों की प्रगति में सहायक – परीक्षण एवं मूल्यांकन विद्यार्थियों की प्रगति में सहायक सिद्ध होता है। विद्यार्थियों को जब अपनी कमजोरियों का ज्ञान हो जाता है तो वे उनके प्रति सचेत होकर उन्हें दूर करने का प्रयास करते हैं। अध्यापक को जब विद्यार्थियों की कमजोरियों का ज्ञान हो जाता है तो वह उनकी कमजोरियों को दूर करके उन्हें प्रगति के मार्ग की ओर अग्रसर करता है।

4. विद्यार्थियों की ओर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देने में सहायक – शिक्षण को मनोवैज्ञानिक आधार देने के लिए विद्यार्थियों की ओर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है। वैयक्तिक विभिन्नता इस बात की मांग करती है कि सभी विद्यार्थियों को एक लकड़ी से न हाँका जाये। सभी विद्यार्थी एक ही स्तर के नहीं होते। कुछ मेधावी होते हैं, कुछ औसत होते हैं, तो कुछ कमजोर। आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी योग्यताओं एवं आवश्यकताओं के अनुसार आगे बढ़ने के अवसर प्रदान किये जायें। इसके लिए प्रत्येक विद्यार्थी की ओर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है, परन्तु कौन सा विद्यार्थी किस स्तर का है, किसी विद्यार्थी में कौन सी योग्यतायें एवं कमजोरियां हैं ? जब तक इनका पता नहीं चलेगा तब तक व्यक्तिगत रूप से ध्यान लाभकारी सिद्ध नहीं हो सकता। यह जानकारी परीक्षण एवं मूल्यांकन द्वारा प्रदान की जाती है। इस प्रकार परीक्षण एवं मूल्यांकन अध्यापकों को विद्यार्थियों के प्रति व्यक्तिगत ध्यान देने के योग्य बनाता है।

5. विद्यार्थियों के लिए प्रेरक – परीक्षा एवं मूल्यांकन विद्यार्थियों के लिए प्रेरक भी सिद्ध होती है। परन्तु जैसे ही परीक्षा निकट आती वे पढ़ने में रूचि लेने लगते हैं। परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए विद्यार्थी सख्त परिश्रम भी करने लगते हैं। इस प्रकार परीक्षा एवं मूल्यांकन विद्यार्थियों में पढ़ने की रूचि उत्पन्न करता है और उन्हें सख्त परिश्रम के लिए प्रेरणा प्रदान करता है।

6. विद्यार्थियों को योग्यतानुसार विषय चुनने में सहायक – आजकल कोर्सों के विभिन्नीकरण पर बल दिया जा रहा है। विद्यार्थियों को उनकी योग्यताओं एवं रूचियों के अनुसार विषय चुनने चाहिएं। इसी के आधार पर ही यह निश्चय किया जा सकता है कि वे जीवन में कौन सा व्यवसाय कुशलतापूर्वक कर सकते हैं, परन्तु प्रश्न उठता है कि विद्यार्थियों को उनकी योग्यताओं एवं रूचियों का ज्ञान कैसे हो ? इसके लिए परीक्षण एवं मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। मैट्रिक तक सभी विद्यार्थी सभी निर्धारित विषय पढ़ते हैं परन्तु मैट्रिक के परिणाम से ही ज्ञात होता है कि किस विद्यार्थी को आगे कौन सा कोर्स लेना चाहिए। विज्ञान में अच्छे अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को विज्ञान के विषय लेने के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए कहा जाता है। भाषा में अच्छे अंक प्राप्त करने वाले को आगे वही भाषा पढ़ने के लिए कहा जाता है। इस प्रकार परीक्षण एवं मूल्यांकन विद्यार्थियों को उनकी रूचियों एवं योग्यताओं के अनुसार विषय चुनने में सहायता प्रदान करता है।

7. शिक्षा-उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक – शिक्षा कुछ उद्देश्यों को सम्मुख रख कर दी जाती है। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वोतोन्मुख विकास करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। इनके अतिरिक्त प्रत्येक शिक्षण-विषय के कुछ विशिष्ट उद्देश्य होते हैं जो मुख्य उद्देश्य की प्रगति में सहायक होते हैं। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अध्यापक शिक्षण कार्य करता है और परीक्षण तथा मूल्यांकन से ज्ञात होता है कि शिक्षण कार्य उद्देश्यों की प्राप्ति में कहाँ तक सफल हुआ है। परीक्षण एवं मूल्यांकन शिक्षा के उद्देश्यों को हमेशा अध्यापक के सम्मुख रखता है। यदि परीक्षण एवं मूल्यांकन की व्यवस्था न हो तो शिक्षा-उद्देश्यों की उपेक्षा हो जाने की सम्भावना बनी रहती है। इस प्रकार परीक्षण एवं मूल्यांकन शिक्षा उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक बने रहते हैं।

8. शिक्षण-विधियों के सुधार में सहायक – अपने शिक्षण कार्य को कुशलतापूर्वक करने के लिए अध्यापक विभिन्न प्रकार की शिक्षण प्रणालियों का प्रयोग करता है। परन्तु कौन सी शिक्षण-विधि उपयोगी है- इसका ज्ञान तभी होता है जब वह परीक्षा की कसौटी पर कसी जाती है। परीक्षा-परिणामों के विश्लेषण से अध्यापक को ज्ञात होता है कि उसकी शिक्षण-विधियों में कौन से दोष हैं। इस प्रकार परीक्षण एवं मूल्यांकन अध्यापक को अपनी शिक्षण-विधियों के दोषों के प्रति सचेत करती हैं और उन्हें सुधारने के लिए प्रेरणा प्रदान करती हैं।

9. पाठ्यक्रम के सुधार में सहायक – शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पाठ्य-क्रम निर्धारित किया जाता है परन्तु वह पाठ्य-क्रम शिक्षा उद्देश्यों की प्राप्ति में कहां तक सहायक है- इसका निर्णय परीक्षण एवं मूल्यांकन द्वारा किया जाता है। परीक्षण एवं मूल्यांकन से ज्ञात होता है कि पाठ्य-क्रम में कितना कुछ उद्देश्यपूर्ण है और कितना व्यर्थ। उसके अनुसार में पाठ्य-क्रम में सुधार किया जा सकता है। वस्तुतः मूल्यांकन द्वारा केवल विद्यार्थियों एवं अध्यापकों का ही मूल्यांकन नहीं होता बल्कि पाठ्य-क्रम का भी मूल्यांकन होता है।

10. रिकार्ड रखने में सहायक – विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास के लिए उनका नियमित रिकार्ड रखने की आवश्यकता होती है। प्रगति पत्र के माध्यम से अभिभावकों को सूचित किया जाता है कि उनके बच्चे किस विषय में कितनी प्रगति कर रहे हैं। नियमित रिकार्ड के विना प्रगति पत्र तैयार नहीं किये जा सकते और नियमित रिकार्ड रखने में परीक्षाओं में प्राप्त अंकों एवं ग्रेडों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। अतः विद्यार्थियों की प्रगति का नियमित रिकार्ड रखने में परीक्षायें बहुत सहायता करती हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपरलिखित तथ्यों से परीक्षा एवं मूल्यांकन का महत्त्व सिद्ध हो जाता है। यही कारण है कि परीक्षाओं का विरोध होने पर भी ये हमारी शिक्षा-पद्धति का अनिवार्य अंग बनी हुई हैं। वस्तुत: परीक्षण एवं मूल्यांकन में कोई दोष नहीं। दोष यदि है तो परीक्षण एवं मूल्यांकन की पद्धति में। परीक्षण प्रणाली इतनी दोषपूर्ण है कि विद्यार्थियों की योग्यताओं का ठीक-ठाक मूल्यांकन नहीं हो जाता। अत: आवश्यकता इस बात की है कि परीक्षण एवं मूल्यांकन की आलोचना करने की बजाये उसकी प्रणाली में सुधार किया जाये।

(अ) हिन्दी में मूल्यांकन प्रक्रिया

किसी भी विषय के मूल्यांकन की प्रक्रिया में मुख्य रूप से तीन बातों को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक होता है-जो निम्न हैं -

1. शिक्षण के उद्देश्यों का निर्माण करना।
2. निर्मित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये उचित वातावरण उत्पन्न करना।
3. मूल्यांकन के साधन एवं सामग्री और विधियां।

इन तीनों को निम्न ढंग से भी प्रदर्शित किया जा सकता है -

हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य

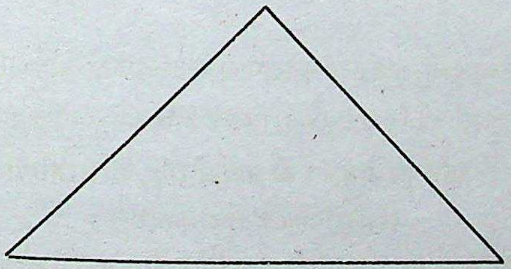

पाठ्य क्रम एवं सीखने के अनुभव मूल्यांकन के साधन

मूल रूप में मूल्यांकन का सम्बन्ध उद्देश्य से होता है। मूल्यांकन का उद्देश्य यह जानकारी प्राप्त करना होता है कि पूर्व निर्धारित शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई है। इस लिये मूल्यांकन के उद्देश्य निर्धारित करने से पूर्व हमारे लिये यह जानना आवश्यक होगा कि भाषा शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य कौन-कौन से हैं ?

हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य : भाषा-शिक्षण के मुख्य रूप से तीन उद्देश्य हैं -

1. छात्र-छात्राओं में अर्थ ग्रहण करने की योग्यता का विकास करना।
2. अभिव्यक्ति की योग्यता का विकास करना।
3. साहित्य-सृजन शक्ति का विकास करना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

विचारों का आदान-प्रदान दो प्रकार से किया जा सकता है- पढ़कर और सुनकर। इसी प्रकार विचारों की अभिव्यक्ति भी दो प्रकार से सम्भव है- बोलकर और लिखकर अर्थात् मौखिक रूप से और लिखित रूप से। यहां पर यह बात विशेष रूप से समझने की है कि शिक्षण का उद्देश्य केवल ज्ञानोपार्जन नहीं है बल्कि शिक्षण का उद्देश्य यह भी है कि छात्र-छात्राएं अर्जित ज्ञान का अपने वास्तविक जीवन में व्यवहार कुशलता से प्रयोग कर सकें। इस बात को दूसरे शब्दों में इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि मूल्यांकन का उद्देश्य छात्रों द्वारा प्राप्त किये ज्ञान (Knowledge) का सही प्रयोग (Application) और सही प्रयोग करते हुए कुशलता (Skill) प्राप्ति को मापना है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि शिक्षा का उद्देश्य छात्र-छात्राओं के ज्ञान, कौशल व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन लाना है। इस प्रकार हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकन का उद्देश्य इस बात की जानकारी (ज्ञान) प्राप्त करना है कि छात्र-छात्राओं की अर्थ ग्रहण, अभिव्यक्ति और साहित्य-सृजन की क्षमता में कहां तक वांछनीय परिवर्तन या विकास हुआ।

ये परिवर्तन निम्न हो सकते हैं -

I. छात्र-छात्राओं के ज्ञानार्जन में।

II. छात्र-छात्राओं की रूचियों, अभिरूचियों और मनोवृत्तियों के वांछनीय परिवर्तनों में।

III. इनकी योग्यताओं, क्षमताओं और भाषा से सम्बन्धित कौशलों के विकास में।

IV. छात्र-छात्राओं की चिन्तन, मनन, विवेक और तर्क-विर्तक शक्ति में विकास।

2. अधिगम अनुभव या ज्ञान बोधक परिस्थितियां (Learning Experiences)

जहां तक उद्देश्यों का सम्बन्ध है उनका निर्धारित करना इतना कठिन नहीं होता जितना उन उद्देश्यों की प्राप्ति करना। उद्देश्यों की पूर्ति के लिये शिक्षकों को विशेष अधिगम परिस्थितियों (वातावरण) का निर्माण करना पड़ता है। शिक्षक ऐसा वातावरण उत्पन्न करने का प्रयास करता है जिससे छात्र-छात्राएं नये-नये अनुभव प्राप्त करें। शिक्षकों के प्रयासों के फलस्वरूप छात्र-छात्राएं अवलोकन करके, सुन करके और पढ़कर नये अनुभव प्राप्त करते हैं । इनको ही अधिगम अनुभव या सीखने के अनुभव (Learning Experiences) कहते हैं। इस प्रकार सीखने के अनुभव शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के साधन हैं। यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि यदि साधन उद्देश्यों के अनुसार होंगे तो उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव है अन्यथा नहीं। इस लिये उद्देश्यों की पूर्ति हेतु जो भी वातावरण (परिस्थितियां) उत्पन्न की जायें वे निम्न से सम्बन्धित हों।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

I. शिक्षण उद्देश्यों से सम्बन्धित हों।

II. सशक्त, प्रभावपूर्ण एवं सार्थक और छात्र-छात्राओं की रूचि क्षमताओं के अनुकूल हों।

III. छात्र-छात्राओं के मानसिक एवं बौद्धिक स्तर और योग्यता के अनुकूल हों।

3. मूल्यांकन के साधन- जैसे कि हम पहले चर्चा कर चुके हैं कि मूल्यांकन का मुख्य उद्देश्य दो बातों को जानना है वे निम्न हैं –

I. निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति किस सीमा तक हुई ?

II. छात्र-छात्राओं में कहां तक वांछनीय परिवर्तन हुआ ?

इन दोनों ऊपरलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिये मुख्यतः चार साधन हैं –

1. सुनना
2. बोलना
3. पढ़ना
4. लिखना

इनमें से सुनने और पढ़ने का सम्बन्ध अर्थ ग्रहण करने से है और बोलने तथा लिखने का सम्बन्ध अभिव्यक्ति से है। सुनने का मौखिक अर्थ ग्रहण और पढ़ने का लिखित अर्थ ग्रहण करने से सम्बन्ध है। इन सब बातों का निष्कर्ष यह है कि अर्थ ग्रहण हो या अभिव्यक्ति, उसके मुख्य रूप से दो रूप हैं - मौखिक और लिखित। अर्थ ग्रहण और अभिव्यक्ति का मूल्यांकन चाहे वह मौखिक हो या लिखित किसी भी एक साधन के द्वारा नहीं किया जा सकता। मूल्यांकन का सम्बन्ध छात्र के किसी एक पहलू से न होकर बल्कि उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व से होता है। इस लिये व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं के मूल्यांकन हेतु अनेक प्रविधियों को प्रयोग करना आवश्यक होता है।

मूल्यांकन प्रविधियां
(Devices of Evaluation)

मूल्यांकन के अन्तर्गत हम छात्र-छात्राओं का तथ्यों पर आधारित कोरे ज्ञान का परीक्षण ही नहीं करना चाहते अपितु उनके व्यावहारिक परिवर्तन की जांच भी करना चाहते हैं। शिक्षा के उद्देश्यों की विभिन्नता के साथ-साथ हर उद्देश्य में कई व्यावहारिक परिवर्तन निहित होते हैं। इस लिये सभी व्यावहारिक परिर्वतनों का मूल्यांकन के लिये एक ही तरह के मापदण्ड को नहीं अपनाया जा सकता। इसके लिये अलग-अलग प्रविधियों का चुनाव करना चाहिये। ज्ञान एवं व्यावहारिक परिवर्तन के मूल्यांकन हेतु निम्न प्रविधियों को अपनाना चाहिये।

1. निरीक्षण विधि – इस विधि में निरीक्षक छात्र-छात्राओं की आदतों, क्रियाओं और उनके हाव भावों का लगातार निरीक्षण करता रहता है। वह पर्याप्त समय तक लगातार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अवलोकन (निरीक्षण) के बाद किसी परिणाम तक पहुंच सकता है। वह विधि छात्र-छात्राओं की व्यवहार कुशलता, योग्यता, सामाजिक एवं नैतिक गुण, जैसे-सहयोग, सहनशीलता, सत्यता, श्रद्धा, निष्ठा, कर्त्तव्यपरायणता निस्वार्थ भावना की जांच के लिये अधिक उपयोगी और लाभप्रद है। निरीक्षण विधि से सम्बन्धित कुछ विधियों को अपनाना उचित रहता है जो निम्न हैं –

1. साक्षात्कार (Interview)– इस विधि के अनुसार छात्र के साथ परीक्षक या मार्गदर्शक सहानुभूतिपूर्ण ढंग से उससे बातचीत करते हुए उससे अच्छे सम्बन्ध स्थापित करता है और उसको आत्म विश्वास में ले लेता है और फिर उससे ऐसे प्रश्न करता है जिनके बारे में वह जानकारी प्राप्त करना चाहता है। फिर प्रश्नों के दिये गये उत्तरों के आधार पर किसी निष्कर्ष पर पहुंचता है। यह विधि छात्र-छात्राओं की योग्यता, शिष्टाचार, रुचि का अवलोकन (निरीक्षण) करने के लिये उपयुक्त है।

2. प्रश्नावली (Questionnaire) - इसके अनुसार छात्र-छात्राओं के जिन गुणों का मूल्यांकन करना होता है उन पर आधारित कुछ अप्रत्यक्ष प्रश्न तैयार करके छात्र-छात्राओं से उनका उत्तर निकलवाने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण के तौर पर छात्र-छात्राओं की अभिरूचि का पता लगाने के लिये प्रश्न पूछे जाते हैं- जैसे

प्रश्न- आप किस शिक्षक को पसन्द करोगे ?

I. जो पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं में अधिक भाग लेते हैं।

II. जो सबसे अधिक पढ़ने पढ़ाने में विश्वास रखते हैं।

III. जो अधिक से अधिक धन कमाना चाहते हैं।

IV. जो हमेशा सत्य बोलते हैं।

V. जो दीन दुखियों की सहायता करने के लिये तैयार रहते हैं।

इन प्रश्नों में से छात्र-छात्राएं जिस बात को अधिक पसन्द करते होंगे उस पर निशान लगा देंगे। इससे उनकी रूचि का पता लगाया जा सकता है कि वे सहगामी गतिविधियों में भाग लेना अधिक पसन्द करते हैं या सच बोलना। इस प्रकार प्रश्नावली में कई प्रकार के कई प्रश्न होते हैं। सभी प्रश्नों में बराबर विकल्प होते हैं और प्रत्येक प्रश्न का उसी संख्या का विकल्प उसी विशिष्ट रूचि पर आधारित होता है। उदाहरण रूप में ऊपर के विकल्पों में (II) पर निशान लगाने वाला छात्र पढ़ने को अधिक मान्यता देता है।

3. संचित अभिलेख-पत्र (Cumulative Record Card)- इसके नाम से ही यह पता चलता है कि इस अभिलेख में छात्र-छात्राओं में विभिन्न क्षेत्रों की उपलब्धियों की प्रगति का लेखा-जोखा संचित होता है। कभी कभी किसी कारणवश कोई बालक किसी परीक्षा में कम अंक प्राप्त कर पाता है तो हम यह नहीं कह सकते कि वह छात्र मन्दबुद्धि है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसका संचित अभिलेख उसकी उन्नति और अवनति का सूचक होता है। दूसरे बालकों की डायरियों आदि के द्वारा उनकी रूचियों, भावों, समस्याओं आदि का भी पता लगाया जा सकता है। इस प्रकार संचित अभिलेख द्वारा छात्रों की विभिन्न दिशाओं में प्रगति मालूम होती है।

4. वर्ग-क्रम विधि (Rating Scale Procedure)- इसमें छात्र-छात्राओं की किसी विशेष क्षेत्र में कुशलताओं का परीक्षण उस क्षेत्र में उसकी प्रगति को देखकर करते हैं। इसके द्वारा छात्र-छात्राओं की कुशलताओं, रुचियों, सहयोग की भावना, सहनशीलता की भावना, धैर्य आदि अनेक प्रवृत्तियों में उसकी प्रगति को आंका जा सकता है। प्रत्येक प्रवृत्ति के परीक्षण का वर्ग क्रम अलग होता है। उदाहरण के लिये- अनुशासन, सहयोग, वाद-विवाद, रचनात्मक लेखन पद्य पाठ आदि कुछ प्रवृत्तियां हैं। इनमें से अनुशासन के मान निम्न ढंग से दर्शाये जा रहे हैं।

अनुशासन

स्कूल के नियमों का कभी-कभी या बिल्कुल पालन न करना	आवश्यक नियमों को हमेशा न मानना	नियमों के पालन में कभी-कभी उल्लघंन	उत्तरदायित्व का निर्वाह और नियम का अकसर पालन करना	उत्तरदायित्व के प्रति निष्ठा और नियमों की सदैव पालना करना।

इस सारणी के आधार पर अनुशासन के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में छात्र-छात्राओं की प्रगति का आसानी से पता लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिये निरीक्षण के समय यदि छात्र को दूसरे क्रम में रखा जाता है और फिर थोड़े समय के बाद वह तीसरे क्रम में आता है तो निश्चित रूप से यह कहा जायेगा कि उसके व्यवहार में परिवर्तन हुआ है।

परीक्षण विधि

परीक्षण विधि के अन्तर्गत किसी प्रमापीकृत (Standardised) या अध्यापक द्वारा तैयार किये गये जांच पत्र के आधार पर छात्र-छात्राओं का नियमानुसार परीक्षण किया जाता है। परीक्षण कई प्रकार के हो सकते हैं, जैसे-बुद्धि परीक्षण, सफलता जांचने का परीक्षण आदि। निरीक्षण और परीक्षण में अन्तर होता है। इस अन्तर को समझने के लिये एक उदाहरण का सहारा लेते हैं, जैसे- किसी छात्र की क्रियाओं का सूक्ष्मता से अवलोकन करते हुए देखते हैं कि वह हर प्रकार के कार्य को बहुत सूझ-बूझ और समझदारी से करता है तो आप कह देते हैं कि छात्र बहुत बुद्धिमान है। इसको निरीक्षण कहते हैं। यदि आप किसी परीक्षण के आधार पर उसकी बुद्धि लब्धि (I.Q.) का पता लगाना चाहते हैं तो यह परीक्षण होगा। परीक्षण के अन्तर्गत भी बुद्धि, रुचि आदि अनेक प्रकार के परीक्षण आते हैं, यहां पर हमारा सम्बन्ध परीक्षा प्राविधि से है और उसी का उल्लेख किया जा रहा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परीक्षा प्रविधि
(Examination Device)

इस प्रविधि के सामान्य रूप से सभी शिक्षक और छात्र परिचित होते हैं। इसके अनुसार कुछ प्रमुख प्रश्नों और क्रियाओं के आधार पर छात्रों के ज्ञान व्यवहार और कौशलों का परीक्षण किया जाता है। यह परीक्षण कई प्रकार से किया जा सकता है। परीक्षण की प्रकृति और उसमें निहित क्रिया के आधार पर परीक्षाओं का रूप या वर्गीकरण निम्न ढंग से हो सकता है –

1. (I) व्यावहारिक परीक्षा
   (II) सैद्धान्तिक परीक्षा
2. (I) आन्तरिक परीक्षा
   (II) बाह्य परीक्षा
3. (I) मासिक परीक्षा
   (II) त्रैमासिक परीक्षा
   (III) अर्द्ध वार्षिक परीक्षा
   (IV) वार्षिक परीक्षा
4. (I) मौखिक परीक्षा
   (II) लिखित परीक्षा

प्रश्न या परीक्षा-पत्र का प्रयोग मूल्यांकन के साधन मात्र के रूप में किया जाता है। किसी भी एक साधन से मूल्यांकन सम्भव नहीं है। मूल्यांकन के लिये एक से अधिक साधनों का अपनाना आवश्यक है। इस लिये मूल्यांकन के साधनों का प्रयोग करते समय मुख्य रूप से निम्न दो बातों को अवश्य ही ध्यान में रखना चाहिये –

1. मूल्यांकन के लिये किसी एक साधन पर निर्भर नहीं रहना चाहिये। बल्कि मौखिक और लिखित या व्यावहारिक और सैद्धान्तिक या आन्तरिक और बाहरी दोनों प्रकार की परीक्षाओं को भी उचित महत्त्व दिया जाना चाहिये।
2. बालकों के किसी एक पक्ष का मापन के आधार पर मूल्यांकन नहीं होना चाहिये, अपितु छात्र-छात्राओं की बुद्धि, रुचि, व्यक्तित्व आदि का भी परीक्षण किया जाना चाहिये।

अच्छी परीक्षा के गुण

ऊपरलिखित सभी सार्थक बातों को अपनाने के वाद भी यदि परीक्षा में विश्वसनीय वैध और वस्तु-निष्ठ जैसे गुण नहीं हैं तो छात्र-छात्राओं का वास्तविक मूल्यांकन सम्भव नहीं। इस लिये एक अच्छी, सार्थक और उद्देश्यपूर्ण परीक्षा में निम्न गुणों का होना आवश्यक है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1. विश्वसनीयता (Reliability) — अगर परीक्षा या प्रश्न पत्र के माध्यम से किया गया मापन स्थिर नहीं रहता है तो परीक्षा विश्वसनीय नहीं होती है। यदि परीक्षा विश्वसनीय होगी तो उसके द्वारा किया गया मूल्यांकन चाहे वह किन्हीं भी परिस्थितियों में किया जाये, हमेशा समान रहेगा । उदाहरण के तौर पर यदि किसी छात्र को किसी परीक्षा में 20 में से 15 अंक प्राप्त हुए तो चाहे जिन परिस्थितियों में उसका परीक्षण किया जाये, उस परीक्षण या प्रश्न पत्र में उसे हमेशा 15 अंक ही मिलने चाहियें। प्राप्त किये हुए अंकों में थोड़ा अन्तर है तो उसको अनदेखा किया जा सकता है लेकिन अधिक अन्तर उचित नहीं है।

2. वैधता (Validity) — परीक्षा के माध्यम से वांछनीय लक्ष्य का मापन होता है तो हम परीक्षा को वैध मानते हैं। उदाहरणतया छात्र-छात्राओं के कौशल को मापने के लिये ली गई परीक्षा द्वारा कौशल का ही माप होना चाहिये न कि किसी दूसरे पक्ष का। इसके अतिरिक्त परीक्षा जिस स्तर के छात्र-छात्राओं के परीक्षण के लिये बनाई जाये तो उसके माध्यम से यदि उसी स्तर के लिये छात्र-छात्राओं का परीक्षण किया जा सके और अन्य स्तर के छात्र-छात्राओं का नहीं तो भी परीक्षा को वैध माना जायेगा।

3. वस्तुनिष्ठता (Objectivity) — जिस परीक्षा में परीक्षा लेने वाले की राय का कोई स्थान या महत्त्व नहीं होता उसे वस्तुनिष्ठ परीक्षा कहते हैं। वस्तुनिष्ठ परीक्षा का सबसे बड़ा गुण निष्पक्षता है। उदाहरण के लिये एक ही छात्र की उत्तर पुस्तिका को भिन्न भिन्न परीक्षक भिन्न भिन्न परिस्थितियों में जांच करते हैं तो छात्र द्वारा प्राप्त किये गये अंक समान होते हैं तो परीक्षा में वस्तुनिष्ठता होगी। यदि अंकों में भिन्नता होगी तो यह कहा जायेगा कि परीक्षा वस्तुनिष्ठ नहीं है।

4. व्यापकता (Comprehensiveness) — जो परीक्षा निर्धारित समय में जितने अधिक पक्षों का परीक्षण कर सकती है तो उसको उतना ही व्यापक माना जाता है। एक अच्छी परीक्षा उसको माना जाता है जिसके द्वारा निर्धारित उद्देश्यों में से अधिक से अधिक उद्देश्यों का परीक्षण। उदाहरण के लिये, छात्र-छात्राओं के ज्ञान, रुचि, क्षमताओं, मनोवृत्ति और व्यवहार आदि में परिवर्तन लाने हेतु शिक्षा देते हैं। इस प्रकार जो परीक्षा इन सीखी हुई बातों में से जितनी अधिक बातों का परीक्षण करने में सफल और सशक्त है तो वो परीक्षा उतनी ही अधिक व्यापक मानी जायेगी।

5. विभेदकारिता (Discrimination) — यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि सभी छात्र-छात्राएं बुद्धि क्षमता और कुशलता की दृष्टि से एक समान नहीं होते। परन्तु परीक्षण एक ही साथ कक्षा के सभी छात्र-छात्राओं का किया जाता है। इस दृष्टि से जो परीक्षा एक ही कक्षा में पढ़ने वाले विभिन्न स्तर के छात्र-छात्राओं का परीक्षण कर सकती है उसे विभेदकारी परीक्षा कहते हैं। इस प्रकार विभेदकारी परीक्षा कमजोर और होशियार छात्रों में भेद बताने में समर्थ रहती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6. व्यावहारिकता (Practicability) — एक अच्छी परीक्षा लाभप्रद और उपयोगी होती है। जो भी परीक्षा जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रयोग में लाई जाये और उससे उस उद्देश्य की पूर्ति हो तो उसे व्यावहारिक दृष्टि से छात्र-छात्राओं के मार्गदर्शन हेतु अच्छी परीक्षा मानेंगे।

7. उपयोगिता (Utility) — परीक्षा अच्छी होगी तो उसको सरलता से प्रयोग में लाया जा सकता है। परीक्षा के प्रश्न पत्र के नियम, निर्देश और भाषा सरल एवं स्पष्ट होगी तो छात्र-छात्राएं आसानी से समझ सकेंगे, तो वो परीक्षा अवश्य ही उपयोगी मानी जायेगी।

प्रश्नों के प्रकार

परीक्षा का प्रयोग मूल्यांकन के साधन के रूप में किया जाता है और प्रश्न पत्र का प्रयोग परीक्षा के साधन के रूप में किया जाता है। इस लिये एक अच्छी परीक्षा के लिये अच्छे प्रश्न-पत्र का होना आवश्यक है। प्रश्न-पत्र तैयार करते हुए इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये कि प्रश्न-पत्र में गुण तो अधिक से अधिक हों और दोष नाम मात्र के लिये ही हों।

प्रश्न पत्र के प्रश्नों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है जो निम्न हैं -

1. निबन्धात्मक प्रश्न
2. लघुत्तरात्मक प्रश्न
3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

पहले दो प्रकार के प्रश्न उत्तर की दृष्टि से बन्धन और सीमा से मुक्त हैं लेकिन तीसरे प्रकार के प्रश्नों का निश्चित उत्तर होता है। इसी आधार पर प्रथम दो प्रकार के प्रश्नों को प्रश्न मुक्त उत्तरात्मक कहा जा सकता है और तीसरे प्रकार के प्रश्नों को निश्चित उत्तरात्मक कहा जा सकता है। प्रश्नों के प्रकार तालिका के माध्यम से निम्न रूप से प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

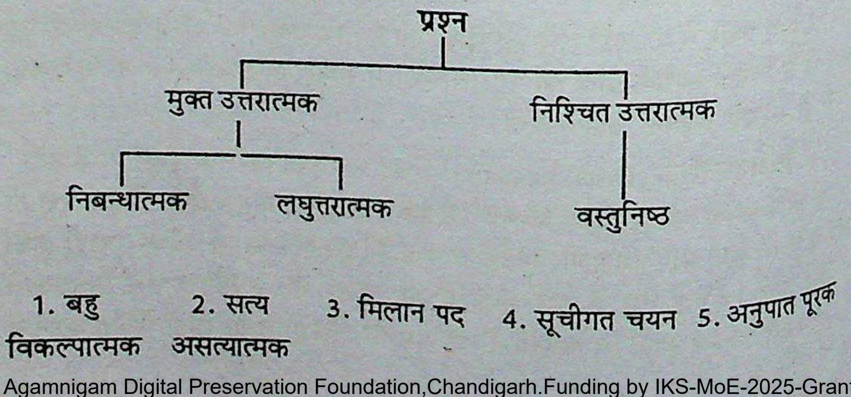

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इन सभी प्रश्नों की अपनी अपनी कुछ विशेषताएं और कुछ कमियां होती हैं जो निम्न हैं –

1. निबन्धात्मक प्रश्न– इस प्रकार के प्रश्नों से शिक्षक और छात्र दोनों ही परिचित हैं। हिन्दी शिक्षण में इस प्रकार के प्रश्न उदाहरण के लिये– 'बिहारी का काव्य गागर में सागर है' इस कथन की विवेचना कीजिए। 'परिश्रम सफलता की कुंजी है'। इस कथन की व्याख्या कीजिए। इस प्रकार के प्रश्नों को निबन्धात्मक प्रश्न कहा जाता है।

1. निबन्धात्मक प्रश्नों के गुण

(I) प्रश्न बनाने में सरल होते हैं।

(II) अर्थ ग्रहण क्षमता और अभिव्यक्ति की क्षमता की जांच होती है।

(III) ज्ञान का विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग।

(IV) मानसिक एवं बौद्धिक विकास के साधन।

संक्षेप में निबन्धात्मक प्रश्नों के माध्यम से छात्र–छात्राओं की अर्थ ग्रहण और अभिव्यक्ति क्षमता के साथ–साथ उनके ज्ञान, प्रयोग और कौशल तीनों पक्षों का भी परीक्षण हो जाता है।

निबन्धात्मक प्रश्नों के दोष

(I) इन प्रश्नों में व्यक्तिनिष्ठता अधिक होती है।

(II) इन प्रश्नों के मूल्यांकन में विश्वसनीयता और वैधता नहीं होती।

(III) इस प्रकार के प्रश्न समूचे पाठ्यक्रम से सम्बन्धित न होकर पाठ्यक्रम के कुछ अंशों तक ही सीमित होते हैं।

(IV) अधिकतर छात्र–छात्राएं पूरे पाठ्यक्रम को न पढ़कर कुछ चुने हुए भागों का ही अध्ययन करते हैं।

(V) ऐसे प्रश्नों से कमजोर और होशियार छात्र–छात्राओं के भेद का पता नहीं चलता। उदाहरण के लिये एक छात्र में सभी प्रकार के गुण हैं लेकिन उसकी लिखने की गति बहुत धीमी है तो वह पूरे प्रश्न नहीं कर पायेगा और इसका परिणाम यह होगा कि उसको कम अंक मिलेंगे।

(VI) ऐसे प्रश्न छात्र–छात्राओं की रटने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करते हैं।

(VII) प्रश्नों की भाषा कई बार सन्देहजनक और स्पष्ट न होने के कारण छात्र कुछ भी उत्तर दे देते हैं।

(VIII) प्रश्नों के उत्तर की सीमा भी निश्चित नहीं होती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. लघुत्तरात्मक प्रश्न– निबन्धात्मक प्रश्नों की तरह इनके उत्तर भी निश्चित नहीं होते। लेकिन इनके उत्तर अधिक विस्तृत न होकर संक्षिप्त होते हैं। उदाहरण के लिये निम्नलिखित के उत्तर 100 शब्दों में दीजिए।

(I) भाषा परिवर्तनशील है

(II) सत्यमेव जयते।

इस प्रकार के प्रश्नों से निबन्धात्मक प्रश्नों के कुछ दोष तो अवश्य कम हो जाते हैं लेकिन प्रश्नों का सीमित उत्तर होने से पूरे पाठ्यक्रम से सम्बन्धित ज्ञान का परीक्षण नहीं हो सकता। इन प्रश्नों के गुण दोष भी लगभग निबन्धात्मक प्रश्नों की तरह ही हैं।

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न– ये प्रश्न अत्यन्त छोटे और इनके निश्चित उत्तर होते हैं, इन प्रश्नों के उत्तर में छात्र-छात्राओं को कोई विशेष चिन्ह या शब्द का प्रयोग करना पड़ता है। उदाहरण के लिये 'भिक्षुक' नामक कविता की रचना किस ने की। सही नाम पर सही (√) निशान लगायें।

(I) सुमित्रानन्दन पंत

(II) महादेवी वर्मा

(III) जयशंकर प्रसाद

(IV) निराला (√)

1. सरल स्मृति प्रश्न – इन प्रश्नों के उत्तर स्मृति के आधार पर दिये जाते हैं। इन प्रश्नों के आगे दिये गये कोष्ठक में उदाहरणार्थ

निम्नलिखित ग्रन्थों के सामने उनके रचयिता का नाम लिखिए।

(I) आंसू (जयशंकर प्रसाद)

(II) साकेत ( )

(III) पद्मावत ( )

(IV) गोदान ( )

2. वाक्य पूर्ति – इन प्रश्नों में एक या दो शब्दों का स्थान रिक्त छोड़ दिया जाता है जिसे छात्र-छात्राएं अपनी स्मृति के आधार पर पूरा करते हैं। उदाहरण के लिये –

(I) हिन्दी के उपन्यास सम्राट .... हैं।

(II) राम भक्ति शाखा के प्रमुख कवि .... हैं।

(III) रहीम के दोहे .... प्रधान हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(IV) साकेत .... की रचना है।

3. वर्गीकृत प्रश्न – इस प्रकार के प्रश्नों में शब्दों का समूह दिया जाता है जिनमें से एक शब्द को छोड़ कर सभी एक वर्ग से सम्बन्धित होते हैं। छात्र-छात्रा उस शब्द को निर्देशन के अनुसार अलग छांट लेता है या उस पर निशान लगा देता है।

नीचे (निम्नलिखित) दिये गये शब्दों में जो शब्द अन्य शब्दों से सम्बन्धित न हो उस पर गोलाकार कर दें।

I. मोहन, कुर्सी, हिसार, दिल्ली, पीला।

II. जयशंकर प्रसाद, निराला, महादेवी वर्मा, सुमित्रा नन्दन पंत, साकेत।

III. गद्य, पद्य, निबन्ध, नाटक, अर्थ शास्त्र ।

4. बहुविकल्पात्मक – इस प्रकार के प्रश्नों में एक ही प्रश्न के कई विकल्प दिये हुए होते हैं। इन विकल्पों में केवल एक विकल्प सर्वाधिक सही होता है। परीक्षा देने वाले को उस सही विकल्प पर निशान लगाना होता है। उदाहरण के लिये- समुद्र की लहरों को छूती हुई चलने वाली हवा निम्न में से किस शब्द को उचित (सही) मानती है। उसके सामने कोष्ठक में सही (√) का निशान लगाओ

I. वायु ( )

II. पवन ( )

III. वात ( )

IV. अनिल ( )

V. समीर ( )

5. सत्य-असत्यात्मक – इन प्रश्नों में कुछ सत्य और असत्य सूचनाएं लिख दी जाती हैं। छात्र-छात्राओं को सूचना के सामने 'हां' लिखना या (√) का निशान लगाना पड़ता है। इसी प्रकार असत्य सूचनाओं के सामने उसे 'नहीं' शब्द लिखना या (×) का निशान लगाना पड़ता है। ये प्रश्न कई प्रकार से बनाये जा सकते हैं। इनके कुछ उदाहरण निम्न हैं। निम्नलिखित कथनों में आपको जो सही लगता है उसके सामने 'हां' और गलत के सामने 'नहीं' लिखिए –

1. साकेत की रचना सुमित्रा नन्दन पन्त ने की। (नहीं)
2. 'पदमावत' के रचयिता उमर खैयाम हैं। ( )
3. रामचरित मानस के रचयिता वाल्मीकि हैं। ( )
4. 'कामायनी' के रचयिता जयशंकर प्रसाद हैं। ( )

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

5. तुलसीदास कृष्ण भक्त थे। ( )

6. मिलान पद – इन प्रश्नों को दो भागों में विभाजित किया जाता है। पहले भाग में कुछ शब्द दिये जाते हैं या कुछ विचार होते हैं। दूसरे भाग में उनके सही उत्तर या उनसे सम्बन्धित सूचनाएं बिना किसी क्रम के ऊपर नीचे लिख देते हैं। छात्र-छात्राओं को उनका क्रम से मिलान करना होता है। उदाहरण के लिये नीचे कुछ शब्द दिये हुए हैं उनका मिलान कीजिए –

(I) कमल	(I) अपमान	(IV)
(II) रामचरित मानस	(II) सूरदास	( )
(III) साकेत	(III) रानी	( )
(IV) राजा	(IV) फूल	( )
(V) मान	(V) तुलसी दास	( )
(VI) कृष्णा भक्त	(VI) मैथिलीशरण गुप्त	( )

7. अनुपात-पूरक – ये प्रश्न गणित की तरह होते हैं। समानुपात के प्रश्नों में जो अनुपात किन्हीं दो संख्याओं में होता है ठीक वही अनुपात दूसरी दो संख्याओं में होना चाहिये। इसी आधार पर इनमें से यदि कोई तीन संख्याएं दी हुई हों तो चौथी संख्या को सरलता से ज्ञात किया जा सकता है। हिन्दी के प्रश्नों में यह अनुपात दो शब्दों के सम्बन्ध का सूचक होता है। जो सम्बन्ध पहले दो शब्दों में है ठीक वही या उससे मिलता-जुलता सम्बन्ध अन्य दो शब्दों में होना चाहिये। यदि इनमें से तीन शब्द दिये हों तो चौथे शब्द को सरलता से ज्ञात किया जा सकता है, उदाहरण रूप में –

नीचे कुछ शब्द दिये गये हैं उनमें पहले दो शब्दों का सम्बन्ध है, ठीक वैसा ही दूसरे दो शब्दों का सम्बन्ध है। रिक्त स्थान में चौथे शब्द को सोच-विचार करके लिखिए।

(I) गुलाब : फूल : : आम : ---।

(II) गोदान : --- : : चन्द्रगुप्त : नाटक।

(III) सूर्य : गर्म : : चन्द्रमा : ---।

(IV) लोहा : --- : : पानी : तरल।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के गुण दोष

इन प्रश्नों में अच्छी परीक्षा के बताये गये गुण-विश्वसनीयता, वैधता, व्यापकता आदि पाये जाते हैं। परन्तु इसका अर्थ कदापि भी यह नहीं लेना चाहिये कि वस्तुनिष्ठ प्रश्न हमेशा (सदैव) दोष मुक्त होते हैं। विशेषकर भाषा-शिक्षण के मूल्यांकन की दृष्टि से तो इसमें और भी कई दोष पाये जाते हैं, क्योंकि भाषा में केवल छात्र-छात्राओं के ज्ञान की ही परीक्षा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
नहीं करते बल्कि उनकी भाषा-शैली एवं अभिव्यक्ति की भी परीक्षा करनी होती है। वस्तुनिष्ठ परीक्षा में इन दोनों पक्षों का अभाव है।

निबन्धात्मक और वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के विस्तृत अध्ययन के बाद इन दोनों का बड़ी सरलता एवं सहज ढंग से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

निबन्धात्मक परीक्षाएं

1. इनके प्रश्नों के उत्तर बहुत विस्तृत होते हैं।
2. प्रश्नों की संख्या बहुत कम होती है।
3. प्रश्न निर्धारित पाठ्य क्रम के कुछ अंशों तक सीमित होते हैं।
4. प्रश्नों के उत्तर में अनिश्चितता होने के कारण विषय सामग्री में विविधता होती है।
5. मूल्यांकन करने में परीक्षक का दृष्टिकोण महत्त्वपूर्ण होता है।
6. छात्र-छात्राओं की भाषा-शैली एवं अभिव्यक्ति क्षमता का पता लगाया जा सकता है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाएं

1. इनके उत्तर अत्यन्त छोटे होते हैं।
2. प्रश्नों की संख्या बहुत अधिक होती है।
3. प्रश्न समूचे पाठ्य क्रम से सम्बन्धित होते हैं।
4. प्रश्नों के उत्तर निश्चित होते हैं।
5. परीक्षक के दृष्टिकोण को किसी प्रकार का महत्त्व नहीं दिया जाता।
6. इन में भाषा-शैली और अभिव्यक्ति का कोई स्थान नहीं है।

समीक्षा

निबन्धात्मक और वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की तुलना सूक्ष्म अध्ययन करने के बाद एक बात तो पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती है कि निबन्धात्मक और वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के दोष एक जैसे न होकर अलग-अलग हैं। जो दोष निबन्धात्मक परीक्षाओं में हैं वे दोष वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में नहीं हैं। परीक्षा के माध्यम से हम छात्र-छात्राओं के व्यक्तित्व के कई पक्षों की जांच करना चाहते हैं जैसे उनके ज्ञान, ज्ञान के प्रयोग और शिक्षा सम्बन्धी हिन्दी कौशलों का विकास। भाषा के परीक्षण में अभिव्यक्ति और भाषा शैली का विशेष स्थान होता है, परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षाएं इन दोनों पक्षों का मूल्यांकन करने में असमर्थ हैं। संक्षेप में भाषा परीक्षण हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है जो निम्न हैं –

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(I) प्रश्न ऐसे हों जिनके उत्तर के माध्यम से छात्र-छात्राओं की अभिव्यक्ति और भाषा शैली का भी सही ढंग से परीक्षण किया जा सके।

(II) प्रश्न इतने अवश्य ही पूछे जायें जो लगभग समूचे पाठ्य क्रम से सम्बन्धित हों।

(III) मूल्यांकन की दृष्टि से व्यक्तिनिष्ठता को कम से कम स्थान मिले।

ऊपरलिखित बातों को ध्यान में रखते हुए किसी भी एक प्रकार की परीक्षा पर निर्भर नहीं रहा जा सकता क्योंकि यदि परीक्षा में वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का ही सहारा लिया जाता है तो इसमें कोई दो राय नहीं कि पूरे पाठ्यक्रम पर आधारित प्रश्न पूछे जा सकते हैं परन्तु छात्र-छात्राओं की अभिव्यक्ति क्षमता और भाषा-शैली की जांच कदापि भी सम्भव नहीं हो सकती। इन दोनों पहलुओं को देखते हुए अगर निबन्धात्मक प्रश्न पूछे जाते हैं तो प्रश्न पाठ्यक्रम के अधिकतर भाग पर आधारित नहीं हो सकते। इन सभी पहलुओं का विवेचन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि हिन्दी शिक्षण के सभी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये हमें बीच का रास्ता अपनाना होगा। हिन्दी की परीक्षाओं को अधिक से अधिक दोष मुक्त करने के लिये तीनों प्रकार के अर्थात् निबन्धात्मक लघुत्तरात्मक और वस्तुनिष्ठ प्रश्नों को अपनाना ही उचित रहेगा।

(आ) हिन्दी की विभिन्न विधाओं का मूल्यांकन

हिन्दी-शिक्षण के द्वारा विद्यार्थियों को केवल विषय वस्तु का ही ज्ञान नहीं दिया जाता बल्कि शुद्ध उच्चारण, शुद्ध अक्षर विन्यास, भाषा का शुद्ध प्रयोग, अभिव्यक्त-कौशल आदि भी सिखाये जाते हैं। इस के लिए हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं- कविता, कहानी, एकांकी, संवाद आदि को पाठ्य-क्रम में सम्मिलित किया जाता है। हिन्दी के विभिन्न कौशलों, ज्ञान तथा सौन्दर्य बोध के परीक्षा के लिए निम्नलिखित व्यवस्था की जा सकती है:-

1. उच्चारण-कौशल का मूल्यांकन – विद्यार्थियों की मौखिक अभिव्यक्ति को विकसित करना भाषा-शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। शुद्ध उच्चारण मौखिक अभिव्यक्ति का अनिवार्य अंग है। प्राइमरी कक्षाओं में विद्यार्थियों को शुद्ध उच्चारण का विशेष शिक्षण प्रदान किया जाता है। किस विद्यार्थी में उच्चारण कौशल किस स्तर तक विकसित हुआ यह जानने के लिए उच्चारण कौशल का परीक्षण एवं मूल्यांकन होना चाहिए। इस का अत्यन्त उपयोगी साधन है ''मौखिक परीक्षण''। विद्यार्थियों से पाठ्य-पुस्तक का कोई पाठ या किसी अन्य पुस्तक का कोई परिच्छेद पढ़वाना चाहिए और उस से उसके उच्चारण कौशल का मूल्यांकन होना चाहिए। इस के अतिरिक्त पाठ्य-पुस्तक से सम्बन्धित या सामान्य ज्ञान से सम्बन्धित प्रश्नोत्तर द्वारा भी विद्यार्थियों के उच्चारण कौशल का मूल्यांकन किया जा सकता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. वाचन-कौशल का मूल्यांकन – मौखिक अभिव्यक्ति का दूसरा महत्त्वपूर्ण अंग है- वाचन। पाठ्य पुस्तक के माध्यम से विद्यार्थियों को उचित गति के साथ शुद्ध वाचन का शिक्षण दिया जाता है। विद्यार्थियों ने वाचन कौशल में कहां तक विकास किया इस का मूल्यांकन होना चाहिए। इस के लिए भी मौखिक परीक्षा उपयोगी है। विद्यार्थियों को पाठ्य-पुस्तक में से या किसी अन्य पुस्तक में से कोई परिच्छेद पढ़ने के लिए देना चाहिए। पढ़ने में उन की अशुद्धियों, बल, विराम, स्वर के उतार-चढ़ाव, गति, प्रवाह आदि को देख कर उन के वाचन-कौशल का मूल्यांकन होना चाहिए।

3. शब्दावली ज्ञान का मूल्यांकन – साहित्य की विभिन्न विधाओं के शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों को विभिन्न शब्दों का ज्ञान प्रदान किया जाता है। उन के शब्द भण्डार में वृद्धि की जाती है। उन के शब्दावली ज्ञान का भी परीक्षण होना चाहिए। इस के लिए 'मौखिक परीक्षा' तथा 'वस्तुनिष्ठ परीक्षा' का प्रयोग किया जा सकता है। 'मौखिक परीक्षा' में विद्यार्थियों से शब्दों के अर्थ, पर्यायवाची शब्द, विपरीतार्थक शब्द आदि पूछ कर उनका प्रयोग करवाया जा सकता है। 'वस्तुनिष्ठ परीक्षा' द्वारा 'युग्लीकरण', 'प्रत्याह्वान' 'रिक्त स्थान की पूर्ति' आदि विभिन्न प्रकार के प्रश्नों का निर्माण कर के उन के शब्दावली ज्ञान का मूल्यांकन किया जाता है।

4. बोध-क्षमता का मूल्यांकन – भाषा शिक्षण द्वारा विद्यार्थी को मौखिक एवं लिखित भाषा को समझने के योग्य बनाया जाता है। उस की इस योग्यता का मूल्यांकन होना चाहिए। इस के लिए भी 'मौखिक परीक्षा' का प्रयोग किया जा सकता है। मौखिक परीक्षा में विद्यार्थी को कोई परिच्छेद पढ़ कर सुनाया जाए और फिर उस पर प्रश्न पूछे जायें। इसी प्रकार 'लघूत्तर परीक्षा' में एक अनुच्छेद को प्रश्न-पत्र में प्रकाशित कर देना चाहिए और उस के नीचे कुछ प्रश्न छाप देने चाहिएं। विद्यार्थियों को वह अनुच्छेद पढ़ कर उन प्रश्नों के अंकन से उन की बोध क्षमता का मूल्यांकन किया जा सकता है।

5. पाठ्य-सामग्री के ज्ञान का मूल्यांकन – भाषा शिक्षण में पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से विद्यार्थियों को विभिन्न विषयों तथा तथ्यों का ज्ञान दिया जाता है। उन्होंने यह ज्ञान कहाँ तक प्राप्त किया इसका मूल्यांकन होना चाहिए। इसके लिए निबन्धात्मक, वस्तुनिष्ठ तथा लघूत्तर परीक्षाओं का प्रयोग किया जा सकता है। निबन्धात्मक प्रश्नों के द्वारा विद्यार्थियों को किसी कहानी, एकांकी, निबन्ध आदि का सार/ उद्देश्य पूछा जा सकता है। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के द्वारा उनके ज्ञान का मूल्यांकन किया जा सकता है। लघूत्तर प्रश्नों द्वारा पाठ्य-पुस्तकों के पाठों के गम्भीर अध्ययन का मूल्यांकन किया जा सकता है।

6. व्याकरण के ज्ञान का मूल्यांकन – भाषा शिक्षण में विद्यार्थियों को व्यावहारिक एवं सैद्धान्तिक व्याकरण का ज्ञान प्रदान किया जाता है। इसके मूल्यांकन के लिए 'वस्तुनिष्ठ-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परीक्षा' अत्यन्त उपयोगी है। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के द्वारा विद्यार्थियों से व्याकरण सम्बन्धी परिभाषाओं तथा उदाहरणों की पहचान करवाई जा सकती है। प्रयोगात्मक व्याकरण पर भी उपयोगी वस्तुनिष्ठ प्रश्न बनाये जा सकते हैं।

7. रचना-कौशल का मूल्यांकन – भाषा शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थियों में शुद्ध व्याकरण सम्मत तथा प्रभावोत्पादक भाषा में रचना कार्य की योग्यता का विकास करना है। इसका मूल्यांकन करने के लिए 'निबन्धात्मक परीक्षा' ही विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होती है। निबन्धात्मक प्रश्नों द्वारा विद्यार्थियों से किसी कहानी, एकांकी, निबन्ध आदि का सार या उद्देश्य लिखने को कहा जा सकता है। उन्हें किसी पात्र का चरित्र-चित्रण लिखने को कहा जा सकता है। निबन्ध, कहानी, पत्र आदि द्वारा भी उनके रचना कौशल का मूल्यांकन किया जा सकता है।

8. सौन्दर्य-बोध का मूल्यांकन – हिन्दी शिक्षण में कविता भी पढ़ाई जाती है। कविता–शिक्षण का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों की रागात्मक प्रवृत्तियों का परिमार्जन करके उनमें सौन्दर्यानुभूतियों को विकसित करना है। इसके अतिरिक्त पाठ्य–पुस्तक में संकलित कविताओं के भावों, विचारों तथा काव्य–शैलियों का ज्ञान प्रदान करना भी कविता शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हुई– यह जानने के लिए विद्यार्थियों के सौन्दर्य बोध का मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

सौन्दर्य बोध के मूल्यांकन के लिए 'मौखिक परीक्षा' 'निबन्धात्मक परीक्षा' तथा 'लघूत्तर परीक्षा' का प्रयोग किया जा सकता है। कविता के रसास्वादन में कविता पाठ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कविता पाठ उचित स्वर, लय, प्रवाह तथा गति के साथ होना चाहिए- तभी कविता का रसास्वादन आ सकता है। मौखिक–परीक्षा द्वारा विद्यार्थियों की कविता पाठ की योग्यता का मूल्यांकन किया जा सकता है। कविता का अर्थ बोध तथा उसकी शैली भी सौन्दर्य बोध में सहायक सिद्ध होती है। अर्थ–बोध के लिए निबन्धात्मक प्रश्नों तथा शैली बोध के लिए लघूत्तर प्रश्न का प्रयोग किया जाना चाहिए। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के प्रश्नों के प्रयोग से सौन्दर्य बोध का मूल्यांकन करना चाहिए और कविता शिक्षण को सार्थक तथा उद्देश्यपूर्ण बनाना चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी के विभिन्न कौशलों, ज्ञान तथा सौन्दर्य बोध के लिए विभिन्न प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग किया जाना चाहिए। इनमें से किसी एक परीक्षा पद्धति (निबन्धात्मक ,वस्तुनिष्ठ, लघूत्तर, मौखिक) का प्रयोग करने से विद्यार्थियों की सभी योग्यताओं एवं उपलब्धियों का मूल्यांकन सम्भव नहीं। इसलिए इन सभी परीक्षा-पद्धतियों का मिश्रित प्रयोग किया जाना चाहिए। आज से कुछ समय पहले केवल निबन्धात्मक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परीक्षा का प्रयोग होता था। अब इसके साथ-साथ वस्तुनिष्ठ एवं लघूत्तर परीक्षा का भी प्रयोग होने लगा है। परन्तु अभी मौखिक परीक्षा का प्रचलन नहीं हुआ। प्राइमरी स्तर पर विद्यार्थियों का मौखिक परीक्षण किया तो जाता है, परन्तु बहुत कम, इतना पर्याप्त नहीं। मिडल और हाई स्तर पर विद्यार्थियों का मौखिक परीक्षण होना चाहिए। इसके अभाव के कारण विद्यार्थी उचित सम्भाषण, शुद्ध उच्चारण तथा शुद्ध वाचन की ओर ध्यान नहीं देते। अध्यापक भी इनका शिक्षण प्रदान नहीं करते। परिणामस्वरूप मैट्रिक पास कर लेने के पश्चात भी विद्यार्थी न तो शुद्ध हिन्दी बोल सकते हैं और न पढ़ सकते हैं। अतः मिडल तथा हाई स्तर पर भी मौखिक परीक्षा को सम्मिलित किया जाना चाहिए। सभी परीक्षण विधियों के समुचित मिश्रण से हिन्दी-शिक्षा में मूल्यांकन के कार्य को उपयोगी, सार्थक एवं उद्देश्यपूर्ण बनाया जा सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

1. मूल्यांकन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसके महत्त्व पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
2. मूल्यांकन की परिभाषा देते हुए भाषा के विभिन्न अंगों के मूल्यांकन के साधनों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. भाषा के विभिन्न कौशलों का मूल्यांकन किस प्रकार किया जा सकता है ? स्पष्ट कीजिए।
4. हिन्दी भाषा की विभिन्न विधाओं का मूल्यांकन किन-किन विधियों द्वारा किया जा सकता है ? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
5. हिन्दी भाषा की वर्तमान परीक्षा प्रणाली की समीक्षा करते हुए इसके सुधार के उपाय सुझाइये।
6. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए
   (I) मूल्यांकन की उपयोगिता।
   (II) मूल्यांकन के उद्देश्य।
   (III) वस्तुनिष्ठ परीक्षा के गुण दोष।
   (IV) मूल्यांकन का आधुनिक स्वरूप।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4

अच्छे भाषा परीक्षण के आधार
(Criteria of a Good Language Test)

परीक्षण शिक्षा प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण अंग है । परीक्षण मूल्यांकन प्रक्रिया में बहुत सहायक है । परीक्षण हेतु कुछ माप दण्डों का अपनाना आवश्यक होता है । अच्छे परीक्षण के कुछ आधार एवं गुण होते हैं– जो निम्न हैं–

1. विश्वसनीयता (Reliability)– जिस परीक्षण के द्वारा किया गया मापन एक जैसा रहता है अर्थात् उसमें अन्तर नहीं होता है, वह परीक्षण विश्वसनीय होता है । यदि परीक्षण विश्वसनीय होता है तो उसके द्वारा किया गया मूल्यांकन चाहे वह किन्हीं भी परिस्थितियों में किया जाये, सदैव ही एक जैसा रहेगा, उदाहरण के लिये यदि किसी छात्र को परीक्षा में 10 में से 6 अंक मिले हैं तो चाहे उसका किन्हीं हालात में परीक्षण किया जाये उसे 10 में से 6 अंक ही प्राप्त होंगे । प्राप्त किये हुए अंकों में मामूली अन्तर है तो कोई बात नहीं लेकिन बहुत अधिक अन्तर नहीं होना चाहिये ।

2. वैधता (Validity)– जिस परीक्षा के माध्यम से अभीष्ठ लक्ष्य का मापन होता हो उसे हमे वैध परीक्षा कहेंगे । उदाहरण के रूप में छात्र–छात्राओं के कौशल को मापने के लिये ली गई परीक्षा के द्वारा कौशल का ही माप होना चाहिये न कि मनोवृत्ति का । इसके साथ ही साथ जो परीक्षा जिस स्तर के छात्र–छात्राओं के परीक्षण के लिये बनाई गई हो तो उसके द्वारा यदि उसी स्तर के छात्र–छात्राओं का परीक्षण किया जा सके और अन्य स्तर के विद्यार्थियों का नहीं तो भी परीक्षा वैध ही कहलायेगी ।

3. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)– जिस किसी भी परीक्षा में परीक्षक की राय या मान्यता को स्थान दिया जाये, उसे वस्तुनिष्ठ परीक्षा नहीं कहा जायेगा । वस्तुनिष्ठ परीक्षा की यह विशेषता होती है जिसमें पक्षपात का कोई स्थान नहीं होता । उदाहरणतया यदि किसी छात्र की ली गई परीक्षा की उत्तर पुस्तिका को अलग–अलग परीक्षक अलग–अलग परिस्थितियों में जांच करे और सभी स्थितियों में प्राप्त किये हुए अंक एक जैसे अर्थात् समान रहते हैं तो वह परीक्षा वस्तुनिष्ठ होगी । यदि प्राप्त किये हुए अंकों में भिन्नता मिलेगी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वह परीक्षा वस्तुनिष्ठ नहीं होगी । एक अच्छी परीक्षा में वस्तुनिष्ठता का गुण अवश्य ही होना चाहिये ।

4. व्यापकता (Comprehensiveness)- जो परीक्षा कम समय में अधिक तत्त्वों का परीक्षण करने में सफल रहती है तो हम कहेंगे कि इसमें व्यापकता का गुण है । एक अच्छी परीक्षा के माध्यम से पूर्व निर्धारित उद्देश्यों में से अधिक से अधिक का परीक्षण हो जाना चाहिये । उदाहरणस्वरुप, छात्र-छात्राओं के ज्ञान, रुचि, मनोवृत्ति, व्यवहार आदि में परिवर्तन लाने के लिये, छात्र-छात्राओं को अनेक बातों की शिक्षा दी जाती है । लेकिन जो परीक्षा इन सिखाई हुई बातों में से जितनी अधिक बातों का परीक्षण कर सकती है वह उतनी ही व्यापक परीक्षा होगी । इस प्रकार की परीक्षा व्यापक पाठ्यक्रम पर आधारित होती है ।

5. विभेदकारिता (Discrimination)- जिस परीक्षा में व्यक्तिगत भिन्नताओं के आधार पर छात्र-छात्राओं की कुशलता, क्षमता और योग्यता आदि सभी भिन्न-भिन्न होती है । परन्तु परीक्षण एक कक्षा के सभी छात्र-छात्राओं का एक साथ किया जाता है । इस दृष्टि से जो परीक्षा एक ही कक्षा में पढ़ने वाले विभिन्न स्तर के छात्र-छात्राओं का परीक्षण कर सकती है वह विभेदकारी होती है । इसी तथ्य को इस प्रकार भी प्रकट किया जा सकता है कि विभेदकारी परीक्षा अच्छे और कमजोर छात्र-छात्राओं में अन्तर स्पष्ट करने में सफल होती है ।

6. सन्तुलन (Balance)- जिस परीक्षा में प्रश्न समस्त पाठ्य वस्तु से ठीक प्रकार से बनाये गये हों अर्थात् उचित ढंग से वितरित किये गये हों तो ऐसी परीक्षा को सन्तुलित परीक्षा कहा जायेगा ।

7. सक्षमता (Efficiency)- सक्षमता परीक्षा का ऐसा गुण है जिसकी रचना में, अंकन करने में और छात्र-छात्राओं द्वारा प्रश्नों के उत्तर देने में कम समय लगता है तो यह परीक्षण का सक्षमता का गुण माना जायेगा ।

8. लचकीलापन (Flexibility)- इसका सम्बन्ध परीक्षण के परिवर्तन रुप से है । यदि परीक्षा में प्रश्नों की संख्या इतनी लगती है कि छात्र-छात्राएं निश्चित समय पर उत्तर देने में असमर्थ होंगे तो उसमें इतना लचकीलापन होना चाहिये कि कुछ प्रश्न कम कर दिये जायें और परीक्षण पर किसी प्रकार का नकारात्मक प्रभाव न पड़े ।

9. व्यावहारिकता (Practicability)- एक अच्छी परीक्षा सार्थक एवं नितान्त उपयोगी होनी चाहिये, अर्थात् जिस उद्देश्य पूर्ति हेतु परीक्षा ली जाये उस उद्देश्य की अवश्य ही प्राप्ति होनी चाहिये । उदाहरणतया, परीक्षाओं के परिणामों के आधार पर छात्र-छात्राओं को [illegible]दर्शन करना आदि ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

10. उपयोगिता (Usuability and Utility)- अच्छी परीक्षा में व्यावहारिक गुण के साथ-साथ उपयोगिता का गुण भी होना चाहिये । परीक्षा या प्रश्न पत्र ऐसा हो जिसे सरलता एवं सहजता से प्रयोग में लाया जा सके । इसके लिये परीक्षा के नियम, निर्देश और भाषा सरल एवं बोधगम्य होनी चाहिये कि छात्र-छात्राएं सहजता से समझ सकें और प्रयोग में ला सकें । परीक्षा लेने के लिये विशेषज्ञ की आवश्यकता महसूस न हो ।

अभ्यास के प्रश्न

1. एक अच्छा परीक्षण किसे कहा जा सकता है ? विस्तार से विवेचन कीजिए ।
2. एक अच्छे परीक्षण में किन-किन गुणों का होना आवश्यक है और क्यों ? तर्क सहित उत्तर दीजिए ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5

अशुद्धि विश्लेषण व उपचारात्मक शिक्षण
(Error Analysis and Remedial Teaching)

छात्र-छात्राएं भाषा से सम्बन्धित जिस प्रकार की भी पढ़ने में लिखने में त्रुटियां (अशुद्धियां) करते हैं, उन अशुद्धियों का और उनके कारणों का पता लगाना ही अशुद्धि विश्लेषण कहलाता है । छात्र-छात्राओं के भाषा से सम्बन्धित दोषों का सही ढंग से उपचार तभी सम्भव हो सकता है जब उनके वास्तविक रूप और उन के कारणों का सही ढंग से ज्ञान हो, दूसरे शब्दों में भाषा से सम्बन्धित दोषों के उपचार से पहले उनका निदान (Diagnosis) आवश्यक है । निदान शब्द का प्रयोग प्रायः चिकित्सा विज्ञान में होता है । लक्षण देखकर रोग की पहचान करना और रोग के कारणों का पता लगाना 'निदान' कहलाता है । इसलिये शिक्षा और भाषा के क्षेत्र में 'निदानात्मक शिक्षण' को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है । निदानात्मक शिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा छात्र-छात्राओं के लक्षण देखकर उनकी भाषा सम्बन्धी अशुद्धियों और उनके कारणों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है । निदानात्मक शिक्षण योग्यता प्राप्ति की अवधि में चलता है । यह छात्र-छात्राओं की तब पकड़ करता है जब उनमें दोष व अशुद्धियों का प्रारम्भ होता है और परीक्षा उस समय पकड़ती है जब दोष व अशुद्धियां अपनी चरम सीमा पर पहुंच चुके होते हैं । उदाहरण के रुप में यदि कोई छात्र/छात्रा शुद्ध उच्चारण नहीं करता/करती है और शिक्षण प्रक्रिया अवधि में शिक्षक ने भी उसके निदान और उपचार की ओर ध्यान नहीं दिया तो उस विद्यार्थी के परीक्षा पास करने के बाद भी वह दोष ज्यों का त्यों बना रहेगा । यह देखा गया है कि सही निदान न होने के कारण विद्यार्थी माध्यमिक परीक्षा के पास करने के बाद भी भाषा के दोषों से ग्रस्त होते हैं । इसलिये छात्र-छात्राओं को मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति में कुशल बनाने हेतु निदानात्मक शिक्षण अत्यन्त सार्थक और उपयोगी है ।

निदानात्मक-शिक्षण के उद्देश्य
(Objectives of Diagnostic Teaching)

डा. एल. मुकर्जी (Dr. L. Mukerji) के अनुसार, "कैसे भी कारण क्यों न हों, उनका शीघ्र निदान अत्यन्त आवश्यक होता है । इससे बुरी आदतों का निर्माण नहीं होता और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
विशेष कठिनाईयां निम्न स्तर तक आ जाती हैं । शिक्षक और कभी-कभी विद्यार्थी को भी उस क्षेत्र विशेष के प्रति सचेत कर देता है जिसमें दोष होते हैं और यह उपचार के प्रति लम्बा कदम है । कभी--कभी निदानात्मक विधियां संवेगात्मक अवरोधों को दूर कर देती हैं और जिस से उपचारात्मक प्रक्रिया आसान हो जाती है ।" ब्लेयर (Blair) ने कहा है कि "उपचारात्मक शिक्षण का एक मुख्य कार्य मौलिक रूप से कमजोर शिक्षण और कमजोर सीखने के प्रभावों का उपचार करना है । यह दोषों और उनके कारणों के सावधानीपूर्ण किये गये निदान पर आधारित होता है, और उसका उद्देश्य कमजोरियों और बुरी आदतों को सुधारना है ।"

निदानात्मक शिक्षण का महत्त्व

I. इसका सबसे बड़ा महत्त्व यह है कि शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही भाषा की अशुद्धियों और दोषों से परिचित हो जाते हैं ।

II. अशुद्धियों और दोषों से परिचित होने के बाद निदान के माध्यम से इनको दूर किया जा सकता है ।

III. इससे छात्र-छात्राओं को क्रियाशील और स्वाध्याय की प्रेरणा मिलती है ।

IV. इसके द्वारा शिक्षकों को छात्र-छात्राओं की पूर्णरुप से जानकारी प्राप्त हो जाती है ।

V. इससे शिक्षक छात्र-छात्राओं की गन्दी आदतों को दूर कर सकता है ।

VI. शिक्षक अपने शिक्षण को सशक्त, सार्थक एवं प्रभावपूर्ण बना सकता है ।

VII. निदान किये बिना किसी प्रकार का भाषा सम्बन्धी उपचार सम्भव नहीं हो सकता ।

आज की परिस्थितियों में निदानात्मक शिक्षा बहुत आवश्यक हो गई है । शिक्षक को निदानात्मक शिक्षा के सभी पहलुओं से परिचित होना चाहिये । अगर शिक्षक छात्र-छात्राओं के भाषा से सम्बन्धित दोषों व त्रुटियों को दूर करने में अपने को असमर्थ समझता है तो ऐसे विद्यार्थियों को मनोवैज्ञानिक केन्द्र में भेज कर अन्य प्रकार के दोषों का पता लगाना चाहिये।

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि सामान्य दोषों के कारण निम्न हो सकते हैं :-

I. मानसिक दृष्टि से पिछड़ापन

II. घरेलु हालात

III. लापरवाही

IV. विषय में रुचि का न होना

V. ज्ञानेन्द्रियों का कमजोर होना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

VI. संवेगात्मक कारण (भय आदि का होना)

VII. गंदी आदतों का प्रभाव

VIII. बालक के विकास में अभाव

IX. सिनेमा आदि का प्रभाव

X. शीघ्रता से काम लेना आदि आदि।

निदानात्मक शिक्षण के उद्देश्य निम्न हैं:-

I. छात्रा-छात्राओं के भाषा से सम्बन्धित दोषों व अशुद्धियों को खोज करना- भाषा शिक्षण के विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु यह आवश्यक है कि हर विद्यार्थी के भाषा सम्बन्धी दोषों के बारे में पूर्ण रुप से जानकारी प्राप्त की जाये । क्योंकि उनके दोषों में विविधता होती है । कई छात्रों का उच्चारण अशुद्ध होता है । कई ठीक प्रकार से वाचन नहीं कर सकते । कुछ छात्र बोलते हुए हकलाते हैं । कई छात्र-छात्राओं को अक्षर की पहचान सही ढंग से नहीं होती । कई वर्तनी में अशुद्धियां करते हैं । बहुत से छात्र शब्दों का उचित ढंग से प्रयोग नहीं कर पाते । कई छात्र अपनी अशुद्धियों से अनभिज्ञ होते हैं । कई छात्र बोलने में संकोच करते हैं और अपनी कमियों को छिपाये रखते हैं । ऐसी स्थिति में शिक्षक को छात्र-छात्राओं के दोषों की खोज करनी चाहिये । खोज करने के बाद ही वह वांछनीय परिवर्तन करने में सफल हो सकता है ।

II. दोषों के कारणों की खोज करना- छात्र-छात्राओं के दोषों का पता लगाना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि शिक्षक को चाहिये कि इन दोषों के कारणों का भी पता लगाये । क्योंकि दोषों में तब तक सुधार नहीं हो सकता जब तक उनके कारणों का पता नहीं चल पाता । कई शिक्षक कक्षाकार्य या गृहकार्य के द्वारा दोषों को ढूंढ लेते हैं और उनको दूर करने का प्रयास भी करते हैं परन्तु अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं होती क्योंकि वे दोषों के कारणों की खोज करने में असमर्थ रहते हैं । दोषों के कारणों की खोज किये बिना शिक्षक के सभी प्रयास विफल रहते हैं । इसलिये निदानात्मक शिक्षक का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य छात्र-छात्राओं की कठिनाईयों के कारणों का पता लगाना है । ये कारण कई हो सकते हैं जो निम्न हैं-

1. पाठ्य-वस्तु से सम्बन्धित कारण- कई बार विषय-वस्तु या पाठ-वस्तु छात्र-छात्राओं के मानसिक एवं बौद्धिक स्तर के अनुसार नहीं होती । रुचि के अभाव के कारण भी विषय-वस्तु कठिन प्रतीत होती है । वाचन के समय यदि कोई छात्र विषय वस्तु कठिन शब्दावली के कारण समझ नहीं सकता तो इसका अर्थ है विषय वस्तु में अनुकूलता का अभाव पाया जाता है ।

2. शिक्षक कार्य से सम्बन्धित कारण- यदि छात्र-छात्राएं शब्दों की पहचान करने में, शब्दों के अर्थ समझने या पढाये जा रहे अनुच्छेद की मुख्य बातें समझने में कठिनाई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
अनुभव करते हैं तो निश्चित रूप से पढ़ाने का तरीका उपयोगी नहीं होगा । शिक्षण कार्य सम्पादन उचित ढंगों को न अपनाने के कारण छात्र-छात्राओं में भाषा से सम्बन्धित कई दोष फलने फूलने लगते हैं जो इस प्रकार हैं-

(अ) यदि शिक्षक छात्र-छात्राओं को शब्दों के अशुद्ध अर्थ बता देता है तो वे उन्हें शुद्ध मान कर अपने मन में धारण कर लेते हैं । यदि अधिकांश छात्र-छात्राएं किसी शब्द को गलत अर्थों में प्रयोग कर रहे तो अवश्य ही शिक्षक से उस शब्द का अर्थ बताने में गलती हुई है । शिक्षक को अपनी गलती सुधारने से ही छात्र-छात्राओं को गलती में सुधार करने में सहायता मिलेगी ।

(ब) छात्र-छात्राओं में उच्चारण का दोष शिक्षक के अशुद्ध उच्चारण के कारण भी आ जाता है । यदि कोई शिक्षक 'श' और 'स' का सही उच्चारण नहीं करता तो यह कभी छात्र-छात्राओं में भी आ जाती है ।

(स) शिक्षक का अल्पज्ञान और उसके मन में समाई हुई गलत धारणायें छात्र-छात्राएं भी अपना लेते हैं । यदि कोई शिक्षक कक्षा में पढ़ाते समय फेल को फैल कह दे तो निश्चित रूप से सभी छात्र-छात्राएं भी फैल कहने लगेंगे । इस प्रकार शिक्षा कार्य सम्पादन के अशुद्ध एवं अनुचित विधियां भी छात्र-छात्राओं की कठिनाईयों का कारण बनती हैं ।

(3) वातावरण से सम्बन्धित कारण- अनुकूल वातावरण के अभाव के कारण भी छात्र-छात्राओं में भाषा सम्बन्धी दोष जन्म ले लेते हैं । यदि कक्षा में उचित वातावरण नहीं है तो छात्र-छात्राओं को लिखने पढ़ने में कई प्रकार की कठिनाईयां आ जाती हैं । यदि कक्षा में उचित ढंग से बैठने की व्यवस्था न हो तो हो सकता है छात्र शब्दों की बनावट को सही रुप न दे सकें । यदि कक्षा में रोशनी की ठीक प्रकार से व्यवस्था नहीं है तो उचित गति से और सही ढंग से वाचन करने में कठिनाई आती है । यदि कक्षा में टंगे चार्टों पर अशुद्ध लिखा हुआ होगा तो छात्र भी अवश्य ही अशुद्ध भाषा का प्रयोग करेंगे । इसी प्रकार अगर घर का वातावरण भी प्रतिकूल होगा तो छात्र-छात्राओं के सामने कठिनाईयां और भी अधिक आयेंगी ।

(4) मानसिक कारण- छात्र-छात्राओं की मानसिक कठिनाईयां व दोष उनके शुद्ध भाषा शिक्षण में बाधक सिद्ध होते हैं । छोटे बालक मानसिक कठिनाईयों को बता नहीं सकते लेकिन ये कठिनाईयां उनके भाषा शिक्षण में प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं । मानसिक कारणों से उत्पन्न भाषा से सम्बन्धित दोष तब तक दूर नहीं किये जा सकते जब तक उनके मुख्य कारणों को दूर न किया जाये । संवेदनात्मक बाधाओं को दूर करने से भाषा सीखने की कठिनाईयों को पर्याप्त रुप से दूर किया जा सकता है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(5) शारीरिक कारण- शारीरिक ज्ञानेन्द्रियों में किसी प्रकार की कोई कमी पाई जाती है तो भाषा के सीखने में अवश्य ही कठिनाई आयेगी । यदि किसी छात्र को कम सुनता है तो शिक्षक के पढ़ाये हुए को ठीक प्रकार से समझ नहीं पायेगा । जैसा समझ पायेगा वैसा ही भविष्य में याद रखेगा । अगर किसी छात्र को आंखों से कम दिखाई देता है तो चाकबोर्ड पर लिखी विषय वस्तु को गलत समझ सकता है । किसी प्रकार का हाथ या हाथ की उंगलियों में दोष होगा तो लिखने में कठिनाई आयेगी । इसलिये सही भाषा शिक्षण के लिये ऐसे छात्र-छात्राओं की शारीरिक जांच करवा करके उनके शारीरिक दोषों को अवश्य ही दूर करना चाहिये । इससे भाषा शिक्षण में सहायता मिलेगी ।

III. छात्र-छात्राओं के सर्वांगीण विकास में सहायक- व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिये भाषा का शिक्षण व्यापक उद्देश्य माना जाता है । यदि छात्र-छात्राएं भाषा के दोषों को साथ लेकर विद्यालय से बाहर निकलते हैं तो सर्वांगीण विकास के उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होगी क्योंकि अभिव्यक्ति में दोष आ जायेगा और यह दोष व्यक्ति में हीन भावना को जन्म देता है । इसीलिये आवश्यकता इस बात की है कि दोषों के कारणों को जानकर उनका निवारण किया जाये । यह निदानात्मक शिक्षण से ही सम्भव हो सकता है । इस प्रकार निदानात्मक शिक्षण सर्वांगीण विकास के उद्देश्य की पूर्ति में पूरी तरह से सहायक है ।

IV. शिक्षण को सार्थक एवं सशक्त बनाना- सभी शिक्षक अपने शिक्षण को प्रभावपूर्ण, सशक्त एवं सार्थक बनाने के इच्छुक होते हैं । जिस शिक्षक का शिक्षण प्रभावशाली नहीं है तो वह शिक्षा के किसी भी उद्देश्य को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध नहीं हो सकता । उसका शिक्षण तभी प्रभावशाली होगा जब वह अपनी बात अच्छी तरह से छात्र-छात्राओं को समझा सके, उनमें रुचि पैदा कर सके और उन्हें वांछनीय परिवर्तनों की ओर प्रेरित कर सके । अगर छात्र-छात्राओं में कुछ दोष धीरे-धीरे पनपते रहे और शिक्षक का उन दोषों की ओर ध्यान ही न जाये तो छात्र-छात्राओं में किसी प्रकार का कोई सुधार सम्भव नहीं होगा । ऐसी स्थिति में शिक्षक का शिक्षण कदापि भी प्रभावशाली नहीं होगा । इसलिये शिक्षक को छात्रों के प्रति कभी भी उपेक्षा भाव नहीं दिखाना चाहिये । शिक्षण को प्रभावपूर्ण और सार्थक बनाने के लिये छात्र-छात्राओं की शिक्षण प्रक्रिया में सक्रियता अत्यन्त आवश्यक है । यह तभी सम्भव हो सकता है जब छात्र-छात्राएं अपने दोषों के प्रति पूर्ण रूप से सचेत हों और शिक्षक उनकी कठिनाईयों को दूर करने के लिये सहानुभूतिपूर्ण सहायता प्रदान करता रहे ।

निदानात्मक शिक्षण की आवश्यकता

इस बात की हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं कि मानव जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहां समस्यायें न हों । यहां पर हमारा सम्बन्ध शिक्षण की समस्याओं से है । इन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समस्याओं के अन्तर्गत छात्र-छात्राओं द्वारा किसी बात को न समझना, उनका देर से आना, कक्षा में सोते रहना, सहपाठियों को परेशान करना आदि अनेक समस्याएं आती हैं । अब आप इन समस्याओं से हटकर उन समस्याओं के बारे में विचार कीजिए जिनका सम्बन्ध हिन्दी शिक्षण से है । हिन्दी शिक्षण की जितनी भी समस्याएं हैं उनका मुख्य रुप से सम्बन्ध अर्थ ग्रहण और अभिव्यक्ति की समस्याओं से है । सृजनात्मकता व रचनात्मकता की समस्या वास्तविक रुप से समस्या नहीं है बल्कि यह तो एक अभाव है जिसका सम्बन्ध शिक्षक से न होकर प्रकृति से है । अभिव्यक्ति से सम्बन्धित मुख्य रुप से दो समस्याएं हैं, जो निम्न हैं-

I. छात्र-छात्राओं द्वारा किसी बात को शुद्ध रुप में कहने में असमर्थता दिखाना।

II. छात्र-छात्राओं द्वारा किसी बात को शुद्ध रुप में लिखने में असमर्थता दिखाना।

इसी प्रकार अर्थ ग्रहण से भी सम्बन्धित दो समस्याएं हैं जो निम्न हैं-

I. किसी बात को ठीक ढंग से न सुन पाना ।

II. किसी बात को पढ़कर उनके अर्थ न समझ पाना ।

इन समस्याओं का अगर हम भली भांति विश्लेषण करें तो एक समस्या के अन्तर्गत कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है । जब तक ये सभी समस्याएं छात्र-छात्राओं के समक्ष बनी रहेंगी तो तब तक वे न तो शुद्ध रुप से किसी बात को समझ पायेंगे और न ही वे दूसरों को समझा पायेंगे । इसलिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि छात्र-छात्राओं के हिन्दी शिक्षण स्तर को विकसित करने हेतु इन समस्याओं का निदान करके फिर उनको दूर किया जाये ।

समस्याओं के प्रकार

किसी भी समस्या के प्रकार उसके क्षेत्र से सम्बन्धित होते हैं । उदाहरण के तौर पर शिक्षा से सम्बन्धित समस्याएं शैक्षिक समस्याएं कहलायेंगी । परन्तु जब हम शैक्षणिक समस्याओं का ही आगे वर्गीकरण करें तो हमें उस आधार के बारे में देखना पड़ेगा जिसके आधार पर हम समस्याओं को वर्गीकृत करते हैं ।

उदाहरण के रुप में शिक्षण सम्बन्धित समस्याएं विशेष रुप से दो प्रकार हैं जो निम्न हैं-

I. वे समस्याएं जिनका सम्बन्ध सभी छात्र-छात्राओं से होता है ।

II. वे समस्याएं जो व्यक्तिगत हैं ।

इस आधार पर समस्याओं को दो भागों में बांटा जा सकता है जो इस प्रकार हैं-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

I. पहले प्रकार की समस्याएं सामूहिक समस्याएं कहलायेंगी ।

II. दूसरी प्रकार की समस्याएं अलग-अलग छात्र से सम्बन्धित होने के कारण व्यक्तिगत समस्याएं कहलायेंगी ।

इस प्रकार समस्याओं के दो भेद हुए जो निम्न हैं-

(1) सामूहिक शैक्षणिक समस्याएं ।

(2) व्यक्तिगत शैक्षणिक समस्याएं ।

समस्याओं का निदान

शिक्षा के क्षेत्र में किस शैक्षणिक समस्या का किस क्षेत्र से सम्बन्ध है या दूसरे अर्थों में किसी शैक्षणिक समस्या का विशेष कारण क्या हो सकता है ? यह सब जानना ही निदान कहलाता है । उदाहरण के रुप में इस बात को सरल ढंग से इस प्रकार समझा जा सकता है- मान लीजिए कोई विद्यार्थी शुद्ध रुप से लिख नहीं पाता है तो आप कैसे पता लगायेंगे कि विद्यार्थी द्वारा शुद्ध न लिखे जाने के क्या कारण हैं ? हो सकता है कि विद्यार्थी पर क्षेत्रीय प्रभाव हो, यह भी सम्भव हैकि शिक्षक शुद्ध न लिख पाता हो तो स्वाभाविक ही विद्यार्थी भी अशुद्ध ही लिखेगा । यह भी हो सकता है कि विद्यार्थी पहले जिस स्कूल में पढ़ा वहां पर लिखने पर कोई ध्यान न दिया गया हो । यह भी सम्भव है शिक्षक द्वारा जो कुछ पढ़ाया जाता है उस पर विद्यार्थी ध्यान न देते हों । इन सब बातों के अतिरिक्त यह भी स्भव हो सकता है विद्यार्थी को घर पर इतना काम करना पड़ता हो जिससे उसे पढ़ने के लिये समय ही नहीं मिल पाता हो । उपरोक्त सभी सम्भावनाओं में से सही रुप से यह निश्चित करना कि कौन सा प्रमुख कारण है या कई कारण हैं जो विद्यार्थी द्वारा लेखन सम्बन्धी अशुद्धियों के लिये जिम्मेवार है ।

उन छात्र-छात्राओं का पता लगाना जिनके साथ समस्याएं हैं ।

निदान के अन्तर्गत यह जानना भी आवश्यक है कि किस छात्र के साथ कौनसी समस्या है ? इसलिये हमारे सामने जो भी समस्या है पहले उसका निदान करना अत्यन्त आवश्यक है और फिर बाद में उन कारणों को दूर कर दिया जाये तो समस्या का स्वतः ही समाधान हो जायेगा । लेकिन जब तक समस्या और उसके कारणों का पता नहीं चलेगा तब तक हम उस का समाधान कैसे कर सकते हैं ? हम इस बात पर पहले ही विचार कर चुके हैं कि समस्याएं दो प्रकार की हो सकती हैं -

I. सामूहिक

II. व्यक्तिगत

समस्याएं चाहे सामूहिक हों या व्यक्तिगत इस बात का पता लगाने के लिये हमें निम्न दो साधनों की सहायता लेनी होती है-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(1) परीक्षण और

(2) निरीक्षण

निरीक्षण का करना इसलिये आवश्यक है कि परीक्षण के परिणाम सभी प्रकार से सही हों यह सम्भव नहीं है । इसलिये हम जिन भी कारणों का पता करें उनकी पुष्टि के लिये दूसरी विधि का अपनाना उचित है । निरीक्षण और प्रशिक्षण भी कई प्रकार से सम्भव है ।

निदानात्मक परीक्षण भी मुख्यत: दो प्रकार से सम्भव हैं जो निम्न हैं :-

(I) समस्या विशेष के निदान के लिये प्रभावीकृत परीक्षाओं को अपनाना ।

(II) शिक्षक द्वारा ली गई परीक्षाओं के माध्यम से ।

परीक्षण का प्रयोग विशेष कर सामूहिक समस्याओं के निदान हेतु बहुत लाभप्रद होता है । व्यक्तिगत समस्याओं के लिये परीक्षण के साथ-साथ

(I) निरीक्षण (Observation)

(II) परीक्षण (Test)

(III) साक्षात्कार (Interview)

(IV) संचित अभिलेख (Cumulative Record)

बहुत उपयोगी एवं सार्थक साधन सिद्ध होते हैं ।

(I) निरीक्षण (Observation)- छात्र-छात्राओं की अशुद्धियों और उनके कारणों की खोज करने की तात्कालिक विधि 'निरीक्षण' है । शिक्षक अपने सतत् सचेत निरीक्षण से छात्र-छात्राओं की न केवल भाषा-सम्बन्धी अशुद्धियों की पकड़ कर सकता है बल्कि कुछ सीमा तक उनके कारणों का भी पता लगा सकता है । उदाहरण के तौर पर यदि किसी छात्र का वाचन अशुद्ध है तो शिक्षक निरीक्षण से जान सकता है कि उसके वाचन में क्या कमी या दोष है । मान लीजिये शिक्षक ने निरीक्षण से जान लिया कि संयुक्त अक्षरों का उच्चारण ठीक नहीं करता । वह संयुक्त अक्षरों का उच्चारण क्यों अशुद्ध करता है ? इसका कारण जानने के लिये शिक्षक 'निरीक्षण' का भली भांति प्रयोग कर सकता है । हो सकता है छात्र 'आदर्श वाचन' ध्यान से न सुन सका हो । हो सकता है बाहर से आ रहे शोर के कारण वह न सुन सका हो । सम्भव है उसके कानों में कुछ दोष हो । यह भी सम्भव है कि प्रान्तीयता के प्रभाव के कारण वह संयुक्त अक्षरों का सही उच्चारण न कर पा रहा हो आदि । इन सभी कारणों का पता लगाने के लिये शिक्षक का सजग एवं सचेत निरीक्षण पर्याप्त रुप से सहायक सिद्ध हो सकता है । इसी प्रकार लिखित कार्य की अशुद्धियों में छात्र का गलत आसन में बैठना, कलम का गलत ढंग से पकड़ना, अक्षरों की बनावट के सम्बन्ध में गलत धारणा का बन जाना आदि भी कारण हो सकते हैं और शिक्षक इन कारणों को निरीक्षण-विधि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अच्छी प्रकार से जान सकता है । निरीक्षण विधि का सबसे बड़ा गुण है कि इसका प्रयोग शिक्षक कहीं भी और कभी भी कर सकते हैं ।

(II) परीक्षण (Test)– हिन्दी शिक्षण निदान की एक और विधि 'परीक्षण' है । प्रायः ऐसा देखने में आया है कि साधारण निरीक्षण के द्वारा छात्र-छात्राओं की भाषा से सम्बन्धित अशुद्धियों और उनके कारणों का पता नहीं लगता । अधिकांश छात्र-छात्राएं संकोच या भय के कारण अपनी त्रुटियों को छिपाये रखने का प्रयास करते हैं । ऐसी स्थिति में छात्र-छात्राओं की अशुद्धियों और उनकी कठिनाईयों को जानने के लिये परीक्षण विधि का प्रयोग किया जाता है । प्रत्येक स्कूल में वर्ष में तीन बार परीक्षाएं होती हैं । इन परीक्षाओं का लक्ष्य जहां छात्र-छात्राओं के प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन करना होता है वहां उनकी अशुद्धियों और कठिनाईयों का समझना भी होता है । इन परीक्षाओं का प्रयोग निदानात्मक कार्य के लिये भी किया जाना चाहिये । इन परीक्षाओं के अतिरिक्त विद्वानों ने कई प्रकार के निदानात्मक परीक्षणों (Diagnostic Tests) का भी निर्माण किया है जिनकी सहायता से छात्र-छात्राओं के भाषा से सम्बन्धित अशुद्धियों और उनके कारणों का पता लगाया जा सकता है । इन परीक्षणों से पता चलता है कि छात्र-छात्राओं में विषय-वस्तु के कठिन होने अर्थात् स्तर के उपयुक्त न होने से कठिनाईयां आ रही हैं या अनुचित शिक्षण साधनों या प्रतिकूल वातावरण के कारण छात्र-छात्राओं में भाषा से सम्बन्धित अशुद्धियां बढ़ रही हैं । परीक्षणों के उचित निर्माण और उनकी उचित एवं सही जांच से निदानात्मक कार्य में सहायता मिल सकती है।

(III) साक्षात्कार (Interview)– छात्र-छात्राओं की अशुद्धियों और उनके कारणों का पता लगाने की विधि एक प्रभावपूर्ण एवं सशक्त साक्षात्कार (Interview) विधि है । छात्र-छात्राओं की जिन अशुद्धियों व दोषों का कारण कक्षा का वातावरण या विषय-वस्तु की जटिलता एवं नीरसता होती है, वे तो निरीक्षण से ज्ञात हो जाते हैं और उन्हें जहां तक सम्भव हो दूर भी किया जा सकता है । परन्तु कई बार छात्र-छात्राएं संवेगात्मक कठिनाईयों के कारण कक्षा में ध्यान नहीं दे पाते और उनकी सीखने की गति में बहुत धीमापन आ जाता है । ऐसे छात्र-छात्राओं की कठिनाईयों को जानने हेतु साक्षात्कार अत्यन्त प्रभावशाली विधि सिद्ध होती है । साक्षात्कार में छात्र को अपने मन के भाव (मन की बात) को खुल कर प्रकट करने के लिये प्रेरित किया जाता है परन्तु यह प्रेरणा उसे तब मिलती है जब वातावरण अनौपचारिक होता है । साक्षात्कार करते समय छात्र को ऐसा अनुभव होना चाहिये कि वह अपने मन की बात उस व्यक्ति को बता रहा है जो उससे सहानुभूति और प्रेम करता है । कहने का अभिप्राय यह है कि साक्षात्कार के समय शिक्षक का व्यवहार सहानुभूतिपूर्ण, स्नेहशील एवं आत्मीयता पूर्ण होना चाहिये, तभी छात्र बिना किसी संकोच के स्पष्ट रुप से अपने मन की बातों को प्रकट कर सकता है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

संचित अभिलेख (Cumulative Record)- प्रत्येक छात्र के संचित अभिलेखों से उसकी रुचियों, अभिरुचियों, इच्छाओं और विभिन्न क्रियाओं एवं प्रतिदिन की क्रियाओं का ब्यौरा संचित किया जा सकता है । इन अभिलेखों के आधार पर उसकी वर्तमान कठिनाईयों और समस्याओं का भी अच्छी तरह से विश्लेषण किया जा सकता है । यही कारण है कि अकसर सभी शिक्षा शास्त्री इस बात पर बहुत जोर देते हैं कि बालक के स्कूल में प्रवेश प्राप्त करते ही उसका संचित अभिलेख रखा जाना चाहिये और यह अभिलेख उसके स्कूल में रहने तक अवश्य ही बनाये रखना चाहिये । कई विद्वान तो यहां तक कहते हैं कि यह संचित अभिलेख व्यक्ति के व्यावसायिक जीवन में उसके साथ रहने चाहियें । विद्वानों की दृष्टि में संचित अभिलेखों का बहुत महत्त्व है । इनसे छात्र-छात्राओं की कठिनाईयों और समस्याओं को समझने के लिये संचित लेखों से बहुत सहायता मिलती है अगर ये अभिलेख हर दृष्टि से पूर्ण हों और सभी बातें सही ढंग से संचय की गई हों ।

उपचारात्मक शिक्षण का अर्थ

उपचार का साधारण एवं सामान्य अर्थ है इलाज । इस शब्द का प्रयोग चिकित्सा के क्षेत्र में व्यापक रुप से होता है । लेकिन भाषा के क्षेत्र में इसका सम्बन्ध छात्र-छात्राओं की भाषा से सम्बन्धित अशुद्धियों का उपचार करके उन्हें मौखिक एवं लिखित भाषा के शुद्ध रुप में प्रयोग के योग्य बनाना है । भाषा के प्रयोग में छात्र-छात्राएं कई प्रकार की अशुद्धियां करते हैं, जैसे उच्चारण में अशुद्धता, अक्षर ज्ञान की अशुद्धता, वर्तनी की अशुद्धता, अशुद्ध पठन (वाचन), व्याकरण में अशुद्धि आदि । इन अशुद्धियों का निवारण किये बिना छात्र-छात्राओं की मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति को सशक्त, प्रभावपूर्ण एवं सार्थक नहीं बनाया जा सकता । कालान्तर में ये अभिव्यक्ति सम्बन्धी दोष छात्र-छात्राओं में हीनता की भावना को बढ़ावा देते हैं और इससे उनके व्यक्तित्व के सन्तुलित विकास में बाधा आती है । इसलिये शिक्षक का यह मुख्य कर्त्तव्य बनता है कि छात्र-छात्राओं की भाषा सम्बन्धी अशुद्धियों का उपचार करें । लेकिन उपचार से पहले निदान का होना अत्यन्त आवश्यक है । निदान में मुख्यता दो बातें निहित हैं जो इस प्रकार हैं -

(1) लक्षणों के द्वारा भाषा से सम्बन्धित अशुद्धियों की पहचान करना और

(2) उन अशुद्धियों के कारणों का पता लगाना ।

भाषा-शिक्षक को निरीक्षण, परीक्षण, साक्षात्कार और संचित अभिलेखों आदि की सहायता से छात्र-छात्राओं के भाषा-सम्बन्धी अशुद्धियों का निदान कर लेना चाहिये । उसके पश्चात् उन अशुद्धियों का उपचार करना चाहिये । भाषा-दोषों व अशुद्धियों के उपचार को उपचारात्मक शिक्षण कहते हैं ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य
(Objectives of Remedial Teaching)

उपचारात्मक शिक्षण का मुख्य लक्ष्य (प्रयोजन) शैक्षणिक कठिनाईयों का निवारण करना है । शैक्षणिक कठिनाईयों से छात्र का सीखने का मार्ग रुक जाता है । उपचारात्मक शिक्षण उन कठिनाईयों का निवारण करके उसके सीखने के मार्ग को प्रशस्त करके सहज बनाता है । इस प्रकार एक बार उसका सीखने का मार्ग प्रशस्त हो जाता है तो उस छात्र को सही ढंग से ज्ञान की प्राप्ति सहजता से होने लगती है । उसकी सीखने में रुचि हो जाती है और वह प्रसन्नता का अनुभव करने लगता है । उसका व्यक्तित्व सही दिशा में विकसित होने लगता है । उपचारात्मक शिक्षण के निम्न उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं :-

(1) छात्र-छात्राओं की भाषा से सम्बन्धित त्रुटियों का निराकरण करना ।

(2) ज्ञान प्राप्ति के मार्ग में बाधा डालने वाली कठिनाईयों का निवारण करना ।

(3) छात्र-छात्राओं की शंकाओं का समाधान करके उनको मानसिक रूप से स्वस्थ बनाना ।

(4) उनको विकास की सही दिशा की ओर अग्रसर करना ।

(5) उनको अपने दोषों से परिचित कराके सजग एवं सचेत करना और इन्हें दूर करने के लिये प्रेरित करना ।

(6) शिक्षण को सशक्त, सार्थक एवं प्रभावशाली बनाना ।

शैक्षणिक उपचार-कार्यक्रम

समस्या के क्षेत्र को देखते हुए उपचार रुपों पर विचार करें तो उसके वे ही दो रुप हैं- सामूहिक और व्यक्तिगत जिनकी चर्चा हम पहले कर चुके हैं । परन्तु हमारा अभिप्राय यहां पर उपचार के इन रुपों से न होकर बल्कि कार्यक्रम के रुपों से है जिनके अन्तर्गत समस्याओं का समाधान करेंगे । शैक्षणिक उपचार कार्यक्रम निम्न दो तरीकों से चलाया जा सकता है ।

(I) समस्या के कारणों को दूर करना,

(II) अन्य कारणों का पता लगाना जो समस्या को पुनः पनपने में सहायक होते हैं ।

उदाहरण के तौर पर इस बात को इस प्रकार समझा जा सकता है- मान लीजिए एक बालक पढ़ने में पिछड़ गया है । पिछड़ेपन के कई कारण हो सकते हैं । हमें इन सभी कारणों का पता लगाना चाहिये । पुनः मान लीजिए कि छात्र के इस पिछड़ेपन का कारण उसका घर से देर से आना है । अब यह कार्यक्रम दो रुपों में होगा ।

(I) एक तो वह छात्र स्कूल में देर से न पहुंचे ।

(II) दूसरे वह जितना पिछड़ गया है उस कमी को दूर करना ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

इस आधार पर कार्यक्रम के फिर से निम्न दो रुप हुए-

(I) कक्षागत कार्यक्रम

(II) कक्षा से बाहर का कार्यक्रम

इन दोनों कार्यक्रमों को सुचारु रुप से चलाना उपचारात्मक शिक्षण के क्षेत्र में आयेगा।

उपचारात्मक कार्यक्रम की रुप रेखा

उपरोक्त अध्ययन के आधार पर उपचारात्मक शिक्षण के कार्यक्रम की रुप-रेखा निम्न ढंग से होगी ।

1. समस्या
2. समस्या की परिभाषा (स्पष्टीकरण)
3. समस्या के सम्भावित कारण
4. कारणों की खोज
5. समस्या के वास्तविक कारण और उनकी खोज अर्थात् समस्या का निदान
6. परिष्कारात्मक कार्यक्रम अथवा परिष्कारात्मक शिक्षण

उपरोक्त सोपानों (अंगों) को दो समस्याएं लेकर स्पष्ट किया जा सकता है । पहली समस्या का सम्बन्ध सभी विषयों से है और दूसरी समस्या का सम्बन्ध अप्रत्यक्ष रुप से अन्य विषयों से होकर भी हिन्दी शिक्षण से है ।

I. शैक्षिक पिछड़ापन

II. वाचन की समस्या

इनमें पहली और दूसरी समस्याएं सामूहिक और व्यक्तिगत दोनों प्रकार की हो सकती हैं ।

शैक्षिक पिछड़ापन

1. समस्या- शैक्षिक पिछड़ापन
2. परिभाषा- जो बालक अपनी कक्षा के मध्यकाल में अपनी से पीछे की कक्षा का कार्य करने में असमर्थ हो ।
3. समस्या के सम्भावित कारण और
4. उनका पता लगाना ।

   (1) घर पर पढ़ाई के अतिरिक्त कार्य करना ।

   (2) पाठशाला का घर से बहुत दूर होना ।

   (3) पढ़ने में मन न लगना ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(4) घर की आर्थिक स्थिति का सही न होना ।

(5) स्कूल का वातावरण उचित न होना ।

(6) बुरी संगति में पड़ना ।

(7) शिक्षकों के साथ मधुर सम्बन्धों का न होना ।

(8) पिछली कमजोरी ।

(9) बहुत दिनों तक बीमार रहना ।

5. समस्या का वास्तविक कारण

(1) पिछली कमजोरी ।

6. परिष्कारात्मक कार्यक्रम

(1) कक्षा में पूरा-पूरा ध्यान रखना ।

(2) कक्षा के बाहर अतिरिक्त समय देना ।

द्वितीय समस्या- वाचन की समस्या

1. समस्या- वाचन की समस्या ।

2. समस्या का स्पष्टीकरण- छात्र सही ढंग से वाचन नहीं कर सकता । उच्चारण से सम्बन्धित अनेक त्रुटियां करता है । 'स' को 'श' उच्चरित करता है और 'प्र' को 'पर' उच्चरित करता है । इस प्रकार की अनेक त्रुटियां करता है और रुक-रुक कर पढ़ता है ।

3. सम्भावित कारण और

4. उनका पता लगाना ।

(1) वातावरण का प्रभाव,

(2) स्कूल का प्रभाव,

(3) पढ़ने में रुचि का न होना,

(4) शिक्षक का उच्चारण शुद्ध न होना,

(5) घर पर पढ़ने का समय न मिलना,

(6) कम दिखाई देना और

(7) पढ़ते हुए संकोच करना आदि ।

5. समस्या के वास्तविक कारण/कारणों का पता लगाना अर्थात् कारणों की खोज करना ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अब इस बात का पता लगाना होता है कि ऐसा कौन सा प्रमुख कारण है जिसके कारण छात्र में उपरोक्त कमियां हैं, उसकी मौखिक परीक्षा ली गई तो भी वही अशुद्धियां कीं जिन्हें **वह सामान्य रुप से** कक्षा में करता था । पुनः उसका संचित लेख मंगाया गया तो देखा कि **उसकी पिछली** शिक्षा जम्मू के एक स्कूल में हुई थी । पुनः छात्र का साक्षात्कार लिया और **उससे** बड़े अनौपचारिक ढंग से बातचीत करते हुए सभी बातों के पता लगाने का प्रयत्न **किया** गया । छात्र ने बताया उसका घर तो हिमालय में है और उसके पिता जी अम्बाला **शहर** में दुकान करते थे और बाद में जम्मू में जाकर काम करने लगे । उसका जन्म भी **अम्बाले** में हुआ था । इन सब बातों का निष्कर्ष यह निकला की 'स' का 'श' और 'प्र' का **पर** बोलना क्षेत्रीय प्रभाव के कारण है ।

6. परिष्कारात्मक शिक्षण- छात्र के उपरोक्त दोषों को दूर करने के प्रयत्न किये गये । पहले तो उसे सुझाव दिया गया कि वह अपने साथियों से अधिक से अधिक वार्तालाप करें । साथ ही उसे यह समझाने का प्रयास किया गया कि अगर उसकी गलती में किसी प्रकार का सुधार किया जाता है तो वह इस बात को बुरा न समझे ।

उन शब्दों को भी स्पष्ट किया गया जैसे 'स' को 'श' और 'प्र' को पर ताकि इनके अन्तर को समझ ले ।

स्नान - शनान	प्रसन्न - परसन्न
स्कूल - शकूल	प्रमुख - पर मुख
समस्या - शमश्या	प्रदेश - परदेश
सकल - शकल	प्रवेश - परवेश

अटक-अटक कर पढ़ने की समस्या का कारण पता लगा कि जिस क्षेत्र में वह पढ़ा था वहां हिन्दी शिक्षण पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था ।

इस समस्या का समाधान करने हेतु छात्र को अधिक पुस्तकें जो सरल भाषा में थी, पढ़ने का अवसर दिया गया । यह समस्या ऐसी थी जिसका ध्यान कक्षा में तो दिया ही गया लेकिन कक्षा से बाहर अधिक दिया गया । क्योंकि छात्र को अधिक से अधिक वाचन करवाने की आवश्यकता थी जो कक्षा में सम्भव नहीं था ।

यहां पर यह बात विशेष रूप से ध्यान देने की है कि उपचारात्मक शिक्षण में शिक्षक के दृष्टिकोण एवं सशक्त भूमिका होती है । अकसर ऐसा देखा जाता है बहुत से शिक्षक छात्र-छात्राओं को डांट-डपट अर्थात् धमकाकर या शारीरिक दण्ड का डरावा देकर छात्र-छात्राओं की भाषा- सम्बन्धी अशुद्धियों को दूर करने का प्रयास करते हैं । इस प्रकार के नकारात्मक व्यवहार से छात्र-छात्राओं की कठिनाईयों का निवारण नहीं होता, बल्कि उनकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कठिनाईयां और भी बढ़ जाती हैं । कई बार तो छात्र-छात्राओं में शिक्षक के ऐसे व्यवहार के कारण हीन भावना बढ़ने लगती है । इससे उपचारात्मक उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होती । इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक का व्यवहार प्रेरणादायक, सकारात्मक और सराहनीय हो जिससे छात्र-छात्राओं में आत्मविश्वास और इच्छा शक्ति का विकास हो । उपचार सामूहिक रूप से हो या व्यक्तिगत रूप हो शिक्षक का व्यवहार सहानुभूति पूर्ण और उत्साहवर्धक होना चहिए ।

अभ्यास के प्रश्न

1. शैक्षणिक निदान और उपचारात्मक शिक्षण से आप क्या समझते हैं ? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए ।
2. किसी छात्र के उच्चारण दोषों के कारणों का पता कैसे लगायेंगे ? कुछ कारणों को स्पष्ट करते हुए उनके दूर करने के उपाय लिखिए ।
3. छात्र-छात्राएं मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति में किस प्रकार की अशुद्धियां करते हैं ? विस्तार से स्पष्ट कीजिए ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

6

हिन्दी शिक्षण में पाठ्यक्रम सहगामी गतिविधियां (Co-curricular Activities in Hindi Te ching)

एक समय था जब इन गतिविधियों को पाठ्यक्रम से अतिरिक्त गतिविधियां माना जाता था । अब इन गतिविधियों को अतिरिक्त पाठ्य गतिविधियां न मानकर बल्कि इनको सहगामी गतिविधियां माना जाने लगा है । विद्यालय में आजकल इन गतिविधियों को शिक्षा का अभिन्न अंग मानते हैं । आज जब हम पाठ्यक्रम का विस्तृत अर्थ लेकर इनकी व्याख्या करते हैं तो छात्र-छात्राओं की सही ढंग से शिक्षा प्राप्ति के लिये इन सहगामी गतिविधियों को पाठ्यक्रम में उचित स्थान मिलना आवश्यक है । वास्तविक रूप में अगर हम देखें तो सहगामी क्रियाओं और पाठ्यक्रम को एक दूसरे का पूरक माना जाता है । आजकल विद्यालय में इन क्रियाओं का आयोजन अत्यन्त आवश्यक है ।

आज के युग में सभी शिक्षा शास्त्री शिक्षा का उद्देश्य सर्वांगीण विकास मानकर चलते हैं इसलिये शिक्षा केवल मानसिक विकास तक सीमित न होकर, शिक्षा का उद्देश्य शारीरिक, मानसिक एव बौद्धिक विकास, नैतिक, सामाजिक सौन्दर्यात्मक, भावात्मक तथा सांस्कृतिक विकास करना होना चाहिये । यही कारण है कि आजकल पाठ्यक्रम और गतिविधियों में अन्तर नहीं माना जाता क्योंकि इन सहगामी गतिविधियों को पाठ्यक्रम का महत्त्वपूर्ण अंग मान लिया गया है । इन गतिविधियों पर प्रकाश डालते हुए माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा है:

"स्कूल केवल ऐसी औपचारिक शिक्षा का ही केन्द्र नहीं जहां असीम ज्ञान को प्रदान किया जाता है । यह एक ऐसी सजीव एवं सम्पूर्ण जाति है जो शिष्य को प्रशिक्षित करके उन्हें सम्मान द्वारा जीवित रहने की शिक्षा देती है । जीवन विधि की कला अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । समुचित ढंग से संयोजित विद्या ग्रहण करना ही सब कुछ नहीं है । सामाजिक जीवन यापन करने तथा सामूहिक रुप रखकर एक दूसरे की सहायता करके अपने स्वभाव परिवर्तन का प्रशिक्षण नहीं मिलता है उसकी पूर्ति केवल सामाजिक जीवन के साथ पाठ्यक्रम गतिविधियों द्वारा ही सम्भव है जिनकी विद्यमानता विद्यालय में होनी आवश्यक है ।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सहगामी गतिविधियों की उपयोगिता

सहगामी गतिविधियों से छात्र-छात्राओं की निम्न आवश्यकताओं की पूर्ति होती है-

1. सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति- मनुष्य के पास भाषा है और यही कारण है कि वह सामाजिक प्राणी है । इन गतिविधियों से छात्र-छात्राएं यह सीखते हैं कि एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के बीच में और एक व्यक्ति और समाज के बीच में कैसे सम्बन्ध होने चाहियें ।

2. मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति- सहगामी गतिविधियों के द्वारा किशोरावस्था के छात्र-छात्राओं की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है । उदाहरण के लिये किशोरावस्था के छात्र-छात्राओं के समूह में अपनी पहचान बनाने और लोकप्रियता की प्रवृत्ति पाई जाती है । सहगामी गतिविधियों के माध्यम से इन छात्र-छात्राओं को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सन्तोष प्राप्त होता है ।

3. नैतिक आवश्यकताओं की पूर्ति- इन सहगामी गतिविधियों द्वारा छात्र-छात्राओं में सच्चाई, समानता, सहानुभूति, समय की पाबन्दी, न्यायप्रियता, सहयोग जैसे गुणों का विकास होता है ।

4. रुचियों का विकास- इस प्रकार की गतिविधियों के आयोजन से इस बात का पता चल जाता है कि छात्र-छात्राओं की रुचियां कौन-कौन सी हैं । उनको उनकी रुचियों के अनुसार विभिन्न क्रिया-कलापों में भाग लेने का अवसर देकर उनकी रुचियों का विकास किया जा सकता है ।

5. अवकाश के समय का सदुपयोग- विद्यालय के छात्र-छात्राएं जो इन गतिविधियों में सक्रिय होकर भाग लेते हैं तो वे अपने भावी जीवन में आगे चलकर भी इसी प्रकार के क्रिया कलापों का आयोजन करके समय का सदुपयोग करने में सफल होंगे ।

सहगामी गतिविधियों के प्रकार

1. शारीरिक विकास के लिये उचित क्रिया कलाप जैसे- सामूहिक परेड, सामूहिक ड्रिल, खेलकूद, सैनिक शिक्षा एवं एन. सी. सी.
2. साहित्य एवं ज्ञान के विकास सम्बन्धी क्रिया कलाप- जैसे- वाद-विवाद, भाषण प्रतियोगिता, पुस्तकालय कार्य, कविता पाठ, कहानी कहना, कहानी लेखन प्रतियोगिता, साहित्य सभा, नाटक एवं निबन्ध प्रतियोगिता आदि ।
3. रसात्मक अनुभूति एवं सांस्कृतिक विकास सम्बन्धी क्रिया कलाप- जैसे संगीत, लोक-गीत, नृत्य प्रदर्शनी, चार्ट तथा माडल की रचना, नाटक खेलना आदि ।
4. अवकाश के क्रिया कलाप- जैसे- टिकट और सिक्के इकट्ठे करना, फोटो ग्राफी, चित्र बनाना और मनोरंजक वस्तुओं का एकीकरण करना ।
5. मनोरंजन के क्रिया कलाप- जैसे पिकनिक, पहाड़ों पर चढ़ना, एवं धार्मिक, भौगोलिक और एतिहासिक स्थानों की यात्रा, चिड़ियाघर, मेले आदि पर जाना आदि ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

6. नागरिकता विकास सम्बन्धी क्रिया कलाप- जैसे- नागरिक संस्थाओं का देखना (पर्यवेक्षण) जैसे ग्राम पंचायत, विधान सभा, हाईकोर्ट आदि । इनके अतिरिक्त सामाजिक उत्सवों का मनाया जाना, महान पुरुषों के जन्म दिवस का मनाना, बाल दिवस और शिक्षक दिवस का मनाना आदि ।
7. समाज सेवा सम्बन्धी क्रिया कलाप- जैसे- सामूहिक प्रार्थना, श्रमदान, सफाई सप्ताह, पास पड़ोस में समाज सेवा, प्रथम चिकित्सा, राष्ट्रीय सेवा योजना आदि।
8. बहुमुखी क्रियाकलाप अथवा प्रोजेक्ट योजनाएं- जैसे- स्कूल सौन्दर्य की देखभाल, नगर एवं गांव की देखभाल, पोस्ट आफिस चलाना, स्कूल अथवा गांव में कोई दवाखाना चलाना आदि ।

सहगामी गतिविधियों का महत्त्व

सहगामी गतिविधियों से अनेक लाभ हैं । इसलिये इन गतिविधियों का पर्याप्त रूप से महत्त्व है जो इस प्रकार है-

1. शारीरिक महत्त्व- इन गतिविधियों के द्वारा शारीरिक विकास के साथ-साथ छात्र-छात्राओं में शक्ति, सहनशीलता एवं योग्य स्वभाव आदि की भावना जागृत होती है जिसके द्वारा व्यावसायिक एवं व्यक्तिगत जीवन में प्रसन्नता जन्म लेती है ।

2. मनोवैज्ञानिक महत्त्व- इनके द्वारा छात्र-छात्राओं की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है । सर्वप्रथम इनके द्वारा अन्तः प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति का समय मिल जाता है । दूसरी बात यह है कि आवेगों के प्रशिक्षण में ये महत्त्वपूर्ण कार्य करती हैं । सामूहिक रूप में की गई गतिविधियों द्वारा छात्र-छात्राओं की भावमयता पर गहरा प्रभाव पड़ता है । तीसरी बात यह है कि गतिविधियों की विविधता छात्र-छात्राओं को अपनी ओर अवश्य आकर्षित करती है । वे अपनी-अपनी रुचि के अनुसार उन्हें अपनाते हैं । चौथी बात यह है कि पाठ्यक्रम समवर्ती गतिविधियां स्वस्थ मानसिक सन्तुलन रखने में सहायक सिद्ध होती हैं । असन्तुलित छात्र-छात्राओं के लिये जिस प्रकार चिकित्सा ठीक रहती है वैसे ही सन्तुलित छात्रों के लिये सहगामी गतिविधियां अधिक उपयुक्त रहती हैं।

3. नैतिक महत्त्व- इन क्रियाकलापों का महत्त्व चरित्र के प्रशिक्षण की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है । इनके द्वारा ही छात्र-छात्राओं को समूह के प्रति आज्ञाकारी रहने का अवसर मिलता है और वे अधिकारियों के प्रति अपने सभी सिद्धान्तों का परिपालन कर सकते हैं । सत्य, प्रेम, सहनशीलता, न्याय, अहिंसा और समानता की भावना का विकास इन्हीं के द्वारा होता है । ये गतिविधियां छात्र-छात्राओं के नैतिक विचारों और नैतिक स्तर को उँचा उठाती हैं । नैतिक चरित्र एवं अनुभवों की आपूर्ति के लिये ये गतिविधियां उन्हें उपयुक्त अवसर प्रदान करती हैं ।

4. साहित्यिक महत्त्व- भाषा के साहित्यिक महत्त्व की दृष्टि से दो रूप हैं- मौखिक एवं प्रयोगात्मक । शिक्षा से सम्बन्धित सारी पढ़ाई मौखिक है । आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक विषय की पूर्ति प्रयोगात्मक कार्य द्वारा की जाए । सहगामी गतिविधियां ही इन प्रयोगात्मक कार्यों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant.

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के निरीक्षण एवं अनुभव का आधार बनती हैं । प्रत्येक विषय सम्बन्धी कक्षा-शिक्षा को मौखिक एवं प्रयोगात्मक रूप देना जरुरी है । भूगोल, भाषा तथा विज्ञान का मौखिक कार्य यात्रा, पुस्तकालय निरीक्षण तथा प्रकृति अध्ययन आदि सम्बन्धी प्रयोगात्मक कार्यों द्वारा पूर्ण हो सकता है । नागरिक शिक्षा का ज्ञान छात्रों को स्कूल चुनाव से हो सकता है । कक्षा के विज्ञान सम्बन्धी खेलों से ही उनका वैज्ञानिक दृष्टिकोण परिपुष्ट हो सकता है।

5. सामाजिक महत्त्व- इन गतिविधियों के आधार पर सामाजिक जीवन व्यतीत करना छात्र-छात्राओं के लिये प्रयोगात्मक जीवन की अनुपम सीढ़ी है । इन गतिविधियों के द्वारा कई प्रकार की समाज सम्बन्धी बातों का परिचय प्राप्त करते हैं । सामूहिक रूप से जीवनयापन करते हुए वे यथार्थ आधार पर सहकारिता का भाव सीखते हैं । वे अपने आप को बड़े समूह का अंग मानकर उसका अभिन्न भाग बन जाते हैं । समूह के प्रति कर्त्तव्यशीलता की भावना से ओत-प्रोत होकर वे स्कूल एवं राष्ट्र सम्बन्धी कर्त्तव्यों को अपना लेते हैं । स्कूल की इसी अवस्था से उनके मन में राष्ट्रीयता के अंकुर फूट पड़ते हैं । समाज सेवा में लीन होकर वे जीवन यापन की विधि सीख पाते हैं ।

6. रसात्मक अथवा सौन्दर्यात्मक- कीट्स ने कहा था, ''सौन्दर्यपूर्ण वस्तु सदा सुखदाई होती है ।'' छात्र-छात्राओं को सौन्दर्य बोध कराना और उनमें रसात्मक भावों का उन्मेष करा देना शिक्षा का परम उद्देश्य है । सौन्दर्यपूरक वस्तुओं का सौन्दर्य बोध नवीन भावनात्मक विचारों को उत्पन्न करा देता है । इस भावात्मक बोध के बिना छात्र मन्द तथा मूर्ख रहता है । रसात्मक भावात्मक का पाठ पढ़ाया नहीं जा सकता अपितु छात्र उसे स्वयं अपनी शक्ति द्वारा ग्रहण करते हैं । स्कूल को चाहिये कि वह छात्रों को सभी प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध कराये ताकि उनमें रसात्मक अनुभूति हो सके । कविता पाठ, गीत, लोकगीत, लोकनृत्य, अन्ताक्षरी के द्वारा रसात्मक अनुभूति को जागृत किया जा सकता है।

7. सांस्कृतिक महत्त्व- इन गतिविधियों का छात्र-छात्राओं के लिये सांस्कृतिक महत्त्व भी है । इनके माध्यम से सांस्कृतिक परम्पराओं को समझने में सुविधा मिलती है । नाटकीयता, दृश्य विधान लोक संगीत, लोक नृत्य, कवितोच्चारण, प्रदर्शनी, धार्मिक और सामाजिक उत्सवों के मनाने से संस्कृति का विकास होता है । इन्हीं के द्वारा छात्रों में सांस्कृतिक अभिरुचि के संग सांस्कृतिक महत्त्व की भावना भी जाग सकती है ।

8. मनोरंजनात्मक महत्त्व- इन सभी गतिविधियों का मनोरंजन की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्व है क्योंकि इनके द्वारा छात्र-छात्राएं स्कूल जीवन के अन्तर्गत अवकाश के समय का उपयोग करना जानते हैं । आवश्यकता इस बात की है कि छात्रों को यह सिखाया जाये कि बौद्धिक तथा नैतिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित मनोरंजन का आनन्द किस विधि से उठा सकते हैं । संगीत, कविता पाठ, लोकगीत, वाद-विवाद, भाषण प्रतियोगिता छात्र-छात्राओं के लिये स्वस्थ वातावरण प्रस्तुत करते हैं । इन मनोरंजनपूर्ण गतिविधियों का आकस्मिक महत्त्व

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

है क्योंकि जब छात्र-छात्राएं इनमें रुचि लेते हैं तो वे अवश्य ही इनसे प्रभावित होते हैं । इनके द्वारा शिक्षण कार्य भी हल्का लगने लगता है ।

9. अनुशासनात्मक महत्त्व- इन सामूहिक जीवन से सम्बन्धित गतिविधियों के द्वारा सभी छात्र-छात्राएं अनुशासन में रहना सीखते हैं क्योंकि किसी भी गतिविधि की सफलता के लिये अनुशासन का होना बहुत आवश्यक है अन्यथा जो गतिविधि की जा रही है उसमें कदापि भी सफलता नहीं मिल सकती। इसलिये किसी भी प्रकार की गतिविधि को सुचारू रुप से चलाने और उसको सम्पन्न करने के लिये अनुशासन का होना अत्यन्त आवश्यक है । इन गतिविधियों के नियमों का पालन करते हुए सभी छात्र अपने पर नियन्त्रण करना सीखते हैं और वही भविष्य में उनके अनुशासनात्मक जीवन का सुचारु आधार बन जाता है । विद्यालयों में अनुशासनहीनता की समस्याओं को इस रुप में सुलझाया जा सकता है कि छात्रों की उचित अभिव्यक्ति के लिये उचित गतिविधियों का प्रवर्त्तन किया जाये । इस प्रकार वे अपनी फालतू शक्ति को अभिव्यक्त करने में सफल होंगे, अन्यथा यही फालतू शक्ति उन्हें शैतान का रूप दे देगी क्योंकि गतिविधियों से रहित स्कूल सदा शैतान मस्तिष्क को जन्म देता है । माध्यमिक शिक्षा आयोग ने गतिविधियों के प्रबन्ध की सिफारिश करते हुए कहा है :

"इन विविध गतिविधियों से विधिपूर्वक विन्यास से छात्रों को सदा प्रेरणा मिलती ही रहेगी और स्कूल के प्रत्येक छात्र के समय के सदुपयोग का ध्यान रहेगा । इनमें न केवल छात्रों की फालतू शक्ति को अभिव्यक्ति का अवसर उपलब्ध होगा अपितु विशेष गुणों के साथ बौद्धिक विकास भी होगा ।"

राष्ट्रीय शैक्षणिक तथा अनुसंधान परिषद ने हाल ही में Value Oriented School पुस्तिका में प्रजातन्त्र एकता और धर्म निरपेक्षता के मूल्यों पर बल दिया है । संक्षेप में यह कहना उचित रहेगा कि सहगामी गतिविधियों द्वारा बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होकर उसकी अभिरुचि तथा अन्तःप्रेरणाओं के आधार पर उसके सभी गुणों का विकास होता है । इनसे साहित्यिक कार्यों की पूर्ति होती है और बालक स्कूल रुपी समाज में रहकर शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति करता है ।

हिन्दी भाषा शिक्षण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण गतिविधियां

भाषा शिक्षण की दृष्टि से और साहित्यिक अभिरुचि पर आधारित कुछ महत्त्वपूर्ण गतिविधियां हैं जो निम्न हैं :-

1. भाषण

2. वाद-विवाद

3. कविता पाठ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4. अन्ताक्षरी
5. नाटक एवं अभिनय
6. कहानी सुनाना (कहानी कहना)
7. परिचर्चा
8. विद्यालय पत्रिका

इन सभी को साहित्यिक गतिविधियों की संज्ञा दी जाती है ।

1. भाषण - भाषण देना कला है । इसका प्रशिक्षण समाज में रहकर ही सम्भव है । इसलिये इसको सामाजिक कला भी कहते हैं । बिना सामाजिक वातावरण के इस कला को सीखा नहीं जा सकता । भाषणकर्त्ता समाज में रहने वाले श्रोताओं से ही प्रभावित होकर एक अच्छा भाषणकर्त्ता बन सकता है । एक अच्छे भाषण में निम्न गुणों का होना आवश्यक है-

1. भाषण रुचिपूर्ण होना चाहिये ।
2. भाषण कर्त्ता की आवाज जोशीली और स्पष्ट होनी चाहिये ।
3. भाषण की भाषा छात्र-छात्राओं के मानसिक स्तरानुकूल होनी चाहिये ।
4. जिस विषय पर भी भाषण दिया जाये उसका सम्बन्ध वास्तविक जीवन के अनुभवों के साथ जोड़ना चाहिये ।
5. आवाज़ एक जैसी नहीं होनी चाहिये बल्कि इसमें उतार-चढ़ाव होना चाहिये ।
6. भाषण के बीच-बीच में आवश्यकतानुकूल कविता की पंक्तियों का प्रयोग करना चाहिये ।
7. भाषण की तैयारी बहुत अच्छी होनी चाहिये ।
8. भाषणकर्त्ता में विषय को सजीव बनाने की शक्ति होनी चाहिये । भाषण देते समय चित्रात्मक शैली का प्रयोग करना चाहिचे । यह कहने की अपेक्षा कि भूचाल में इतने लोग मारे गये यह कहना चाहिये 'कितनी बहनों की मांगें उजड़ गईं' या 'कितनी बहनों के सिर से सिन्दूर मिट गया' और 'कितनी माताओं की गोद सूनी हो गई' आदि ।
9. भाषण देते समय कोई भी बात विषय से हटकर नहीं करनी चाहिये ।
10. भाषण देते समय दिल और दिमाग दोनों सक्रिय होने चाहिएं ।
11. भाषण में अधूरापन नहीं होना चाहिये ।
12. भाषण में भाषणकर्त्ता को समय-समय पर सम्बोधित अवश्य करना चाहिये ।
13. भाषण में शालीनता होनी चाहिये । किसी भी अश्लील शब्द का प्रयोग नहीं होना चाहिये ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाषण प्रतियोगिता मौखिक अभिव्यक्ति के कौशल के विकास के लिये सर्वश्रेष्ठ साधन है । विद्यालय के शिक्षकों को इस गतिविधि में भाग लेने के लिये अधिक से अधिक छात्र-छात्राओं को प्रेरित करना चाहिये ।

2. वाद-विवाद- वाद-विवाद का मुख्य उद्देश्य यह है कि छात्र-छात्राओं की आत्माभिव्यक्ति का विकास हो । इसके द्वारा छात्र-छात्राओं को वस्तु चयन भावाभिव्यक्ति, पक्ष विपक्ष के लिये विचारों के नियमन एवं जनता के सामने प्रभावपूर्ण रूप में भाषण देने का उचित प्रशिक्षण मिलता है । वाद-विवाद के विषय पर भाषण करते हुए वक्ता को मंच के भय को हटाकर पूरे उत्साह और आत्मविश्वास के साथ अपने आपको अभिव्यक्त करना पड़ता है । वह वक्तव्य में पूरी योग्यता प्राप्त करता है । जो भविष्य में उसके लिये जनता में बोलने अथवा अध्यापन क्षेत्र में अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हो सकती है । वाद-विवाद में भाग लेने पर छात्र-छात्राओं की भाषा ज्ञान की वृद्धि के साथ-साथ नवीन शब्दों को सीखने एवं उच्चारण विधि का अभ्यास होता है ।

वाद-विवाद आयोजन प्रक्रिया

वाद-विवाद किसी विषय के पक्ष-विपक्ष में विचार करने का साधन है । इसका आयोजन शिक्षण संस्थाओं में विद्यालय स्तर से विश्वविद्यालय स्तर पर किया जाता है । इनका उद्देश्य किसी विवादास्पद विषय (मसले) पर व्यक्तियों का ध्यान खींचना होता है । इस प्रतियोगिता में भाग लेने वाले कम से कम दो छात्र एक दल में एक संस्था से होते हैं । एक छात्र विषय के समर्थन में अपने विचार अभिव्यक्त करता है तो दूसरा छात्र अपने विचार विरोध में प्रकट करता है । पहले समर्थन करने वाले छात्र को अवसर दिया जाता है और बाद में विरोधी छात्र को अवसर दिया जाता है । ये दोनों वक्ता भरी सभा में अपना मत रखते हैं, वे आपस में एक दूसरे को सम्बोधन न करके पूरी सभा को सम्बोधित करते हैं और सभा में बैठे श्रोताओं को ही प्रभावित करना होता है ।

इस प्रतियोगिता में एक निर्णायक-मण्डल तथा सभापति भी होता है । पक्ष-विपक्ष के सभी वक्ता सदन को, सदन के सभापति को या निर्णायक-मण्डल को सम्बोधित करते हैं । दोनों वक्ताओं का उद्देश्य पूरे सदन को अपने विचारों से सहमत कराना होता है, इसलिये वे दोनों अपने-अपने पक्ष की बात पर अत्यन्त बल देते हैं । प्रतियोगी को इस प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है-

1. प्रतियोगी को अपने विषय के लिये अपने को सच्चा समर्थक समझना चाहिये ।
2. पक्ष में बोलने वाले वक्ता को सभी बातें एक-एक करके तर्क के आधार पर प्रस्तुत करनी चाहियें । किसी भी पक्ष को अछूता नहीं छोड़ना चाहिये ।
3. विपक्ष में बोलने वाला प्रतियोगी कुछ आक्रामक होना चाहिये । वह प्रायः पक्ष में कहे गये एक-एक तर्क को काटकर अपनी बात कहता है । इसलिये उसे काटने के लिये कैंची जैसी भाषा को प्रयोग करना चाहिये ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4. वाद-विवाद प्रतियोगिता की कुछ अपनी मर्यादाएं होती हैं । इसलिये भूलकर भी किसी प्रतियोगी को उनका उल्लंघन नहीं करना चाहिये । एक दूसरे पर कटाक्ष नहीं करना चाहिये ।
5. वाद-विवाद प्रतियोगी को भाषण-कला के सभी गुणों का उपयोग करना चाहिये ।

3. कविता पाठ- कविता पाठ करना एक बहुत बड़ी कला है । यह कला जन्मजात होती है परन्तु अभ्यास से इसमें सुधार किया जा सकता है । यही कारण है कि कुछ विद्वान इसे भगवान की देन मानते हैं और कुछ इसे अभ्यास की देन मानते हैं । इन दोनों बातों में पूर्ण रूप से सच्चाई झलकती है क्योंकि एक वर्ग ऐसा है जो यह मानता है कि यह गुण जन्मजात अवश्य होता है परन्तु इसमें निखार अभ्यास से ही आता है ।

कविता पाठ की योग्यता का विकास करने हेतु कविता का पाठ करने वालों को रुचिपूर्ण एवं ध्यान से सुनना बहुत आवश्यक होता है । इसलिये विद्यालयों को चाहिये कि छात्र-छात्राओं में कविता पाठ की योग्यता का विकास करने के लिये समय-समय पर विद्यालयों में कवि सम्मेलन करवायें । इससे छात्र-छात्राएं उनको सुनकर प्रभावित होंगे और जिन छात्रों में कविता पाठ की प्रतिभा होगी वे अवश्य ही सुअवसर पाकर अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन अवश्य ही करेंगे ।

कविता पाठ में निपुण होने हेतु कुछ आवश्यक बातें जो निम्न हैं-

1. कविता पाठ करने से पहले उसे स्वयं कविता के सौन्दर्य का अधिक से अधिक आनन्द उठाना चाहिये ।
2. कविता पाठ से पहले कविता का अच्छी तरह से याद होना बहुत आवश्यक है ।
3. कविता पाठ से पहले जहां कहीं आप अटकते हों तो इन शब्दों का बार-बार अभ्यास अवश्य करें ।
4. कविता का पाठ करते हुए आवाज़ में आरोह-अवरोह का पूरी तरह से ध्यान रखना चाहिये ।
5. कविता का पाठ भावानुसार हो ।
6. कविता पाठ करने से पहले यह अवश्य देख लें कि सभी श्रोता आराम से बैठ गये हैं ।
7. कविता के भावपूर्ण स्थलों को आवश्यकतानुसार अवश्य ही दोहरायें ।
8. कविता का पाठ करते समय आपके चेहरे पर कवितानुकूल भाव होने चाहियें ।
9. अगर आप कविता गा रहे हैं तो उसमें स्वर, लय, ताल और संगीतात्मकता का ध्यान अवश्य रखें ।
10. कविता पाठ में तल्लीनता की आवश्यकता होती है । अगर कविता का पाठ मग्नता के साथ करेंगे तो सुनने वाले प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

4. अन्ताक्षरी- भाषा कुशलता की दृष्टि से साहित्यिक सहगामी गतिविधियों में अन्ताक्षरी का विशेष स्थान है । इससे छात्र-छात्राओं का मनोरंजन भी होता है और उनका शब्द ज्ञान भी बढ़ता है । अन्ताक्षरी दो प्रकार की होती है- जैसे

(1) शब्दों की अन्ताक्षरी

(2) कविता की अन्ताक्षरी

शब्दों की अन्ताक्षरी- यह अन्ताक्षरी बहुत सुगम एवं सरल है और छोटे बालकों के लिये बहुत उपयुक्त है । इससे मनोरंजन के साथ-साथ समय का सदुपयोग भी होता है । यह प्रक्रिया इस प्रकार है-

मान लीजिए की एक छात्र ने कहा-राम । इसके अन्त में 'म' अक्षर है । अब दूसरे छात्र को 'म' से शुरू होने वाला कोई शब्द बोलना पड़ता है । जैसे- मान । इसके अन्त में 'न' आया है । 'न' से आरम्भ होने वाला शब्द अन्य छात्र बोलता है 'नाक'।

इसी प्रक्रिया को शब्दों की अन्ताक्षरी कहते हैं । अवकाश के समय शिक्षक छोटे बालकों से यह अन्ताक्षरी खेल खेलने को कह सकता है । इससे बालकों को आनन्द की प्राप्ति भी होगी और उनके शब्द भण्डार में वृद्धि भी होगी ।

(2) कविता सम्बन्धित अन्ताक्षरी- यह अन्ताक्षरी कविता, गीत, दोहे और चौपाई से सम्बन्धित हो सकती है । सबसे पहले यह दोहा बोला जाता है-

समय बिताने के लिये, करना है कुछ काम ।

शुरू करो अन्ताक्षरी, लेकर प्रभु का नाम ।

इस दोहे के अन्त में 'म' आया है । अब अन्य छात्र को कोई ऐसा दोहा, गीत, चौपाई या कविता की पंक्तियां बोलनी हैं जिसके शुरु में 'म' हो ।

मेरे नैना सावन भादों, फिर भी मेरा मन प्यासा ।

अथवा

माटी कहे कुम्हार को, तू क्यों रोंदे मोहि ।

इक दिन ऐसा आयेगा, मैं रोंदूगी तोहि ।।

इस तरह दो विद्यार्थी या उनके दो दल अन्ताक्षरी प्रतियोगिता कर सकते हैं । इस गतिविधि से छात्र-छात्राओं को बहुत आनन्द मिलता है और साथ ही साथ उन्हें बहुत सी कविता कंठस्थ हो जाती है ।

5. नाटकीयता (अभिनय)

(I) महत्त्व- नाटकीयता के अनेक गुण हैं । एक मनोवैज्ञानिक का कथन है कि अनुकरण की भावना प्रधान होने के कारण नाटक के द्वारा अन्तर्भावना को अभिव्यक्त करने का अवसर मिलता है । नाटकीयता में दोनों का समावेश है । विभिन्न प्रकार के अभिनय करके छात्र अपनी मनोभावनाओं को स्पष्ट करके आत्माभिव्यक्ति द्वारा आनन्द प्राप्त करता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है । स्वास्थ्य के आधार पर भी नाटक का विवेचन होता है । इसके द्वारा हृदय में निवास करने वाली भावनाओं की अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है जिससे मन हल्का होता है । साहित्यिक रूप में नाटकीयता द्वारा बोलने, उच्चारण शब्द के आरोह-अवरोह तथा अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान होता है । नाटक में भाग लेने वाले छात्र को साथ ही साथ कई विषयों जैसे गणित, कला, अभिनय, आहार्य अर्थात् पोशाक साज सज्जा आदि का भी ज्ञान होता है । वह नाटकीयता के गुणों को आत्मसात करता है । नाटक का उद्देश्य ही उसे जीवन के विविध अनुभवों से परिचित करा देता है । नाटक देखने वाले दर्शकों को भी पर्याप्त, आनन्द मिलता है । उनका केवल मनोरंजन ही नहीं होता अपितु इन्हें इतिहास, भूगोल, सामाजिक आचरण एवं जीवन के अन्य अनुभवों का भी उस समय भी ज्ञान होता है, जब वे नाटकों में छात्रों का अभिनय देखते हैं ।

(II) नाटकीयता में विविधता- नाटकीयता के विविध रूप देखने को मिलते हैं । किसी समय छात्र किसी प्रसिद्ध नाटककार के नाटक को रंगमंच पर अभिनीत करते हैं तो ऐसा पूर्ण नाटक अभिनीत करने पर पर्याप्त खर्च होता है, अतः एकांकी नाटक का अभिनय उपयुक्त रहता है । नाट्य रुपक में अभिनय एवं संगीत द्वारा लक्ष्य प्रदर्शित होता है । यह मूल नाटक का रूप जिसमें बालक अभिनय के बिना ही सब कुछ आंगिक अभिनय द्वारा दिखाया जाता है । एक ही पात्र का विविध रूपों में अभिनय करना अत्यन्त कठिन है । यह एक प्रकार का एक पात्री नाटक होता है । इसलिये इसे एकल अभिनय कहते हैं ।

(III) नाटकीयता की तैयारी- नाटकीयता की तैयारी बहुत कठिन कार्य है । इसके लिये योग्य शिक्षकों की आवश्यकता होती है । सर्वप्रथम कार्य नाटक का चयन करना होता है । नाटक में केवल मनोरंजनात्मक पक्ष ही नहीं होना चाहिये बल्कि साहित्यिक पक्ष भी होना चाहिये । विद्यालय में खेले जाने वाले नाटकों का विषय ऐतिहासिक, भौगोलिक एवं देशभक्ति हो सकता है । इसका दूसरा सोपान नाटकी उपकल्पना है जिसका पूर्ण रूप से नाटक की तैयारी से सम्बन्ध है। इसके लिये निर्देशक शिक्षक को चाहिये कि वह विभिन्न छात्रों का चयन कर उन्हें अपना-अपना संवाद स्मरण करने के लिये दे । पात्रों द्वारा उसे स्मरण करने के बाद वह उसे सुनकर उनका उच्चारण, आरोह-अवरोह तथा टोन एवं क्रिया आदि में संशोधन करें । संगीत से सम्बन्धित बातों की तरफ विशेष रूप से ध्यान दिया जाये ।

तीसरा सोपान होता है रंगमंच सम्बन्धी निर्देशन । इसके लिये बिजली का प्रबन्ध, बैठने के स्थान, अभिनय सम्बन्धी सामग्री, लाऊड स्पीकर, रंगमंचीय दृश्य तथा पर्दों का उचित चयन आदि ।

चौथा सोपान जो अत्यन्त आवश्यक है, वो है रिहर्सल जिसका अभ्यास बार-बार किया जाये । नाटक की सफलता बार-बार रिहर्सल पर ही निर्भर करती है । नाटक के लिये छात्रों को प्रोत्साहित करना चाहिये ।

6. कहानी कहना- कहानी कहना भी कविता पाठ करने की तरह एक कला है जिसे छात्र-छात्रायें अभ्यास करने से ही सीखते हैं । शिक्षक को यह कला भी छात्र-छात्राओं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को सिखाने के लिये उनको सुअवसर प्रदान करने चाहियें । शिक्षक को कहानी कहने की कला के सभी गुणों का स्पष्टीकरण होना आवश्यक है अन्यथा वह अपने छात्र-छात्राओं को कहानी कहने की कला में प्रशिक्षित नहीं कर सकेगा । एक अच्छी कहानी में निम्न गुण होते हैं जो छात्र-छात्राएं अपने शिक्षक से सीखते हैं-

(1) कहानी में प्रारम्भ से अन्त तक एक जैसा प्रवाह होना चाहिये अर्थात् कहानी सुनने वाले की उत्सुकता और जिज्ञासा में किसी प्रकार की कमी नहीं आनी चाहिये । इसीलिये कहानी की तुलना 100 गज़ की दौड़ से की गई है क्योंकि 100 गज़ की दौड़ में भागने वाले की गति प्रारम्भ से अन्त तक एक जैसी रहती है ।

(2) कहानी सुनाने वाले की कहानी पूर्ण रूप से स्पष्ट होनी चाहिये ।

(3) कहानी में क्रम बद्धता का होना भी आवश्यक है ।

(4) कहानी के पात्रों के नाम और घटना स्थान के बारे में भी पूर्ण ज्ञान होना चाहिये।

(5) कहानी की भाषा सुनने वालों के स्तर के अनुकूल होनी चाहिये ।

(6) कहानी कहने वाले को सुनने वालों की उत्सुकता और जिज्ञासा को बनाये रखना चाहिये ।

(7) कहानी कहने के लिये उचित आवाज़ होनी चाहिये ताकि सभी सरलता से सुन सकें ।

(8) कहानी को रुचिकर बनाये रखने के लिये स्वर में आरोह-अवरोह होना चाहिये।

(9) कहानी शिक्षा प्रद के साथ-साथ मनोरंजनात्मक भी होनी चाहिये ।

(10) कहानी किसी निष्कर्ष पर अवश्य पहुंचनी चाहिये अर्थात् कहानी का सन्देश स्पष्ट होना चाहिये ।

7. परिचर्चा – विद्यालय स्तर पर उच्च कक्षाओं में छात्र-छात्राओं को परिचर्चा का प्रशिक्षण देना चाहिये क्योंकि इसके द्वारा छात्र-छात्राओं को स्वतन्त्र रूप से अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का अवसर मिलता है और दूसरों द्वारा प्रकट किये गये विचारों को ग्रहण करने की योग्यता का विकास होता है । हिन्दी शिक्षण की दृष्टि से अभिव्यक्ति और ग्रहण शक्ति-दोनों का विकास होता है ।

परिचर्चा एक तरह से समूह में की गई बातचीत या वार्तालाप होता है । इसमें कम से कम दो या अधिक व्यक्ति हो सकते हैं । परिचर्चा का उद्देश्य किसी विषय या समस्या विशेष का पूरी तरह से खोलना, समझना और उसके सभी पक्षों की सूक्ष्म जानकारी प्राप्त करना है । परिचर्चा में भाग लेने वाले सभी सदस्य विषय से सम्बन्धित पक्षों पर प्रकाश डालते हैं । यह आवश्यक नहीं होता कि सभी सदस्य एक मत होकर अपने विचार प्रकट

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करें। वे एक दूसरे के विचारों का विरोध भी कर सकते हैं लेकिन यह सब कुछ मर्यादापूर्ण ढंग से होता है । परिचर्चा में सभी सदस्यों का योगदान रहता है ।

परिचर्चा सुनियोजित ढंग से की जाती है । परिचर्चा का एक ढंग यह होता है कि पहले कोई सदस्य किसी निर्धारित विषय पर अपने विचार प्रकट करता है । कई बार बाहर से किसी विशेषज्ञ को आमन्त्रित किया जाता है । वह निर्धारित विषय से सम्बन्धित अपने विचार प्रकट करता है । उसके बाद अन्य सदस्य उन्हीं से प्रश्न करके चर्चा को आगे बढ़ाते हैं । यह चर्चा अधिक सार्थक, सफल और अधिक उपयोगी होती है । यह सब कुछ अनुशासित ढंग से हो जाता है । इसमें एक समय में एक ही सदस्य अपनी बात प्रस्तुत करता है । उसके प्रश्न या उसके द्वारा रखी गई बात का तुरन्त उत्तर दिया जाता है । इस प्रकार प्रश्न में से प्रश्न निकलते रहते हैं और समस्या का समाधान भी ढूंढ लिया जाता है । इसमें यह आवश्यक नहीं होता कि प्रत्येक प्रश्न का उत्तर मुख्य वक्ता दे बल्कि कोई भी सदस्य उत्तर दे सकता है ।

परिचर्चा का एक दूसरा तरीका यह होता है कि जिस परिचर्चा में कोई मुख्य वक्ता नहीं होता, वहां कोई न कोई सभापति या अध्यक्ष होता है । अगर ऐसा नहीं होता तो परिचर्चा दिशाहीन हो जायेगी और परिचर्चा के उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो सकेगी । सभी सदस्य जब सभापति या अध्यक्ष को सम्बोधित करके अपने विचार प्रकट करते हैं तो अनुशासन बना रहता है । यह आवश्यक नहीं कि परिचर्चा पूर्ण रूप से किसी निष्कर्ष पर पहुंचे लेकिन समस्या विशेष के सभी पहलू विस्तार से स्पष्ट हो जाते हैं । अन्त में संचालक कुछ सर्वमान्य निष्कर्ष बताकर और सदस्यों के मत दोहराकर परिचर्चा का अन्त कर देता है अर्थात् समापन कर देता है ।

सफल परिचर्चा के लिये निम्न गुणों का होना आवश्यक है-

1. परिचर्चा प्रक्रिया में सभी सदस्यों को सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिये ।
2. सदस्य को अपनी बात कहने के बाद अन्य सदस्य की बात को ध्यान से सुनना चाहिये ।
3. बातचीत या वार्तालाप करते हुए किसी प्रकार का क्रोध, भय, हीनता की भावना नहीं होनी चाहिये ।
4. परिचर्चा में व्यक्ति का विरोध नहीं होता बल्कि विचारों का विरोध होता है या विचारों से असहमति होती है ।
5. सदस्यों को अपना मत नम्रता से प्रस्तुत करना चाहिये और दूसरों के मत में अगर कोई बात अच्छी लगती है तो उससे सहमति प्रकट करें ।
6. परिचर्चा में विषय से हटकर कोई बात नहीं करनी चाहिये अन्यथा परिचर्चा का उद्देश्य विफल हो जायेगा ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

7. परिचर्चा में अगर कोई सदस्य सक्रिय दिखाई नहीं देता तो उसे भी बोलने के लिये प्रेरित करना चाहिये ।
8. परिचर्चा में शिष्ठाचार, संयम, सहनशीलता जैसे गुण बने रहने चाहियें ।
9. परिचर्चा में किसी के द्वारा कही हुई प्रशंसनीय बात की सराहना होनी चाहिये ।
10. चलती बातचीत में कोई सदस्य अपनी बात को रखना चाहता है तो उसे बड़ी नम्रता से कहना चाहिये कि, ''इस बात से सम्बन्धित मेरी राय यह है ।''

8. विद्यालय पत्रिका और सम्पादन : विद्यालय पत्रिका छात्र-छात्राओं की अभिव्यक्ति का उत्तम साधन है । इसके द्वारा उनमें रचनात्मक तथा मौलिक ज्ञान की वृद्धि होती है । पत्रिका में छपे अपने नाम को देखकर छात्र-छात्राएं अत्यन्त प्रसन्न होते हैं । उनमें लेखन की कला का विकास होता है । वे अपने उत्तरदायित्व को समझने लगते हैं । इस गतिविधि से विद्यालय को कई प्रकार के लाभ होते हैं । विद्यालय के समाचार छपने के समय यह संस्था तथा अभिभावकों के बीच एक सूत्र बद्धता का प्रतीक बन जाती है । इससे छात्रों में एक प्रकार की जागृति उत्पन्न होती है । सबसे बड़ी उपयोगिता इसकी यही है कि छात्र-छात्राओं को आत्माभिव्यक्ति का सुअवसर मिलता है । उनमें रचनात्मक योग्यता का विकास होता है ।

अभ्यास के प्रश्न

1. पाठ्य-सहगामी गतिविधियों में भाग लेने के लिये किस प्रकार प्रोत्साहित किया जा सकता है ?
2. ''पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के बिना कोई भी शिक्षा-पद्धति पूर्ण नहीं हो सकती।'' विवेचना कीजिए ।
3. सहगामी क्रियाओं का वर्गीकरण करते हुए लिखो कि उनका क्या प्रयोजन है ?
4. भाषा-शिक्षण की दृष्टि से कौन-कौन सी सहगामी क्रियाएं उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं ? विस्तार से स्पष्ट कीजिए ।
5. किन-किन सहगामी क्रियाओं द्वारा छात्र-छात्राओं की अनुकरण की प्रवृत्ति का लाभ उठाया जा सकता है ?
6. निम्नलिखित सहगामी गतिविधियों पर टिप्पणी लिखें ।

   (I) भाषण प्रतियोगिता

   (II) कविता पाठ

   (III) नाटकीयता (अभिनय)

   (IV) कहानी कहना ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

UNIT V

(1) हिन्दी की मानक ध्वनियां, हिन्दी के स्वर व व्यंजनों का सही उच्चारण
(Sounds of Hindi Vowels, Consonants Correct Pronounciation in Hindi)

(2) संज्ञा व विशेषण की परिभाषा के प्रकार
(Definition and Kinds of Nouns and Adjectives)

(3) कबीर व तुलसी का जीवनवृत व उनका योगदान
(A detailed description of the Life and Works Contribution of Kabir and Tulsi)

(4) निम्न का अध्ययन (Study of the following)

I. कबीर के दोहे (7वीं व 9वीं कक्षा की पाठ्य पुस्तक)
Kabir's Dohe (7th and 9th Grade Text)

II. महादेवी की कविता मुरझाया फूल (7वीं कक्षा की पुस्तक)
Mahadevi's Murjahaya Phool (7th Grade Book)

III. गिल्लू (कहानी) 8वीं कक्षा की पाठ्य पुस्तक
Gilloo (Story) (8th Grade Text Book)

IV. नीलकंठ (10वीं कक्षा की पाठ्य पुस्तक)
Nilkanth (10th Grade Text Book)

पाठ-योजना (Lesson Planning)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1

हिन्दी ध्वनियाँ- स्वर और व्यंजन
(Standard Sounds of Hindi—Vowels, Consonants)

ध्वनि क्या है- मनुष्य ने अपने भाव विचार एवं अनुभवों के आदान-प्रदान के लिए जिस माध्यम को स्वीकार किया है उसे ही भाषा कहते हैं । भाषा की सबसे छोटी इकाई ध्वनि है । हमारे मुख के अवयवों से घर्षण करती हुई जो प्राणवायु बाहर निकलती है वही ध्वनि या आवाज है । ध्वनियों की पहचान के लिये कुछ चिन्हों-विशेष का प्रयोग किया जाता है, ये विशेष चिन्ह ही अक्षर कहलाते हैं । अक्षर अर्थात् अ +क्षर, जो कभी नष्ट न हुआ हो वह अक्षर है । अक्षर को ही वर्ण भी कहते हैं । वर्ण अर्थात् रंग रूप आदि । हिन्दी भाषा में प्रत्येक मूल ध्वनि के लिए अलग अलग अक्षर या वर्ण का प्रयोग होता है ।

हिन्दी भाषा की प्रचलित ध्वनियां- वर्णों के योग से शब्द बनते हैं और शब्दों के योग से वाक्य तथा वाक्यों के योग से एक नई रचना जन्म लेती है । इस प्रकार ध्वनियां भाषा को भौतिक आधार प्रदान करती हैं । कुछ ध्वनियाँ मुख के किसी अवयव से टकराए बिना फेफड़े से निकल कर कंठ या नासिका से सीधी बाहर निकलती हैं वे 'स्वर' कहलाती हैं और जो ध्वनियां मुख के अवयवों से टकराकर निकलती हैं उन्हें व्यंजन कहते हैं । इस प्रकार हिन्दी भाषा की समस्त ध्वनियों को दो वर्गों में विभाजित किया जाता है - स्वर और व्यंजन ।

स्वर- जब वर्णों का उच्चारण करते समय प्राणवायु मुख से बिना किसी रूकावट के बाहर निकलती है और उससे जो ध्वनि उत्पन्न होती हैं उन्हें स्वर कहते हैं । स्वरों का उच्चारण करते समय किसी अक्षर की सहायता नहीं लेनी पड़ती । हिन्दी में स्वर ग्यारह होते हैं- अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, ऋ । यदि आगत वर्ण ऑ को भी इनमें शामिल कर लिया जाए तो इनकी संख्या 12 हो जाती है ।

स्वरों के भेद- हिन्दी के स्वरों को निम्नलिखित पांच आधारों पर बांटा गया है-

(क) जीभ का कौन सा भाग उच्चारण में भाग लेता है ?

(ख) मुंह किस मात्रा में खुलता बन्द होता है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

(ग) ओठों की आकृति या स्थिति

(घ) उच्चारण में लगने वाला समय

(ङ) उच्चारण स्थान

(क) जिह्वा का कौन सा भाग उच्चारण में भाग लेता है?

1. अग्र स्वर- कुछ स्वरों के उच्चारण में जीभ का अगला भाग ऊपर नीचे उठता है, ऐसे स्वर 'अग्र स्वर' कहे जाते हैं जैसे- 'इ, ई, ए, ऐ' ये चारों अग्र स्वर हैं ।

2. मध्य स्वर- जिन स्वरों के उच्चारण में जीभ का मध्य भाग थोड़ा सा ऊपर उठता है उन्हें मध्य स्वर कहते हैं । जैसे- 'अ' ।

3. पश्च सवर- जिन स्वरों के उच्चारण में जीभ का पिछला भाग उठता है, उन्हें पश्च स्वर कहते हैं जैसे- उ, ऊ, आ, ओ, औ के उच्चारण में पिछला भाग ऊपर उठता है । अत: ये पश्च स्वर हैं ।

(ख) मुंह किस मात्रा में खुलता बंद होता है ? विभिन्न स्वरों के उच्चारण में मुंह समान मात्रा में खुलता या बंद नहीं होता । किसी में कम खुलता है किसी में अधिक और किसी में बहुत अधिक। इस आधार पर स्वर को चार वर्गों में बांटा जाता है -

1. संवृत- जिन स्वरों के उच्चारण में मुंह कम खुलता है, उन्हें संवृत कहते हैं । जैसे- ई, ऊ ।

2. अद्र्ध संवृत- जिन स्वरों के उच्चारण में मुंह संवृत स्वरों से कुछ अधिक खुलता है । जैसे- ए, ओ ।

3. विवृत- जिन स्वरों के उच्चारण में मुख बहुत अधिक खुलता है । जैसे- आ, ए, औ ।

4. अद्र्ध विवृत- जिन स्वरों के उच्चारण में विवृत से थोड़ा कम और अद्र्ध संवृत से मुंह थोड़ा अधिक खुले उन्हें अद्र्ध विवृत स्वर कहते हैं । जैसे- ऍं , ऑ ।

(ग) ओठों की आकृति के आधार पर

1. वृत्ताकार- जिन स्वरों के उच्चारण में होठों का आकार गोल हो जाता है, उन्हें वृत्ताकार स्वर कहते हैं । जैसे- उ, ऊ, औ, ऑ ।

2. अवृत्ताकार- जिन स्वरों के उच्चारण में होठों का आकार गोल न होकर फैला सा रहे, उन्हें अवृत्ताकार स्वर कहते हैं । जैसे- अ, आ, इ, ई, ए, ऐ ।

(घ) उच्चारण में लगने वाले समय के आधार पर- सभी स्वरों के उच्चारण में एक सा समय नहीं लगता । कुछ में कम समय लगता है कुछ में अधिक । इसे तीन भागों में बांटा जाता है-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(i) ह्रस्व स्वर- जिन स्वरों के उच्चारण में एक मात्रा का समय अर्थात् सबसे कम समय उन्हें ह्रस्व स्वर कहते हैं । हिन्दी में ह्रस्व स्वर चार हैं- अ, इ, उ, ऋ ।

(ii) दीर्घ स्वर- जिन स्वरों के उच्चारण में ह्रस्व स्वर से दुगना समय लगे, उन्हें दीर्घ स्वर कहते हैं । ये स्वर हैं- आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ और ऑ ।

(iii) प्लुत स्वर- जिनके उच्चारण में ह्रस्व स्वर से तिगुना समय लगता है, उन्हें प्लुत स्वर कहते हैं । इनका प्रयोग सम्बोधन शब्दों में होता है । जैसे- हे राम । ओउम् । इनके लिखने में स्वर के आगे 3 का अंक लगा देते हैं ।

(ङ) उच्चारण स्थान के आधार पर- दो भेद हैं-

(i) अनुनासिक- जिनके उच्चारण में ध्वनि मुख के साथ-साथ नासिका द्वार से भी निकले । जैसे अँ, आँ, इँ,आदि । इन्हें चन्द्र बिन्दु भी कहते हैं ।

(ii) निरनुनासिक- जिनकी ध्वनि केवल मुख से निकले । जैसे- अ, आ, इ, ई ।

अनुनासिक और अनुस्वार में अन्तर

(क) अनुनासिक स्वर- 'स्वर' है जबकि अनुस्वार व्यंजन है ।

(ख) अनुनासिक ऐसी ध्वनि है जिसे स्वर से अलग नहीं किया जा सकता जबकि अनुस्वार ध्वनि की अलग स्वतन्त्र सत्ता है, जैसे अंगूर में अ स्वर का उच्चारण पहले हो रहा है और बाद में (ं)अनुस्वार ध्वनि सुनाई पड़ती है ।

(ग) अनुस्वार का शाब्दिक अर्थ- जो स्वर के पीछे आए उन्हें अनुस्वार कहा जाता है ।

व्यंजन- जब प्राणवायु कंठ एवं मुख के अवयवों से टकराती हुई बाहर निकलती है तो ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं, उन्हें व्यंजन कहते हैं । व्यंजनों का उच्चारण स्वरों की सहायता से होता है । हिन्दी भाषा में व्यंजनों की संख्या 33 है । ये व्यंजन तीन प्रकार के होते हैं-

व्यंजनों का वर्गीकरण

(i) स्पर्श- जिन व्यंजनों के उच्चारण में जिह्वा मुख के किसी भाग का स्पर्श करके वायु को पहले थोड़ा रोकती है फिर आगे निकलने देती है उन्हें स्पर्श व्यंजन कहते हैं । ये 25 होते हैं, इन्हें पांच वर्गों में बांटा जाता है-

क वर्ग - क, ख, ग, घ, ङ ।

च वर्ग - च, छ, ज, झ, ञ ।

ट वर्ग - ट, ठ, ड, ढ, ण ।

त वर्ग - त, थ, द, ध, न ।

प वर्ग - प, फ, ब, भ म ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(ii) अन्तःस्थ- जिन व्यंजनों के उच्चारण में जिह्वा मुख के किसी भाग का पूरी तरह स्पर्श नहीं कर पाती, और वायु बिना रगड़ खाए हुए मुख से बाहर निकलती है, उन्हें अन्तःस्थ व्यंजन कहते हैं । ये संख्या में चार हैं- य, र, ल, व ।

(iii) उष्म- इन वर्णों के उच्चारण में वायु मुख से रगड़ खाती हुई धीरे-धीरे बाहर निकलती है, उन्हें ऊष्म व्यंजन कहते हैं । ये संख्या में चार हैं- स, श, ष, ह ।

ऊपर के सभी व्यंजनों को स्थान और प्रयत्न के आधार पर भी बाँटा गया है । स्थान का संबंध, उच्चारण स्थान से है । इसमें मुख के ऊपरी जबड़े के वे स्थान आते हैं, जहां जीभ या निचला होंठ वायु के मार्ग को रोकते हैं । ये हैं- ओ, ऊपरी दाँत, दांतों के पीछे का कठोर हिस्सा (वर्त्स), तालु, मूर्धा, कोमल तालु आदि ।

प्रयत्न का तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसके कारण उच्चारण के अंग वायु के मार्ग में रुकावट पैदा करते हैं । जैसे- कहीं तो ये उच्चारण स्थान के बहुत पास पहुँच जाते हैं, जिसके कारण हवा रगड़ती हुई निकलती है, कहीं ये केवल स्पर्श करते हैं ।

उच्चारण स्थान के आधार पर व्यंजनों का वर्गीकरण

व्यंजनों का उच्चारण करते समय साँस ही हवा मुख के किसी न किसी भाग से टकराती है । यह जिस भाग से टकराती है, उसे उच्चारण स्थान कहा जाता है । उच्चारण के इन्हीं अंगों अवयवों के आधार पर व्यंजनों का वर्गीकरण किया गया है-

(क) गले से- (कंठ्य)- क, ख, ग, घ, ङ ।

(ख) कठोर तालु से- (तालव्य)- च्, छ्, ज्, झ्, ञ्, य्, थ् ।

(ग) कठोर तालु के मूर्धा भाग से- (मूर्धन्य)- ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्, ष्, ऱ्, ड़्, ढ़्, श्र् ।

(घ) दाँतों के निकट से - (दन्त्य)- त्, थ्, द्, ध्, न्, त्र् ।

(ङ) दातों के मूल से- (वर्त्सय)- स्, ज़्, ऱ्, ल् ।

(च) दोनों ओठों से- (ओष्ठ्म)- प्, फ्, ब्, भ्, म् ।

(छ) निचले होठ तथा ऊपरी दांतों से- (दन्तौष्ठ्य)- व्, फ़् ।

(ज) स्वर यंत्र से- है ।

प्रयत्न के आधार पर व्यंजन का वर्गीकरण

(क) स्पर्शी व्यंजन- जिन व्यंजनों का उच्चारण करते समय उच्चारण करने वाले अवयव ऊपर उठकर उच्चारण स्थान को छूते हैं और हवा का मार्ग रोकते हैं, उन्हें स्पर्शी व्यंजन कहते हैं । जैसे- क्, ख्, ग्, घ्, ट्, ठ्, ड्, ढ्, त्, थ्, द्, ध्, प्, फ्, ब्, भ् ।

(ख) संघर्षी व्यंजन- जिन व्यंजनों के उच्चारण में उच्चारण करने वाले अवयव उच्चारण स्थान के इतने पास पहुंच जाते हैं कि हवा को रगड़ खाते हुए बाहर निकलना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE 2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पड़ता है, उन्हें संघर्षी व्यंजन कहते हैं । स, ष, श, ह संघर्षी व्यंजन हैं । आगत ध्वनियां ख़, ग़, ज़ और फ़ भी संघर्षी व्यंजन हैं ।

(ग) स्पर्श संघर्षी- कुछ व्यंजनों के उच्चारण में जीभ पहले तो उच्चारण स्थान को छू लेती है, फिर वहां से हटकर उसके इतना पास पहुँच जाती है कि हवा को रगड़ खाते हुए बाहर निकलना पड़ता है । ऐसे व्यंजन स्पर्श-संघर्षी कहलाते हैं । हिन्दी में च्, छ्, ज्, झ्, स्पर्श संघर्षी व्यंजन हैं ।

(घ) अन्तःस्थ- जिन व्यंजनों के उच्चारण में वायु की रुकावट कम मात्रा में होती है, उन्हें अन्तःस्थ व्यंजन कहते हैं । य्, र्, ल्, व्, अन्तःस्थ व्यंजन हैं ।

(ङ) उत्क्षिपत- उत्क्षिप्त का अर्थ है- फेंका हुआ । जिन व्यंजनों के उच्चारण में जीभ का आगे का भाग मूर्धा को स्पर्श करके झटके से वापस आता है, उन्हें उत्क्षिप्त व्यंजन कहा जाता है । हिन्दी में ट्, ठ्, ड्, ढ् उत्क्षिप्त व्यंजन हैं ।

(च) अयोगवाह- अनुस्वार (ं) विसर्ग (:) को अं, अः के रूप में वर्णमाला के स्वरों के साथ दिखाया जाता है परन्तु ये स्वर नहीं हैं । इन्हें अयोगवाह कहते हैं । इनका उच्चारण करते समय इनसे पूर्व एक स्वर अवश्य आ जाता है ।

(छ) पार्श्विक- जिन वर्णों के उच्चारण में मुख द्वारा बीच से बन्द होता है और वायु दोनों ओर से निकल जाती है, उन्हें पार्श्विक ध्वनि कहते हैं । 'ल' पार्श्विक व्यंजन है ।

स्वर तंत्रियों में होने वाले कम्पन के आधार पर व्यंजनों का वर्गीकरण

हमारे गले में एक 'स्वर यंत्र' होता है जिसमें मासपेशियों की दो झिल्लियां होती हैं । इन्हीं को 'स्वर तंत्री' कहा जाता है । उच्चारण करते समय इनमें कम्पन पैदा होता है । इस आधार पर व्यंजन के दो भेद होते हैं-

(क) अघोष- जिनके उच्चारण में स्वर तंत्रियों में कम्पन नहीं होता । क्, ख्, च्, छ्, ट्, ठ्, त्, थ्, प्, फ्, श्, ष्, स् अघोष व्यंजन हैं ।

(ख) घोष- जिनके उच्चारण में स्वर तंत्रियों में कंपन होता है । ग्, घ्, ङ्, ज्, झ्, ञ्, ड्, ढ्, ण्, द्, ध्, न्, ब्, भ्, म्, य्, र्, ल्, व्, ह् सघोष व्यंजन हैं । हिन्दी के स्वर भी सघोष ध्वनियां हैं ।

श्वास की मात्रा के आधार पर व्यंजनों का वर्गीकरण

सभी व्यंजनों के उच्चारण में सांस की मात्रा एक सी नहीं होती । किसी में यह कम होती है, तो किसी में अधिक । इस आधार पर व्यंजनों को दो भागों में बांटा गया है-

(क) अल्पप्राण- जिन व्यंजनों के उच्चारण में वायु की मात्रा कम होती, उन्हें अल्पप्राण व्यंजन कहते हैं । हिन्दी में क, ग, ङ, च, ज, ञ, ट, ड, ण, त, द, न, प, ब, म, य, र, ल, व् अल्पप्राण व्यंजन हैं ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(ख) महाप्राण- जिन व्यंजनों के उच्चारण में वायु की मात्रा अधिक लगती है, उन्हें महाप्राण व्यंजन कहा जाता है । हिन्दी के महाप्राण व्यंजन हैं- ख्, घ्, छ्, झ्, ठ्, ढ्, थ्, ध्, फ्, भ् ।

संयुक्त व्यंजन- जब दो या दो से अधिक व्यंजनों का संयोग होता है तो उन्हें संयुक्त व्यंजन कहा जाता है । क्ष, त्र, ज्ञ, श्र हिन्दी के संयुक्त व्यंजन हैं-

क्ष = क + ष, त्र = त + र, ज्ञ = ज + ञ, श्र = श + र ।

अभ्यास के प्रश्न

1. हिन्दी भाषा की ध्वनियों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।
2. हिन्दी भाषा की प्रचलित ध्वनियाँ कौन-कौन सी हैं ? ध्वनियों के वर्गीकरण के कौन-कौन से आधार हैं ?
3. अल्पप्राण तथा महाप्राण ध्वनियों का अन्तर स्पष्ट कीजिए ।
4. हिन्दी ध्वनियों के स्वर और व्यंजन में अन्तर स्पष्ट कीजिए ।
5. स्वरों का वर्गीकरण किन आधारों पर किया गया है ? विस्तार से लिखिए ।
6. उच्चारण स्थान एवं प्रयत्न के आधार पर व्यंजनों का वर्गीकरण कीजिए ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2

संज्ञा की परिभाषा और इसके प्रकार
(Definition of Nouns and Its Kinds)

संज्ञा क्या है ?

विश्व में हम अनेक प्रकार के जड़ और चेतन पदार्थों को देखते हैं । इन पदार्थों के अपने स्वरूप और धर्म होते हैं । जैसे मनुष्य में विवेक उसका धर्म है तथा पानी में शीतलता उसका धर्म है । इन जड़ और चेतन पदार्थों और इनके धर्म को एक विशेष नाम दिया जाता है । यह नाम विशेष ही संज्ञा है ।

परिभाषा- किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान, अवस्था, गुण या धर्म और भाव के नाम को संज्ञा कहते हैं । जैसे- मोहन, शेर, पुरुष प्राणी हैं । कपड़ा, सोना, दूध, रामायण आदि वस्तुएँ हैं । बम्बई, कलकता, हिमालय, स्थान के नाम हैं । सौन्दर्य, वीरता, क्रोध, बुढ़ापा, अच्छाई, शत्रुता आदि भाव हैं ।

संज्ञा के भेद (Kinds of Noun)- संज्ञाएं तीन प्रकार की होती हैं:-

(1) जातिवाचक संज्ञा

(2) व्यक्तिवाचक संज्ञा

(3) भाव वाचक संज्ञा

आजकल कुछ विद्वान संज्ञा के समुदाय वाचक तथा द्रव्यवाचक दो अन्य भेद भी मानते हैं, लेकिन ये दोनों भेद जातिवाचक संज्ञा में ही आ जाते हैं । विद्यार्थियों की सुविधा के लिए इन्हें अलग दिया जा रहा है ।

(1) जातिवाचक संज्ञा- जिस शब्द से किसी जाति का बोध होता है उसे जातिवाचक संज्ञा कहते हैं । जैसे- नगर, ग्राम, गाय, हाथी, मित्र, नारी, पशु, पेड़, पक्षी आदि ।

विशेष :- कभी-कभी जातिवाचक संज्ञा व्यक्तिवाचक संज्ञा के रूप में प्रयोग होती है । जैसे :- **गांधी जी** को भारत के राष्ट्रपिता कहते हैं ।

पटेल लौह पुरुष थे ।

CC-0.Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

नेहरू भारत के प्रधान-मन्त्री थे ।

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इन उदाहरणों में गाँधी जी मोहनदास करमचन्द का, पटेल बल्लभभाई पटेल का, और नेहरू- जवाहरलाल व्यक्ति शिष का बोध कराते हैं, सम्पूर्ण जाति का नहीं । अतः इन वाक्यों में ये शब्द जातिवाचक संज्ञा न होकर व्यक्तिवाचक संज्ञा है ।

जातिवाचक संज्ञाएँ एकवचन और बहुवचन दोनों रूपों में प्रयोग की जाती हैं । जैसे :- नगर-नगरों, पशु-पशुओं, नारी-नारियों आदि ।

(2) व्यक्तिवाचक संज्ञा- जिस शब्द से किसी विशेष व्यक्ति, स्थान या पदार्थ का बोध होता है उसे व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते हैं । जैसे- श्याम, सीता, नरेश (व्यक्ति का नाम), पटना, कलकता (स्थान का नाम), गंगा, यमुना (नदी का नाम), हिमालय, विन्ध्याचल (पर्वत का नाम), रामचरितमानस, गोदान (पुस्तक विशेष का नाम) आदि व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ हैं ।

विशेष- (क) व्यक्तिवाचक संज्ञा जातिवाचक संज्ञा के रूप में :

आज भी हमारे देश में **हरिश्चन्द्र** और **कर्ण** विद्यमान हैं ।

आज तो घर घर में **विभीषण** हैं । **जयचन्दों** के कारण भारत सदियों तक गुलामी की ज़ंजीरों में जकड़ा रहा ।

इन वाक्यों में हरिश्चन्द्र और कर्ण सारे दानी व्यक्तियों का, विभीषण घर में फूट डालने वाले व्यक्तियों का, जयचन्द देश द्रोहियों का बोध करवाते हैं । इसलिए यहाँ ये शब्द व्यक्तिवाचक संज्ञा न होकर जातिवाचक संज्ञा हैं ।

(ख) व्यक्तिवाचक संज्ञा एकवचन में ही प्रयोग होती है । जैसे- राम, चण्डीगढ़, रामायण आदि ।

(ग) व्यक्तिवाचक संज्ञा के साथ कभी कभी बहुवचन की क्रिया का प्रयोग भी होता है । जैसे :- श्री दीनबन्धु समाज सेवा करते हैं । यहाँ दीनबन्धु एक व्यक्ति है लेकिन आदर के लिए उनके साथ 'करते हैं' क्रिया का प्रयोग हुआ है ।

(3) भाववाचक संज्ञा- जिस शब्द से किसी गुण, दोष, विशेषता, भाव, विचार, स्वभाव, दशा कार्य आदि का ज्ञान होता है, उसे भाववाचक संज्ञा कहते हैं । जैसे- बुढ़ापा, भलाई, मिठास, वीरता, अपनापन, उड़ान, बचपन, उजाला, दौड़, पढ़ाई, चाल आदि ।

विशेष :- भाववाचक संज्ञा एकवचन के रूप में ही होती है । जैसे- बल, बुद्धि, सफाई आदि । कभी कभी भाववाचक संज्ञा का प्रयोग बहुवचन के रूप में भी होता है । जैसे :- मैं इन दुःखों से घबरा गया हूँ ।

द्रव्य वाचक संज्ञा- जिस संज्ञा से किसी द्रव्य, धातु आदि का बोध होता है उसे द्रव्यवाचक संज्ञा कहते हैं । जैसे :- दूध, पानी, चावल, सोना, मिट्टी, हवा, आदि ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समूह या समुदायवाचक संज्ञा- जिस शब्द से किसी समूह या समूदाय का बोध होता है । उसे समूह वाचक संज्ञा कहते हैं । जैसे :- सेना, दल, भीड़, कक्षा, पार्टी, झुण्ड, पंक्ति, गैंग, सभा, पुस्तकालय टोली, गुट आदि ।

विशेषण की परिभाषा और इसके प्रकार
(Definition of Adjectives and Its kinds)

विशेषण (Adjective)- भाषा का सौन्दर्य विशेषण के प्रयोग से बढ़ता है । विशेषण शब्द का अर्थ है विशेषता । इसके प्रयोग से संज्ञा अथवा सर्वनाम के गुणों का ज्ञान होता है जैसे :-

काली गाय खड़ी है ।

वह अच्छा लड़का है ।

मेरे पास चार पैन हैं ।

सब विद्वान व्यक्ति का आदर करते हैं । इन वाक्यों में काली, अच्छा, चार, विद्वान शब्द विशेषण शब्द हैं जो क्रमशः गाय, लड़का, पैन और व्यक्ति की विशेषता प्रकट करते हैं ।

विशेषण की परिभाषा

जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता (गुण, दोष, परिणाम, संख्या) बताएं उन्हें विशेषण कहते हैं । जैसे- लम्बा, छोटा, मोटा, अच्छा, बुरा, ईमानदार, सुन्दर आदि ।

विशेष- जिस संज्ञा या सर्वनाम शब्द की विशेषता बताई जाती है, उसे विष्य कहते हैं । जैसे :-

मोटी लड़की दौड़ रही है ।

कायर पुरुष युद्ध के मैदान से भाग जाते हैं ।

मैं मीठा आम खाऊँगा ।

मोहन गन्दा लड़का है ।

उपर्युक्त उदाहरणों में मोटी, कायर, मीठा और गन्दा शब्द विशेषण हैं तथा लड़की, पुरुष, आम और लड़का विशष्य हैं ।

विशेषण के भेद
(Kinds of Adjective)

विशेषण के पांच भेद हैं ।

1. गुणवाचक विशेषण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. संख्या वाचक विशेषण

3. परिमाणवाचक विशेषण

4. सार्वनामिक विशेषण

5. सम्बन्धवाचक विशेषण

1. गुणवाचक विशेषण :- जो शब्द किसी संज्ञा या सर्वनाम के गुण, दोष, रंग, दिशा, आकार, अवस्था आदि का बोध कराए उन्हें गुणवाचक विशेषण कहते हैं । गुणवाचक विशेषण के मुख्य प्रकार इस तरह हैं :

(*i*) गुण - अच्छा, ईमानदार, बुद्धिमान, भला आदि ।

(*ii*) दोष - गन्दा, बुरा, नीच, दुष्ट आदि ।

(*iii*) स्वाद - मधुर, मीठा, खट्टा, कड़वा, नमकीन, चटपटा आदि ।

(*iv*) गंध- सुगंधित, दुर्गन्धपूर्ण आदि ।

(*v*) आकार- गोल, चौकोर, तिकोना, लम्बा, अण्डाकार, सर्पाकार आदि ।

(*vi*) रंग - पीला, नीला, काला, लाल, आदि ।

(*vii*) स्थान - विदेशी, भारतीय, चीनी, लखनवी आदि ।

(*viii*) दशा - मोटा, पतला, भारी, अमीर, गरीब आदि।

(*ix*) समय - सवेरा, प्राचीन, नवीन, अगला, पिछला, पुराना, नया आदि ।

(*x*) स्पर्श - सख्त, नर्म, कठोर, मखमली आदि ।

(*xi*) अवस्था - बूढ़ा, शैशव, शुष्क, आर्द्र, गीला, सूखा आदि ।

2. संख्यावाचक विशेषण - जिस शब्द से संज्ञा या सर्वनाम की संख्या सम्बन्धी विशेषता का पता चले, उसे संख्यावाचक विशेषण कहते हैं । जैसे- दो, तीसरा, कुछ आदि।

संख्यावाचक विशेषण के भेद- दो भेद हैं -

(क) निश्चित संख्यावाचक- जिससे निश्चित संख्या सम्बन्धी विशेषता का बोध हो । जैसे:- दो आदमी, दूसरा कमरा, तीन आम आदि ।

(ख) अनिश्चित संख्यावाचक- जिससे संज्ञा या सर्वनाम की निश्चित संख्या का बोध न हो । जैसे :- कुछ लोग, बहुत लड़के, सभी लोग आदि । निश्चित संख्यावाचक विशेषण के पांच भेद हैं :-

(*i*) **गणनावाचक :-** जिस विशेषण से गणना का बोध हो । जैसे : दो, तीन, चार आदि ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education,Bantalab Jammu

(ii) **क्रमवाचक** – जिस विशेषण से क्रम सम्बन्धी संख्या का बोध हो । जैसे : पहला, दूसरा, चौथा आदि ।

(iii) **आवृत्ति सूचक** – जिस विशेषण से संख्या की आवृत्ति या दुहराने का गुण सम्बन्धी विशेषता का बोध हो । जैसे : दुगना, चौगुना, दसगुणा आदि ।

(iv) **समुदाय वाचक** – जिस विशेषण से किसी समुदाय का बोध कराने वाली संख्या का बोध हो । जैसे : आठों, छहों, बीसों आदि ।

(v) **प्रत्येक बोध** – जिस विशेषण से विशेष्य के रूप में प्रयुक्त होने वाले हर पदार्थ का बोध हो उसे प्रत्येक बोधक विशेषण कहते हैं । जैसे : प्रत्येक, हर एक, हर आठवां।

3. परिमाणवाचक विशेषण– जिन शब्दों से किसी संज्ञा या सर्वनाम के परिमाण का बोध हो, उन्हें परिमाणवाचक विशेषण कहते हैं । जैसे– दो मीटर कपड़ा, एक लिटर पैट्रोल, थोड़ी सी चीनी आदि ।

परिमाणवाचक विशेषण दो प्रकार के होते हैं :–

(i) **निश्चित परिमाणवाचक** – जो विशेषण शब्द निश्चित् नाप-तोल का बोध कराएं वे निश्चित परिमाणवाचक होते हैं । जैसे– चार किलो चावल, दो लिट़र दूध, चालीस मीटंर कपड़ा आदि ।

(ii) **अनिश्चित परिमाणवाचक** – जिस विशेषण शब्द से किसी निश्चित नाप-तोल का बोध न हो वे अनिश्चित परिमाणवाचक होते हैं । जैसे :– कुछ चीनी, थोड़ा दूध, कुछ पानी आदि ।

4. सार्वनामिक विशेषण– जिन सर्वनामों से किसी संज्ञा की ओर संकेत अथवा निर्देश किया जाता है, उन्हें सार्वनामिक विशेषण कहते हैं । जैसे– यह लड़का, वह सिपाही, कोई आदमी आदि ।

सार्वनामिक विशेषण तीन प्रकार के होते हैं :–

(i) सर्वनाम से बने

सर्वनाम	**परिमाणसूचक विशेषण**	**संख्यावाचक विशेषण**
कौन	कितना	कितने
यह	इतना	इतने
वह	उतना	उतने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(*ii*) **मूल सर्वनाम विशेषण रूप में प्रयुक्त**- यह बालक, वे पुस्तकें आदि । ये संकेतवाचक विशेषण भी कहलाते हैं और संज्ञा से पहले आते हैं ।

(*iii*) **सर्वनाम के संबंध कारकीय रूप विशेषण रूप में प्रयुक्त**- मेरी कलम, उसका घर, तुम्हारी बहन ।

5. सम्बन्धवाचक विशेषण- संज्ञा शब्दों के सम्बन्ध कारकीय रूप व्यावहारिक रूप में विशेषण का ही काम करते हैं । जैसे- मोहन का भाई, नेपाल की जनता, राम की बहन आदि ।

प्रविशेषण- जो शब्द विशेषण शब्दों की विशेषता प्रकट करते हैं, उन्हें प्रविशेषण कहते हैं । जैसे मोहन बहुत अच्छा लड़का है । वह बहुत मधुर गाना गाती है । सीता का नृत्य अति सुन्दर था ।

इन वाक्यों में बहुत, अति शब्द विशेषण अच्छा, मधुर, सुन्दर की विशेषता बताते हैं । अत: ये प्रविशेषण हैं ।

अभ्यास के प्रश्न

1. संज्ञा की परिभाषा देते हुए उसके विभिन्न भेदों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए ।
2. व्यक्तिवाचक संज्ञाएं जातिवाचक संज्ञा के रूप में और जातिवाचक संज्ञा व्यक्तिवाचक संज्ञा के रूप में कब प्रयुक्त होती है ? उदाहरण सहित लिखिए।
3. विशेषण की परिभाषा देते हुए उसके भेदों का सोदाहरण परिचय दीजिए ।
4. निम्नलिखित में अन्तर स्पष्ट कीजिए-

   (क) सर्वनाम और सार्वनामिक विशेषण

   (ख) संख्यावाचक विशेषण और परिमाणवाचक विशेषण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3

कबीर का जीवन परिचय और उनकी साहित्यिक रचनाएँ (देन)
(Life and Works Contribution of Kabir)

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में भक्ति की दो धाराएँ निर्गुण और सगुण प्रवाहित हुईं । निर्गुण के अन्तर्गत सन्त और सूफी काव्य धारा, और सगुण में राम और कृष्ण की भक्ति धारा आती है । हिन्दी साहित्य में सन्त काव्य परम्परा का स्वतन्त्र और स्पष्ट रूप कबीर द्वारा स्थापित हुआ । वे युग-चिन्तक, युग-उन्नायक और भक्त की विभिन्न भूमिकाओं में दिखाई पड़ते हैं । उनका जन्म विरोधों के बीच हुआ और वे उनके बीच ही विकसित हुए । अन्य प्राचीन कवियों और साधकों के समान उनका प्रामाणिक जीवन-वृत्त भी अनिश्चित और अज्ञात है । उनके जन्म के सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियां और जन-श्रुतियाँ प्रचलित हैं । कबीर पन्थी उन्हें सत्य पुरुष मानते हैं । उनकी यह धारणा है कि सत्य का तेज काशी के लहर तारा तालाब में सम्वत् 1455 विक्रमी जेठ सुदी सोमवार को अवतरित हुआ था । नीरू जुलाहे की स्त्री को कमल के पत्र पर लेटा हुआ बालक मिला था । एक जन श्रुति से पता चलता है कि कबीर का जन्म एक विधावा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था जो उन्हें लोकापवाद के भय से लहर तारा तालाब के किनारे डाल गई थी ।

वहाँ से उठाकर नीरू जुलाहे और उसकी पत्नी नीमा ने उनका पालन-पोषण किया । कबीर ने स्वयं अपने को जुलाहा कहा है- "तू ब्राह्मण मैं काशी का जुलाहा, चीन्ह न मोर गियाना ।" एक अन्य कथा के अनुसार वे रामानन्द के प्रताप से विधवा ब्राह्मणी की हथेली से पैदा हुए थे । डा. पीताम्बर दत्त बडथ्वाल उन्हें नीरू नीमा की सन्तान मानते हैं । आचार्य द्विवेदी का विचार है कि ये जन-श्रुतियाँ विश्वसनीय नहीं हैं। उन्होंने कबीर का सम्बन्ध जुगी-जाति से जोड़ा है । यह जाति-हिन्दुओं में अस्पृश्य और हेय समझी जाती थी । इसका सम्बन्ध नाथ-पंथियों से था । इस्लाम के आगमन पर यह जाति मुसलमान हो गई ।

कबीर के जन्म और मृत्यु-सम्वतों के विषय में भी मतैक्य नहीं है । कबीर के चरित्र से सम्बन्धित यह दोहा है :-

चौदह सौ पचपन साल गए चन्द्रवार एक ठाठ ठए ।
जेठ सुदी बरसायत को पूरन मासी प्रगट भए ।।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बाबु श्यामसुन्दर दास ने 'गए' का अर्थ व्यतीत लगाकर 1456 को कबीर का जन्म संवत् माना है । आचार्य द्विवेदी भी इस मत को स्वीकार करते हैं । परन्तु डा. माताप्रसाद गुप्त जैसे विद्वान इंडियन क्रोनोलॉजी के आधार पर गणना करके सम्वत् 1455 ज्येष्ठ पूर्णिमा सोमवार को कबीर की जन्मतिथि मानते हैं । यह मत ही अधिक तर्क-संगत प्रतीत होता है । एक परम्परागत जनश्रुति के अनुसार इनका निधन मगहर में संवत् 1575 में हुआ था ।

कबीर के गुरू रामानन्द थे । कुछ लोग 'शेखतकी' को उनका गुरू मानते हैं जो कि उचित प्रतीत नहीं होता । कबीर के पदों में 'शेखतकी' का नाम तो आया है परन्तु उसमें 'गुरू' के लिए उपयुक्त श्रद्धा का भाव नहीं है । कबीर गृहस्थ थे । उनकी पत्नी का नाम लोई था । कमाल उनका पुत्र और कमाली उनकी पुत्री थी । डा. रामकुमार वर्मा ने एक अन्य पत्नी भी मानी है जिसका नाम धनिया या राम जनिया था । उन्होंने जीवन के प्रारम्भिक दिन काशी में और अन्तिम दिन मगहर में व्यतीत किए थे । कबीर शिक्षित तो नहीं थे परन्तु बहुश्रुत अवश्य थे । कबीर ने विधिवत् शिक्षा प्राप्त नहीं की थी । उन्होंने स्वंय कहा है- ''मसि कागद छुयौ नहीं, कलम गही नहिं हाथ ।'' उन्होंने सम्भवत: किसी पंथ की स्थापना स्वयं नहीं की परन्तु उनकी मृत्यु से पूर्व ही बहुत से लोग उनके शिष्य हो गए थे । धर्मदास और गोपाल नाम के इनके दो प्रधान शिष्य थे ।

व्यक्तित्व- कबीर के व्यक्तित्व का निर्माण विरोधी तत्त्वों और संस्कारों से हुआ था । उनका अवतरण विरोधी परिस्थितियों के मिलन बिन्दु पर हुआ था । उस युग में हिन्दुओं और मुसलमानों की प्रतिस्पर्धा अत्यन्त उत्कृष्ट रूप में दिखाई दे रही थी । एक ओर पंडितों और मुल्लाहों का रूढ़िवादी दृष्टिकोण था तो दूसरी ओर सामान्य जनता अज्ञान और मिथ्याडम्बरों के सागर में डुबकियाँ लगा रही थी । योग-साधना के साथ भक्ति भावना की धारा भी चल रही थी । उन्होंने अपने युग की समस्त मान्यताओं की प्रतिद्वंद्विता स्वीकार करते हुए अनुभूत सत्य के आधार पर अपने लिए एक पथ का निर्माण किया जो सामान्य जन के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ । कबीर क्रान्तिकारी, विद्रोही, निर्भीक, ब्राह्मडम्बर विरोधी, सुधारक, स्वतन्त्र चेता, सत्यवादी; परम संतोषी, अहिंसावादी, सत्य और प्रेम के समर्थक अनेक रूपों में दिखाई पड़ते हैं । उनके व्यक्तित्व में परस्पर विरोधी दिखाई देने वाले तत्त्वों और प्रवृत्ति का अद्भुत मिश्रण है । आचार्य द्विवेदी ने उनके व्यक्तित्व को सुन्दर शब्दावली में प्रस्तुत किया है :

वे सिर से पैर तक मस्तमौला, स्वभाव से फक्कड़, आदत से अखड़, दिल से साफ, दिमाग से दुरुस्त, भीतर से कोमल, बाहर से कठोर, जन्म से अस्पृश्य, कर्म से बन्दनीय थे । युगावतार की शक्ति लेकर वे पैदा हुए थे और युगप्रवर्तक की दृढ़ता उनमें वर्तमान थी, इसीलिए वे युग परिवर्तन कर सके । निस्संदेह सम्पूर्ण हिन्दी-साहित्य में कबीर का व्यक्तित्व अनुपम और अद्वितीय है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रचनाएँ- नागरी प्रचारिणी सभा ने कबीर के ग्रन्थों की खोज की है । उसके आधार पर उनकी संख्या 61 मानी जाती है । इनमें से कुछ रचना तो कबीर की हो ही नहीं सकती क्योंकि कबीर तो अनपढ़ थे वे फिर ग्रन्थों की रचना कैसे कर सकते थे ? वे तो "कहै कबीर सुनो हौ सन्तो" कहकर अपने विचार सन्तों के समक्ष प्रकट किया करते थे । अत: जो वाणी उन्होंने कही, वह मौखिक रूप से प्रचलित हो गई । बाद में उनके शिष्यों ने उनकी वाणी का संकलन कर कबीर के नाम से प्रचारित किया । किन्तु इस संकलन में केवल कबीर की ही वाणी का संकलन नहीं है, अपितु शिष्यों की वाणी का भी संकलन हुआ है जिस पर छाप उन्होंने कबीर की ही लगाई है । ऐसा करके वे सन्त सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक कबीर को अलौकिक शक्ति-सम्पन्न पुरुष सिद्ध करना चाहते थे । यही कारण है कि कुछ आलोचकों द्वारा कबीर रचित 61 ग्रन्थ बतलाये जाते हैं । इनमें से कुछ ग्रन्थ तो कबीर के बाद में लिखे गये हैं । इन ग्रन्थों में ब्राह्माचार और कर्मकाण्ड जैसे सिद्धान्तों की प्रशंसा की गई है । जबकि कबीर ने इन सिद्धान्तों की निन्दा की है । उनकी भाषा में भी अनेकरूपता पाई जाती है । कहीं उनकी भाषा पंजाबीपन लिये हुए हैं तो कहीं बनारसीपन । अत: इन रचनाओं को कबीर की प्रामाणिक रचनाएँ नहीं माना जाता । एक किंवदन्ती के अनुसार यह भी कहा जाता है कि कबीर ने 6 लाख 90 हजार के लगभग रमैणियाँ कही हैं, किन्तु यह बात भी 'सूर-सागर' के सवा लाख पदों की तरह अतिश्योक्तिपूर्ण तथा अप्रामाणिक है ।

'बीजक' कबीर की प्रामाणिक रचना है । इसमें उनके शिष्य धर्मदास ने इधर उधर बिखरी-हुई उनकी समस्त रचनाओं का संग्रह संवत् 1521 में किया । परन्तु डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी इसे 18वीं शताब्दी की रचना मानते हैं । डा. श्यामसुन्दर दास ने एक अत्यन्त प्राचीन हस्तलिपि, जिसका रचनाकाल संवत् 1561 था, के अनुसार 'कबीर ग्रन्थावली' का प्रकाशन किया, किन्तु डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी इस संवत् को भी अप्रामाणिक मानते हैं । डा. द्विवेदी ' गुरूग्रन्थ साहिब' में संकलित कबीर की रमैणियों को जिनका रचनाकाल 1661 माना जाता है, प्रामाणिक मानते हैं, किन्तु यह भी स्वीकारते हैं कि इसमें प्रक्षिप्त अंश भी हैं ।

'बीजक' कबीर के सिद्धान्तों का मूल ग्रन्थ माना जाता है । 'बीजक' शब्द का अर्थ तांत्रिक उपासना से सम्बद्ध है । 'हिन्दी साहित्य कोश' में 'बीजक' शब्द का यह अर्थ दिया है- 'बीजक' वास्तविक तत्त्व का बोधक है । यह तत्त्व संसार में गुप्त रहता है । 'बीजक' के द्वारा ही ब्रहम के वास्तविक तत्त्व (शब्द) का बोध होता है जिससे समस्त सृष्टि का निर्माण हुआ है । 'बीजक' के तीन भाग हैं- साखी, शब्द और रमैनी । 'साखी' कबीर की केवल दोहा छन्दों में रची जाने वाली रचनाएँ कही जाती हैं । 'साखी' शब्द से साक्षी, प्रत्यक्ष ज्ञान या गुरू के उपदेशों का अर्थ लिया जाता है । साखी ज्ञान का भण्डार है । इसमें अध्यात्म विचार एवं लोक नीति सम्बन्धी बातों की प्रधानता है । 'सबूद', 'सबूदी' या शब्द

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गीतिमयी रचनाओं को कहा जाता है । इनमें कबीर के सिद्धान्तों की व्याख्या है । साथ ही इनमें भक्ति और आत्मसमर्पण की भावना का प्रकाशन हुआ है । वस्तुतः कबीर साहित्य को साहित्यिक रूप प्रदान करने वाले ये ही पद हैं । 'रमैनी' बीजक का एक महत्त्वपूर्ण अंश है । इसमें सात चौपाइयों के बाद एक दोहा का क्रम रखा गया है । इसमें कबीर ने माया का विवेचन अनेक रूपों में किया है । माया के अनेक रूपों को पहचान कर तथा उससे बचने के उपाय के लिए 'रमैनी' कही गई है । कबीर के अनुसार जीव ही माया में रमण करता है अतः डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार- 'रमैनी' शब्द का अर्थ जीव की उस दशा का वर्णन है जिसमें वह माया के रूप से मोहित होकर तथा उसके वशीभूत होकर उसमें लीन हो जाता है, अथना उसमें रमण करने लग जाता है ।

कबीर की विचारधारा

(क) सामाजिक विचार- कबीर प्रगतिशील समाज-सुधारक थे । उनके समय में हिन्दू और मुस्लिम दो विरोधी धर्म और संस्कृतियों के एक साथ होने के कारण देश में विरोध, अनाचार, भ्रष्टाचार आदि बुराइयाँ फैल गईं थीं । उन्होंने धर्म के नाम पर प्रचलित विभिन्न अन्धविश्वासों, ब्राह्माचारों एवं मिथ्या प्रदर्शनों का तीव्रता से खण्डन किया । उन्होंने बड़े ही निर्भीक भाव से अपने अनुभूत सत्य का उद्घाटन किया है । उन्होंने अपने ये धार्मिक तथा सामाजिक विचार अपनी कविताओं के माध्यम से व्यक्त किए हैं । यद्यपि सुधार करना या नेतागिरी की प्रवृत्ति फक्कड़ मस्तमौला सन्त फकीर में नहीं थी, किन्तु वे समाज के कूड़ा-कर्कट को निकाल फेंकना चाहते थे । अपनी इसी प्रवृत्ति के कारण वे स्वतः सुधारक बन गये । दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि सुधारक न बनना चाहते हुए श्री राम दीवाना कबीर को सुधारक का पद प्राप्त हो ही जाता है ।

कबीर-काल में विभिन्न सम्प्रदायों के कारण ही देश में कुरीतियों का जन्म हो रहा था । अतः कबीर ने अपने काल में प्रचलित सभी सम्प्रदायों को परख कर उनकी सारपूर्ण बातों को अपनाते हुए ब्राह्माचार आदि का खण्डन किया । उन्होंने कभी हिन्दू और इस्लाम धर्मों के पाखण्डों का खण्डन किया है तो कभी उनकी रूढ़ियों की हँसी उड़ाई है । कबीर ने हिन्दुओं की मूर्ति पूजा का खण्डन किया है-

"पत्थर पूजे हरि मिलें तो मैं पूंजू पहार ।
ताते यह चक्की भली पीस, खाए संसार ।।"

इसके अतिरिक्त मुसलमानों की नमाज़ आदि पर भी व्यंग्य किया है :-

"कंकड़ पत्थर जोडि कै, मस्जिद लई बनाय ।
ता पर मुल्ला बांग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय ।।"

* * * * * *

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
"दिन भर रोजा रखत हैं, रात हनत है गाय ।"

उन्होंने जाति-पांति-ऊँच-नीच का खण्डन करने के लिए कहा है-

"एक जोति से सब उत्पन्ना, का वामन का सूदा ।"

"जाति पाति पूछे न कोय, हरि को भजे हरि को होय ।"

कबीर ने पूजा, तीर्थ, व्रतादि का विरोध किया है-

"पूजा, सेवा, नेम, व्रत, गुड़ियन का सा खेल॥
जब लग पिउ परसै नहीं, तब लग संसय मेल ॥"

जोगियों के पाखण्ड पर खरी खोटी सुनाते हुए उन्होंने कहा-

"मन न रंगाये रंगाये जोगी कपड़ा ।
आसन मारि मन्दिर में बैठे ।
नाम छाँडि पूजन लागे पथरा ।
कनवा फड़ाय जोगी जटवा बढ़ोले ।"

कबीर के युग में वासना ने भयंकर रूप धारण कर लिया था । तभी नारी की कबीर को निन्दा करनी पड़ी-

"नारी की झांई परत, अन्धा होत भुजंग ।
कबिरा तिनकी कौन गति नित नारी के संग ।"

पर पतिव्रता नारी की प्रशंसा भी की है-

"पतिव्रता मैली भली, काली कुचित कुरूप ।
पतिव्रता के रूप पर वारौं कोटि सुरूप ।"

कबीर ने नैतिक आदर्शों की प्राप्ति का सन्देश दिया । दया, परोपकार, अहिंसा, शील, दान आदि की प्रशंसा तथा काम, क्रोध, मद, लोभ, अहंकार आदि की निन्दा की । कबीर प्रेम की महिमा गाते हैं । उनके अनुसार सच्चा धर्म वही है जो प्रेम की सीख देता है-

"यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं ।
सीस उतारै, भुईं घेरे, तब पैठे घर माहिं ।"

कबीर सत्संग की प्रशंसा करते हुए कहते हैं :-

"जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान ।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान ।।"

कबीर परोपकार का उपदेश देते हुए कहते हैं :-

"कबीरा सोई पीर है, जो जाने पर पी ।
जो पर पीन न जानई, सो काफिर बेपीर ।।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस प्रकार कबीर ने समाज के विभिन्न क्षेत्रों के भ्रष्टाचार को दूर कर शान्ति स्थापित की थी । डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत ने उचित ही लिखा है- ''उन्होंने देश में, धर्म में, दर्शन में, साधना में सभी क्षेत्रों में क्रान्ति की जो धारा बहाई थी, उससे निश्चय ही उन क्षेत्रों के कालुष्य बह गये थे ।''

वस्तुतः कबीर सच्चे समाज-सुधारक तथा धर्म-प्रवर्त्तक महापुरुष थे ।

(ख) दार्शनिक विचार- कबीर कवि एवं दार्शनिक होने से पूर्व सन्त थे । जिस प्रकार कविता करना कबीर का लक्ष्य न था, उसी भाँति दर्शन की गुत्थियों को सुलझाना भी उन्हें अभीष्ट न था । फिर भी उनकी वाणी में भक्ति और प्रेम की विविध भाव व्यंजनाओं के साथ-साथ ब्रह्म, जीव, माया आदि से सम्बन्धित दार्शनिक विचारधारा भी प्रकट हुई है । उन्होंने अपनी वाणी को 'ब्रह्मविचार' कहा है - ''तुम जनि जानो गीत है, यह तो ब्रह्मविचार ।'' यह ब्रह्मविचार ही उनकी दार्शनिक विचारधारा है । उनकी दार्शनिक विचारधारा शंकर के अद्वैतवाद से अधिक प्रभावित है । कबीर की ब्रह्म, जीव, माया आदि के सम्बन्ध में दार्शनिक विचारधारा का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

ब्रह्म- कबीर के ब्रह्म निर्गुण, निराकार है । इस ब्रह्म की प्राप्ति भक्ति द्वारा की जा सकती है । भक्ति-भावना के आलम्बन के रूप में उन्होंने 'राम' को स्वीकारा है । उनके 'राम' दशरथ सुत राम न होकर घट-घट में रमने वाले परम तत्त्व रमैया राम हैं-

''दशरथ सुत तिहुँ लोक बरवाना
राम नाम का मरम न जाना ।''

उनका ब्रह्म तो अलख निरंजन, शून्य, दृश्य और अदृश्य है ।

कबीर का मत है कि परब्रह्म जो कि अक्षय पुरुष है उसी से ही समस्त सृष्टि का सृजन हुआ है-

''अक्षर पुरुष इक वृक्ष हैं, निरंजन बाकी डार ।
त्रिदेवा शाखा भए, पात भया संसार ।।''

अन्त में उसके द्वारा ही समस्त सृष्टि का विलय हो जाता है-

''पानी ही ते हिमभया, हिम ही गया विलाय ।
कबीर जो था सोई भया, अब कुछ कह्या न जाय ।।''

उस ब्रह्म की शक्ति का वर्णन करना सम्भव नहीं है । वह तो अकथनीय है, गूँगे के गुड़ के समान है । वह तो अनभव की वस्तु है-

''पारब्रह्म के तेज का, कैसा है उनमान ।
कहिबै कूँ सोभा नहीं, देख्या ही परवान ।।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कबीर ने ब्रह्म का केवल सिद्धान्त निरूपण ही नहीं किया है अपितु उसके साथ वैयक्तिक सम्बन्ध भी स्थापित किए हैं । वे उसे स्वामी, जननी, पति आदि रूपों में परिकल्पित करते हैं । आत्मा-परमात्मा के दाम्पत्य सम्बन्ध का एक उदाहरण देखिए -

"हरि मेरा पीव मैं हरि को बहुरिया"

* * * * *

"दुलहिन गावहु मंगलाचार ।

हम घर आये हो राजा राम भरतार ।"

अतः कबीर का ब्रह्म निर्गुण, निराकार है ।

जीव- कबीर के अनुसार जीव परम तत्त्व ब्रह्म का ही अंश है । उन्होंने अद्वैतवादियों की भाँति जीवात्मा और ब्रह्म में अद्वैतता की अवस्थिति मानी है । उनके अनुसार वस्तुतः ब्रह्म और जीव दोनों एक ही है । माया के आवरण के कारण दोनों में पार्थक्य स्थापित हो जाता है । उस समय उनकी स्थिति समुद्र और बूंद की भाँति होती है । माया का आवरण हटते ही जीव को ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाता है और जीव ब्रह्म में उसी प्रकार मिल जाता है जिस प्रकार जल में जलयुक्त कुम्भ के फूटने पर जल जल में मिल जाता है ।

"जल में कुंभ, कुंभ में जल है, बाहर भीतर पानी ।

फूटय कुंभ जल जलहि समाना, यह तत कथै गियानी ।।"

माया- कबीर ने माया को महाठगिनी, पापिन, डाकिन, सर्पिणी, आदि कह कर उसकी भरपूर निन्दा की है । उन्होंने इस माया का निवास कामिनी-कंचन में स्वीकार किया है । इस माया ने सारे संसार को अपने पाश में बांध रखा है । इसी के कारण जीवात्मा और परमात्मा में भेद हो जाता है । यह इन दोनों के मिलन में दुर्गम घाटी के समान है ।

"एक कनक अरु कामिनी दुर्गम घाटी दोय ।"

कबीर ने मनुष्य को माया से सावधान होने का उपदेश दिया है । माया के संसर्ग से मनुष्य का विनाश होता है । जो प्रभु भक्ति में अपना मन लगाते हैं वे ही माया से छुटकारा पा सकते हैं ।

संसार- कबीर ने संसार को मिथ्या माना है । उनके अनुसार यह संसार नश्वर है, क्षणिक है । कबीर के अनुसार सांसारिक बन्धनों में बँधा व्यक्ति कभी भी परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकता ।

कबीर की भक्ति भावना- कबीर ने परमात्मा को प्राप्त करने के लिए प्रेमाभक्ति को आधार माना है । उनके अनुसार ढाई आखर प्रेम का पढ़ै सौ पंडित होया अर्थात् प्रेम की महिमा को समझने पर बल दिया है । कबीर की दृष्टि से राम से सच्चा प्रेम करना आसान नहीं है । प्रेम का मार्ग खाला का घर नहीं है वह तो खांडे की धार के समान है जिस पर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चलना आसान नहीं है । इसके लिए साधक को सिर का सौदा करना पड़ता है अत: अपना सर्वस्व बलिदान करना पड़ता है -

"यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं ।
सीस उतारै भुईं धेरे, सो पैठे घर माहिं ।"

साधक को इस मार्ग का ज्ञान सच्चा सद्गुरू ही दे सकता है । कबीर ने इसलिए परमात्मा से भी गुरू का स्थान ऊँचा माना है ।

"गुरू गोबिन्द दोऊ खड़े, काके लागूं पाय ।
बलिहारी गुरू आपनो जिन गोबिन्द दियो मिलाय ।"

गुरू के उपदेश से ही साधक को ब्रह्म का ज्ञान होता है । बिना गुरू के ज्ञान प्राप्ति संभव नहीं है । सतगुरू सूरमा होता है, जो अपने उपदेश रूपी बाण से साधक को अन्त: तक बेध देता है, जिससे साधक के हृदय में भक्ति प्रकाशित होती है तथा अहंकार का नाश हो जाता है और उसके चारों ओर प्रेम ही प्रेम छा जात है-

"कबीर बादल प्रेम का, हम पर बरष्या आइ ।
अन्तर भीगी आत्मा, हरी भरी बनराइ ।"

कबीर ने भक्ति के मार्ग में ब्रह्म आडम्बरों, जप, तप, तीर्थ, तिलक आदि का विरोध दिखाया है । उनके अनुसार मन को नियन्त्रण में करने से भक्ति प्राप्त होती है । यदि हृदय में प्रभु के परति सच्चा प्रेम नहीं तो जप, तप, माला आदि सब व्यर्थ हैं :-

"माला तो कर में फिरै, जीभ फिरै मुख माहिं ।
मनुवा तो दसों दिश फिरै, यह तो सुमरिन नाहिं ।"

भक्ति के लिए तो भक्त को अपने आराध्य के प्रति पूणज्ञ समर्पण की भावना होनी चाहिए । कबीर में इसी समर्पण भावना के दर्शन मिलते हैं ।

रहस्यवाद- कबीर रहस्यवाद के प्रथम तथा सर्वश्रेष्ठ कवि हैं । उनके रहस्यवाद पर अद्वैती तथा सूफी मत का प्रभाव है । कबीर के रहस्यवाद के विषय में डा. श्यामसुन्दर दास ने कहा है- "रहस्यवादी कवियों में कबीर का आसन सबसे ऊँचा है । शुद्ध रहस्यवाद केवल उन्हीं का है ।" डा. रामकुमार वर्मा के अनुसार- "कबीर ने अपने रहस्यवाद में अद्वैतवाद और सूफी मत की गंगा-जमुना एक साथ बहा दी है ।"

रहस्यवाद का अर्थ जीवात्मा का परमात्मा से सम्बन्ध स्थापित करना है । यह रहस्यवाद दो प्रकार का होता है । 1. भावनात्मक 2. साधनात्मक । जब जीवात्मा परमात्मा से लौकिक सम्बन्ध धारण कर मिलन के लिए उत्सुक होती है तो भावनात्मक रहस्यवाद होता है । जब जीवात्मा हठयोग की क्रियाओं एवं साधनाओं द्वारा परमात्मा से मिलन की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए अग्रसर होती है तब साधनात्मक रहस्यवाद की सिद्धि होती है । कबीर के रहस्यवाद में दोनों प्रकार के चित्रण मिलते हैं ।

भावनात्मक रहस्यवाद में प्रेम की अतिशयता के कारण आत्मा परमात्मा से विभिन्न रूपों में अपना घनिष्ठ सम्बन्ध जोड़ती है । कबीर ने ब्रह्म के प्रति सखा, माता, पिता, स्वामी आदि विभिन्न रूपों में सम्बन्ध स्थापित किए हैं किन्तु दाम्पत्य भाव के सम्बन्ध को विशेष रूप से अपना कर अपनी अनेक मार्मिक अनुभूतियों का चित्रण किया है । अतः कबीर का भावनात्मक रहस्यवाद दाम्पत्य प्रेम पर आधारित है ।

कबीर पर भी गुरू के उपदेश से ईश्वर के प्रेम की ऐसी वर्षा हुई कि उसका तन ही नहीं, अपितु मन भी भीग गया । उनकी स्थिति गूंगे की सी हो जाती है–

''अकथ कहानी प्रेम की, कछू कही न जाय ।

गूंगे केरी सरकरा, खावे औ मुसकाय ।''

इस झलक की प्राप्ति के पश्चात् आत्मा प्रियतम से मिलने के लिए व्याकुल हो जाती है । विरहिणी आत्मा के कबीर ने अनेक चित्र अंकित किये हैं–

''आंखड़ियाँ झाईं पड़ी, पंथ निहारि–निहारि ।

जीभडियाँ छाला पड़या, नाम पुकारि–पुकारि ।''

प्रियतम से मिलने पर कबीर की द्वैत भावना समाप्त हो जाती है । उनका अहं भाव नष्ट हो जाता है । सम्पूर्ण विश्व उन्हें ब्रह्ममय दिखाई देने लगता है–

''लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल ।

लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल''

डा. श्यामसुन्दर दास ने रहस्यवादी कवियों में कबीर को सबसे ऊँचा स्थान दिया है ।

भाषा एवं रचना शैली

कबीर की भाषा में राजस्थानी, पंजावी, खडी बोली, पूर्वी हिन्दी, ब्रज, अवधी, फ़ारसी आदि विविध भाषाओं के दर्शन होते हैं इसलिए उनकी भाषा को खिंचड़ी भाषा कहा जाता है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कबीर की भाषा को सधुक्कड़ी मानते हैं । डा. रामकुमार वर्मा के अनुसार ''कबीर की भाषा बहुत अपरिष्कृत हैं, उनमें कोई विशेष सौन्दर्य नहीं है ।'' पर आचार्य द्विवेदी ने कबीर की भाषा को भावाभिव्यक्ति में सक्षम माना है, जो भाषा का सर्वोत्तम गुण होता है ।

वास्तव में कबीर की भाषा भावानुकूल है । कबीर पिछड़ी हुई जातियों का उद्धार करने के लिए आए थे । सामाजिक अन्यायों और आडम्बरों का विरोध करते समय उनकी भाषा में कोमलता न रह कर अक्खड़ता, आक्रोश, निर्ममता का भाव आ गया है । वे जहाँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भी जाते थे, अपनी वाणी को वहाँ के योग्य बना लेते थे । यही कारण है कि उनकी वाणी में विविधता मिलती है । कबीर की भाषा में वे सभी गुण मिलते हैं जो एक सबल और समृद्ध भाषा के लिए होने चाहिएं । आचार्य द्विवेदी का कहना उचित प्रतीत होता है कि - "कबीर वाणी के डिक्टेटर थे ।"

कबीर अलंकारों के ज्ञाता न थे फिर भी उनके काव्य में अलंकारों के असंख्य उदाहरण देखने को मिलते हैं । कबीर के काव्य में रूपक, उपमा, अन्योक्ति, अर्थान्तरन्यास, समासोक्ति, दृष्टान्त आदि अलंकारों का प्रयोग हुआ है । दृष्टान्त का एक उदाहरण-

"पानी केरा बुदबुरा अस मानुस की जाति ।
देखत ही छिप जाएगा, ज्यों तारा परिभाति ।"

कबीर की वाणी साखी, शब्द और रमैणी के रूप में प्राप्त होती है । साखी हिन्दी का दोहा छन्द है । एक एक साखी में कबीर ने भाव सागर को समाहित किया है । शब्द कबीर के गेय पद हैं । रमैनी चौपाई और दोहे का मिश्रित काव्य रूप हैं । इस प्रकार कबीर युग-प्रवर्त्तक, समाज-सुधारक, धर्म-सुधारक होने के साथ साथ हिन्दी के एक महान और सशक्त कलाकार हैं । कबीर का काव्य सन्देश काव्य है । उनकी वाणी में ओज है । निश्चित ही कबीर सन्त होते हुए भी हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत कवि के रूप में अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं ।

तुलसीदास का जीवन परिचय और उनकी साहित्यिक रचनाएँ (देन)
(Life and Works Contribution of Tulsidas)

तुलसीदास हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं । वे महानतम लोकनायक एवं लोक सेवक हिन्दी भाषा के प्राण तथा मध्यकालीन भारत की आत्मा हैं । उनका रामचरितमानस भारतीय वाङ्मय में भक्तिमार्ग का सर्वश्रेष्ठ काव्य है । तुलसीदास भारत के वाल्मीकि, व्यास, पश्चिम के होमर, शेक्सपीयर के स्तर के विश्व कवि हैं ।

जीवन परिचय- तुलसीदास के जीवन वृत्त सम्बन्धी सामग्री के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद हैं । तुलसी के जन्म, परिवार, मृत्यु आदि के संबंध में विद्वानों में मतभेद हैं । अन्तः साक्ष्य तथा बाह्य साक्ष्य के आधार पर तुलसी का जन्म संवत् 1589 (सन् 1532) तथा मृत्यु संवत् 1680 (सन् 1623) माना जाता है । इनकी मृत्यु की तिथि के बारे में निम्न दोहा प्रचलित है-

"संवत सोलह सौ असी, असी गंग के तीर ।
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर ।"

तुलसी के जन्म के विषय में यह बात प्रचलित है कि अभुक्त मूल नक्षत्र में जन्म लेने के कारण, उनके मुंह में दाँत देखकर, शरीर अपेक्षाकृत बहुत बड़ा देखकर तथा जन्म लेते ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'राम' नाम का उच्चारण करने के कारण उनके माता पिता ने उन्हें त्याग दिया । इनका लालन पालन चुनिया नामक दासी ने किया था, किन्तु दुर्भाग्यवश वह भी सांप के काटने से मर गई । तब उनका पालन पोषण अनन्त राम के शिष्य नरहरि ने किया था । जन्म के समय 'राम' नाम का उच्चारण करने के कारण । इनका बचपन का नाम 'रामबोला' पड़ा । इनके प्रथम गुरू नरहिर थे जिनसे इन्होंने रामकथा सुनी थी । नरहरि के साथ यात्रा करते हुए ये काशी पहुँचे जहाँ इन्होंने वेद, शास्त्र, पुराण आदि का ज्ञान प्राप्त किया ।

तुलसीदास का विवाह रत्नावली नाम की सुन्दर कन्या से हुआ था । ये अपनी पत्नी के रूप एवं गुणों पर आसक्त थे उसके बिना एक पल पर भी नहीं रहते थे । एक बार उनकी पत्नी उन्हें बिना बताये अपने मायके चली गई । ये प्रेमान्ध हो उसके पास पहुँचे । इनकी पत्नी विदुषी थी । उसने इन्हें फटकारते हुए कहा-

"लाज न आवत आपको दौरे आयहु साथ ।
धिक् धिक् ऐसे प्रेम को, कहा कहौं मैं नाथ ।
अस्थि चर्ममय देह मम, तामें जैसी प्रीति ।
तैसी जो श्री राम मंह होति न तौ भव भीति ।"

इस फटकार से तुलसी के ज्ञानचक्षु खुल गए । उन्हें गृहस्थ जीवन से वैराग्य हो गया और वे राम के भक्त हो गए । गृहस्थ जीवन त्याग के उपरान्त तुलसी का जीवन देशाटन में बीता । काशी और चित्रकूट में अधिक समय रहे । अयोध्या में 'मानस' की रचना की । संवत् 1680 में इनका देहावसान हो गया ।

कृतित्व- तुलसी की रचनाएँ विश्व के महान साहित्यकारों की रचनाओं का तुलना में रखी जा सकती है । इन्होंने महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, मुक्तक काव्य, प्रबंध काव्य सभी काव्य रूपों में रचना की है । इनकी प्रामाणिक रचनाएं 12 ही मानी जाती हैं-

1. रामचरितमानस, 2. रामाज्ञा प्रश्न, 3. जानकी मंगल, 4. पार्वती मंगल 5. गीतावली, 6. कृष्ण गीतावली 7. विनय पत्रिका 8. रामलता नहछू, 9. बखै रामायण 10. दोहावली 11. कवितावली 12. वैराग्य संदीपनी । इनके अतिरिक्त 'हनुमानबाहुक' तथा 'कलिकाल धर्म निरुपण' को भी कुछ लोगों ने प्रामाणिक माना है ।

1. राम चरित मानस- तुलसीदास का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य रामचरितमानस हिन्दी साहित्य का अतुलनीय महाकाव्य है । रामायण और महाभारत के बाद रामचरितमानस का महत्त्व सर्वोपरि है । संसार की अनेक भाषाओं में इस रचना का अनुवाद किया गया है । भारत में इसे आदर की दृष्टि से देखा जाता है ।

तुलसी का मानस अनेक विशेषताओं के कारण विश्व की सर्वाधिक लोकप्रिय रचना है । तुलसी ने इसकी रचना तिथि संवत् 1631 दी है । तुलसी ने रामकथा को रामचरितमानस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

का नाम दिया है । इसकी कथा का आधार वाल्मीकी 'रामायण' है परन्तु इसमें कथा विस्तार, भक्ति भावना तथा दार्शनिक विचारों के लिए अध्यात्म रामायण, गीता, उपनिषद, पुराण, हनुमन्नाटक, प्रसन्न राघव, उत्तर रामचरितमानस आदि का आश्रम लिया है । मानस की कथावस्तु आदर्श भावना से भरी हुई है । सारी कथा को वक्ताओं और श्रोताओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है । इसके संवाद नाटकीय, रोचक एवं स्वाभाविक है । शान्त रस की प्रधानता है । अन्य सभी रसों का भी प्रयोग हुआ है । भावपक्ष की भांति कलापक्ष भी सुन्दर एवं प्रौढ़ है । यह दोहा-चौपाई शैली में लिखा गया है । इसकी भाषा अवधी है ।

मानस का उद्देश्य महान् है । मानस की रचना तुलसी ने स्वान्त: सुखाय की थी पर इसेक मूल में सबके हित की कामना थी-

कीरति, भनिति, भूति भली सोई ।

सुरसरि सम सबकर हित होई ।।

इस महान् उद्देश्य के कारण तुलसी का मानस जन-जन का कण्ठ हार बन गया है ।

2. विनय पत्रिका- विनय पत्रिका में एक भक्त की प्रार्थना है जो उसने अपने उद्धार के लिए अपने आराध्य से की है । यह रचना एक पत्रिका के रूप में प्रस्तुत है जो राम के सम्मुख हनुमान द्वारा प्रस्तुत की गई है । इसमें एक ओर संसार की असारता का उल्लेख है तो दूसरी ओर मन को उपदेश दिया गया है । कहीं कवि की व्यक्तिगत जीवन की झलक है तो कहीं भगवान की उदारता एवं भक्त वत्सलता की पौराणिक कहानियाँ हैं। इसमें शान्त रस का सुन्दर परिपाक हुआ है । इसकी रचना रीति शैली में की गई है। इसमें 279 पद हैं । यह तुलसी का ब्रजभाषा की रचनाओं में सर्वोत्तम रचना है । काव्य कला की दृष्टि से यह श्रेष्ठ रचना है ।

3. कवितावली- इसमें सवैया, कवित्त, छप्पय और झूलना छन्दों में राम कथा का वर्णन है । इसमें सात काण्ड हैं और 325 पद्य हैं । राम कथा का वर्णन करते हुए कवि ने राम के ऐश्वर्य और शक्ति के चित्रण को प्रधान स्थान दिया है । कला की दृष्टि से इसका महत्त्व गीतावली के समान है । कवितावली के अन्त में 'हनुमान बाहुक' के अनेक अंश संगृहीत हैं । यह हनुमान की स्तुति से सम्बन्धित पदों का संग्रह है ।

4. राम लला नहदू- यह केवल 20 छन्दों की रचना है । यह सोहर छन्द में रचित है । जो अवध और बिहार के लोकगीतों में प्रयुक्त होता है । इसमें दशरथ के चारों पुत्रों की यज्ञोपवीत संस्कार का वर्णन है । काव्यत्व की दृष्टि से यह साधारण स्तर की रचना है । यह शृंगारिक रचना है । इसमें 13 द्विपदियाँ हैं ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5. पार्वती मंगल- इसमें शिव पार्वती के विवाह का वर्णन है । इसका आधार 'शिव पुराण' है । इसमें 164 छन्द हैं । मिश्रबन्धु इसे प्रामाणिक नहीं मानते । इसकी कथा कुमारसंभव पर आधारित लगती है ।

6. जानकी मंगल- इसमें राम जानकी विवाह का प्रसंग है । यह 216 छन्दों की रचना है । इसकी भाषा अवधी है । इसकी वर्णनात्मक शैली है ।

7. दोहावली- दोहावली में दोहों की संख्या 573 है । अन्य ग्रन्थों के दोहे भी इसमें सम्मिलित कर लिए गए हैं । इनमें 22 सोरठे भी हैं । नीति भक्ति, नाम- माहात्मय, राम- महिमा विषयक उक्तियां ही इसमें दी गई हैं । इसमें चातक की एक निष्ठा से सम्बन्धित दोहे अत्यन्त सुन्दर तथा भावपूर्ण हैं ।

8. गीति काव्य-गीतावली- इसमें तुलसी ने राम की कथा पदों में लिखी है । इसमें राम के चरित के कोमल स्थानों का विस्तार से वर्णन किया गया है । और परूष घटनाओं का संकेत मात्र कर दिया गया है । इसमें सात काण्ड और 328 पद हैं प्रयुक्त राग 21 हैं । प्रधान रस श्रृंगार है । ब्रज भाषा का माधुर्य अधिक है । यह गीतिकला की दृष्टि से एक सफल कृति है । डा. माताप्रसाद गुप्त ने इसे सूर सागर से प्रभावित माना है । इसमें वत्सल रस का समावेश भी इसी के कारण हुआ है ।

9. रामाज्ञा प्रश्न- इस में सात सर्ग हैं । प्रत्येक सर्ग में सात सप्तक हैं और प्रत्येक सप्तक में सात दोहे हैं । ग्रन्थ की कुल छंद संख्या 343 है । वर्ण्य विषय राम कथा है । रामकथा के बहाने तुलसी ने शुभ अशुभ शकुनों पर विचार किया है ।

10. कृष्ण गीतावली- कृष्ण गीतावली में कृष्ण चरित्र सम्बन्धी पद है । यह रचना सूर सागर के अनुकरण पर की गई है । इसमें कुल पद 61 हैं । इसमें हृदय तत्त्व की प्रधानता है । यह बड़ी सरल रचना है परन्तु मनोवैज्ञानिक भी है । यह रचना गीतावली से अधिक सफल है ।

11. हनुमान बाहुक- इस रचना में तुलसी ने अपनी बाहुपीड़ा और उसके शमन की प्रार्थना बड़े करुण स्वर में हनुमान से की है । भाषा मंजी हुई और भावानुगामिनी है । इसमें छप्पय, झूलना, मतगयंद और धनाक्षरी छन्दों का प्रयोग हुआ है । कुल छन्द 44 हैं ।

12. बखै रामायण- इसमें संकेत रूप में राम कथा कही गई है कुल 69 छन्द हैं । जिनमें कथा विस्तार बहुत अनियमित है । इसमें अलंकार ज्ञान का प्रदर्शन किया गया है । कलात्मक दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण है ।

13. वैराग्य संदीपनी- इसमें 62 छन्द हैं । यह तुलसीदास की प्रारम्भिक रचना है । इसका विषय राम महिमा, संत स्वभाव तथा ज्ञान वैराग्य की चर्चा है । इसमें तुलसी का झुकाव संत मत की ओर दिखाई देता है । इसमें दोहा, सोरठा, चौपाई छन्द का प्रयोग किया गया है । इसमें शान्त रस प्रधान है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुलसीदास हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं । तुलसी महाकवि ही नहीं थे, महाकवि होने के साथ-साथ उच्च कोटि के भक्त, समाज-सुधारक तथा लोकनायक भी थे । आचार्य शुक्ल तुलसीदास जी के प्रादुर्भाव को हिन्दी काव्य क्षेत्र में चमत्कार मानते हैं । वस्तुतः तुलसी हिन्दी के देदीप्यमान नक्षत्र हैं जिनका प्रकाश समस्त हिन्दी साहित्य को प्रतिभासित किये हुए हैं । तुलसी का काव्य अगाध सागर की तरह है जिसमें विषय-व्यापकता, भाषा परिमार्जन, शैलियों की विविधता, प्रबन्ध कौशल, समन्वय भावना आदि अनेक रत्नों की राशि विद्यमान है ।

विषय व्यापकता- तुलसी के काव्य विषय का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है । इन्होंने जीवन के किसी एक पक्ष विशेष को ग्रहण न करके उसे समूचे रूप से चित्रित करने का प्रयास किया है । उनकी पहुँच मानव जीवन की सूक्ष्म से सूक्ष्म दशाओं और वृत्तियों तक थी । जहाँ वीरगाथा काल के कवियों ने केवल वीर और श्रृंगार रस प्रधान रचनाएं कीं, सन्तों का काव्य लौकिक पक्ष से अछूता रहा, सूफी केवल प्रेम के ही गायक रहे, कृष्ण भक्त कवियों ने केवल कृष्ण के लोकरंजक रूप का ही वर्णन किया है वहां तुलसीदास भगवान के लोकरक्षक और लोकरंजक दोनों रूप ग्रहण करते हैं । समाज के नाना रूपों और विविध मानवीय भावनाओं को अपने काव्य का विषय बनाते हैं । वस्तुतः जीवन को उसके समग्र रूप में ग्रहण करने वाले वे एक मात्र कवि हैं ।

प्रबन्ध कौशल- तुलसी प्रमुखतः प्रबन्ध काव्यकार हैं । प्रबन्ध-कौशल की दृष्टि से रामचरित मानस हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ काव्य है । 'मानस' में प्रबन्ध काव्य की समस्त विशेषताएँ तो मिलती हैं इसके अतिरिक्त उसकी अन्य अनेक विशेषताएँ हैं जिनके कारण मानस को हिन्दी साहित्य में उच्च स्थान प्राप्त हुआ है । मानस की एक बड़ी विशेषता उसका समविभक्तांग होना है । जो अन्य काव्यों में ही मिलता है । इतिवृत्त, वस्तु-व्यापार वर्णन, भाव प्रवणता और संवाद सभी में उन्होंने समुचित सन्तुलन बनाए रखा है । प्रबन्ध कौशल का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है मार्मिक स्थलों की पहचान । रामचरितमानस में अधिक विस्तार ऐसे ही प्रसंगों का मिलता है जो मनुष्य मात्र के हृदय को स्पर्श करने वाले हैं- जैसे जनक की वाटिका में राम सीता का परस्पर दर्शन, राम वन गमन, भरत की आत्म ग्लानि, दशरथ मृत्यु, सीता हरण, राम रावण युद्ध, वन मार्ग में स्त्री-पुरुषों की सहानुभूति आदि । प्रबन्ध काव्य के लिए चरित्र चित्रण कला में कुशलता का होना भी आवश्यक है । इस दृष्टि से तुलसी अनुपम है । राम, सीता, लक्ष्मण, अंगद हनुमान जैसे अनेक अविस्मरणीय पात्र उनकी लेखनी से सजीव रूप में अंकित हुए हैं । आचार्य हरि प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में "चरित्र-चित्रण में तुलसीदास की तुलना संसार के चुने कवियों के साथ ही की जाती है । तुलसी प्रबन्ध कौशल में निपुण है तभी तो उनकी मुक्तक रचनाओं में भी कथा का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है जिनसे कहीं भी प्रबन्धात्मकता में बाधा नहीं आ पाई है ।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुलसी की भक्ति भावना– तुलसीदास भक्त कवि थे । राम भक्ति उनका साध्य है और कविता साधन । उन्होंने निराश मानव के लिए भक्ति की ऐसी धारा प्रवाहित की जिसका अवगाहन करके मुस्लिम अत्याचारों से त्रस्त जनता को शान्ति प्राप्त हुई । उन्होंने अपने हृदय की भक्ति भावना को अनेक रूपों में प्रस्तुत किया है । तुलसीदास भक्त पहले थे ज्ञानी बाद में । उन्होंने तो अपने इष्ट राम के प्रति प्रेम भाव की ही भक्ति गाई है ।

तुलसीदास मर्यादापुरुषोत्तम राम के भक्त थे । उन्होंने राम के प्रति सेवक सेव्य भाव की भक्ति की है । उनके अनुसार राम की भक्ति का मार्ग अत्यन्त सरल और सीधा है यदि उस पर निष्कपट भाव से चला जाये । मन की सरलता, वचन की सरलता और कर्म की सरलता ही भक्ति है–

"प्रीति राम सों नीति पथ चलिय राग रिस जीति ।

तुलसी सन्तन के मते, इहै भगति की रीति ।"

उन्होंने राम के शील, शक्ति और सौन्दर्यमय रूप की उपासना की है जिसमें राम लोकरक्षक और लोकरंजक रूप में सामने आते हैं । वे तो अपने आप को राम के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित कर देना चाहते हैं । राम चरण का अनुराग ही भक्ति के लिए सब कुछ है–

"तुलसी चाहत जनम भरि, राम चरन अनुराग ।"

उन्होंने राम के प्रति सेवक सेव्य भाव की भक्ति की है । राम की भक्ति के बिना इस भव सागर को पार करना कठिन है–

"सेवक सेव्य भाव बिनु भवन तरिय उरगारि ।"

तुलसीदास ने अपने इष्ट की महानता का गुणगान और स्वयं को पतित आदि कहकर अपनी दीनता को व्यक्त कर दीन भाव से भक्ति की है–

"राम ते बड़ो है कौन, मोसों कौन छोटो ।

राम ते खरौ है कौन, मोसों कौन खोटो ।"

तुलसी की भक्ति का आदर्श है उनकी अनन्यता । चातक के प्रेम का परिचय देकर उन्होंने भक्ति की अनन्यता को मान्यता दी है । जिस प्रकार चातक अनपे दैन्य को धन के अतिरिक्त किसी अन्य से निवेदित नहीं करता । वह धन का ही अनन्य भक्त बना रहता है । उसी प्रकार तुलसीदास भी राम के अनन्य भक्त बने रहते हैं–

'एक भरोसो, एक बल, एक आस विश्वास ।

एक राम घनश्याम हित, चातक तुलसीदास ।।'

तुलसी ने मर्यादा पुरूषोत्तम राम के शील, शक्ति और सौन्दर्यमय रूप की उपासना की है । उन्होंने सेवक सेव्य भाव से परिपूर्ण होकर राम की भक्ति की है । तुलसी का सम्पूर्ण काव्य भक्ति भावना से परिपूर्ण है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रस - तुलसी के काव्य में नवों, रसों, का समावेश हुआ है । 'रामचरितमानस' में तुलसी ने सभी रसों का प्रयोग बहुत ही सुन्दर ढंग से किया है । तुलसी मानव हृदय के पारखी थे इसीलिए उनके काव्य में मानव जीवन की विविध स्थितियों एवं भावों का अंकन हुआ है । तुलसी के काव्य में भक्ति भावना की प्रमुखता के कारण सर्वत्र शान्त रस छाया हुआ है ।

'राम को रूप निहारति जानकी,

कंकन के नग की परछाही में संयोग शृंगार की योजना है । तुलसी ने मर्यादित रूप में शृंगार रस का प्रयोग किया है । पुष्प वाटिका में राम और सीता के प्रथम मिलन के प्रसंग में तुलसी की मर्यादा का परिचय मिलता है । सीता के अपहरण के पश्चात् राम का उसके विरह में विलाप करना पक्षियों, पेड़ों आदि से सीता के बारे में पूछना कितना मर्मस्पर्शी है-

"हे खग-मृग ! हे मधुकर श्रेणी ! कहुँ देखी सीता मृगनैनी ।"

इस पंक्ति में वियोग शृंगार के दर्शन होते हैं । लंका काण्ड में वीर, रौद्र और वीभत्स रस का परिपाक हुआ है । भयानक रस का प्रयोग लंका दहन में हुआ है । दशरथ-मरण, लक्ष्मण मूर्छा प्रसंग में करुण रस की धारा प्रवाहित हुई है । अंगद-रावण- संवाद तथा नारद मोह के प्रसंग में हास्य रस का परिपाक हुआ है । पूरे बाल कांड में वात्सल्य रस की छटा दिखाई देती है । तुलसी की रस व्यंजना को देखकर उन्हें रस सिद्ध कवि कहा जाता है ।

समन्वय वादी भावना- तुलसी की काव्य की प्रमुख विशेषता- समन्वय की भावना है । इन्होंने जीवन और साहित्य में अद्भुत समन्वय किया है । उनकी समन्वयवादी भावना के विषय में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है - 'समन्वय का मतलब है कुछ झुकना और कुछ दूसरों को झुकने के लिए बाध्य करना ।' तुलसीदास को ऐसा करना पड़ा है । ऐसा करने के लिये जिस असामान्य दक्षता की जरूरत थी, वह उनमें है- उनका सारा काव्य समन्वय की विराट् चेष्टा है । उसके लोक और शासा की ही समन्वय नहीं है, वैराग्य और गार्हस्थ्य का, भक्ति और ज्ञान का, भाषा और संस्कृति का निर्गुण और सगुण का, पुराण और काव्य का, पंडित और अपंडित का समन्वय रामचरितमानस के आदि से अन्त दो छोरों पर जाने वाली परा कोटियों को मिलाने का प्रयत्न है ।

अपनी इसी समन्वयवादी प्रकृति के कारण तुलसी लोकनायक के पद पर प्रतिष्ठित हुए । तुलसी ने परिस्थितियों से समझौता नहीं किया है, अपितु जो उन्हें शुभ मंगल और ग्राह्य लगा उसे ही ग्रहण किया है । समाज में फैली विषमता को मिटाकर एकरूपता लाने का प्रयत्न किया है ।

तुलसी ने ज्ञान और भक्ति में अन्तर नहीं स्वीकारा है-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"ज्ञानहिं भक्तिहि नहिं कछु भेदा ।
उभय हरहि भव-सम्भव खेदा ।"

तुलसी के युग में धार्मिक क्षेत्र में शैवों और वैष्णवों का संघर्ष चल रहा था । इस संघर्ष को शान्त करने के लिये उन्होंने राम के मुख से कहलवाया है-

"शिव द्रोही मम दास कहावा ।
सो नर सपनेहु मोहि नहिं भावा ।"

तुलसी ने सगुण और निर्गुण ईश्वर के दोनों रूपों को स्वीकार किया है-

"सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा ।
गावहि मुनि पुरान बुध वेदा ।"

'भक्तिहित लहिं मनुज अवतार' कहकर निर्गुण और सगुण का समन्वय प्रस्तुत किया है ।

तुलसी के काव्य में साहित्यिकता और आध्यात्मिकता का भी समन्वय है । 'रामचरितमानस' जहाँ धर्म का उच्चतम रूप हमारे सामने प्रस्तुत करना है , वहां उसमें उच्चकोटि का कवित्व भी है । यदि एक ओर 'मानस' भक्तों की प्यास बुझाता है तो दूसरी ओर काव्य रसिकों की भी रस मग्न करने की शक्ति रखता है । इस प्रकार रामचरितमानस में धर्म और कवित्व का अद्भुत समन्वय है ।

तुलसी की यह समन्वय भावना उनके विचारों, भावों और सिद्धान्तों तक ही सीमित नहीं है । उनकी यह समन्वय भावना भावपक्ष के साथ साथ कलापक्ष में भी देखने को मिलती है ।

तुलसी ने भाषा और शैली में भी समन्वयकारी प्रवृत्ति अपनाई है । उन्होंने एक ओर ब्रजभाषा में रचना की है तो दूसरी ओर अवधी में । इसी प्रकार मुक्तक तथा प्रबन्ध दोनों प्रकार के काव्य रूपों में रचना की है । समाज सुधार के लिए जिस समन्वय और एकता की आवश्यकता है वह तुलसी में सर्वत्र विद्यमान है ।

कलापक्ष- तुलसी के काव्य में भावपक्ष के साथ-साथ कलापक्ष भी उच्चकोटि का है । भाषा के माध्यम से ही कवि अपने विचारों की भावाभिव्यक्ति करता है । तुलसी के समय तक काव्य में ब्रज और अवधी दो भाषाएँ प्रचलित थीं । तुलसी ने दोनों भाषाओं में रचना की है जबकि सूर ने केवल ब्रज भाषा में और जायसी ने केवल अवधी भाषा में ही लिखा है । तुलसी का 'मानस' अवधी भाषा का और 'विनय पत्रिका' में ब्रज भाषा उत्कृष्ट रूप है । तुलसी की भाषा विषयक दृष्टिकोण की एक विशेषता यह है कि अवधी जैसी लोकभाषा को साहित्यिक रूप प्रदान किया है । उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ है । कहीं कहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
अरबी फारसी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है । भाषा में मुहावरों का भी प्रयोग किया है । इनकी भाषा परिमार्जित और सुगठित है उनमें भाषा की कमियाँ नहीं मिलती हैं । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तुलसी की भाषा सौन्दर्य के बारे में लिखा है– "सबसे बड़ी विशेषता गोस्वामी जी की है– भाषा की सफाई और काव्य रचना की निर्दोषता, जो हिन्दी के और किसी कवि में नहीं पाई जाती है । ऐसी गठी हुई भाषा किसी की नहीं है । सारी रचना इस बात का उदाहरण है ।"

अलंकार और छन्द– तुलसी के काव्य में शब्दालंकार और अर्थालंकार का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है । जहाँ अर्थालंकारों से भाव व्यंजना में सहायता मिलती है वहीं शब्दालंकार से भाषा सौन्दर्य में वृद्धि हुई है । उनके अलंकारों में रमणीयता है, केवल चमत्कार-प्रवृत्ति नहीं । उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, उदाहरण आदि सभी अलंकार उनके काव्य में मिल जाते हैं । परन्तु उपमा और उत्प्रेक्षा उन्हें विशेष प्रिय हैं । सांग रूपक का एक उदाहरण निम्नलिखित है–

"उदित उदय गिरि मंच पर, रघुवर बाल पतंग ।
विकसे सन्त-सरोज सब, हर्षित लोचन भृंग ।

पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय ने उनके उपमा प्रयोग के विषय में कहा है–"

'रामचरितमानस' की कोई चौपाई भले ही उपमा के बिना मिल जाए, किन्तु उनका कोई पृष्ठ कठिनता से ऐसा मिलेगा जिसमें उपमा का सुन्दर प्रयोग न हो । उपमाएँ साधारण नहीं हैं । वे अमूल्य रत्न राजि हैं ।

तुलसीदास के द्वारा प्रयुक्त छन्दों का निर्देश किया जा चुका है । उन्होंने दोहा-चौपाई, सोरठा, हरिगीतिका, बरवै सोहर, छप्पय, कवित्त, सवैया अनेक छन्दों पर उन्होंने अपने पूर्ण अधिकार का परिचय दिया है । 'मानस' में दोहा चौपाई छन्दों को विशेष महत्त्व दिया है । दोहावली में दोहा और सोरठा का प्रयोग है । कवितावली में कवित्त और सवैया का प्रयोग है । बरवै रामायण में बरवै छन्द का प्रयोग है ।

शैली वैविध्य– तुलसी के समय में काव्याभिव्यक्ति की जितनी शैलियां प्रचलित थीं, उन सब का प्रयोग उन्होंने सफलतापूर्वक किया है । वीरगाथा काल की छप्पय पद्धति, विद्यापति और सूरदास की गीति पद्धति, भाटों की कवित्त सवैया पद्धति, कबीरदास की दोहा पद्धति, सूफी कवियों की दोहा चौपाई पद्धति को सफलतापूर्वक अपनाया है । तुलसी ने प्रबन्धक मुक्तक और गीतिकाव्य सभी पर अपने अधिकार का परिचय दिया है । तुलसी की अभिव्यंजना शैली पर प्रकाश डालते हुए डा. माताप्रसाद गुप्त ने लिखा है– "तुलसी की शैली के मौलिक गुण हैं, उसकी ऋजुता, उसकी सुबोधता, उसकी चारूता, उसकी रमणीयता और उसका प्रवाह ।" आचार्य शुक्ल ने सभी प्रकार की रचना शैलियों के ऊपर तुलसी को प्रतिष्ठित माना है ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महत्त्व- तुलसीदास असाधारण शक्तिशाली कवि, भक्त, महात्मा, लोकनायक और समाज-सुधारक थे । उन जैसा बहुमुखी व्यक्तित्व हिन्दी साहित्य में कोई और नहीं दिखाई देता । उनका रामचरितमानस हिन्दी का गौरव ग्रन्थ है जो तत्कालीन जनता का ही नहीं, वर्तमान किंकर्त्तव्यविमूढ़ मानवता का भी पथ प्रदर्शक बना हुआ है । उनके विषय में आचार्य द्विवेदी का यह मत बहुत समीचीन है कि- ''तुलसीदास के काव्यों में उनका निरीह भक्त रूप बहुत स्पष्ट हुआ है, पर वे समाज सुधारक, लोकनायक, कवि, पंडित और भविष्य स्रष्टा भी थे । यह निर्णय कठिन है कि उनका कौन सा रूप अधिक आकर्षक और अधिक प्रभावशाली था । इन सब गुणों ने तुलसीदास में एक अपूर्व क्षमता ला दी थी । इसी संतुलित प्रतिभा ने उत्तर भारत को वह महान् साहित्य दिया जो दुनिया के इतिहास में प्रतिद्वन्द्वी नहीं जानता ।''

अभ्यास के प्रश्न

1. संत कबीर के विषय में एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए ।
2. कबीर के व्यक्तित्व और भक्ति सिद्धान्तों को स्पष्ट करते हुए एक छोटा सा निबन्ध लिखिए ।
3. कबीरदास का जीवन वृत्त लिखते हुए उनकी विचारधारा पर प्रकाश डालिए ।
4. कबीरदास की प्रामाणिक रचनायें कौन सी हैं ? क्या आप कबीर ग्रन्थावली को प्रामाणिक रचना मानते हैं ? युक्तिपूर्वक अपने विचार प्रकट कीजिए ।
5. तुलसीदास की संक्षिप्त जीवनी लिखते हुए उनकी रचनाओं का परिचय दीजिए।
6. सोदाहरण प्रतिपादित कीजिए कि तुलसी की देन भक्ति के अतिरिक्त सामाजिक और राष्ट्रीय क्षेत्र में किसी रूप में कम नहीं ।
7. तुलसी का लोकनायक के रूप में वर्णन कीजिए ।
8. तुलसी का भावपक्ष जितना सशक्त है कलापक्ष भी उतना ही सशक्त है । इस कथन की विवेचना कीजिए ।
9. तुलसी की साहित्यिक विशेषताओं का विस्तार से विवेचन कीजिए ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4

निम्नलिखित का अध्ययन
(Study of the following)

(I) कबीर के दोहे (7वीं व 9वीं कक्षा की पाठ्य पुस्तक से)

(II) महादेवी वर्मा की कविता मुरझाया फूल।

(III) गिल्लू (कहानी)

(IV) नीलकंठ (नवीं कक्षा में)

(I) कबीर के दोहे

ऊँचे कुल का जनमिया, जे क़रनी ऊँच न होई।
सुबरन कलस सुरा भरा, साधु निंदा सोई॥ 1।
दोष पराए देख करि, चले हँसत हँसत।
अपने याद न आवई, जिनका आदि न अंत॥ 2।
साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदै साँच है, ताके हिरदै आप॥ 3।
बोली एक अमोल है, जो कोई बैले जानि।
हिये तराजू तौलि के, तब मुख बाहर अनि॥ 4।
अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप॥ 5।
काल्ह करै सो आज कर, आज करै सो अब्ब।
पल में परलै होयगी, बहुरि करैगो कब्ब॥ 6।
साईं इतना दीजिए, जामें कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय॥ 7।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

निंदक नियरे राखिए आँगन कुटी दृवाय।
बिन पानी साबुन, निर्मल करे सुभाय॥ 8।
जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए म्यान।
मोल करो तलवार का, पड़न रहन दो ग्यान॥ 9।
माला फेरत जुग भया, फिर न मन का फेर।
कर का मनका डारि दे, मन का मनका फेर।। 10।
सोना, सज्जन, साधुजन, टूटि जुरै सौ बार।
दुर्जन, कुंभ-कुम्हार के, ऐके धका दरार॥ 11।
तिनका कबहूँ न निंदिए, जो पॉयन कर होय।
कबहूँ उड़ि, आंखिन परे, पीर छनेरी होय।। 12।

—कबीरदास

कबीर के दोहों का भावार्थ

(1) ऊँचे कुल का जनमिया, जे करनी ऊँच न होई।
सुबरन कलस सुरा भरा, साधु-निंदा सोई॥ 1।

प्रसंग—प्रस्तुत पंक्तियाँ कबीर दास रचित दोहों में से ली गई हैं। इस में कबीर जी ने बताया है कि व्यक्ति अपने कर्म से बड़ा बनता है।

भावार्थ—केवल ऊँचे कुल में जन्म लेने से व्यक्ति बड़ा नहीं होता यदि उसके कार्य ऊँचे और अच्छे नहीं होते जिस प्रकार सोने का कलश यदि शराब से भरा होगा तो उसकी भी निन्दा करते हैं इसी प्रकार अच्छे कुल में जन्म लेने पर भी बुरे कार्य करने से अपयश ही मिलता है।

विशेष—
1. भाषा सरल एवं सरस है।
2. उपदेशात्मक भाषा का प्रयोग है।
3. उदाहरण शैली है।
4. तुकान्त कविता है।
5. स्वर मैत्री है। अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।

(2) दोष पराए देख करि, चले हँसत हँसत।
अपने याद न आवई, जिनका आदि न अन्त॥ 2।

प्रसंग—प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य-पुस्तक 'सरस भारती' के अन्तर्गत कबीर दास द्वारा रचित 'दोहा एकादश' में से लिया गया है। इसमें कबीर जी ने मनुष्य के स्वभाव का वर्णन किया है जो अपने दोषों की अपेक्षा दूसरों के दोषों की ओर विशेष ध्यान देता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भावार्ष—कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य दूसरों के दोषों, अवगुणों और कमियों को तो देख कर हँसता-हँसता चलता है किन्तु अपने अनगिनत दोषों की ओर कोई ध्यान नहीं देता है, जिनका न आरम्भ है और न कोई अन्त है।

विशेष— 1. उपदेशात्मक शैली है।

2. दूसरों के दोषों की ओर ध्यान देने की अपेक्षा अपने दोष दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

3. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।

4. स्वरमैत्री है। पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार 'हँसत-हँसत' में है।

(3) साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदै साँच है, ताकि हिरदै आप॥ 3।

प्रसंग—पूर्ववत्। इसमें कबीरदास जी ने सत्य का महत्त्व बताया है—

भावार्थ—सत्य के समान कोई तपस्या नहीं है। झूठ बोलने के समान पाप नहीं होता है। जिसके दिल में सत्य है, उसके हृदय में परमात्मा निवास करता है। इसलिए सत्य बोलना सबसे बड़ा तप है और झूठ बोलना सबसे बड़ा पाप है।

विशेष— 1. अन्त्यानुप्रास अलंकार है।

2. मनुष्य को उपदेश दिया गया है।

(4) बोली एकं अमोल है, जो कोई बोलै जानि।
हिये तराजू तोलि के, तब मुख बाहर आनि॥ 4।

प्रसंग—पूर्ववत्। इसमें कबीर दास जी ने वाणी के महत्त्व पर प्रकाश डाला है।

भावार्थ—कबीर जी कहते हैं कि बोली एक ऐसी अमूल्य वस्तु है, जो कोई बोलता है वही उसका मूल्य जान सकता है। इसलिए कोई भी बात पहले हृदय रुपी तराजू पर तोल कर अर्थात् भली-भाँति सोच-विचार कर मुँह से बाहर निकालनी चाहिए। अर्थात् सदैव मीठी बोली बोलनी चाहिए।

विशेष— 1. सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग किया गया है।

2. अनुप्रास अलंकार से काव्य सौन्दर्य में वृद्धि हुई है।

3. भाषा में प्रवाह है।

4. शिक्षाप्रद दोहा है।

(5) अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप॥ 5।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रसंग–पूर्ववत्। इस दोहे में कबीर जी ने उपदेश दिया है कि किसी भी बात में अति से बचना चाहिए।

भावार्थ–कबीर जी ने कहा है कि न तो बहुत ज्यादा बोलना ही अच्छा होता है और न ही अत्यधिक चुप (खामोश) रहना अच्छा है क्योंकि अधिक बोलने से गला बैठ जाता है और चुप रहने से लोग मूर्ख या गूँगा समझते हैं। इसी प्रकार न तो अत्यधिक बरसात का होना अच्छा होता हैं और न ही बहुत अधिक धूप अच्छी होती है क्योंकि अधिक बरसात से बाढ़ आ जाती है, फसल बह जाती है और अधिक धूप से फसल सूख जाती है। अर्थात् प्रत्येक चीज सीमा में अच्छी लगती है।

विशेष– 1. मनुष्य को अति से बचने का उपदेश दिया है।

2. भाषा में अभिधा शब्द शक्त का प्रयोग हुआ है।

3. अनुप्रास एवं पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार भी छटा दृष्टव्य है।

4. स्वरमैत्री से काव्य सौन्दर्य में वृद्धि हुई है।

(6) काल्ह करै जो आज कर आज करै सो अब्ब।
पल में परलै होयगी बहुरि करैगो कब्ब ॥ 6।

प्रसंग–पूर्ववत्। आज का काम कल पर नहीं छोड़ना चाहिए इस ओर संकेत करते हुए कबीर दास जी कहते हैं–

भावार्थ–जो काम कल करना है, उसे आज कर लो और जो आज करना है उसे अभी कर लो। क्योंकि क्षण भर में मृत्यु या विनाश हो जाएगा फिर उस काम को कब करोगे। भाव यह है कि मनुष्य जीवन किसी भी समय समाप्त हो सकता है। अतः शुभ काम में देरी नहीं करनी चाहिए।

विशेष– 1. मनुष्य को जीवन की सच्चाई से अवगत कराया है।

2. तुकान्त कविता है। अनुप्रास अलंकार है।

(7) साईं इतना दीजिए, जामें कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय ॥ 7।

प्रसंग–पूर्ववत्। इस दोहे में कबीर जी ने बताया है कि मनुष्य को उतनी ही वस्तु की कामना करनी चाहिए, जिससे उसका जीवन-यापन भली-भाँति हो सके।

भावार्थ–कबीर जी भगवान से प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि हे प्रभु ! मुझे इतनी धन-सम्पत्ति दीजिए जिसमें मेरे परिवार का निर्वाह हो जाए। मुझे भी पेट-भर खाने को मिल जाए और मेरे घर से कोई साधु भी भूखा न जाए अर्थात् कबीर जी अधिक संग्रह करने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

के विरोधी थे। वे भगवान् से उतना ही मांगते थे जितने से जीवन यात्रा अच्छी प्रकार से चल सके।

विशेष– 1. धन संचय का विरोध किया है।

2. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।

3. भाषा सरल, सरस, प्रवाहपूर्ण है।

4. उपदेशात्मक शैली है।

(8) निन्दक नियरे राखियो, आंगन कुटी ध्वाय।
बिन पानी साबुन बिना, निर्मल करै सुभाय ॥8।

प्रसंग–पूर्ववत्। कबीर दास जी ने निन्दा करने वाले को पास रखने को कहा है–

भावार्थ–निन्दा करने वाले व्यक्ति को सदैव अपने समीप रखना चाहिए, उसे अपने आंगन में ही कुटी या छप्पर डाल कर देना चाहिए। क्योंकि निन्दा करने वाला व्यक्ति बिना साबुन और बिना पानी के मनुष्य के स्वभाव को स्वच्छ और निर्मल बना देता है। अर्थात् निन्दक व्यक्ति के पास होने पर मनुष्य को अपनी बुराइयों एवं त्रुटियों का पता लगता है। इस प्रकार वह अपनी बुराइयों को दूर करके स्वयं को निर्मल हृदय बना लेता है।

विशेष– 1. कबीर जी ने निन्दा करने वाले व्यक्ति को बुरा नहीं माना है।

2. उपदेशात्मक शैली है।

3. अनुप्रास अलंकार है।

4. स्वरमैत्री का प्रयोग है।

(9) जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहने दो म्यान॥ 9।

प्रसंग–पूर्ववत्। इस दोहे में कबीर जी ने व्यक्ति के दुर्गुणों की ओर ध्यान न देकर उसके गुणों की ओर ध्यान देने का उपदेश दिया है।

भावार्थ–कबीर जी कहते हैं कि साधु स्वभाव वाले पुरुष की कभी भी जाति मत पूछो यदि उससे कुछ पूछना ही चाहते हो तो उसके तत्त्व ज्ञान के विषय में पूछ लो। जिस प्रकार सब तलवार का मोल भाव तो करते हैं किन्तु म्यान को एक तरफ ही पड़ा रहने देते हैं (क्योंकि म्यान ऊपर से कितनी ही चमकदार हो, यदि उसमें तलवार अच्छी नहीं है तो उस म्यान को लेकर क्या करेगा। अर्थात् व्यक्ति की महत्ता उसके ज्ञान एवं गुणों के कारण होती है। ऊँची जाति या श्रेष्ठ कुल में जन्म लेने मात्र से नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विशेष– 1. व्यक्ति के महत्त्व के लिये गुणों की अनिवार्यता पर प्रकाश डाला है।

2. उदाहरण शैली का प्रयोग है।

3. सधुक्कड़ी भाषा है।

(10) माला फेरत जुग गया, फिरा न मन का फेर।

कर का मनका डारि दे, मन का मनका फेर॥ 10।

प्रसंग–पूर्ववत्। कबीर दास जी ने पूजा एवं प्रभु भक्ति में माला फेरने का खण्डन किया है।

भावार्थ–हे मनुष्य ! माला के मनके फेरते हुए युग बीत गया है अर्थात् बहुत समय निकल गया है परन्तु तुम्हारे मन का मैल या भ्रान्ति नहीं मिटी। इसलिए हे भाई ! तुम हाथ की माला के मनके को घुमाना छोड़ कर मन रूपी मनका फेरो अर्थात् मन को एकाग्र करके ईश्वर का भजन करो। भगवान् के भजन का दिखावा करना व्यर्थ है। सच्चे व एकाग्र मन से उस की भक्ति करनी चाहिए।

विशेष– 1. भक्ति में पूजा के बाह्य आडम्बरों एंव दिखावे का विरोध किया।

2. मन में प्रभु स्मरण करना चाहिए।

3. यमक, अनुप्रास, रूपक अलंकार से काव्य सौन्दर्य में वृद्धि हुई है।

(11) सोना सज्जन साधुजन, टूटे जूरै सौ बार।

दुर्जन कुम्भ कुम्हार के, एकै धक्का दरार॥11।

प्रसांग–पूर्ववत्। इसे दोहे में कबीर दास जी ने सज्जन और दुर्जन व्यक्तियों के विषय में बताया है।

भावार्थ–सज्जन पुरुष तो सोने के समान होता है जो सौ बार टूटने पर भी सौ बार जुड़ जाता है किन्तु दुर्जन व्यक्ति तो कुम्हार के घड़े के समान है जिस पर यदि तनिक भी चोट पड़ जाए तो उसमें दरार पड़ जाती है। ऐसे दुष्ट व्यक्ति कठिनाई पड़ने पर साथ नहीं देते। अर्थात् सदा सज्जन व्यक्ति की संगति करनी चाहिए।

विशेष– 1. सज्जन और दुर्जन व्यक्तियों का अन्तर बताया है।

2. उपमा एवं अनुप्रास अलंकार की छटा दर्शनीय है।

3. स्वर मैत्री है।

4. उदाहरण शैली का प्रयोग क्रिया गया है।

(12) तिनका कबहूँ न निन्दिए, जौ पायन तरहोयी

कबहुँ उड़ आँखिन परे पीर घनेरी होय॥ 12।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रसंग–पूर्ववत्। कबीर दास जी ने मनुष्य को निन्दा भाव से दूर रहने का उपदेश दिया है।

भावार्थ–कबीर जी कहते हैं कि पाँव के नीचे कुचले जाने वाले तिनके की भी कभी निन्दा नहीं करनी चाहिए क्योंकि यदि वह कभी उड़कर आँखों में पड़ जाए तो उससे बहुत अधिक पीड़ा होती है। अर्थात् तुच्छ से तुच्छ प्राणी की भी निन्दा नहीं करनी चाहिए क्योंकि कभी वह भी कष्टकारक बन सकता है।

विशेष– 1. किसी की कभी निन्दा न करने का उपदेश दिया है।
2. अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।
3. स्वर मैत्री है। सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।
4. उपदेशात्मक शैली है।

(II) मुरझाया फूल

था कली के रूप शैशव,
में अहा, सूखे सुमन।
हास्य करता था, खिलाती,
अंक में तुझको पवन॥ 1।
खिल गया जब पूर्ण तू,
मंजुल सुकोमल पुष्प बन।
लुब्ध मधु के हेतु मँडराने,
लगे, उड़ते भ्रमर॥ 2।
स्निग्ध किरणें चन्द्र की,
तुझको हँसाती थी सदा।
अस मुक्ता-जाल से,
शृंगारती थीं सर्वदा॥ 3।
वायु पंखा झल रही,
निन्द्रा विवश करती मुझे।
यत्न माली का रहा,
आनन्द से भरता तुझे॥ 4।
कर रही अठखेलियाँ,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
इतरा सदा उद्यान में।
अंत का यह दृश्य आया
था कभी क्या ध्यान में ॥ 5 ।
सो रहा अब तू धरा पर,
शुष्क बिखराया हुआ।
गन्ध कोमलता नहीं,
मुख-मन्जु मुरझाया हुआ ॥ 6 ।
आज तुझ को देखकर,
चाहक भ्रमर आता नहीं।
वृक्ष भी खोकर तुझे,
हां, अश्रु बरसाता नहीं ॥ 7 ।
जिस पवन ने अंक में,
ले, प्यार था तुझको किया।
तीव्र झोंके से सुला
उसने तुझे भू पर दिया ॥ 8 ।
कर दिया मधु और सौरभ
दान सारा एक दिन।
किन्तु रोता कौन है,
तेरे लिए दानी सुमन ॥ 9 ।
मत व्यथित हो पुष्प, किसको
सुख दिया संसार ने ?
स्वार्थमय सबको बनाया
है यहाँ करतार ने ॥ 10 ।
विश्व में हे पुष्प! तू
सबके हृदय भाता रहा।
दान कर सर्वस्व फिर भी
हाय, हर्षाता रहा ॥ 11 ।
CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

जब न तेरी ही दशा पर,

दु:ख हुआ संसार को।

कौन रोयेगा सुमन,

हम से मनुज निस्सार को॥ 12। —महादेवी वर्मा

(II) मुरझाया फूल कविता के भावार्थ

संकेत—था कली के रूप .... भ्रमर॥

प्रसंग—प्रस्तुत पंक्तियाँ 'कवयित्री महादेवी वर्मा' द्वारा रचित कविता 'मुरझाया फूल' में से उद्धृत की गई हैं। इन पंक्तियों में कवयित्री सूखे सुमन को सम्बोधित करती हुई कहती है कि जब वह खिला हुआ फूल था तब सभी उसको चाहते थे, सभी उसके प्रशंसक थे पर आज जब मुरझा गया है तो उसे कोई नहीं पूछता। सूखे हुए फूल के माध्यम से कवयित्री मनुष्य को यह बताना चाहती हैं कि जब मनुष्य साधनहीन होता है उसे कोई नहीं चाहता।

व्याख्या—हे सूखे हुए फूल ! जब तेरा बचपन कली के रूप में था तब हवा तुझे गोद में भर कर खिलाती थी, तुझे हँसाती थी। जब तू कली से खिलकर सुन्दर फूल बन गया तब भौंरे मधु प्राप्त करने के मोह में तेरे आसपास मँडराते थे, तेरे ऊपर उड़ते थे। अर्थात् संसार में सार्मथ्यवान व्यक्ति की पूछ होती है। सभी उसे पसन्द करते हैं।

विशेषभाव— 1. हवा का मानवीकरण किया गया है।

2. संबोधन शैली का प्रयोग किया गया है।

3. सूखे सुमन में अनुप्रास अलंकार की छटा दर्शनीय है।

4. कविता में स्वर मैत्री है।

5. मंजुल सुकोमल विशेषण पुष्प के लिए सटीक हैं। भौंरे के माध्यम से मनुष्य की स्वार्थ प्रवृत्ति को उजागर किया है।

संकेत— स्निग्ध किरणें .... भरता तुझे॥

प्रसंग— पूर्ववत्।

व्याख्या—कवयित्री फूल से कहती है कि जब तू खिला था तब चन्द्रमा की कोमल किरणें तुझे हँसाती थीं अर्थात् तुझ पर बरस कर तुझे खिलाती थीं। ओस अपने मोती रूपी जालों से हमेशा तुम्हारा श्रृंगार करती थी अर्थात् जब ओस की बूंदें फूल पर गिरती हैं तो फूल का सौन्दर्य बढ़ जाता है। जब हवा चलती है तो ऐसा प्रतीत होता है कि हवा पंखा हिला कर फूल को सुलाने का प्रयत्न कर रही है और उस समय नींद फूल को सोने के लिए बाध्य करती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
माली उपने प्रयत्नों से तेरे अन्दर खुशियाँ भरता है अर्थात् माली फूलों की देखभाल करके उन्हें पुष्पित और विकसित होने में सहायता करता है। इसी प्रकार बच्चों के विकास में माली की तरह माता-पिता देखभाल करते हैं।

विशेष भाव–1. चन्द्रमा, ओस एवं हवा का मानवीकरण किया गया है।

2. रूपक, अनुप्रास अलंकारों के प्रयोग से काव्य सौन्दर्य में वृद्धि हुई है।
3. कविता में माधुर्य गुण है।
4. भाषा में चित्रात्मकता एवं दृश्य बिम्ब विधान है।
5. प्रकृति का मनोरम चित्रण किया गया है।
6. स्वर मैत्री है। तत्सम तद्भव शब्दों का प्रयोग है।
7. फूलों के विकास के लिए माली का महत्त्व बताया है।

संकेत– कर रहा .... मुरझाया हुआ।

प्रसंग–पूर्ववत्।

व्याख्या–कवयित्री कहती है कि फूल विकसित होकर खिलकर बगीचे में अठखेलियाँ करता हुआ इतराता है परन्तु उसे अपने इस अंतिम दृश्य का कभी ध्यान नहीं आता कि मुरझा जाने पर उसका महत्त्व समाप्त हो जाएगा कोई साथ नहीं देगा अर्थात् फूल के माध्यम से मनुष्य की यौवन अथवा वृद्धावस्था को दर्शाया गया है। व्यक्ति भी फूल की भाँति यौवन अवस्था में अब इतराता है तब उसे अपनी वृद्धावस्था का ध्यान नहीं आता। कवयित्री कहती है कि हे फूल ! सूखने पर यानि मुरझाने पर तू धरती पर बिखरा पड़ा होता है, तुझमें खुशबू और कोमलता नहीं रहती। तेरा सुन्दर मुख मुरझा जाता है उसी प्रकार वृद्धावस्था के आने पर व्यक्ति के यौवन अवस्था का सौन्दर्य समाप्त हो जाता है।

विशेष– 1. फूल का मानवीकरण किया हैं।

2. 'कभी क्या', मुख-मन्जु में अनुप्रास अलंकार का प्रयोग किया गया है।
3. अभिधा शब्द शक्ति है।
4. भाषा में सरसता, कोमलता एवं चित्रात्मकता है।
5. प्रकृति के माध्यम से मनुष्य के जीवन की अवस्थाओं पर प्रकाश डाला गया है।

संकेत– आज तुझको .... भू पर दिया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रसंग–पूर्ववत्।

व्याख्या–कवयित्री फूल से कहती है कि हे फूल ! जो भौरा तेरे ऊपर आकर्षित होकर तेरे पास आता था। आज तुझे मुरझाया हुआ देखकर तेरे पास नहीं आता। जिस पेड़ पर तू खिला था, वह पेड़ तुझे खोकर अर्थात् तेरे मुरझा जाने पर तेरे दु:ख में दु:खी होकर आँसू नहीं बहाता है।

जिस हवा ने तुझे गोद में लेकर खिलाया था, तुझे प्यार किया था उसी ने अपनी तेज हवा के झोंके से तुझे जमीन पर गिरा दिया अर्थात् तेज हवा के चलने पर मुरझाये हुए फूल पेड़ से टूट कर नीचे गिर जाते हैं।

विशेष– 1. भौरे, हवा एवं वृक्ष का मानवीकरण किया है।
2. फूल की खिलने की अवस्था और मुरझाने की स्थिति में अन्तर प्रस्तुत किया।
3. स्वर मैत्री, अनुप्रास अलंकार से काव्य सौन्दर्य में वृद्धि हुई है।
4. भाषा में चित्रात्मकता, लयात्मकता है।
5. अमिधा शब्द शक्ति से कविता सरल सरस बन गई है।

संकेत– कर दिया मधु .... करतार ने॥

प्रसंग–पूर्ववत्।

व्याख्या–कवयित्री कहती है, हे फूल ! तूने इस प्रकृति को एक दिन अपनी सारी खुशबू और मधु लुटा दी परन्तु तेरे जीवन के अन्त होने पर तेरे लिये कोई द:खी नहीं होता है। इसी प्रकार व्यक्ति इस संसार के लिये अपना सब कुछ लुटा देता है परन्तु उसके अन्त होने पर कोई दु:खी नहीं होता।

हे फूल ! तू दु:खी मत हो क्योंकि यह संसार ऐसा ही है। इस संसार ने किसी को सुख नहीं दिया है। ऐसा लगता है भगवान् ने संसार में सबको स्वार्थी बनाया है।

विशेष– 1. फूल की परोपकारी वृत्ति पर प्रकाश डाला गया है।
2. संबोधन एवं प्रश्नात्तमक शैली है।
3. फूल के माध्यम से मनुष्य को सीख दी गई है।
4. भाषा में सरसता, प्रवाहमयता, लयात्मकता है।
5. माधुर्य गुण है।
6. प्रकृति प्रेरणादायी है।

संकेत– विश्व में हे पुष्प .... निस्सार को।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रसंग–पूर्ववत्। कवयित्री ने पंक्तियों में मनुष्य को दान करने की प्रेरणा दी है तथा संसार की स्वार्थ प्रकृति को उजागर किया है।

व्याख्या–कवयित्री कहती है, हे पुष्प ! तूने अपनी खुशबू और सुन्दरता से सारे संसार के हृदय को आकर्षित किया है, अपना सब कुछ देकर लोगों को खुश करता रहा है।

जब संसार के लोग फूल के मुरझाने पर दुःखी नहीं होते जिस फूल ने उन्हें अपनी खुशबू देकर आकर्षित किया तो उस मनुष्य के लिये कोई संसार के क्यों रोएगा, क्यों दुख मनाएगा जिस मनुष्य का उनके जीवन के लिये कोई महत्त्व नहीं है।

विशेष– 1. मनुष्य की स्वार्थ प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला है।
2. प्रश्नात्मक एवं संबोधन शैली का प्रयोग हुआ है।
3. भाषा में स्वर मैत्री है।
4. अनुप्रास अलंकार, मानवीकरण अलंकार का प्रयोग है।
5. भाषा में चित्रात्मकता, लयात्मकता, एवं प्रवाहमयता है।
6. अभिधा शब्द शक्ति का प्रयोग है।

III. गिल्लू (कहानी)

सोनजुही में आज एक पीली कली लगी है। उसे देखकर अनायास ही उस छोटे जीव का स्मरण हो आया, जो इस लता की सघन हरीतिमा में छिपकर बैठता था और फिर मेरे निकट पहुँचते ही कंधे पर कूदकर मुझे चौंका देता था। तब मुझे कली की खोज रहती थी, पर आज उस लघु प्राणी की खोज है।

परन्तु वह तो अब तक इस सोनजुही की जड़ में मिट्टी होकर मिल गया होगा। कौन जाने, स्वर्णिम कली के बहाने वही मुझे चौंकाने ऊपर आ गया हो।

अचानक एक दिन सवेरे कमरे से बरामदे में आकर मैंने देखा, दो कौए एक गमले के चारों ओर चोंचों से छुवा-छुवौवल जैसा खेल-खेल रहे हैं। यह काक मुशुंडि भी विचित्र पक्षी है– एक साथ समादरित, अनादरित, अति सम्मानित, अति अवमानित।

हमारे बेचारे पुरखे न गरूड़ के रूप में आ सकते हैं, न मयूर के , न हंस के। उन्हें पितरपक्ष में हमसे कुछ पाने के लिए काक बनकर ही अवतीर्ण होना पड़ता है। इतना ही नहीं, हमारे दूरस्थ प्रियजनों को भी अपने आप का मधु संदेश इनके कर्कश स्वर में ही दे देना पड़ता है। दूसरी ओर हम कौआ और काँव-काँव करने की अवमानना के अर्थ में ही प्रकट करते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेरे काकपुराण के विवेचन में अचानक बाधा आ पड़ी, क्योंकि गमले और दीवार की संधि में छिपे एक छोटे से जीव पर मेरी दृष्टि रुक गई। निकट जाकर देखा, गिलहरी का छोटा सा बच्चा है, जो संभवत: घोंसले से गिर पड़ा है और अब कौए जिसमें सुलभ आहार खोज रहे हैं।

काकद्वय की चोंचों के दो घाव उस लघु प्राण के लिए बहुत थे। अत: वह निश्चेष्ट-सा गमले में चिपटा पड़ा था।

सबने कहा कि कौए की चोंच का घाव लगने के बाद यह बज नहीं सकता, अत: इसे ऐसे ही रहने दिया जाए।

परन्तु मन नहीं माना, उसे हौले से उठाकर अपने कमरे में ले आई, फिर रूई से रक्त पोंछकर घावों पर पैन्सिलिन का मरहम लगाया।

रूई की पतली बत्ती दूध में भिगोकर जैसे-तैसे उसके नन्हें से मुँह में लगाई, पर मुँह खुल न सका और दूध की बूँदे दोनों ओर ढुलक गईं।

कई घंटे के उपचार के उपरान्त उसके मुँह में एक बूंद पानी टपकाया जा सका। तीसरे दिन वह इतना अच्छा और आश्वस्त हो गया कि मेरी उँगली अपने दो नन्हें पंजों से पकड़कर नीले कांच की मोतियों जैसे आँखों से इधर-उधर देखने लगा।

तीन-चार मास में उसके स्निग्ध रोयें, झब्बेदार पूँछ और चंचल चमकीली आँखें सबको विस्मित करने लगीं।

हमने उसकी जातिवाचक संज्ञा को व्यक्तिवाचक का रूप दे दिया और इस प्रकार हम उसे गिल्लू बुलाने लगे। मैंने फूल रखने की एक हल्की डलिया में रूई बिछाकर उसे तार से खिड़की पर लटका दिया।

वही दो वर्ष गिल्लू का घर रहा। वह स्वयं हिलाकर अपने घर में झूलता और अपनी काँच के मनकों सी आँखों से कमरे के भीतर और खिड़की से बाहर न जाने क्या देखता समझता रहता था। परन्तु उसकी समझदारी और कार्यकलाप पर सबको आश्चर्य होता था।

जब मैं लिखने बैठती तब अपनी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करने की उसे इतनी तीव्र इच्छा होती थी कि उसने एक अच्छा उपाय खोज निकाला। वह मेरे पैर तक आकर सर्र से परदे पर चढ़ जाता और फिर उसी तेजी से उतरता। उसका यह दौड़ने का क्रम तब तक चलता जब तक मैं उसे पकड़ने के लिए न उठती।

कभी मैं गिल्लू को पकड़कर एक लंबे लिफ़ाफ़े में इस प्रकार रख देती कि अगले दो पंजों और सिर के अतिरिक्त सारा लघु गात लिफ़ाफ़े के भीतर बंद रहता। इस अद्भुत स्थिति

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में कभी-कभी घंटों मेज़ पर दीवार के सहारे खड़ा रहकर वह अपनी चकमीली आँखों से मेरा कार्यकलाप देखा करता।

भूख लगने पर चिक्-चिक् करके मानो वह मुझे सूचना देता और काजू या बिस्कुट मिल जाने पर उसी स्थिति में लिफ़ाफ़े से बाहर वाले पंजों से पकड़कर उसे कुतरता रहता।

फिर गिल्लू के जीवन का प्रथम बसंत आया। नीम-चमेली की गंध मेरे कमरे में धीरे-धीरे आने लगी। बाहर की गिलहरियाँ खिड़की की जाली के पास आकर चिक्- चिक् करके न जाने क्या कहने लगीं। गिल्लू को जाली के पास बैठकर अपनेपन से बाहर झाँकते देखकर मुझे लगा कि इसे मुक्त करना आवश्यक है।

मैंने कीलें निकाल कर जाली का एक कोना खोल दिया। और इस मार्ग से गिल्लू ने बाहर जाने पर सचमुच ही मुक्ति की साँस ली। इतने छोटे जीव को घर में पले कुत्ते-बिल्लियों से बचाना भी एक समस्या ही थी।

आवश्यक काग़ज़--पत्री के कारण मेरे बाहर जाने पर कमरा बंद ही रहता है। मेरे कालेज से लौटने पर जैसे ही कमरा खोला गया और मैंने भीतर पैर रखा, वैसे ही गिल्लू जाली के द्वार से भीतर आकर मेरे पैर से सिर और सिर से पैर तक दौड़ लगाने लगा। तबसे यह नित्य का क्रम हो गया।

मेरे कमरे से बाहर जाने पर गिल्लू भी खिड़की की खुली जाली की राह बाहर चला जाता और दिन भर गिलहरियों के झुंड का नेता बना, हर डाल पर उछलता-कूदता रहता और ठीक चार बजे वह खिड़की से भीतर आकर अपने झूले में झूलने लगता।

मुझे चौंकाने की इच्छा उसमें न जाने कब और कैसे उत्पन्न हो गई थी। कभी फूलदान के फूलों में छिप जाता, कभी परदे की चुन्नट में और कभी सोनजुही की पत्तियों में।

मेरे पास बहुत-से पशु पक्षी हैं और उनका मुझसे लगाव भी कम नहीं है, परन्तु उनमें से किसी की मेरे साथ मेरी थाली में खाने की हिम्मत हुई है, ऐसा स्मरण नहीं आता।

गिल्लू इनमें अपवाद था। मैं जैसे ही खाने के कमरे में पहुँचती, वह खिड़की से निकलकर आँगन की दीवार, बरामदा पार करके मेज पर पहुँच जाता और मेरी थाली में बैठ जाना चाहता। बड़ी कठिनाई से मैंने उसे थाली के पास बैठना सिखाया, जहाँ बैठकर वह मेरी थाली में से एक-एक चावल उठाकर बड़ी सफ़ाई से खाता रहता। काजू उसका प्रिय खाद्य था और कई दिन काजू न मिलने पर वह अन्य खाने की चीज़ें या तो लेना बन्द कर देता था या झूले के नीचे फेंक देता था।

उसी बीच मुझे मोटर दुर्घटना में आहत होकर कुछ दिन अस्पताल में रहना पड़ा। उन दिनों जब मेरे कमरे का दरवाज़ा खोला जाता, गिल्लू अपने झूले से उतरकर दौड़ता और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फिर किसी दूसरे को देखकर उसी तेज़ी से अपने घोंसले में जा बैठता। सब उसे काजू दे जाते, परन्तु अस्पताल से लौटकर जब मैंने उसके झूले की सफ़ाई की तो उसमें काजू भरे मिले, जिनसे ज्ञात हुआ वह उन दिनों अपना प्रिय खाद्य, कम खाता रहा।

मेरी अस्वस्थता में वह तकिये पर सिरहाने बैठकर अपने नन्हें-नन्हें पंजों से मेरे सिर और बालों को इतने हौले-हौले सहलाता रहता कि उसका हटना एक पारिचारिका के हटने के समान लगता।

गर्मियों में जब मैं दोपहर में काम करती रहती तो गिल्लू न बाहर जाता, न अपने झूले में बैठता। उसने मेरे निकट रहने के साथ गर्मी से बचने का एक सर्वथा नया उपाय खोज निकाला था। वह मेरे पास रखी सुराही पर लेट जाता और इस प्रकार समीप भी रहता और ठंडक में भी रहता।

गिलहरियों के जीवन की अवधि दो वर्ष से अधिक नहीं होती। अतः गिल्लू की जीवन-यात्रा का अंत आ ही गया। दिन भर उसने न कुछ खाया और न बाहर गया। रात में अंत की यातना में भी वह अपने झूले से उतर कर मेरे बिस्तर पर आया और ठंडे पंजों से मेरी बड़ी उँगली पकड़ कर हाथ से चिपक गया, जिसे उसने अपने बचपन की मरणासन्न स्थिति में पकड़ा था।

पंजे इतने ठंडे हो रहे थे कि मैंने जागकर हीटर जलाया और उसे उष्णता देने का प्रयत्न किया। परन्तु प्रभात की प्रथम किरण के स्पर्श के साथ ही वह किसी और जीवन में जागने के लिए सो गया।

उसका झूला उतारकर रख दिया है और खिड़की की जाली बंद कर दी गई है, परन्तु गिलहरियों की नई पीढ़ी जाली के उस पार चिक्-चिक् करती ही रहती है और सोनजुही पर बसंत आता ही रहता है।

सोनजुही की लता के नीचे गिल्लू की समाधि दी गई है, इसलिए भी कि उसे वह लता सबसे अधिक प्रिय थी, इसलिए भी कि उस लघु गात का किसी बासंती दिन, जूही के पीलाभ छोटे-फूल में खिल जाने का विश्वास मुझे संतोष देता है। – महादेवी वर्मा

IV. नीलकण्ठ

प्रयाग जैसे शांत और सांस्कृतिक आश्रम-नगर में नखास-कोना एक विचित्र स्थिति रखता है। जितने दंगे-फ़साद और छुरे-चाकूबाजी की घटनाएं घटित होती हैं, सबका अशुभारम्भ प्रायः खास कोने से ही होता है।

उसकी कुछ और भी अनोखी विशेषताएं हैं। घास काटने की मशीन के बड़े चौड़े चाकू से लेकर फ़रसा, कुलहाड़ी, आरी, छुरी आदि में धार रखने वालों तक ही दुकानें वहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हैं। अर्थात् गोंठिल चाकू-छुरी को पैना करने के लिए दूर जाने की आवश्यकता नहीं है। आंखों का सरकारी अस्पताल भी वहीं प्रतिष्ठित है। शत्रु-मित्र की पहचान के लिए दृष्टि कमज़ोर हो तो वहां ठीक कराई जा सकती है, जिससे कोई भूल होने की संभावना न रहे। इसके अतिरिक्त एक और अस्पताल उसी कोने में गरिमापूर्ण ऐतिहासिक स्थिति रखता है। आहत, मुंमु व्यक्ति की दृष्टि से यह विशेष सुविधा है। यदि अस्पताल के अन्तः कक्षों में स्थान न मिलें, यदि डॉक्टर, नर्स आदि का दर्शन दुर्लभ रहे तो बरामदे-पोर्टिको आदि में विश्राम प्राप्त हो सकता है ; और यदि वहां भी स्थानालाभ न हो, तो अस्पताल के कंपाउड में मरने का संतोष तो मिल ही सकता है।

हमारे देश में अस्पताल साधारण जन को अंतिम यात्रा में संतोष देने के लिए ही तो हैं। किसी प्रकार घसीटकर, योग कर उस सीमा रेखा में पहुंचा आने पर बीमार और उसके परिचारकों को एक अनिर्वचनीय आत्मिक सुख प्राप्त होता है। इससे अधिक पाने की न उसकी कल्पना है, न मांग। कम-से-कम इस व्यवस्था ने अंतिम समय मुख में गंगाजल, तुलसी, सोना डालने की समस्या तो सुलझा ही दी है।

यहां मत्स्य-क्रय-विक्रय केन्द्र भी हैं और तेल-फुलेल की दुकानें भी, मानो दुर्गंध-सुगंध में समरसता स्थापित करने का अनुष्ठान हैं। पर नखासकोने के प्रति मेरे आकर्षण का कारण उपयुक्त विशेषताएं नहीं हैं। वस्तुतः वह स्थान मेरे ख़रगोश, कबूतर, मोर, चकोर आदि जीव-जंतुओं का कारागार भी हैं। अस्पताल के सामने की पटरी पर कई छोटे-छोटे घर और बरामदे हैं, जिनमें ये जीव-जंतु तथा इनके कठिन हृदय जेलर दोनों निवास करते हैं।

छोटे-बड़े अनेक पिंजड़े बरामदे में और बाहर रखे रहते हैं, जिसमें दो खरगोशों के रहने के स्थान में पचीस और चिड़ियों के रहने के स्थान में पचास भरी रहती हैं। इन छोटे जीवों को हंसने-रोने के लिए भिन्न ध्वनियां नहीं मिली हैं। अतः इनका महाकलरव महाक्रंदन भी हो तो आश्चर्य नहीं। इन जीवों के कष्ट निवारण का कोई उपाय न सूझ पाने पर भी वे अपने आपको उस पर जाने से नहीं रोक पाती। किसी पिंजड़े में पानी न देखकर उसमें पानी रखवा देती हूं। दाने का अभाव हो, तो दाना डलवा देती हूं। कुछ चिड़ियों को खरीदकर उड़ा देती हूं। जिनके पंख काट दिए गए हैं, उन्हें ले आती हूं। परंतु फिर जब उस ओर पहुंच जाती हूं सब कुछ पहले जैसा ही कष्टकर मिलता है।

उस दिन एक अतिथि को स्टेशन पहुंचा कर लौट रही थी कि चिड़ियों और खरगोशों की दुकान का ध्यान आ गया और मैंने ड्राइवर को उसी ओर चलने का आदेश दिया।

बड़े मियां चिड़िया वाले की दुकान के निकट पहुंचते ही उन्होंने सड़क पर आकर ड्राइवर को रुकने का संकेत दिया। मेरे कोई प्रश्न करने के पहले ही उन्होंने कहना आरंभ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किया, 'सलाम गुरू जी। पिछली बार आने पर आपने मोर के बच्चों के लिए पूछा था। शंकरगढ़ से एक चिड़ीमार दो मोर के बच्चे पकड़ लाया है, एक मोर है, एक मोरनी। आप पाल लें। मोर के पंजों से दवा बनती है, सो ऐसे ही लोग ख़रीदने आए थे। आखिर मेरे सीने में भी इनसान का दिल है। मारने के लिए ऐसी मासूम चिड़ियों को कैसे दे दें ? टालने के लिए मैंने कह दिया गुरू जी ने मंगवाए हैं। वैसे, यह कम्बख्त रोज़गार ही ख़राब है। बस, पकड़ो-पकड़ो, मारो-मारो।'

बड़े मिया के भाषण की तूफ़ान मेल के लिए कोई निश्चित स्टेशन नहीं है। सुननेवाला थककर जहां रोक दे, वही स्टेशन मान लिया जाता है। इस तथ्य से परिचित होने के कारण ही मैंने बीच में उन्हें रोककर पूछा, 'मोर के बच्चे हैं कहां ?' बड़े मियां के हाथ के संकेत का अनुसरण करते हुए मेरी दृष्टि एक तार के छोटे से पिंजड़े तक पहुंची, जिसमें तीतरों के समान दो बच्ची बैठे थे। मोर हैं, यह मान लेना कठिन था। पिंजड़ा इतना संकीर्ण था कि वे पक्षिशावक जाली के गोल फ्रेम में कसे-जड़े चित्र-जैसे लग रहे थे।

मेरे निरीक्षण के साथ-साथ बड़े मियां की भापण मेल चली जा रही थी। 'ईमान-कसम, गुरू जी चिड़मार ने मुझसे इस मोर के जोड़े के नकद तीस रूपए लिए हैं। बारहा कहा, भई जरा सोच तो, अभी इनमें मोर की कोई ख़ासियत भी है कि तू इतनी बड़ी कीमत ही भोगने चला पर वह मूजी क्यों सुनने लगा ? आपका ख़याल करके अछूता पछताकर देना ही पड़ा। अव आप जो मुनासिब समझें। अस्तु तीस चिड़िमार के नाम के और पांच बड़े मियां के ईमान के देकर जब मैंने वह छोटा पिंजरा कार में रखा, तब मानो वह जाली के चोखटे का चित्र जीवित हो गया। दोनों पक्षिशावकों के छटपटाने से लगता था, मानो पिंजड़ा ही सजीव और उड़ने योग्य हो गया है।'

थर पहुंचने पर सब कहने लगे, तीतर है, मोर कहकर ठग लिया है।

कदाचित अनेक बार ठगे जाने के कारण ही ठगे जाने की बात पर मेरे चिढ़ जाने की दुर्बलता बन गई है। अप्रसत्र होकर मैंने कहा। मोर के क्या सुर्खाब के पर लगे हैं ? है तो पक्षी ही। और तीतर-बटेर क्या लंबी पूंछ होने के कारण उपेक्षा-योग्य पक्षी है ? चिढ़ा दिए जाने के कारण ही संभवतः उन दोनों पक्षियों के प्रति मेरे व्यवहार और यत्न में कुछ विशेषता आ गई।

पहले अपने पढ़ने-लिखने के कमरे में उनका पिंजड़ा रखकर उसका दरवाज़ा खोला, फिर दो कटोरों में सतू की छोटी-छोटी गोलियां और पानी रखा। वे दोनों चूहेदानी जैसे पिंजड़े से निकलकर कमरे में मानो खो गए। कभी मेज़ के नीचे घुस गए, कभी अलमारी के पीछे। अंत में इस लुका छिपी से थककर उन्होंने मेरे रद्दी काग़ज़ों की टोकरी को अपने नए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गौरों का गौरव प्रदान किया। दो-चार दिन वे इसी प्रकार दिन में इधर-उधर गुप्तवास करते और रात में रद्दी की टोकरी में प्रकट होते रहे। फिर आश्वस्त हो जाने पर कभी मेरी मेज़ पर, कभी कुर्सी पर और कभी मेरे सिर पर अचानक आविर्भूत होने लगे। खिड़कियों में तो जाली लगी थी, पर दरवाज़ा मुझे निरंतर बंद रखना पड़ता था। खुला रहने पर चित्रा (मेरी बिल्ली) इन नवागंतुकों का पता लगा सकती थी और तब उसकी शोध का क्या परिणाम होता, यह अनुमान करना कठिन नहीं है। वैसे, वह चूहों पर भी आक्रमण नहीं करती, परन्तु यहां तो दो सर्वथा अपरीचित पक्षियों की अनाधिकार चेष्टा का प्रश्न था। उसके लिए दरवाज़ा बंद रहे और ये दोनों (उसकी दृष्टि में) ऐरे-गैरे मेरी मेज़ को अपना सिंहासन बना लें, यह स्थिति चित्रा-जैसी अभिमानिनी मार्जारी के लिए असहज ही कही जाएगी।

जब मेरे कमरे का कायाकल्प चिड़ियाखाने का रूप में होने लगा, तब मैंने बड़ी कठिनाई से दोनों चिड़ियों को पकड़कर जाली के बड़े घर में पहुंचाया जो मेरे जीव-जंतुओं का सामान्य निवास है।

दोनों नवांगतुकों ने पहले से रहने वालों में वैसा कूतूहल जगाया, जैसा नववधु के आगमन पर परिवार में स्वाभाविक है। लक्का कबूतर नाचना छोड़कर दौड़ पड़े और चारों ओर घूम-घूमकर गुटर्गूं की रागिनी अलापने लगे। बड़े खरगोश सभ्य सभासदों के समान क्रम से बैठ कर गंभीर भाव से निरीक्षण करने लगे। उन की गेंद-जैसे छोटे खरगोश उनके चारों ओर उछल कूद मचाने लगे। तोते मानो भलीभांति देखने के लिए एक आंख बंद करके उनकी परीक्षण करने लगे। ताम्रचूड़ झूले से उतरकर और दोनों पंखों को फैलाकर शोर करने लगा। उस दिन मेरे चिड़ियाघर में मानो भूचाल आ गया।

धीरे-धीरे दोनों मोर बच्चे बढ़ने लगे। उनका कायाकल्प वैसा ही क्रमशः और रंगमय था, जैसा इल्ली से तितली का बनना।

मोर के सिर की कलगी और सघन, ऊंची तथा चमकीली हो गई। चोंच अधिक बंकिम और पैनी हो गई, गोल आंखों में इंद्रनील की नीलाभ द्युति झलकने लगी। लंबी नील-हरित ग्रीवा की हर भंगिमा में छूपछाहीं तरंगें उठने-गिरने लगीं। दक्षिण-वाम दोनों पंखों में सलेटी और सफ़ेद अलोखन स्पष्ट होने लगे। पूंछ लंबी और उसके पंखों पर चंद्रिकाओं के इन्द्र धनुषी रंग उद्दीप्त हो उठे। रंग-रहित पैरों को गर्वीली गति ने एक नई गरिमा से रंजित कर दिया। उसका गर्दन ऊंची कर देखना, विशेष भंगिमा के साथ उसे नीचा कर दाना चुगना, पानी पीना, टेढ़ी कर शब्द सुनना आदि क्रियाओं में जो शुकुभारता आदि सौन्दर्य था, उसका अनुभव देखकर ही किया जा सकता है। गति का चित्र नहीं आंका जा सकता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मोरनी का विकास मोर के समान चमत्कारिक तो नहीं हुआ। परंतु अपनी लंबी छुपछांही गर्दन, हवा में चंचल कलगी, पंखों की श्याम-श्वे पत्रलेखा, मंथर गति आदि से वह भी मोर की उपयुक्त सहचारिणी होने का प्रमाण देने लगी।

नीलाभ ग्रीवा के कारण मोर का नाम रखा गया नीलकण्ठ और उसकी छाया के समान रहने के कारण मोरनी का नामकरम हुआ राधा।

मुझे स्वयं ज्ञात नहीं कि कब नीलकंठ ने अपने-आपको चिड़ियाघर के निवासी जीव-जंतुओं का सेनापति और संरक्षक नियुक्त कर लिया। सवेरे ही वह सब ख़रगोश, कबूतर आदि की सेना एकत्र कर उस ओर ले जाता, जहां दाना दिया जाता है और घूम-घूमकर सबकी रखवाली रकता रहता है। किसी ने कुछ गड़बड़ की और वह अपने तीखे चंचु प्रहार से उसे दंड देने दौड़ा।

ख़रगोश के छोटे शरीर और बच्चों को वह चोंच से उनके कान पकड़कर उठा लेता था और जब तक वे आर्त क्रंदन न करने लगते, उन्हें अधर में लटकाए रखता। कभी-कभी उसकी पैनी चोंच से खरगोश के बच्चों का कर्ण वेध-संस्कार हो जाता था, पर वे फिर कभी उसे क्रोधित होने का अवसर न देते थे। उसके दण्डविधान के समान ही उन जीव-जंतुओं के प्रति उसका प्रेम भी असाधारण था। प्राय: वह मिट्टी में पंखा फैला कर बैठ जाता और वे सब उसकी लंबी पूंछ और सघन-पंखों में छुआ-छुआ-जल-सा खेलते रहते थे।

एक दिन उसके अपत्य स्नेह का हमें ऐसा प्रमाण मिला कि हम विस्मित हो गए। कभी-कभी खरगोश, कबूतर आदि सांप के लिए आकर्षण बन जाते हैं और यदि जाली के घर में पानी निकलने के लिए बनी नालियों में से कोई खुली रह जाए तो उसका भीतर प्रवेश पा लेना सहज हो जाता है। ऐसी ही किसी स्थिति में एक सांप जाली के भीतर पहुंच गया।

सब जीव-जंतु भागकर इधर-उधर छिप गए, केवल एक शिशु खरगोष सांप की पकड़ में आ गया। निगलने के प्रयास मं सांप ने उसका आधा पिछला शरीर तो मुंह में दबा रखा था, शेष आधा जो बाहर था उससे चीं-चीं का स्वर भी इतना तीव्र नहीं निकल सकता था कि किसी को स्पष्ट सुनाई दे सके। नीलकंठ दूर ऊपर झूले में सो रहा था। उसी के चौकन्ने कानों ने उस मद वर की व्यथा पहचानी और वह पूंछ-पंख समेटकर सर्र- से एक झपट्टे में नीचे आ गया।

संभवत: अपनी सहज चेतना से ही उसने समझ लिया होगा कि साँप के फन पर चोंच मारने से खरगोश भी घायल हो सकता है। उसने साँप को फन के पास पंजों से दबाया और फिर चोंच से इतने प्रहार किए कि वह अधमरा हो गया। पकड़ ढीली पड़ते ही खरगोश का बच्चा मुख से निकल तो आया, परन्तु निश्चेष्ट-सा वहीं पड़ा रहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राधा ने सहायता देने की आवश्यकता नहीं समझी, परन्तु अपनी मंद केका से किसी असामान्य घटना की सूचना सब ओर प्रसारित कर दी। माली पहुँचा, फिर हम सब पहुँचे। नीलकंठ जब साँप के दो खंड कर चुका, तब उस शिशु खरगोष के पास गया और रात-भर उसे पंखों के नीचे रखे उष्णता देता रहा।

कार्तिकेय ने अपने युद्ध वाहन के लिए मयूर को चुना होगा यह उस पक्षी का रूप और स्वभाव देखकर समझ में आ जाता है।

मयूर कलाप्रिय पक्षी है, हिंसक-मात्र नहीं। इसी से उसे बाज, चील आदि की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता, जिनका जीवन ही क्रर कर्म है।

नीलकंठ में उसकी जातिगत विसषताएँ तो थी हीं, उनका मानवीकरण भी हो गया था।

मंथों की साँवली छाया में अपने इन्द्रधनुष के गुच्छे-जैसे पंखों को मंडलाकर बनाकर जब वह नाचता था, तब उस नृत्य में पंखों को मंडलाकर बनाकर जब वह नाचता था, तब उस नृत्य में एक सहजात लय-ताल रहता था। आगे-पीछे, दाहिने-बाएँ क्रम से घूमकर वह किसी अलक्ष्य सम पर ठहर-ठहर जाता था।

राधा नीलकंठ के समान नहीं नाच सकती थी, परन्तु उसकी गति में भी एक छंद रहता था। वह नृत्युमग्न नीलकंठ के दाहिनी ओर के पंखे को छूती हुई बाईं ओर निकल जाती थी और बाएँ पंख को स्पर्श कर दाहिनी ओर। इस प्रकार उसकी परिक्रमा में भी एक पूरक ताल का परिचय मिलता था। नीलकंठ ने कैसे समझ लिया कि उसका नृत्य मुझे वहुत भाता है, यह तो नहीं बताया जा सकता; परन्तु अचानक एक दिन वह मेरी जालीघर के पास पहुँचते ही अपने झूले से उतरकर नीचे आ गयाऔर पंखों का सतरंगी मंडलाकर छाता तानकर नृत्य की भंगिमा में खड़ा हो गया। तब से यह नृत्यु-भंगिमा नित्य का क्रम बन गई। प्राय: मेरे साथ कोई-न-कोई देशी विदेशी अतिथि भी पहुँच जाता था और नीलकंठ की मुद्रा को अपने प्रति सम्मान-सूचक समझकर विस्मयभिभूत हो उठता था। कई विदेशी महिलाओं ने उसे 'परफैक्ट जेंटिलमैन' की उपाधि दे डाली।

जिस नुकीली पैनी चोंच से वह भयंकर विपधर को खंड-खंड कर सकता था, उसी से मेरी हथेली पर रखे हुए भुने चने ऐसी कोमलता से हौले-हौले उठाकर खाता था कि हँसी भी आती थी और विस्मय भी होता था। फलों के वृक्षों से अधिक उसे पुष्पित और पल्लवित वृक्ष भाते थे।

बसंत में ज़ब आम के वृक्ष सुनहरी मंजरियों से लद जाते थे, अशोक नए लाल पल्लवों से ढँक जाता था, तब जालीघर में वह इतना अस्थिर हो उठाता था कि उसे बाहर छोड़ देना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पड़ता। पर जब तक राधा को भी मुक्त न किया जो, वह दरवाज़े के बाहर ही उपालंभ की मुद्रा में खड़ा रहता। मंजरियों के बीच नीलाभ झलक संध्या की छाया से सुनहले सरोवर में नीले कमल-दलों का भ्रम उत्पन्न कर देती थी। हवा से तरंगायित अशोक के रक्तिमाभ पत्तों में तो वह मूँगे के फलक पर मरकत से बना चित्र जान पड़ता था।

नीलकंठ और राधा की सबसे प्रिय ऋतु तो वर्षा ही थी, मेघों के उमड़ आने से पहले ही वे हवा में उसकी सजल आहट पा लेते थे और तब उनकी मंद्र केका की गूँज अनुगूँज तीव्र से तीव्रतर होती हुई मानो बूँदों के उतरने के लिए सोपान-पंक्ति बनने लगती थी। मेघ के गर्जन के ताल पर ही उसके तन्मय नृत्यु का आरम्भ होता और फिर मेघ जितना अधिक गरजता, बिजली जितनी अधिक चमकती, बूँदों की रिमझिम जितनी तीव्र होती जाती, नीलकंठ के नृत्य का वेग उतना ही बढ़ता जाता और उसकी केका का स्वर उतना ही मंद से मंदतर होता जाता। वर्षा के थम जाने पर वह दाहिने पंजे पर दाहिना पंख और बाएँ पर बायाँ पंख फैलाकर सुखाता। कभी-कभी वे दोनों एक दूसरे के पंखों से टपकने वाली बूँदों को चोंच से पी-पीकर पंखों का गीलापन दूर करते रहते।

इस आनदोत्सव की रागिनी में बेमेल स्वर कैसे बज उठा, वह भी एक करुण कथा है।

एक दिन मुझे किसी कार्य से नखासकोने से निकलना पड़ा और बड़े मियाँ ने पहले के समान कार को रोक लिया। इस बार किसी पिंजड़े की ओर नहीं देखूँगी, यह संकल्प करके मैंने बड़े मियाँ की बिरल दाढ़ी ओर सफेद डोरे से कान में बूँदे ऐनक को ही अपने ध्यान का केन्द्र बनाया। पर बड़े मियाँ के पैरों के पास, जो मोरनी पड़ी थी, उसे अनदेखा करना कठिन था।

मोरनी राधा-जैसी ही थी। उसके गूँज से बंधे दोनों पंजों की उंगलियां टूटकर इस प्रकार एकत्र हो गईं थीं कि वह खड़ी ही नहीं हो सकती थी।

बड़े मियाँ की भापण-मेल फिर दौड़ने लगी देखिए गुरुजी, कम्बख्त चिड़ीमार ने बेचारी का क्या हाल किया है। ऐसे कभी चिड़िया पकड़ी जाती है ? आप न आई होती तो मैं उसी के सिर उसे पटक देता। पर आपसे भी यह अधमरी मोरनी ले जाने को कैसे कहूँ।

सारांश यह कि सात रुपए देकर मैं उसे अगली सीट पर रखवाकर ले आई और एक बार फिर मेरे पढ़ने-लिखने का कमरा अस्पताल बना। पंजों की मरहम-पट्टी और देखभाल करने पर वह महीने भर में अच्छी हो गई। अँगुलियां वैसी ही टेढ़ी-मेढ़ी रहीं, परन्तु वह ठूँठ-जैसे पंजों पर डगमगाती हुई चलने लगी। तब उसे जालीघर में पहुँचाया गया और नाम रखा गया। कुब्जा। कुब्जा नाम के अनुरूप स्वभाव से भी वह कुब्जा प्रमाणित हुई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अब तक नीलकंठ और राधा साथ रहते थे। अब कुब्जा उन्हें साथ देखते ही मारने दौड़ती। चोंच से मार-मारकर उसने राधा की कलगी नोच डाली, पंख नोच डाले। कठिनाई यह थी कि नीलकंठ उससे दूर भागता था और वह उसके साथ रहना चाहती थी। न किसी जीव-जन्तु से उसकी मित्रता थी। न वह किसी को नीलकण्ठ के समीप आने देना चाहती थी। उसी बीच राधा ने दो अंडे दिए, जिनको वह पंखों में छिपाए बैठी रहती थी। पता चलते ही कुब्जा ने चोंच मार-मारकर राधा को ढकेल दिया और फिर अंडे फोड़कर ठूँठ-जैसे पैरों से सब ओर छितरा दिए।

हमने उसे अलग बंद किया, तो उसने दाना-पानी छोड़ दिया और जाली पर सिर पटक-पटक कर घायल कर लिया।

इस कलप-कोलाहल से और उससे भी अधिक राधा की दूरी से बेचारे नीलकंठ की प्रसन्नता का अंत हो गया।

कई बार जाली के घर से निकल भागा। एक बार कई दिन भूखा-प्यासा आम की शाखाओं में छिपा बैठा रहा, जहाँ से बहुत पुचकारकर मैंने उतारा। एक बार मेरी खिड़की के शेड पर छिपा रहा।

मेरे दाना देने पर सदा के समान अब भी को मंडलाकार बनाकर खड़ा हो जाता था, पर उसकी चाल में थकावट और आँखों में एक शून्यता रहती थी। अपनी अनुभवहीनता के कारण ही मैं आशा करती रही कि थोड़े दिन बाद सबसे मेल हो जाएगा। अंत में तीन-चार मास के उपरांत एक दिन सवेरे जाकर देखा कि नीलकंठ पूँछ-पंख फैलाए धरती पर उसी प्रकार बैठा हुआ है, जैसे ख़रगोश के बच्चों को पंखों में छिपाकर बैठता था। मेरे पुकारने पर भी उसके न उठने पर संदेह हुआ।

वास्तव में नीलकंठ मर गया था। 'क्यों' का उत्तर तो अब तक नहीं मिल सका है। न उसे कोई बीमारी हुई, न उसके रंगबिरंगे फूलों के स्तबक जैसे शरीर पर किसी चोट का चिन्ह मिला। मैं अपने शाल में लपेटकर उसे संगल ले गई। जब गंगा की बीच धार में उसे प्रवाहित किया गया। तब उसके पंखों की चंद्रिकाओं से बिम्बित-प्रतिबिम्बित होकर गंगा का चौड़ा पाट एक विशाल मयूर के समान तरंगित हो उठा।

नीलकंठ के न रहने पर राधा तो निश्चेष्ट-सी कई दिन कोने में बैठी रही। वह कई बार भागकर लौट आया था, अतः वह प्रतीक्षा के भाव से द्वार पर दृष्टि लगाए रहती थी। पर कुब्जा ने कोलाहल के साथ खोज दूँढ आरम्भ की। खोज के क्रम में वह प्रायः जाली का दरवाजा खुलते ही बाहर निकल जाती थी और आम, अशोक कचनार आदि की शाखाओं में नीलकंठ को दूँढती रहती थी । एक दिन वह आम से उतरी ही थी कि कजली (अल्सेशियन कुत्ती) सामने पड़ गई । स्वभाव के अनुसार उसने कजली पर भी चोंच से प्रहार किया । परिणामतः कजली के दो दाँत उसकी गर्दन पर लग गए । इस बार उसका कलह-कोलाहल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
और द्वेष-प्रेम भरा जीवन बचाया न जा सका । परन्तु इन तीन पक्षियों ने मुझे पक्षी-प्रकृति की विभिन्नता का जो परिचय दिया है, वह मेरे लिए विशेष महत्त्व रखता है ।

राधा अब प्रतीक्षा में ही दुकेली है । आषाढ़ में जब आकाश मेघाच्छन्न हो जाता है, तब वह कभी ऊँचे झूले पर और कभी अशोक की डाल पर अपनी केका को तीव्र से तीव्रतर करके नीलकंठ को बुलाती रहती है ।

अध्ययन के प्रश्न

1. दिए गए पाठों में से किसी पर पाठ योजना बनाएं ।
2. कबीर की भाषा शैली की विशेषतायें लिखिए ।
3. महादेवी द्वारा रचित मुरझाया फूल का अपने शब्दों में सार लिखिए ।
4. कबीर के दोहों पर पाठ योजना बनाईए ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पाठ-योजना
(Lesson-Planning

प्रस्तावना
(Introduction)

योजना अच्छे शिक्षण के अनिवार्य तत्त्वों में एक है। प्रत्येक के लिए कौशल और अभ्यास की आवश्यकता होती है। शिक्षण भी एक कला है, इसके लिए भी कौशल और अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है। अध्यापक को अपने विषय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। उसे इतिहास की शिक्षण-विधियों से परिचित होना चाहिए और उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिए। इतना सब कुछ होने पर भी अध्यापक तब तक शिक्षण-कार्य में सफल नहीं हो सकता जब तक वह कक्षा में जाने से पहले सावधानी से पाठ-योजना नहीं बनाता। एक नये अध्यापक के लिए तो पाठ-योजना अत्यन्त आवश्यक है। सुनियोजित पाठ-योजना के बिना उसमें आत्म विश्वास उत्पन्न नहीं हो सकता।

शिक्षा-क्षेत्र में काम करने वाले सभी व्यक्ति महान् शास्त्री हर्बर्ट (Herbert, 1776—1841 A. D.) के ऋणी हैं जिन्होंने शिक्षण को सावधानी से आयोजित करने पर बल दिया। उन्होंने कुछ ऐसे शिक्षण चरणों का सुझाव दिया है जिन्हें सामान्यत: औपचारिक शिक्षण-चरणों (Formal Teaching Steps) की संज्ञा दी जाती है। ये शिक्षण-चरण नये अध्यापकों का मार्ग दर्शन करने में बहुत सहायक सिद्ध होते हैं। ब्लैक-बोर्ड पर निम्नलिखित बातें लिखने के बाद इन चरणों को आरम्भ किया जाता है :-

कक्षा (Class)
विद्यार्थियों की औसत आयु (Average Age of Students)
पीरियड की अवधि (Duration of Period)
विषय (Subject)
प्रकरण (Topic)
तिथि (Date)

शिक्षण-चरण इस प्रकार हैं :-

सामान्य उद्देश्य (General Aims) — इतिहास के प्रत्येक पाठ के सामान्य उद्देश्य न्यून-अधिक रूप से एक ही होते हैं। वे इस प्रकार हैं :-

1. इतिहास में रुचि विकसित करना।
2. कल्पनात्मक, तर्कात्मक तथा निर्णयात्मक योग्यताओं को विकसित करना।
3. सही, वैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक दृष्टिकोण विकसित करना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

4. विद्यार्थियों को मानव सभ्यता और संस्कृति की विकास-प्रक्रिया समझने में सहायता प्रदान करना।
5. प्राचीन अनुभवों के प्रकाश में विद्यार्थियों को भविष्य के लिए तैयार करना।
6. विद्यार्थियों को अनुभव कराना कि इतिहास एक सम्पूर्ण इकाई है और राष्ट्रीय इतिहास विश्व इतिहास का एक अंश है।
7. विद्यार्थियों में अन्तर्राष्ट्रीय विवेक को विकसित करना तथा उन्हें विश्व शान्ति की ओर प्रवृत्त करना।
8. आलोचनात्मक चिन्तन, सामाजिक आयोजन तथा लोकतन्त्रात्मक जीवन विधि को विकसित करना।
9. मातृ-भूमि के प्रति प्रेम, प्राचीन के प्रति श्रद्धा तथा मानव-जाति के भविष्य के प्रति प्यार उत्पन्न करना।

विशिष्ट उद्देश्य (Specific Aims) — विशिष्ट उद्देश्य पढ़ाये जा रहे प्रकरण पर आधारित हैं। इतिहास का अध्यापक कोई भी ऐतिहासिक विषय पढ़ाते समय अपने सम्मुख कुछ विशिष्ट उद्देश्य रखता है।

शिक्षण सहायक साधन (Teaching Aids) — शिक्षण में प्रभावशाली और सुविधापूर्ण वातावरण उत्पन्न करने के लिए शिक्षण सहायक-साधनों की आवश्यकता पड़ती है। एक प्रसिद्ध कहावत है, ''सौ बार कहने की अपेक्षा एक बार देखना अच्छा है।'' ("One seeing is worth a hundred tellings.") ये सहायक साधन जटिल विषय को सरल रूप से प्रस्तुत करते हैं। ये विभिन्न शिक्षण-विधियों के पूरक हैं। श्रव्य-दृश्य साधनों का प्रयोग करते समय हिन्दी के अध्यापक को निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिएं :-

1. अध्यापक को हिन्दी के प्रकरण के अनुकूल श्रव्य-दृश्य साधनों का चयन करना चाहिए।
2. इन्हें पाठ के आरम्भ में नहीं दिखाना चाहिए बल्कि उचित समय पर दिखाना चाहिए। इन साधनों का प्रयोग तभी करना चाहिए जब स्थिति की मांग हो।
3. इन का प्रयोग समाप्त होने के पश्चात, इन्हें हटा लेना चाहिए।
4. यदि अध्यापक विद्यार्थियों के सामने नक्शे, डायग्राम, स्कैच आदि बनाता है, तो यह बेहतर होगा।
5. शिक्षण-सहायक साधन विद्यार्थियों की आयु और रुचि अनुकूल होना चाहिए।

पूर्व ज्ञान (Previous Knowledge) — पढ़ाये जाने वाले हिन्दी के नये प्रकरण को विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान के साथ सम्बन्धित करना चाहिए। इस के लिए विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान की परीक्षा अत्यन्त आवश्यक है। नया पाठ आरम्भ करने से पहले अध्यापक को विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान का सावधानी से परीक्षण करना चाहिए।

पाठ की प्रस्तावना (Introduction of the Lesson) — कार्य का अच्छा आरम्भ उसकी अर्द्धपूर्ति का द्योतक है। पाठ को कक्षा में कैसे आरम्भ किया जाये, यह अध्यापक की मानसिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
चेतनता पर निर्भर करती है। नया पाठ आरम्भ करने से पहले अध्यापक को विद्यार्थियों के पूर्व-ज्ञान का परीक्षण करके उन्हें नये साल की प्राप्ति के लिए तैयार करना चाहिए। पाठ को आरम्भ करने से पहले अध्यापक को निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान देना चाहिए :-

1. प्रकरण की प्रस्तावना संक्षिप्त एवं उचित होनी चाहिए।
2. पूर्व ज्ञान परीक्षण के लिए थोड़े से महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछने चाहिएं। पूर्व ज्ञान को नये ज्ञान से सम्बन्धित करने के लिए तीन से पांच प्रश्न पूछना पर्याप्त है।
3. समाचार-पत्र में वर्णित किसी घटना की सहायता से भी नये प्रकरण का शिक्षण आरम्भ किया जा सकता है।
4. इतिहास के पाठ के शिक्षण की सफलता उसकी प्रस्तावना पर ही निर्भर करती है।

प्रकरण का कथन (Statement of the Topic) — विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान की परीक्षा करने तथा नये पाठ की प्रस्तावना प्रस्तुत करने के पश्चात् अध्यापक को पढ़ाये जाने वाले प्रकरण का कथन करना चाहिए। उदाहरण के लिए – विद्यार्थियो, आज हम .... के सम्बन्ध में पढ़ेंगे।

प्रस्तुतीकरण (Presentation) — प्रस्तावना के पश्चात् अध्यापक की नयी पाठ्य-सामग्री प्रस्तुत करनी होती है। इस प्रस्तुतीकरण में अध्यापक को अग्रलिखित बातों की ओर ध्यान देना चाहिए :-

1. पाठ को इकाइयों (Units) या विभागों (Sections) में बांटना चाहिए।
2. पाठ योजना पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ को तीन भाग – वस्तु (Matter) विधि (Method) तथा प्रत्याशित उत्तर (Expected Answer) — में बांटना चाहिए।
3. हिन्दी की विषय वस्तु या तो मनोविज्ञानिक विधि से या कलानुक्रम के अनुसार गठित की जानी चाहिए।
4. अध्यापक को विद्यार्थियों के सक्रिय सहयोग से विषय-वस्तु को विकसित करना चाहिए।
5. आवश्यकतानुसार परावर्तन-विधि (Regressive Method) का भी प्रयोग करना चाहिए। इसकी सहायता से प्राचीन अनुभवों के आधार पर वर्तमान की व्याख्या में सहायता मिलेगी।
6. विद्यार्थियों को मानसिक रूप से रखने के लिए प्रश्न-विधि का अकसर प्रयोग करते रहना चाहिए।
7. हिन्दी के विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण विद्यार्थियों की मानसिक आयु के अनुकूल होना चाहिए। इसके लिए अध्यापक को निम्नलिखित सिद्धान्तों का अनुसरण करना चाहिए :-

(a) **चयन और विभाजन का सिद्धान्त (Principle of Selection and Division)**— ...या प्रस्तुत करना है और कितना प्रस्तुत करना है – हिन्दी के अध्यापक को इन दो बातों की ...र विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए, क्योंकि हिन्दी के कई प्रकरण मिडल कक्षाओं को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पढ़ाने होते हैं, कई हाई और कई हायर-सैकण्डरी के विद्यार्थियों को पढ़ाने होते हैं। अतः अध्यापक को विषय सामग्री का चयन कक्षा के अनुकूल सोच-समझ कर करना चाहिए और उसे इकाइयों या विभागों में विभाजित करना चाहिए।

(b) **उत्तरोतर स्पष्टता का सिद्धान्त** (Principle of Successive clearness) — अध्यापक को तब तक अगली इकाई या अगले भाग (Section) की ओर नहीं बढ़ना चाहिए जब तक पिछली इकाई या भाग की विषय-वस्तु विद्यार्थियों को स्पष्ट रूप से समझ न आ जाये। छोटी कक्षाओं के विद्यार्थी अपने ध्यान को अच्छी प्रकार से केन्द्रित नहीं कर पाते, इसलिए वहां इस सिद्धान्त की ओर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है।

(c) **बारी-बारी संलग्नता, पुनर्विचार तथा सम्बद्धता का सिद्धान्त** (Principle of Alternate Absorption, Reflection and Integration) — हिन्दी का कोई पाठ पढ़ाते समय पाठ को कई भागों में बांटना होता है। अध्यापक को पहला भाग पूरी संलग्नता से पढ़ाना चाहिए। उसके पश्चात् उसे दूसरा भाग पूरी संलग्नता के साथ पढ़ाना चाहिए। फिर पहले भाग पर पुनर्विचार कर के उसे दूसरे भाग के साथ सम्बन्धित करना चाहिए। इस प्रकार बारी-बारी संलग्नता, पुनर्विचार तथा सम्बद्धता के सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए उसे पूरा पाठ पढ़ाना चाहिए।

विभागीय पुनरावृति (Sectional Recapitulation) — जैसा कि पहले कहा जा चुका है विषय-सामग्री को विभिन्न इकाइयों या विभागों में बांटना चाहिए। जब तक अध्यापक को विश्वास न हो जाए कि विद्यार्थी एक भाग की विषय सामग्री अच्छी प्रकार से समझ चुके हैं, तब तक उसे अगले भाग की ओर नहीं बढ़ाना चाहिए। इस के लिए विभागीय पुनरावृत्ति अत्यन्त आवश्यक है। अध्यापक को पुनरावृत्ति सम्बन्धी कुछ प्रश्न पूछ कर इस बात का निश्चय कर लेना चाहिए कि विद्यार्थियों को पढ़ाई गई विषय-सामग्री अच्छी तरह समझ आ गई है। इसे उत्तरोत्तर स्पष्टता का सिद्धान्त भी कहते हैं।

अन्तिम पुनरावृत्ति (Final Recapitulation) — पाठ का प्रत्येक भाग पढ़ा लेने के पश्चात् अध्यापक को इस बात का परीक्षण करना चाहिए कि विद्यार्थियों को पाठ कहां तक समझ आया है। इस के लिए समूचे पाठ पर आधारित कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न विद्यार्थियों से पूछे जाने चाहिएं। अन्तिम पुनरावृत्ति का उद्देश्य विद्यार्थियों के मन में पाठ को अच्छी तरह बिठाना है।

ब्लैक-बोर्ड सार (Black-Board Summary) — 1. विभागीय पुनरावृत्ति से ही ब्लैक-बोर्ड सार लिखना आरम्भ कर देना चाहिए। कुछ अध्यापकों का विचार है कि पाठ के विकास के साथ-साथ ही ब्लैक-बोर्ड पर सार लिखते जाना चाहिए।

2. ब्लैक-बोर्ड पर पूरे वाक्य या परिच्छेद नहीं लिखने चाहिएं बल्कि केवल महत्त्वपूर्ण बातें लिखनी चाहिएं।

गृह-कार्य (Home Work) — 1. गृह-कार्य पढ़ाये गए प्रकरण पर आधारित निबन्धात्मक प्रश्नों के रूप में दिया जाना चाहिए। विद्यार्थियों को प्रत्येक प्रश्न का संक्षिप्त उत्तर लिखने के लिए कहा जा सकता है।

2. गृह-कार्य के लिए वस्तुनिष्ठ प्रश्न भी दिये जा सकते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3. दोनों प्रकार के प्रश्नों अर्थात् निबन्धात्मक एवं वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के रूप में भी गृह-कार्य दिया जा सकता है।
4. विद्यार्थियों को पाठ में आये ऐतिहासिक स्थानों को नक्शे में भरने के लिए कहा जा सकता है।

पाठ योजना 1

कक्षा : आठवीं **विषय : हिन्दी**

उपविषय : दहेज प्रथा निबन्ध

आयु : 12 से 13 वर्ष **समय : 35 मिन्ट**

तिथि :

साधारण सामग्री : साधारण कक्षालय, चाक, श्यामपट, झाड़न आदि।

सामान्य उद्‌देश्य : बच्चों में लिखित एवं मौखिक रूप से भाव व्यक्त करने की क्षमता उत्पन्न करना।

विशिष्ट उद्देश्य : बच्चों में तार्किक बुद्धि से विचार विमर्श करने की योग्यता पैदा करना।

धारणा : बच्चों को दहेज प्रथा के बारे जानकारी की धारणा पैदा करना।

ज्ञान एवं बोध : बच्चे दहेज प्रथा के अर्थ को समझ जायेंगे तथा इसके गुण व दोषों को समझने के योग्य होंगे।

पूर्व ज्ञान : बच्चे दहेज के बारे पहले से ही जानते हैं ।

पूर्व ज्ञान परीक्षा : 1. हमारे समाज में कौन-कौन सी बुराइयां हैं ?

2. कौन सी सामाजिक बुराइयां नारी के जीवन से सम्बन्धित हैं ?

3. दहेज प्रथा से क्या भाव है ?

उद्देश्य कथन : बच्चो, जैसा कि आपने बताया कि दहेज प्रथा सामाजिक बुराई है। आज हम दहेज प्रथा के विषय में पढ़ेंगे।

विधि : छा॰ अ॰ वर्णनात्मक एवं प्रश्नात्मक विधि द्वारा पढ़ायेगी।

विषय वस्तु	छा॰ अ॰ कार्य	छात्र कार्य	श्यामपट सार
विवाह के अवसर पर कन्या पक्ष की ओर से वर पक्ष को कुछ दिया जाता है। माता-पिता के इस विचार ने कि घर से आ रही कन्या को उनकी ओर से कुछ न कुछ अवश्य दिया जाना चाहिए ने दहेज प्रथा को जन्म दिया	प्रश्न दहेज प्रथा से क्या अभिप्राय: है ?	उत्तर दहेज प्रथा का अर्थ है कन्या पक्ष की ओर से वर पक्ष को कुछ भेंट देना।	दहेज प्रथा कन्या - से देना

CC-0.Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्योंकि उनका अपनी कन्या के प्रति मोह होता है। दहेज प्रथा कब और कैसे शुरू हुई, इसके बारे में जैसे रामायण में लिखा है कि राजा जनक ने भी अपनी पुत्री सीता को दहेज दिया था।	दहेज प्रथा कब और कैसे शुरू हुई ?	इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता है।	इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। यह प्रथा पुरातन समय से चली आ रही है।
यही उपहार भार के रूप में परिवर्तित हो गया। पहले इसे इच्छा से देते थे। फिर अनिच्छा का दान बन गया। पहले यह प्रथा थी।	दहेज प्रथा किस रूप में परिवर्तित हो गई?	यह एक भार के रूप में बदल गई।	दहेज प्रथा उपहार नहीं बल्कि भार के रूप में बदल गई।
अब इसने कुप्रथा का रूप धारण कर लिया। आज के युग में दहेज एक अभिशाप है। दहेज के कारण बहुत सी बारातें वापिस हो जाती हैं।	दहेज प्रथा से कौन से दुष्परिणाम निकले ?	कन्या द्वारा आत्महत्या। बारातों का वापिस होना।	कन्या द्वारा आत्महत्या, बारातों का वापिस होना।
लड़की के पिता द्वारा लाख मिन्नतें करने पर भी लड़के वाले उसकी लड़की छोड़ कर उसकी इज्जत से खेल जाते हैं। विवाह को जीवन भर का मेल न	बारात खाली वापिस लौटने का क्या कारण है ?	दहेज का कम होना।	दहेज के कम होने के कारण बारातें खाली वापिस लौट जाती हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समझकर सौदा समझा जाने लगा है। इस प्रकार आज के युग में जो माता-पिता अच्छे दहेज का प्रबन्ध नहीं कर सकते उन्हें अपनी कन्याओं के लिए योग्य वर नहीं मिल सकते।			
इस प्रथा का अन्त करने के लिए भारत सरकार को कानून बनाना चाहिये जिसमें दहेज लेना-देना दोनों दण्डनीय हों पर इस कानून से कोई लाभ नहीं होगा। लोग गुप्त दान देना शुरू कर देंगे।	इस प्रथा का अन्त करने के लिए सरकार को क्या करना चाहिये ?	सरकार को कानून बनाना चाहिये।	इस प्रथा का अन्त करने के लिए कानून बनाना चाहिये।
हमारे देश की नारियों ने भी इसका अन्त करने के लिए काफी सहयोग दिया है। अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष में कई स्त्रियों ने शपथ ग्रहण की कि वे दहेज लेने वाले लड़कों से शादी नहीं करेंगी। इस प्रकार इस प्रथा का अन्त आ रहा है।	हमारी स्त्रियों ने अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष में किस बात की शपथ ग्रहण की ?	दहेज लेने वाले लड़कों से शादी नहीं करना।	अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष में लड़कियों ने शपथ ग्रहण की कि दहेज लेने वाले लड़कों से शादी नहीं करेंगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस प्रथा का अन्त करने के लिए यह आवश्यक है कि लड़कियों को इतनी शिक्षा दी जाये कि वे आर्थिक रूप से स्वावलम्बी हो जाएं। बिना सुशिक्षा, प्रेम विवाह, अन्तर-जाति विवाह के दहेज प्रथा नहीं सुधर सकती।	इस कुप्रथा का अन्त कैसे किया जा सकता है?	सुशिक्षा स्वावलम्ब	इस कुप्रथा का अन्त सुशिक्षा, प्रेम-विवाह तथा अन्तर्जातीय विवाह के द्वारा हो सकता है।

पुनरावृत्ति : 1. दहेज से क्या अभिप्राय है ?

2. प्रारम्भ में दहेज प्रथा के कौन-कौन से दुष्परिणाम निकले ?

3. इसका अन्त कैसे किया जा सकता है ?

गृह-कार्य : बच्चो, यह निबन्ध घर से अपने शब्दों में लिख कर लाना।

पाठ योजना 2

रोल नं॰ =

कक्षा = आठवीं

विषय = हिन्दी

उप-विषय = भाई को खेलों में भाग लेने के लिए पत्र

आयु = 12 से 13 वर्ष

समय = 35 मिन्ट

तिथि =

साधारण सामग्री : साधारण कक्षालय, चाक, श्यामपट, झाड़न आदि।

सहायक सामग्री : चार्ट

साधारण उद्देश्य : 1. व्याकरण को पढ़ने लिखने में बच्चों की रुचि पैदा करना।

2. बच्चों को साधारण जीवन में पत्र लिखने की जानकारी देना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विशिष्ट उद्देश्य धारणा : बच्चों में पत्र लिखने की धारणा पैदा करना।

ज्ञान एवं बोध : बच्चों की भाषा योग्यता में वृद्धि होगी और वे पत्र लिखना सीख जायेंगे।

कला एवं रुचि : बच्चों में शुद्ध हिन्दी लिखने की कला पैदा करना।

पूर्व ज्ञान : बच्चों को पहले से ही पत्र लिखने के बारे में ज्ञान है।

पूर्व ज्ञान परीक्षा : वि० अ० बच्चों से निम्नलिखित प्रश्न पूछेगी :–

1. बच्चो, पढ़ाई में खेलों का क्या स्थान है ?
2. खेलों से क्या–2 लाभ हैं ?

उद्देश्य कथन : बच्चो, जैसा कि आपने बताया कि खेलों के बहुत से लाभ हैं। आज हम अपने छोटे भाई को जो खेलों में भाग नहीं लेता, खेलों में भाग लेने के लिए एक पत्र लिखेंगे।

विधि : वर्णनात्मक एवं प्रश्नात्मक विधि अपनाई जाएगी।

विषय सामग्री	छात्र – अध्यापक कार्य	छात्र कार्य	श्यामपट कार्य
बच्चो, पत्र के आरम्भ में अपने शहर का नाम, फिर नीचे तिथि और उसके बायें हाथ अपने भाई को सम्बोधित किया जाता है।	पत्र के आरम्भ में क्या लिखा जाता है?	शहर का नाम व तिथि मेंरे प्यारे भईया,	
इसे पत्र का पहला भाग कहा जाता है। इसके बाद मध्य भाग है जिस में भाई को पत्र लिखा जाना है– मेरे प्यारे भईया, मैं यहां पर कुशल हूँ। आशा करती हूं आप भी ठीक होंगे। आजकल आपकी पढ़ाई कैसे चल रही है ?	इसको पत्र का कौन सा भाग कहा जाता है ?	इसको पत्र का पहला भाग कहा जाता है।	

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कल मुझे तेरी मुख्य अध्यापिका द्वारा भेजा परिणाम मिला। पढ़ कर दिल बहुत उदास हुआ कि आप किताबी कीड़ा बनते जा रहे हो। अपनी सेहत का बिल्कुल भी ध्यान नहीं रखते। सेहत का ध्यान रखने की बजाए दिन पर दिन इसे बिगाड़ते चले जा रहे हो। देखो, भईया, खेलों का पढ़ाई में बहुत ही महत्त्व है। विद्यार्थी जीवन का उद्देश्य केवल पढ़ाई ही नहीं। ऐसी पढ़ाई भी क्या जो सेहत खराब करे। आप खेलों में बिल्कुल भी भाग नहीं लेते। आप को पता होना चाहिये कि काम के साथ-साथ मनोरंजन भी जरूरी है। यदि आप खेलों में भाग नहीं लेते तो आपकी सेहत ठीक नहीं रहेगी। खेलें भी उतनी ही जरूरी हैं जितनी कि पढ़ाई। सो आज के बाद तुम किताबी कीड़ा न बन कर खेलोगे। आप खेल में अवश्य ही भाग लिया करो क्योंकि किसी ने ठीक कहा है – सेहत गई तो सब कुछ गया। उम्मीद है – आप खेलों में भाग लोगे। तुम्हारी बड़ी बहन,	छा० अ० पत्र को आगे बढ़ाने के लिए कई प्रश्न पूछेगी कि आपको किस पत्र से पता चला कि आपका भाई खेलों में भाग नहीं लेता?	उसके मुख्याध्यापक द्वारा भेजे गये परिणाम पत्र से पता चला।	मुख्याध्यापक के पत्र द्वारा पता चला कि तुम खेलों में भाग नहीं लेते।
	छोटे भाई को सेहत ठीक रखने के लिए क्या कहोगी ?	बच्चे उत्तर देंगे।	सेहत बिगड़ने- पढ़ाई –उनका महत्त्व ––पढ़ाई ––तुम – में – भाग नहीं लेते ––पता –– काम के –– साथ –– मनोरंजन सेहत –– रहेगी। –बाद –– अवश्य सेहत सेहत–– गई –गया।
	सेहत के बारे में किसी ने क्या लिखा है ?	किसी ने ठीक ही लिखा है "सेहत गई तो सब कुछ गया।"	आपकी बड़ी बहन,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुनरावृत्ति : 1. बच्चो, पत्र के शुरू में क्या लिखा जायेगा ?
2. पढ़ाई में खेलों का क्या स्थान है ?
3. विद्यार्थी जीवन के मुख्य उद्देश्य क्या हैं ?

गृह कार्य : बच्चो, घर से अपने छोटे भाई को पढ़ाई का महत्त्व बताते हुए पत्र लिख कर लाना।

पाठ योजना 3

अनुक्रमांक :

कक्षा : आठवीं

विषय : हिन्दी

उपविषय : फीस मुआफी की अर्ज़ी

आयु : 13 वर्ष

समय : 35 मिन्ट

तिथि :

साधारण सामग्री : साधारण कक्षा का कमरा, चाक, झाड़न, संकेतक, श्यामपट, चार्ट।

साधारण उद्देश्य : 1. बच्चों के शब्द भंडार में वृद्धि करना।
2. बच्चों के समझने की शक्ति में वृद्धि करना।
3. शब्द जोड़ने की समझ पैदा करना।

विशेष उद्देश्य धारणा : बच्चों को फीस मुआफ करवाने के लिए प्रार्थना पत्र के बारे में बताना।

ज्ञान व समझ : बच्चों को प्रार्थना पत्र लिखने का ज्ञान हो जाएगा।

कला तथा रुचि : बच्चों के मन में प्रार्थना पत्र लिखने की रुचि पैदा करना।

पूर्व ज्ञान : बच्चे प्रार्थना पत्र के बारे में पहले से ही सामान्य ज्ञान रखते हैं।

पूर्व ज्ञान परीक्षा : 1. आप का नाम क्या है ?
2. आप कौन सी कक्षा में पढ़ते हैं ?
3. यदि आपने छुट्टी लेनी हो तो क्या करोगे ?
3. यदि आपने फीस मुआफ करवानी हो तो क्या करोगे ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उद्देश्य कथन विधि : वि० अ० वर्णनात्मक तथा प्रश्नात्मक विधि द्वारा पढ़ायेगी।

विषय वस्तु	वि० अ० कार्य	वि० कार्य	श्यामपट कार्य
बच्चो, जिस प्रकार आप छुट्टी के लिए प्रार्थना पत्र शुरू करते हैं उसी प्रकार फीस मुआफ कराने का प्रार्थना पत्र शुरू किया जाता है। सेवा में,	बच्चो, आप छुट्टी के लिए प्रार्थना पत्र कैसे लिखते हो ?	बच्चे उत्तर देंगे।	सेवा में, श्रीमति मुख्या-ध्यापिका देव समाज हायर सैकेंडरी स्कूल, फिरोजपुर शहर।
श्री मति मुख्याध्यापिका जी, देव समाज हायर सैकेंडरी स्कूल, फिरोजपुर शहर। श्रीमति जी,	बच्चो, आप के स्कूल का क्या नाम है ?	देव समाज हायर सैकेंडरी स्कूल।	
सविनय निवेदन यह है कि मैं स्कूल में आठवीं कक्षा में पढ़ती हूँ। मेरे पिता जी एक दुकानदार हैं।	आप के पिता जी क्या काम करते हैं ?	दुकानदार हैं।	मेरे पिता जी दुकानदार हैं।
उनकी मासिक आय तीन सौ रूपये है। हम परिवार के सात सदस्य हैं जिस कारण हमारा निर्वाह बड़ी मुश्किल से होता है। मुझे पढ़ने का बेहद शौक है। मेरे पिता जी मेरी फीस नहीं दे सकते। ऐसा न हो कि मैं पढ़ाई से वंचित रह जाऊं।	उनकी मासिक आय कितनी है ? आपके परिवार में कितने सदस्य हैं	उनकी मासिक आय तीन सौ रूपये है। सात	उनकी मासिक आय तीन सौ रूपये है। हमारे परिवार के सात सदस्य हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कृपया मेरी पूरी फीस मुआफ कर दें मैं आपकी अति धन्यावादी हूं। आपकी आज्ञाकारिणी रोल नं॰ -- कक्षा --- तिथि : 19 मई, 1989	आप प्रार्थना पत्र के अन्त में क्या लिखेंगे ?	आपकी आज्ञाकारिणी, ...	आपकी आज्ञा-कारिणी, रोल नं॰ ... कक्षा ......

पुनरावृत्ति : 1. बच्चो, आप प्रार्थना पत्र कैसे लिखोगे ?
2. आप के पिता क्या काम करते हैं ?

गृह-कार्य : कल आप घर से फीस मुआफी पर प्रार्थना-पत्र लिख कर लाना।

पाठ योजना 4

रोल नम्बर :

श्रेणी : नौवीं

विषय : हिन्दी

उपविषय : संज्ञा और उसके भेद

समय : 30 मिन्ट

आयु : 14 से 15 वर्ष

तिथि :

साधारण सामग्री : साधारण कक्षा का कमरा, श्यामपट, चाक, झाड़न, संकेतक आदि।

सहायक सामग्री : चार्ट

साधारण उद्देश्य : 1. बच्चों की हिन्दी भाषा को शुद्ध करना।
2. बच्चों की व्याकरण में रुचि पैदा करना।
3. बच्चों में सोचने और विचार करने की शक्ति उत्पन्न करना।

विशिष्ट उद्देश्य धारणा : बच्चों को संज्ञा और उसके भेदों की धारणा स्पष्ट हो जाएगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ज्ञान एवं बोध : बच्चों को व्याकरण में संज्ञा जानने के योग्य बनाना ताकि वह संज्ञा और उसके भेदों को समझ जायें।

कला एवं रुचि : बच्चों की व्याकरण के प्रति रुचि बढ़ाना और व्याकरण में योग्यता प्राप्त करने में मदद करना।

पूर्व ज्ञान : बच्चे आम जीवन में संज्ञा का प्रयोग करते हैं।

पूर्व ज्ञान परीक्षा : छात्र अध्यापिका बच्चों के पूर्व ज्ञान की परख के लिए निम्नलिखित प्रश्न पूछेगी और उदाहरण श्यामपट पर लिखेगी :–

1. आप का क्या नाम है ? (कमला)
2. मेरा नाम कमला है। (इसमें कमला क्या है ?)
3. कमला गीत गाती है। (इस में संज्ञा कौन सी है ?) और पाठ में संज्ञा शब्द को Underline कर दिया जायेगा।

उद्देश्य कथन : बच्चो, आज हम संज्ञा और उसके भेद पढ़ेंगे।

विधि : वर्णनात्मक एवं प्रश्नात्मक विधि।

विषय वस्तु	छात्राध्यापिका	छात्र-कार्य	श्यामपट कार्य
किसी पुरुष, स्त्री, पहाड़, जानवर, शहर एवं वस्तु के नाम को संज्ञा कहते हैं। भेद–संज्ञा के पांच भेद हैं– **1. व्यक्तिवाचक संज्ञा** – जो शब्द किसी शहर, वस्तु या व्यक्ति के नाम का बोध कराते हैं उन्हें व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे 'मेरा नाम राम है' में राम। 'यह ताजमहल है' में ताजमहल आदि।	**प्रश्न** संज्ञा किसे कहते हैं ?	**उत्तर** किसी पुरुष, स्त्री, जानवर, पहाड़ आदि के नाम को संज्ञा कहते हैं।	किसी वस्तु, स्थान, पहाड़, स्त्री-पुरुष के नाम को संज्ञा कहते हैं।
2. जातिवाचक संज्ञा– जो शब्द किसी की जाति	छात्र अध्यापिका श्यामपट पर दो तीन		राम सफाई करता है। हिमालय ऊंचा पहाड़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

का बोध कराते हैं उन्हें जाति वाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे – 'गाय हमारी माता है।' इसमें गाय जातिवाचक संज्ञा है।	वाक्य लिख कर उन में जाति वाचक संज्ञा पूछेगी और उसके नीचे रेखा लगायेगी।		है। हर काम कौन करता है ?
3. भाव वाचक संज्ञा– जो शब्द किसी वस्तु के गुण-दोष को प्रकट करे उसे भाववाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे– 'आम मीठा है' में मीठा आम 'सीता एक अच्छी लड़की है।' में अच्छी लड़की है।	विद्यार्थी छात्रा-ध्यापिका के कार्य को देखेंगे। छात्राध्यापिका बच्चों को कुछ वाक्य लिख कर देगी और पूछेगी कि इनमें कौन से शब्द भाववाचक संज्ञा को प्रकट करते हैं।		ताजमहल बहुत ही सुन्दर है। वह एक बुरा लड़का है। वह लम्बी लड़की है।
	व्यक्तिवाचक संज्ञा किसे कहते हैं ?	जो वस्तु, स्थान, नाम का बोध कराती हो। देखेंगे और सोचेंगे	जो शब्द किसी स्थान, वस्तु या नाम का बोध कराते हैं उन्हें व्यक्ति-वाचक संज्ञा कहते हैं। यह छठी श्रेणी है
4. समुदायवाचक संज्ञा– जिस संज्ञा शब्द से समुदाय का बोध हो उसे समुदायवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे– श्रेणी, जलूस, सभा इत्यादि।	छात्र अध्यापिका बच्चों को श्याम पट पर वाक्य लिखकर पूछेगी कि इनमें सुमदाय पद किस शब्द से पता चलता है ?		
5. द्रव्यवाचक– जिस संज्ञा शब्द से द्रव्य का बोध होता है, उसे द्रव्य-वाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे– सोना, चांदी, लकड़ी आदि।	द्रव्य वाचक संज्ञा किसे कहते हैं ?	जो शब्द किसी द्रव्य पदार्थ का बोध कराये उसे द्रव्य वाचक संज्ञा कहते हैं।	जो किसी द्रव्य पदार्थ का बोध कराये उसे द्रव्य वाचक संज्ञा कहते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुनरावृत्ति : 1. बच्चो, भाववाचक संज्ञा किसे कहते हैं ?

2. संज्ञा के कितने भेद हैं ?

3. 'दूध मीठा है' इसमें कौन सी संज्ञा का प्रयोग किया गया है?

गृह-कार्य : बच्चो, घर से संज्ञा और उसके भेद लिख कर लाना।

पाठ योजना 5

रोल नं॰ :

कक्षा : नौवी

आयु : 14 वर्ष

विषय : हिन्दी

उप-विषय : झांसी की रानी की समाधि पर (कविता)

समय : 35 मिन्ट

तिथि :

सहायक सामग्री : साधारण कक्षा का कमरा, श्यामपट, चाक, झाड़न, संकेतक आदि।

सामान्य उद्देश्य : 1. छात्राओं की अनुभूतियों तथा कल्पनाओं को समझने की शक्ति का प्रयोग करना।

2. छात्राओं को काव्य सौन्दर्य से प्रभावित करके कवियों के प्रति आकर्षित करना और कविता में उनकी रुचि बढ़ाना।

विशिष्ट उद्देश्य : 1. छात्राओं को 'झांसी की रानी' की समाधि पर दी गई श्रद्धांजलि में भाव तथा शैली से परिचित करवाना।

2. अपने देश की रक्षा के लिए बालकों में उत्तेजना उत्पन्न करना।

भावना : स्वदेश प्रेम की भावना उत्पन्न करना।

पूर्व ज्ञान परीक्षा : 1. स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले भारत पर कौन राज्य करता था ?

2. क्या हमारे पूर्वज उनके राज्य से प्रसन्न थे ?

3. हमने उनके विरुद्ध क्या किया था ?

उपविषय की घोषणा : अध्यापिका बालकों को बतायेगी कि आज हम झांसी की रानी की समाधि पर भेंट की गई श्रद्धांजलि की कविता पढ़ेंगे।

आदर्श वाचन : छात्राध्यापिका स्पष्ट, शुद्ध, सेवाभावपूर्ण वाणी में स्वरों के उतार-चढ़ाव के साथ प्रस्तुत कविता का आदर्श पाठ करेगी।

अनुकरण पाठ : छात्राध्यापिका कक्षा की दो या तीन छात्राओं के द्वारा स्पष्ट वाणी में अनुकरण पाठ करायेगी जिसमें शुद्ध उच्चारण एवं भाव प्रदर्शन पर विशेष बल दिया जायेगा।

विधि : छात्राध्यापिका बच्चों को व्याख्यात्मक विधि द्वारा पढ़ायेगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विषय वस्तु	विधि	श्यामपट कार्य
इस समाधि..... हुई है। प्रस्तुत पद्यांश 'झांसी की रानी की समाधि पर' से लिया गया है। इस कविता की रचयिता श्रीमति सुभद्रा कुमारी चौहान है। इसी कविता में झांसी की रानी की वीरता का गान करते उसको श्रद्धांजलि अर्पित की गई है।	कवियत्री ने इस कविता द्वारा हमें किस बात की प्रेरणा दी है ?	दिव्य=अलौकिक
कवियत्री झांसी की रानी लक्ष्मी बाई की समाधि को सम्बोधित करती हुई कहती है– इस समाधि में राख की ढेरी छिपी हुई है। इस राख ने आजादी की अलौकिक आरती उतारी थी अर्थात् अपने प्राण दे कर लोगों को आज़ादी का संदेश दिया था। यह समाधि यह छोटी सी समाधि झांसी की रानी की है या वीरांगना लक्ष्मी बाई की अन्तिम क्रीड़ा है। यहीं स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ते हुए उसने अपने प्राण त्यागे थे।	झांसी की रानी की समाधि पर कविता का केन्द्रीय भाव क्या है ?	लीला स्थल = खेल का मैदान या जगह लघु = छोटी मरदानी = वीर स्त्री।
यहीं ..... कहीं बिखर गई यहीं कहीं पर झांसी की रानी टूटी हुई विजय माला के समान बिखर गई। उसके फूल यहां इक्ट्ठे हुए हैं। यह उसकी यादगार के रूप में है अर्थात् यह समाधि उसकी यादगार है। झांसी की रानी ने अन्त तक शत्रुओं के वार पर वार सहे । वह शत्रुओं से वीर बाला के समान लड़ी। वह आहुति के समान गिर कर अपने प्राणों की अन्तिम बलि दे कर चिता पर चढ़ गई।	इस कविता में 'वार' शब्द का प्रयोग किस अर्थ में हुआ ?	

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आंशिक पुनरावृत्ति : 1. झांसी की रानी ने देश की खातिर क्या किया ?

2. कवि ने इस समाधि की तुलना किस से की है ?

दूसरा भाग

विषय वस्तु	विधि	श्यामपट कार्य
बढ़ जाता .... चिंगारी प्रस्तुत पद्यांश 'झांसी की रानी की समाधि पर' से लिया गया है जिस की रचयिता सुभद्रा कुमारी चौहान है। कवियत्री ने झांसी की रानी की समाधि पर श्रद्धांजलि भेंट करते हुए उस के हृदय को हमारे सामने स्पष्ट किया है। इस में कवियत्री ने बताया है कि युद्ध भूमि में प्राणों की बलि देने से वीर का सम्मान बढ़ जाता है। उसी प्रकार यह समाधि भी अधिक प्यारी है। यहां स्वतन्त्रता की आशा की चिंगारी छिपी है। भाव यह है कि हमें सदा स्वतन्त्रता की प्रेरणा मिलती है।	छात्र अध्यापिका पहले आदर्श पाठ करेगी। फिर अनुकरण विधि द्वारा पढ़ायेगी। इस में समाधि की समानता की तुलना किस से की है? छात्र अध्यापिका स्पष्ट शुद्ध एवं भावपूर्ण वाणी में स्वरों के उतार-चढ़ाव से कविता का आदर्श पाठ करेगी।	निहित = छिपी हुई।
इससे .... सुन्दर समाधि झांसी की रानी की समाधि पर श्रद्धांजलि भेंट करती हुई सुभद्रा कुमरी चौहान कहती है :- हम इस संसार में इससे भी अति सुन्दर समाधियां देखते हैं पर उन की कहानी में तुच्छ जानदार ही आते हैं। यह वीरों की न मिटने वाली कहानी कवियों की वाणी में समा जाती है। वीर भी इन्हें श्रद्धा प्यार	फिर कक्षा की दो या तीन छात्राओं द्वारा अनुकरण पाठ करायेगी।	गति

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

से गाते हैं। भाव यह है कि देश पर बलिदान देने वाले लोग अमर हो जाते हैं।	मूल्यवती सोने की भस्म का भाव लिखो।	निशि = रात्रि क्षुद्र =तुच्छ वाण अमिट = न मिटने वाला

आदर्श पाठ : छात्र अध्यापिका कविता फिर आदर्श पाठ करेगी ।

अन्तिम दोहराई : 1. इस कविता से हमें क्या सन्देश मिलता है ?
2. महारानी लक्ष्मी बाई को महान् क्यों कहा गया ?

गृह कार्य : बच्चो, घर से कविता की व्याख्या करके लाना।

पाठ योजना 6

रोल नं॰ :
कक्षा : आठवीं
विषय : हिन्दी
उप-विषय : मुहावरे
आयु : 13 से 14 वर्ष
समय : 30 मिन्ट
तिथि :
साधारण सामग्री : साधारण कक्षा का कमरा, श्यामपट, चाक, झाड़न, संकेतक, आदि।
सहायक सामग्री : चार्ट
साधारण उद्देश्य : 1. बच्चों के शब्द भंडार में वृद्धि करना।
2. बच्चों के व्याकरण सम्बन्धी ज्ञान को बढ़ाना।
3. व्याकरण में मुहावरों का प्रयोग करना सिखाना।

विशिष्ट उद्देश्य

धारणा : बच्चों में मुहावरों बारे धारणा पैदा करनी।
ज्ञान एवं बोध : बच्चों को मुहावरों को वाक्यों में प्रयोग करना आ जायेगा।
कला एवं रुचि : बच्चों की व्याकरण में रुचि पैदा करना और लिखने और प्रयोग करने की कला में वृद्धि करना।
पूर्व ज्ञान : बच्चे पहले से ही मुहावरों के बारे में जानकारी रखते हैं।
पूर्व ज्ञान परीक्षा : पूर्व ज्ञान परीक्षा के लिए छात्राध्यापिका नीचे लिखे प्रशन पूछेगी:– ईद का चांद होना, आंखों का तारा, ईंट का जवाब पत्थर से देना– का क्या अर्थ है ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उद्देश्य : बच्चो, आपने कुछ मुहावरों के अर्थ बताये हैं। तो आज हम कुछ और मुहावरों के अर्थ समझ कर उन्हें वाक्यों में प्रयोग करेंगे।

विधि

विषय वस्तु	छा॰ अ॰ कार्य	छात्र कार्य	श्यामपट कार्य
1. अंग-2 मुस्काना (प्रसन्नता से रोम-रोम खिल उठना) बच्चे के तोतले बचनों को सुन कर माता का अंग-2 मुस्करा उठता है।	छा॰ अ॰ बच्चों को मुहावरा बता कर उन का अर्थ पूछेगी कि अंग अंग मुस्काना का क्या अर्थ है ?	प्रसन्नता से रोम-रोम खिल उठना।	अंग-2 मुस्काना = रोम-रोम खिल उठना।
2. अन्धे की लाठी (एक मात्र सहारा) राम अपने माता-पिता की अन्धे की लाठी है।	अन्धे की लाठी का वाक्य बनाओ।	राम अपने माता-पिता की अन्धे की लाठी है।	अन्धे की लाठी = एक मात्र सहारा = राम अपने माता-पिता की अन्धे की लाठी है।
3. आंख लगना (नींद आना) मेरी अभी आंख लगी ही थी कि बच्चों के शोर ने मुझे उठा दिया।	आंख लगना का क्या अर्थ है ?	नींद आना	आंख लगना = नींद आना = मेरी अभी आंख लगी ही थी कि बच्चों के शोर ने मुझे उठा दिया।
4. कलम तोड़ना (बहुत सुन्दर लिखना) जय शंकर प्रसाद जी ने कामायनी लिखने में कलम तोड़ दी।	कलम तोड़ना का अर्थ बताओ और वाक्य बनाओ ।	कलम तोड़ना का अर्थ बहुत सुन्दर लिखना – सुमन ने लिखाई में कलम तोड़ दी।	कलम तोड़ना= बहुत सुन्दर लिखना – सुमन ने लिखाई में कलम तोड़ दी।
5. खाला जी का घर (सहज काम) आजकल नौकरी खाला जी का घर नहीं।	खाला जी का घर का अर्थ क्या है ?	सहज काम	B.Ed. पास करना कोई खाला जी का घर नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6. **खून उबलना** (गुस्सा आना) भारतीय सीमा में चीनियों को देखकर जवानों का खून उबलने लग पड़ा।	खून उबलना का वाक्य बनाओ।	भारतीय सीमा में चीनियों को देख कर जवानों का खून उबलने लग पड़ा।	भारतीय सीमा में चीनियों को देख कर जवानों का खून उबलने लगा।
7. **चांदी का जूता** (रिश्वत) आज कल कठिन से कठिन काम भी चांदी के जूते से बन जाता है।	चांदी का जूता का अर्थ बताओ।	रिश्वत देना	चांदी की जूता= (रिश्वत देना) आज कल कठिन से कठिन काम भी चांदी के जूते से बन जाता है।
8. **जी चुराना** (किसी काम से दिल चुराना) जो विद्यार्थी पढ़ने से जी चुराता है वह परीक्षा में कभी भी सफल नहीं हो सकता।	जी चुराना का अर्थ बताओ और वाक्य बनाओ।	किसी काम से दिल चुराना–जो विद्यार्थी पढ़ने से जी चुराता है वह परीक्षा में कभी भी सफल नहीं हो सकता।	जो विद्यार्थी पढ़ने से जी चुराता है वह परीक्षा में कभी भी सफल नहीं हो सकता।
9. **बीड़ा उठाना** (जिम्मेदारी लेना) श्रीमति इन्दिरा गांधी ने गरीबी दूर करने का बीड़ा उठाया।	बीड़ा उठाना का क्या अर्थ है ?	(जिम्मेदारी लेना) – इन्दिरा गांधी ने गरीबी हटाने का बीड़ा उठाया।	

पुनरावृत्ति : 1. कलम तोड़ना का क्या अर्थ है ?

2. चांदी का जूता मुहावरे के अर्थ बता कर वाक्य बनाओ।

गृह-कार्य : घर से मुहावरों के अर्थ और वाक्य बना कर लिख कर लाना।

पाठ योजना 7

रोल नं॰ :

कक्षा : **आठवीं**

विषय : **हिन्दी**

उपविषय : **लोकोक्तियां**

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आयु : 13 वर्ष
समय : 35 मिनट
दिनांक :

साधारण सामग्री : साधारण कक्षा का कमरा, श्यामपट, चाक, झाड़न, संकेतक आदि।

सहायक सामग्री : चार्ट।

सामान्य उद्देश्य : हिन्दी व्याकरण में बच्चों की रुचि उत्पन्न करना, उनके शब्द भंडार में वृद्धि करना, उनकी कल्पना शक्ति एवं तर्क शक्ति का विकास करना। कहावतों से सरल तथा छोटे वाक्य बनाने में उनकी सहायता करना।

विशेष उद्देश्य धारणा : बच्चों को लोकोक्तियों के विषय में ज्ञान दिया जाएगा ताकि उनकी लिखने एवं श्रवण कला का विकास हो।

ज्ञान एवं रुचि : हिन्दी भाषा में लोकोक्तियों का किस प्रकार महत्त्व है ?

कला एवं रुचि : बच्चों में भिन्न-भिन्न कहावतों से सम्बन्धित चार्ट को देखकर लोकोक्तियों के विषय में जानने की रुचि उत्पन्न होगी।

पूर्व ज्ञान : बच्चे पहले ही मुहावरों के विषय में जानते हैं।

पूर्व ज्ञान परीक्षा : छात्राध्यापिका बच्चों के पूर्व ज्ञान परीक्षा के लिए निम्नलिखित मुहावरों के अर्थ पूछेगी :-

1. आंख का तारा।
2. ईंट से ईंट बजाना।
3. मान न मान मैं तेरा महमान।

उद्देश्य कथन : बच्चो, आप ने मुहावरों के कुछ अर्थ बताए। यह मुहावरे केवल वाक्यांश होते हैं, जैसे हम ने ईंट से ईंट बजाई लेकिन जब लोगों के अनुभवों का सार संक्षिप्त रूप से अत्यन्त प्रसिद्ध हो जाए तो उसे लोकोक्तियां कहते हैं।

विधि : छात्राध्यापिका प्रश्नात्मक एवं वर्णनात्मक विधि से पढ़ाएगी।

विषय वस्तु	विधि	श्यामपट कार्य
1. अंभिमान का सिर नीचा। खरगोश ने अपनी तेज़ चाल का अभिमान करते हुए कछुए से मुकाबला करने का फैसला किया। तेज़ चाल के अभिमान के कारण वह रास्ते में सो गया लेकिन कछुआ चलता रहा जिस से वह निश्चित	छात्राध्यापिका बच्चों को एक चार्ट दिखाएगी और कछुए की कहानी सुनाएगी। अंध्यापक प्रश्नों द्वारा कहानी का सार निकाल पायेगी। पहले चित्र में आप क्या देखते हैं अर्थात् कछुआ	अभिमान का सिर नीचा – अभिमान कभी भी नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्थान पर खरगोश से पहले पहुंच गया।	और खरगोश क्या करने का निश्चय कर रहे हैं ? खरगोश जब कछुए से आगे निकल गया तो उस ने क्या किया ?	करना चाहिये क्योंकि अभिमानी का सिर सदा नीचा होता है।
अभिमान का सिर नीचा।	तो इससे क्या कहावत बन गई ? इसको वाक्य में प्रयोग करो।	
2. जहां चाह वहां राह। कौवा पानी की तलाश कर रहा था। दूर उसने एक जग पानी का देखा लेकिन जग में पानी कम था। पानी के जग के पास ही कंकर पड़े थे। कौवे को बात सूझी और वह कंकर उठा कर जग में डालने लगा। पानी ऊपर आ गया और कौवे ने अपनी प्यास बुझा ली।	इसमें छात्राध्यापिका बच्चों को चार्ट दिखाएगी जिस में प्यासा कौवा नामक कहानी होगी और बच्चों से प्रश्नों द्वारा कहानी कहलवाएगी। कौवा पहले चित्र में क्या तलाश कर रहा है ? दूर जंगल में उसने क्या देखा ?	जहां चाह वहां रहा।
जहां चाह वहां राह **अर्थ :–** अगर कोई व्यक्ति किसी काम को करना चाहे तो अन्त में उसका रास्ता ढूंढ ही लेता है। हमें मुश्किल कार्य करते समय हौसला नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि जहां चाह होती है वहां राह होती है।	जग में पानी कितना था ? कौवे ने अपनी प्यास कैसे बुझाई ? इससे क्या कहावत बन गई ?	
	इस का अर्थ क्या है ?	**अर्थ :–** अगर कोई व्यक्ति कार्य को करना चाहे तो वह उसका रास्ता निकाल लेता है।
	इस को वाक्य में प्रयोग करें।	**वाक्य :–** हमें मुश्किल कार्य करते समय हौसला नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि जहां चाह वहीं राह होती है।
3. आधी छोड़ सारी को धावे आधी रहे न सारी पावे।	छात्राध्यापिका बच्चों को कुत्ते और उसकी परछाई वाली	

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कुत्ते को कहीं से एक पनीर का टुकड़ा मिल गया। वह जंगल की ओर चल पड़ा। रास्ते में एक नदी में अपनी परछाई देखी। परछाई के मुंह में भी पनीर का टुकड़ा था। कुत्ते ने परछाई को दूसरा कुत्ता समझ कर उस से पनीर छीनना चाहा। ज्यों ही उसने अपना मुंह खोला उसका टुकड़ा भी पानी में गिर गया।	कहानी का चार्ट दिखा कर उनसे कहानी कहलवाएगी। इससे कौन सी कहावत बनती है ? इसका अर्थ क्या है ?	आधी छोड़ सारी को धावे, आधी रहे न सारी पावे। लालच बुरी बला है।
आधी छोड़ सारी को धावे, आधी रहे न सारी पावे।		
अर्थ – लालच बुरी बला है। कभी भी लालच नहीं करना चाहिए। थोड़ी वस्तु से ही सन्तुष्ट होना चाहिए।	इस को वाक्य में प्रयोग करें।	हमें कभी भी लालच नहीं करना चाहिए और थोड़ी वस्तु से ही सन्तुष्ट होना चाहिए।
एकता में बल है। एक छोटा बच्चा मेज़ को नहीं उठा सकता। अगर वही मेज़ तीन बच्चे उठाएं तो वे उठा सकते हैं।	छात्राध्यापिका निम्न प्रश्न पूछ कर कहानी बदलवाएगी। क्या एक छोटा बच्चा मेज़ को उठा सकता है ? अगर तीन बच्चे मिल कर इस मेज़ को उठाए तो क्या वे इसे उठा लेंगे ?	
एकता में बल है। एकता में शक्ति है। कोई भी बड़े से बड़ा काम अकेला नहीं कर सकता।	इससे क्या कहावत बनी ? इसका अर्थ क्या है ?	एकता में बल है। एकता में शक्ति है।
वाक्य – हमें सदा एकता के सूत्र में बन्धे होना चाहिए क्योंकि एकता में ही बल है।	इसको वाक्य में प्रयोग करो।	**वाक्य** – हमें सदा एकता के सूत्र में बन्धे होना चाहिए क्योंकि एकता में ही बल है।

पुनरावृत्ति : शिक्षिका कुछ चार्ट मेज़ पर रख कर एक-एक बच्चे को वहां बुलवाएगी। उस के हाथ में एक कागज़ का टुकड़ा दे कर जिस पर कहावत लिखी होगी, उसे रखने को कहेगी जिस चार्ट पर मुहावरा बनता है।

गृहकार्य : सब बच्चे घर में निम्न कहावतों के अर्थों को लिख कर लाएंगे :–

1. डूबते को तिनके का सहारा। 2. एक पंथ दो काज।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. भाषा किसे कहते हैं ?

उत्तर : भाषा की व्याख्या करने से पहले हमारे सामने यह प्रश्न उठता है कि भाषा क्या है ? या फिर भाषा को कैसे परिभाषित किया जाये ? इस सन्दर्भ में विद्वानों एवं भाषा शास्त्रियों ने अलग-अलग परिभाषाएं दी हैं। इनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :—

पतंजलि मुनि के अनुसार "भाषा वह व्यापार है जिससे हम वर्णनात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं"।

भाषा वैज्ञानिक स्वीट (Sweet) महोदय के अनुसार "भाषा ध्वनियों द्वारा मानव के भावों की अभिव्यक्ति है"।

एक अन्य भाषा वैज्ञानिक इस परिभाषा का थोड़ा सा परिष्कार करके भाषा की परिभाषा निम्न ढंग से देते हैं :—

"भाषा मानव मस्तिष्क और हृदय की चेरी बनती हुई ध्वनि रूप में या लिपि रूप में विचारों और भावों की अभिव्यक्ति है।"

आटो जस्परसन (Otto Jesperson) के अनुसार "भाषा ऐसी मानवीय वृत्तियों का समूह है जिसका उद्देश्य है भाषा और विचारों की अभिव्यक्ति तथा दूसरों तक प्रसार।"

बनार्ड ब्लॉक एवं जार्ज ट्रेगर के मतानुसार —

"भाषा स्वेच्छागत वाक् - प्रतीकों की वह प्रणाली है जिसके द्वारा सामाजिक समूह परस्पर संगठित रहता है।"

श्री सीताराम चतुर्वेदी का मत है- "भाषा के आविर्भाव से सारा मानव संसार गूंगों की विराट बस्ती बनने से बच गया।"

अर्थात् भाषा विचाराभिव्यक्ति का प्रमुख साधन है।

सामान्य रूप से यह कहना उचित होगा कि विचारों और भावों की अभिव्यक्ति एवं पुनरावृत्ति ही भाषा है।

ऊपरलिखित परिभाषाओं का समन्वय करने से यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती है कि भाषा विचार-विनिमय का एक प्रमुख साधन है।

प्रश्न 2. भाषा के दो सशक्त आधार कौन से है ?

उत्तर : 1. मानसिक आधार (Mental Basis)

2. भौतिक आधार (Physical Basis)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1. **मानसिक आधार** —मानसिक आधार में मुख्य रूप से दो बातें आती हैं। पहली बात है मन में विचारों का पैदा होना और इन विचारों के बिना भाषा का कोई अस्तित्व नहीं जैसे पशुओं के लिये भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है क्योंकि वे विचार हीन हैं। दूसरी बात है मानसिक प्रक्रिया और क्रिया जिनके द्वारा हमारा सोचना-विचारना, पढ़ना लिखना। हमारे विचार भाषा की आत्मा एवं सशक्त साधन व आधार हैं। शरीर के अंगों से ध्वनित होने वाली ध्वनियां तो विचारों को प्रकट करने के लिये केवल मात्र माध्यम हैं।

2. **भौतिक आधार** —ध्वनियां भाषा का शारीरिक व भौतिक आधार है। बोलने वाले के लिये मुख और सुनने वाले के लिये कान आधार हैं। भाषा के लिखित रूप के लिये हमारे हाथ भौतिक आधार बनते हैं। इस लिये भाषा की शिक्षा देने हेतु और प्राप्त करने हेतु दोनों आधारों का त्रुटि रहित होना अत्यन्त आवश्यक है।

प्रश्न 3. भाषा के लाभ संक्षेप में बताइये।

उत्तर : 1. भाषा के माध्यम से मनुष्य समाज में अपना चिंतन प्रकट कर अपने व्यक्तित्व की अभिव्यंजना करता है।

2. भाषा के माध्यम से ही किसी देश और भाषा के प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन संभव हो सकता है।
3. भाषा के द्वारा ही साहित्य-सृजन संभव है। कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि रूप भाषा की ही देन है।
4. सम्पूर्ण विश्व के लोग एक दूसरे की भाषा को पढ़कर, समझकर एक दूसरे की सभ्यता और संस्कृति को समझते हैं जिससे मानव-समाज में परस्पर सम्बन्ध स्थापित होते हैं।

प्रश्न 4. मातृ-भाषा शिक्षण के उद्देश्य बताइये।

उत्तर : इन उद्देश्यों को संक्षिप्त रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

I. छात्रों में दूसरों की मौखिक भाषा को पूर्ण रूप से समझने की योग्यता का विकास करना।

II. उनमें अपने भाव एवं विचारों को मौखिक रूप से प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने की योग्यता का विकास करना।

III. उनमें दूसरों की लिखित भाषा को पूर्ण रूप से समझने की योग्यता का विकास करना।

IV. उनमें अपने भाव एवं विचारों को लिखित रूप में प्रभावशाली ढंग अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास करना।

V. छात्र-छात्राओं में मातृ भाषा के साहित्य के प्रति रूचि पैदा करना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

VI. छात्र-छात्राओं के मातृ भाषा साहित्य के काव्य रूप का रसास्वादन करने योग्य बनाना अर्थात् सौन्दर्यानुभूति का विकास करना।

VII. उनको साहित्य कोष में निहित विविध प्रकार के ज्ञान-विज्ञान से परिचित कराना।

VIII. छात्रों को अपनी सभ्यता और संस्कृति से परिचित कराना।

IX. छात्रों को मानव जीवन और उसकी विभिन्न परिस्थितियों का ज्ञान कराना और उनकी रूचियों का विकास करना।

X. छात्रों की सृजनात्मक शक्तियों का विकास करना।

XI. छात्रों को साहित्य के सृजन की ओर उन्मुख करना।

XII. छात्रों की सद्वृत्तियों का विकास करते हुए उनको चरित्र निर्माण की शिक्षा देना।

प्रश्न 5. व्यवहारपरक उद्देश्यों की विशेषताएं स्पष्ट करें।

उत्तर : सामान्य उद्देश्य और व्यवहारपरक उद्देश्य में अन्तर है। व्यवहारपरक उद्देश्यों में सीखने की दृष्टि से व्यवहार परिवर्तन का उल्लेख किया जाता है, जबकि सामान्य उद्देश्यों में ऐसा कुछ नहीं होता।

व्यवहारपरक उद्देश्यों की विशेषताएं निम्नलिखित हैं —

I. व्यवहारपरक उद्देश्यों को ऐसे कथन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिनमें धारणा की दृष्टि से स्पष्टता हो।

II. व्यवहारपरक उद्देश्यों द्वारा सन्दर्भ सम्बन्धित व्यवहार का स्वरूप अवलोकनीय और मापनीय होता है।

III. व्यवहारपरक उद्देश्यों के माध्यम से छात्र, शिक्षक और परीक्षक तीनों को लाभ होता है।

IV. अभिक्रमित अधिगम की परिस्थितियों को ठोस रूप में गठित करने की दृष्टि से व्यवहारपरक उद्देश्य अत्यन्त गुणकारी होते हैं। इनके माध्यम से अधिगम अनुक्रम जनित सरल हो जाता है।

V. अभिक्रम (शिक्षण) के आधार पर परिवर्तित व्यवहार के मूल्यांकन हेतु अपेक्षित परीक्षा ढंग की रचना करने में भी व्यवहारपरक उद्देश्यों द्वारा पर्याप्त रूप से सहायता मिलती है।

VI. व्यवहार-परक उद्देश्यों के द्वारा शिक्षण और परीक्षण सम्बन्धी रचना कौशलों को निर्धारित करना सरल हो जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College of Education Bantalab Jammu

प्रश्न 6. प्राथमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य बताईए।

उत्तर : (1) छात्र-छात्राओं को अक्षरों का ज्ञान देना और उच्चारण में शुद्धता लाना।

(2) उनको इस योग्य बनाना कि वे अपने स्तर की भाषा में ठीक प्रकार के बातचीत कर सकें।

(3) वे अपने स्तर की शब्दावली को सुनकर और पढ़कर भली भांति समझ सकें।

(4) छात्र-छात्राओं को सस्वर वाचन के लिये तैयार करना।

(5) छात्र-छात्राओं को इस योग्य बनाना कि अपने स्तर की पाठ्य पुस्तक की विषय-वस्तु का मौन पाठ करके समझ सकें।

(6) उनको इस योग्य बनाना कि वे अपने शब्द भण्डार में वृद्धि करें।

(7) शब्द भण्डार में जिन शब्दों की वृद्धि करें उनका व्यावहारिक जीवन में सक्रिय रूप से प्रयोग भी करें।

(8) छात्र-छात्राओं को प्रवाह पूर्ण रूप से वाचन करने के लिये तैयार करना।

(9) उनको लिपि का ज्ञान कराना और उसका अभ्यास भी कराना।

(10) उनको सुलेख की शिक्षा देना और उसका अभ्यास भी कराना।

(11) छात्र-छात्राओं को शुद्ध लिखने के लिये प्रशिक्षण देना।

(12) उनको श्रुतलेख की शिक्षा देना।

(13) कविताओं अथवा बालगीतों को भावानुकूल वाचन करने के लिये तैयार करना।

(14) उनको इस योग्य बनाना कि वे क्रमबद्धता से अपनी बात को कह सकें।

(15) उनको मौखिक अभिव्यक्ति हेतु बोलने के लिये सुअवसर प्रदान करना।

(16) उनको दैनिक जीवन के अनुभवों को बोलकर और लिखकर अभिव्यक्त करने के लिये प्रेरित करना।

(17) उनको स्वतन्त्र अध्ययन के लिये प्रेरित करना।

(18) छात्र-छात्राओं की भाषा सम्बन्धी रूचियों को विकसित करने के लिये अवसर प्रदान करना।

प्रश्न 7. हिन्दी के राष्ट्र भाषा बनने के पक्ष में तर्क संगत कारण दीजिए।

उत्तर : हिन्दी के राष्ट्र भाषा बनने के कुछ तर्क संगत कारण निम्न हैं जिनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

I. यह बहुसंख्यक की भाषा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

II. इसे भारत की अधिकांश जनता सरलता से समझ सकती है।

III. हिन्दी भाषी देश के सभी भागों में मिलते हैं।

IV. यह हमारे अपने देश की भाषा है।

V. यह हमारे समृद्ध साहित्य और संस्कृति का आधार है।

VI. इसकी लिपि सरल और सुबोध है।

VII. इसका सबसे बड़ा गुण यह है कि जैसे इसका उच्चारण होता है वैसे ही लिपिबद्ध होती है।

VIII. विदेशों में भी हिन्दी बोलने वालों की संख्या अन्य भारतीय भाषाओं के बोलने वालों की अपेक्षा अधिक है।

IX. जन संचार साधनों में भी भारत में जितना हिन्दी भाषा का प्रयोग होता है इतना किसी अन्य भारतीय भाषा का नहीं होता।

प्रश्न 8. खेल विधि के आधारभूत सिद्धान्त बताइये।

उत्तर : खेल द्वारा शिक्षा देने के आधारभूत सिद्धान्त (Basic Principles of teaching by playing method)

I. अतिरिक्त शक्ति का सिद्धान्त (Principle of Surplus Energy)— प्रकृति प्रत्येक व्यक्ति को शक्ति प्रदान करती है। इस शक्ति का बहुत सा अंश जीवन की आवश्यकताओं—भोजन आदि की पूर्ति में व्यतीत हो जाता है। शेष शक्ति का विकास खेलों द्वारा किया जा सकता है।

II. शक्तिवर्धन का सिद्धान्त (Principle of increasing energy)— लार्ड क्रिम्स के अनुसार इस शक्ति के द्वारा खोई हुई शक्ति की पुनर्प्राप्ति होती हैं। खेल के द्वारा मनुष्य खोई हुई शक्ति को दुबारा प्राप्त कर लेता है।

III. भावी जीवन की तैयारी का सिद्धान्त (Principle of preparation of future life)— इस सिद्धान्त के प्रवर्त्तक कार्ल ग्रूस हैं। उनके विचार से खेलों द्वारा बालक वे बातें सीखते हैं जो उनके भावी जीवन में काम आती हैं। गुड्डे गुड्डी का खेल, घर बनाकर खेलना आदि सभी इसी सिद्धान्त पर आधारित हैं।

IV. रेचन का सिद्धान्त (Principle of Catharsis)— रेचन शब्द का प्रयोग सबसे पहले अरस्तू ने किया था। इसके अनुसार बालकों की दमन की हुई शक्तियों का विकास खेलों द्वारा ही सम्भव है। टी.पी. नन का भी यह विचार है—"मनुष्य दमन करने की पुरानी आदत को नहीं छोड़ सकता, परन्तु खेल द्वारा इस दोष को दूर किया जा सकता है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रश्न 9. प्रत्यक्ष विधि के गुण स्पष्ट करें।

उत्तर : (I) इस विधि के माध्यम से शीघ्रता से हिन्दी भाषा सीखी जा सकती है। कम परिश्रम करके अधिक लाभ प्राप्त होता है क्योंकि किसी भी भाषा को उसी भाषा के माध्यम से सिखाना सहज और सरल होता है।

(II) इसमें वार्तालाप पर अधिक बल दिया जाता है और यही कारण है कि शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच सक्रियता का वातावरण बना रहता है।

(III) इसमें अनुवाद और व्याकरण का प्रयोग न करके शुद्ध भाषा सीखने का अभ्यास कराया जाता है।

(IV) इस विधि से हिन्दी शिक्षण के मौखिक कौशल का अधिक से अधिक विकास होता है जो उनके भावी जीवन में अत्यन्त सहायक होता है।

(V) इसमें भाषा को स्वाभाविक रूप से सीखने के नियमों और क्रमबद्धता का पालन भी होता है जैसे कि बालक पहले सुनता है और फिर अपने से बड़ों का अनुकरण करते हुए बोलता है। बाद में लिपि का ज्ञान प्राप्त करके पढ़ना और लिखना सीखता है।

(VI) इसमें भाषा शिक्षण के सूत्रों का भी पालन होता है जिससे शिक्षण में रोचकता, नवीनता, क्रियाशीलता और प्रभावोत्पादकता आ जाती है।

(VII) इस विधि का एक गुण यह भी है कि शिक्षक के लिये पढ़ाना सरल हो जाता है और छात्र-छात्राओं के लिये सीखना सुगम और सहज हो जाता है।

प्रश्न 10. संरचनात्मक या गठन पद्धति के उद्देश्य बताइये।

उत्तर : संरचनात्मक या गठन प्रणाली के उद्देश्य निम्न हैं—

(I) छात्र-छात्राओं को शुद्ध वाक्य रचना का ज्ञान देना।

(II) हिन्दी भाषा के चार मूलभूत कौशलों—सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना (लेखन) का सामान्य ज्ञान देना।

(III) छात्र-छात्राओं को भाषा का शुद्ध ज्ञान देते हुए उनको शुद्ध उच्चारण के लिये प्रेरित करना।

(IV) उनके शब्द शक्ति का ज्ञान कराते हुए हिन्दी भाषा में निपुण करने का प्रयास करना।

(V) अभ्यास और पुनरावृत्ति पर बल देते हुए उनको हिन्दी शिक्षण में रुचि के लिये प्रेरित करना अर्थात् हिन्दी सीखने के लिये आधार बनाना।

(VI) उनको हिन्दी शिक्षण में अर्थात हिन्दी सीखने के लिये सक्रिय भागीदारी बनाना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रश्न 11. माण्टेसरी पद्धति का मूल्यांकन एवं हिन्दी शिक्षण में उपयोगिता बताइये।

उत्तर : माण्टेसरी विधि में बालक की वैयक्तिकता को ध्यान में रखा जाता है। साथ ही यह विधि ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों की शिक्षा, स्वयं शिक्षा, भाषा शिक्षण आदि की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। रस्क के शब्दों में "इस पद्धति की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता निर्देशन में वैयक्तिकता का स्थान है।"

इन गुणों के साथ–साथ माण्टेसरी विधि में कुछ दोष भी हैं। यह विधि बहुत खर्चीली है इसलिए निर्धन देशों के लिए उपयोगी नहीं है। इस विधि का उपयोग केवल छोटे बच्चों के लिए ही उचित है, उच्च स्तर के बालकों के लिए नहीं।

माण्टेसरी विधि का भाषा शिक्षण की दृष्टि से तब तक प्रयोग नहीं हो सकता जब तक बालकों की थोड़ी बहुत समझ उत्पन्न न हो जाये। कुछ बहुत बुद्धिमान बच्चों को छोड़कर 3 या 4 वर्ष और कभी कभी 5 वर्ष के बाद ही बच्चों में समझ उत्पन्न हो पाती है। साथ ही इस स्तर पर उच्चारण शुद्धि पर भी विशेष बल नहीं दिया जा सकता क्योंकि बच्चों की बोली में तोतलापन होता है और जब तक तोतलापन है तब तक बच्चा शुद्ध उच्चारण नहीं कर सकता। बच्चों से अक्षरों का चयन न भी कराया जाय तो भी अक्षरों के साथ–साथ जानी पहचानी वस्तुओं के चित्र बनाये जाएं जिनसे बच्चे परिचित हैं। उदाहरण के लिए 'क' के साथ कबूतर का चित्र, और 'ख' के स्थान पर खरगोश का चित्र। फिर बच्चों से 'क' एवं 'ख' को अलग न करा कर कबूतर और खरगोश का चित्र अलग करवाया जाये। धीरे–धीरे सम्बद्धता के नियम के आधार पर उन्हें क एवं ख का ज्ञान कराया जाए।

प्रश्न 12. हिन्दी शिक्षक में कौन-कौन से गुण होने चाहिए ?

उत्तर : हुमायूं कबीर का कथन है- "वे (शिक्षक) राष्ट्र के भाग्य निर्णायक हैं। यह कथन प्रत्यक्ष रूप से सत्य प्रतीत होता है परन्तु अब इस बात पर अधिक बल देने की आवश्यकता है कि शिक्षक ही शिक्षा के पुनर्निमाण की महत्त्वपूर्ण कुन्जी है । वह शिक्षा वर्ग की योग्यता ही है जो कि निर्णायक है ।"

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अपने प्रतिवेदन में लिखा है- "अपेक्षित शिक्षा के पुनर्निमाण में सबसे महत्त्वपूर्ण तत्व शिक्षक, उसके व्यक्तिगत गुण, उसकी शैक्षणिक योग्यताएं, उसका व्यावसायिक प्रशिक्षण और उसकी स्थिति जो वह विद्यालय तथा समाज के जीवन पर उसका प्रभाव निःसन्देह रूप से उन शिक्षकों पर निर्भर है जो कि उस विद्यालय में कार्य कर रहे हैं ।"

हुमायूं कबीर का मत है कि "शिक्षा पद्धति की कुशलता शिक्षकों की योग्यता पर निर्भर है। अच्छे शिक्षकों के अभाव में सर्वोत्तम शिक्षा पद्धति का भी असफल होना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अवश्यम्भावी है । अच्छे शिक्षकों द्वारा शिक्षा पद्धति के दोषों को भी अधिकांशत दूर किया जा सकता है ।''

इस प्रकार शिक्षा का महत्त्व समाज तथा शिक्षा पद्धति दोनों में ही स्पष्ट है । वस्तुत: शिक्षक न भावी नागरिकों का निर्माण करता है जिनके ऊपर राष्ट्र के उत्थान एवं पतन का भार है ।

शिक्षक को मनुष्यों का निर्माता, राष्ट्र निर्माता, शिक्षा पद्धति की आधारशिला, समाज को गति प्रदान करने वाला सब कुछ माना गया है । साधारणत: ऐसे शिक्षक में बालकों को समझने की शक्ति, उनके साथ उचित रुप से कार्य करने की क्षमता, शिक्षण योग्यता, काम करने की इच्छा शक्ति और सहकारिता आदि गुणों की आशा की जाती है । ऐसे गुण सामान्यत: न तो प्रत्येक शिक्षक में मिलते हैं और न शिक्षण प्रत्येक व्यक्ति का कार्य ही है । वस्तुत: यह कार्य वही व्यक्ति कर सकता है जिसमें कुछ विशिष्ट शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक एवं संवेगात्मक गुण हों । शिक्षण एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है जिसमें मस्तिष्क का मस्तिष्क से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है । इस सम्बन्ध की उपयुक्तता एवं अनुपयुक्तता बहुत कुछ शिक्षक के व्यक्तित्व पर निर्भर होती है । इस सम्बन्ध में समय समय पर अध्ययन किये गये हैं । संयुक्त राष्ट्र अमरीका में डा. एफ. एल. क्लैप ने 1913 में एक अध्ययन किया जिसके आधार पर उन्होंने अच्छे शिक्षक के व्यक्तित्व के निम्नलिखित दस गुणों का उल्लेख किया है :

(1) सम्बोधन (2) वैयक्तिक आकृति (3) आशावादिता (4) संयम (5) उत्साह (6) मानसिक निष्पक्षता (7) शुभ चिन्तन (8) सहानुभूति (9) जीवन शक्ति (10) विद्वता ।

प्रश्न 13. शिक्षण सूत्र किसे कहते हैं ?

उत्तर : इस धरा पर हर मनुष्य का कार्य करने का अपना-अपना तरीका होता है। कोई उस कार्य को करने में पूर्ण रूप से सफल हो जाता है और कोई आंशिक रूप से सफल हो जाता है तो कोई असफल रहता है। यह बात शिक्षक पर भी पूर्ण रूप से लागू होती है। इस अन्तर का कोई विशेष कारण नहीं होता बल्कि थोड़ा सा समझ का फेर होता है। बहुत से शिक्षकों को यह ज्ञान नहीं होता कि छात्र-छात्राओं को कौन सी बात पहले बताई जाये और कौन सी बात बाद में बताई जाये ताकि छात्र-छात्राएं उसे सरलता से समझ सकें। इस लिये शिक्षक को पहले सरल पाठ पढ़ाना चाहिये और बाद में कठिन पाठ पढ़ाना चाहिये। अगर छात्र-छात्राओं को पहले कठिन बातों की जानकारी दी जाती है और बाद में सरल बातों की तो छात्र-छात्राएं समझ नहीं पायेंगे। इस प्रकार के नियमों को ही शिक्षण सूत्र का नाम दिया जाता है। इससे पहले हम सिद्धान्तों की चर्चा कर चुके हैं। अब हमारे लिये यह जानना भी आवश्यक है कि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
शिक्षण सिद्धान्तों और शिक्षण सूत्रों में क्या अन्तर है। बहुत से शिक्षक शिक्षण सिद्धान्तों और शिक्षण-सूत्रों के अन्तर से अनभिज्ञ होते हैं और इन दोनों को एक ही बात मान लेते हैं। इस भूल का निवारण अवश्य ही किया जाना चाहिये ताकि शिक्षण सिद्धान्तों एवं सूत्रों की पालना सही रूप में सही ढंग से हो।

प्रश्न 14. वाचन का अर्थ स्पष्ट करें।

उत्तर : पढ़ने की शिक्षा हेतु पठन या वाचन दो शब्दों का प्रयोग किया जाता है। वाचन शब्द 'वाक्' धातु से बना है, जिसका अर्थ-शब्द, वाणी अथवा कथन से लिया जाता है। लिखित अथवा छपी हुई सामग्री का उच्चारण करना वाचन या पठन कहलाता है। लेकिन यह वाचन का संकुचित अर्थ है। विकसित अर्थों में वाचन या पठन से तात्पर्य लिखी हुई या छपी हुई सामग्री को अर्थ साहित ग्रहण करना है। कवि या लेखक के लिखित विचारों को जानने के लिए जिस साधन का उपयोग किया जाता है उसे वाचन कहते हैं।

प्रश्न 15. सस्वर वाचन का महत्त्व बताइये।

उत्तर : अच्छे सस्वर वाचन के द्वारा गद्य और पद्य का भाव समझ में आ जाता है। कविता का आनन्द तो उसके सस्वर पठन में ही होता है। भाषा शिक्षण की दृष्टि से भी सस्वर पठन का बहुत महत्त्व है। सस्वर पठन का महत्त्व निम्नलिखित बातों से है—

I. बालकों के अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध करने में सहायता मिलती है।

II. बालकों का संकोच एवं झिझक दूर होती है जो उनके सर्वांगीण विकास के लिए बहुत आवश्यक है।

III. लेखकों के विचारों से दूसरों को अवगत कराने हेतु सस्वर वाचन की ही आवश्यकता पड़ती है।

IV. सस्वर वाचन के द्वारा बालकों को सफल वक्ता बनाया जा सकता है।

V. कोई भी बात एक से अधिक व्यक्तियों को सस्वर वाचन द्वारा सुनाई जा सकती है।

VI. कक्षा शिक्षण की दृष्टि से अध्यापक के आदर्श सस्वर पठन से कक्षा में जीवन बना रहता है और जब बच्चे अध्यापक का अनुकरण करते हैं तो उनके पठन कौशल में विकास होता है।

प्रश्न 16. द्रुत वाचन (विस्तृत वाचन) का महत्त्व बताइये।

उत्तर : 1. द्रुत वाचन में सीखी हुई या अर्जित शब्दावली के प्रयोग का पर्याप्त अभ्यास होता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. द्रुत पाठ की पुस्तकें पढ़ने से भाषा समझने की योग्यता एवं क्षमता का विकास होता है।
3. पढ़ने की गति में तीव्रता आ जाती है जो दैनिक जीवन में अधिक पढ़ने के लिये लाभप्रद उपयोगी सिद्ध होती है।
4. मौन पाठ का अधिक से अधिक अभ्यास होता है।
5. साहित्य में रूचि पैदा होती है और छात्र-छात्राएं स्वतन्त्र रूप से साहित्य का अध्ययन करने लगते हैं।
6. भावी जीवन के लिये छात्र-छात्राओं को प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। उनको अपने भावी जीवन में अधिक पढ़ने की आवश्यकता होती है।
7. ज्ञानोपार्जन में वृद्धि होती है।
8. महापुरुषों, विद्वानों और दार्शनिकों एवं वैज्ञानिकों के अमूल्य विचारों से परिचित हो जाते हैं।
9. इससे देश, विदेश की घटनाओं की जानकारी प्राप्त होती है जिससे हमारे सामान्य ज्ञान का विस्तार होता है।
10. कहानी, उपन्यास या साहित्य की किसी अन्य विधा को पढ़कर मनोरंजन होता है।

प्रश्न 17. सुलेख लिखते समय किन बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए ?

उत्तर : लेखन-शिक्षण उद्देश्य केवल लिखाई सिखाने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भी देखा जाये कि बालक सुन्दर ढंग से लिखें। प्रतिदिन के व्यवहार और परीक्षा में विशेषतः सुलेख का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। लेख के देखते ही परीक्षक के मन में परीक्षार्थी के लिये अनुकूल या प्रतिकूल भाव जागृत होते हैं। अतः सुन्दर लिखना विशेष गुण है। गांधी जी के अनुसार, "सुन्दर लेख के बिना शिक्षा अपूर्ण है।" सुन्दर लिखना अभ्यास से सम्भव होता है। लिखते समय निम्न बातों को अवश्य ही ध्यान में रखें।

(I) कभी भी लिखने में जल्दबाजी से काम न लें।

(II) लिखते समय हाथ को ढीला न छोड़े। ऐसा करने से अक्षरों में फूहड़पन आ जाता है अर्थात् भद्दे लगने लगते हैं।

(III) प्रत्येक अक्षर को पूरा लिखना चाहिये और उसके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान भी होना चाहिये।

(IV) यदि लेख सुन्दर नहीं है तो सुलेख पुस्तिका पर अच्छी कलम से अभ्यास करना चाहिये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(V) सुविधा के अनुसार छात्र-छात्राओं के लिये यह निश्चित करना आवश्यक होता है कि अक्षर बाईं ओर झुके हुए लिखने हैं या दाईं ओर झुके हुए लिखने हैं। फिर उसी ओर लिखने का अभ्यास बना रहना चाहिये। दोनों ओर की तरफ झुके अक्षरों का लिखना उचित नहीं होता।

(VI) खुरदरे और घटिया कागज़ का प्रयोग कदापि भी न करें। इससे अच्छा लेख भी असुन्दर लगने लगता है।

प्रश्न 18. लेखन-शिक्षण के उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : लेखन-शिक्षण के कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्य निम्न हैं—

1. लेखन की शिक्षा ग्रहण किये हुए विचारों की सफल अभिव्यक्ति है। यदि छात्रों को लेखन की शिक्षा न दी जाये तो वे अपने विचारों को लिखित रूप में अभिव्यक्त नहीं कर सकते।
2. भाषा पर पूर्ण अधिकार करने के लिये वाचन और लेखन का समान रूप से सीखना अत्यन्त आवश्यक है।
3. छात्र-छात्राएं व्याकरण के नियमों का पालन कहां तक करते हैं, इसकी परीक्षा एवं मूल्यांकन लेखन द्वारा ही सम्भव है।
4. इसका महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि हम अपने विचारों और प्राप्त किये गये ज्ञान को दूसरों तक पहुंचायें।

उपरोक्त सभी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये लेखन-शिक्षण की आवश्यकता होती है। ये सभी लेखन की शिक्षा के उद्देश्य हैं। अब हमारे समक्ष प्रश्न यह आता है कि लेखन की शिक्षा किस प्रकार दी जाये और शिक्षा देने हेतु कौन-कौन सी विधियों और साधनों को प्रयोग में लाया जाये।

प्रश्न 19. संक्षेपीकरण की शिक्षा के उद्देश्य क्या हैं ?

उत्तर : संक्षेपीकरण की शिक्षा के कुछ मुख्य उद्देश्य निम्न हैं —

I. छात्र-छात्राओं को विस्तृत लेख और विस्तृत भाषणों को पढ़कर उनका विश्लेषण कर महत्त्वपूर्ण तथ्यों की पकड़ में निपुण करना।

II. उनको विस्तृत बातों को संक्षिप्त में कहने और लिखने के कौशल में प्रशिक्षित करना ।

III. उनमें तर्क-वितर्क, अवलोकन, विवेक, विंश्लेषण एवं संश्लेषण, मनन आदि शक्तियों का विकास करना।

IV. छात्र-छात्राओं को सार रूप में मौखिक एवं लिखित सामग्री को ग्रहण करने और अभिव्यक्त करने की आदत डालना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

V. छात्र-छात्राओं को कार्यालयों के कार्यों की विधि और पत्रकारिता के गुणों से अवगत कराना।

प्रश्न 20. निबन्धों के प्रकार स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : विषय-वस्तु के प्रतिपादन की दृष्टि से निबन्ध के चार प्रकार हैं जो निम्न हैं —

1. वर्णनात्मक निबन्ध,
2. विवरणात्मक निबन्ध,
3. विचारात्मक निबन्ध और
4. भावात्मक निबन्ध

1. वर्णनात्मक निबन्ध —इस प्रकार के निबन्धों में ऋतुओं, वस्तुओं, स्थानों, दृश्यों त्यौहारों का वर्णन किया जाता है —जैसे दिवाली, होली, दशहरा आदि।

2. विवरणात्मक निबन्ध —इन निबन्धों में घटनाओं, उत्सवों, यात्राओं और महान पुरुषों के परिचयात्मक निबन्ध लिखे जाते हैं। उदाहरण के रूप में नौका विहार, रेल यात्रा, संस्था का वार्षिक उत्सव, राष्ट्रीय पर्व, लाल बहादुर शास्त्री आदि विषयों पर लिखे निबन्ध इस श्रेणी में आते हैं।

3. विचारात्मक निबन्ध —इसमें किसी विचार, समस्या, मनोभाव आदि के विषय में परिचयात्मक, व्याख्यात्मक अथवा विश्लेषणात्मक लेखन विचारात्मक निबन्ध कहलाता है। जैसे परिश्रम सफलता की कुंजी है, दूरदर्शन और शिक्षा, एकता में बल है, निरक्षरता एक अभिशाप, मित्रता आदि इसी प्रकार के निबन्ध हैं।

4. भावात्मक निबन्ध —इस प्रकार के निबन्धों में भावों की प्रधानता होती है। इस प्रकार के निबन्धों में परोपकार, मन के हारे हार है, मन के जीते जीत, दया धर्म का मूल है, पराधीन सपने सुख नाहिं आदि निबन्ध सम्मिलित किये जा सकते हैं।

प्रश्न 21. पाठ्यक्रम की समीक्षा करते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?

उत्तर : पाठ्यक्रम की समीक्षा करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये—

(1) पाठ्यक्रम छात्र-छात्राओं के लिये होता है और न कि छात्र-छात्राएं पाठ्यक्रम के लिये होते हैं। इसलिये पाठ्यक्रम की समीक्षा के अन्तर्गत यह देखना आवश्यक हो जाता है कि पाठ्यक्रम जिस स्तर के लिये बनाया गया है उसमें उस स्तर के छात्र-छात्राओं की रुचियों, क्षमताओं और योग्यताओं को ध्यान में रखा है या नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(2) यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि सभी छात्र-छात्राओं की योग्यता और क्षमता एक जैसी नहीं होती चाहे उनकी आयु एक समान ही हो। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह देखना आवश्यक हो जाता है कि पाठ्यक्रम में विभिन्नता को ध्यान में रखकर विभिन्न प्रकार के पाठों का समावेश किया गया है या नहीं।

(3) पाठ्यक्रम उस स्तर के छात्र-छात्राओं की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला भी हो। इसलिये यह भी देखना चाहिए कि निर्धारित पाठ्यक्रम से छात्र-छात्राओं की आवश्यकता की पूति होती है या नहीं।

(4) वही पाठ्यक्रम उपयोगी माना जाता है जिसका सम्बन्ध जीवन से है। इस दृष्टि से निर्मित पाठ्यक्रम की उस स्तर के छात्र-छात्राओं के लिये जीवन में उपोयोगिता है या नहीं।

(5) समीक्षा की दृष्टि से यदि शिक्षण उद्देश्यों पर ध्यान दिया जाये तो पाठ्यक्रम में यह देखना चाहिये कि जिन उद्देश्यों को निर्धारित किया था उनका सफलतापूर्वक निर्वाह हुआ है या नहीं।

(6) पाठ्यक्रम छात्र-छात्राओं में अच्छी आदतों का निर्माण करने में सहायक सिद्ध होता है या नहीं।

(7) पाठ्यक्रम छात्र-छात्राओं के सामाजिक जीवन से सम्बन्धित है या नहीं।

(8) पाठ्यक्रम की समीक्षा करते समय यह जानना आवश्यक होता है कि पाठ्यक्रम में ऐसे पाठों का चयन किया है या नहीं जिनका सम्बन्ध छात्र-छात्राओं के सर्वांगीण विकास से है।

प्रश्न 22. कविता किसे कहते है ? परिभाषित कीजिए।

उत्तर : 1. "ऐसे शब्द और अर्थ को कविता कहते हैं जिसमें दोष न हो, गुण हो, अलंकार हों और कभी कभी अलंकार न हो।" —मम्मट

2. रसात्मक वाक्य को कविता कहते हैं। —विश्वनाथ

3. "रमणीय अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य कहते हैं" —जगन्नाथ

4. "हृदय की मुक्ति की साधना के लिये मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती है उसे कविता कहते हैं"। —आचार्य रामचन्द्रशुक्ल

5. "कलात्मक रीति से सजी हुई भाषा जिसमें भावों का व्यंजन होता है"। —श्याम सुन्दर दास

6. "जलकर चीख उठा वह कवि था" ? —पन्त

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

7. "वियोगी होगा पहला कवि,
आह, से उपजा होगा गान ।
उमड़कर आंखों से चुपचाप,
बही होगी कविता अनजान ।।" —पन्त

परिभाषाओं के आधार पर कविता के सामान्य लक्षण निम्न हैं —

1. कविता में जीवन का सुन्दर चित्रण और जीवन की आलोचना होती है।
2. कविता में भावों की प्रधानता होती है और विचार गौण होते हैं।
3. कविता में कल्पना की प्रधानता होती है क्योंकि कविता का सामान्य गुण कल्पना होता है।
4. कविता की भाषा संगीतमय होती है।
5. रसवादियों के अनुसार आलौकिक आनन्द ही काव्य की आत्मा है क्योंकि कविता के पाठ से आनन्द की अनुभूति होती है।
6. कविता के मुख्य रूप से चार तत्त्व होते हैं- भाव तत्त्व, कल्पना तत्त्व, बुद्धि तत्त्व और शैली तत्त्व।

प्रश्न 23. गद्य और पद्य में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : गद्य पाठ को बोध पाठ के रूप में पढ़ाया जाता है और कविता पाठ को सौन्दर्यात्मक पाठ के रूप में पढ़ाया जाता है क्योंकि गद्य का सम्बन्ध ज्ञान प्रदान करने से है और कविता का सम्बन्ध सौन्दर्यानुभूति से है। पद्य छन्दोबद्ध रचना होती है और गद्य में ऐसा नहीं है। पद्य में लय बद्धता का पूरा-पूरा ध्यान रखना आवश्यक है लेकिन गद्य में इसकी आवश्यकता नहीं होती। पद्य में भावों की प्रधानता होती है और गद्य में विचारों की प्रधानता होती है। परन्तु इसका यह अर्थ कदापि भी नहीं लेना चाहिये कि पद्य विचार रहित है और गद्य भाव रहित है क्योंकि इस बात की पुष्टि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के इस कथन से होती है कि, "यात्रा के पथ पर निकलती रही है बुद्धि हृदय को साथ लेकर"। अर्थात साहित्य में बुद्धि और हृदय का समन्वय होना बहुत आवश्यक है।

पद्य की भाषा अलंकारों से अलंकृत होती है गद्य की भाषा अलंकृत नहीं होती। पद्य की भाषा में संगीतात्मकता होती और गद्य की भाषा में संगीतात्मकता का पुट नहीं होता। इनके अतिरिक्त एक अन्तर यह है कि पद्य में कल्पना की उड़ान भरी जाती है और गद्य में यथार्थ का ही चित्रण होता है।

प्रश्न 24. कविता-पाठ एवं पढ़ाने हेतु ध्यान देने योग्य बातें कौन सी है ?

उत्तर : 1. कविता पाठ के लिये संक्षिप्त भूमिका पर्याप्त होती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2. शिक्षक कविता-पाठ का आदर्श नमूना प्रस्तुत करे जिसके सुनने मात्र से कविता का भाव स्पष्ट हो जाये।
3. कविता-पाठ में शब्दार्थ-कथन और व्याकरण पर बल नहीं देना चाहिये। कविता पाठ का सम्बन्ध सौन्दर्यात्मक पाठ से है।
4. कविता का पाठ बार-बार करना चाहिये ताकि कविता के सौन्दर्य की स्पष्टता हो सके।
5. कविता को पढ़ाते समय अवधि विशेष में समाप्त करने का प्रयास न किया जाये। कविता का जितना भाग सूक्ष्म ढंग से पढ़ाया जा सके उतना ही पढ़ाना उचित है और शेष भाग अगले दिन पढ़ाया जाये।
6. कविता की भावाभिव्यक्ति पर विशेष रूप से बल दिया जाना चाहिये।
7. कविता का सस्वर पाठ अत्यन्त आवश्यक है। इससे संगीतात्मकता में स्पष्टता आती है और आनन्द की भी प्राप्ति होती है।
8. कविता का शिक्षण शान्त स्वभाव से होना चाहिये किसी प्रकार की मस्तिष्क में जल्दबाजी नहीं होनी चाहिये।
9. कविता पाठ हेतु काव्यमय और काव्यानुकूल वातावरण बनाने के लिये समानान्तर भाव की कविता का पाठ करना चाहिये।
10. कविता-पाठ के लिये मुख मुद्रा और अंग संचालन में किसी भी प्रकार का बनावटीपन नहीं होना चाहिये।

प्रश्न 25. गद्य-शिक्षण के सामान्य उद्देश्य बताइये।

उत्तर : गद्य-शिक्षण के सामान्य उद्देश्य- गद्य-शिक्षण के सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं :—

(i) विद्यार्थियों में शुद्ध-उच्चारण की योग्यता विकसित करना।

(ii) विद्यार्थियों को देव-नागरी लिपि का ज्ञान प्रदान करना।

(iii) विद्यार्थियों की वाचन में योग्यता विकसित करना।

(iv) उन्हें इस योग्य बनाना कि वे पूरे मनोयोग के साथ सुन कर अर्थ ग्रहण कर सकें।

(v) विद्यार्थियों के शब्द-भण्डार में वृद्धि करना। उन्हें इस योग्य बनाना कि वे ज्यादा शब्दों का सक्रिय प्रयोग कर सकें।

(vi) विद्यार्थियों के सूक्ति-भण्डार में वृद्धि करना।

(vii) विद्यार्थियों को विभिन्न गद्य-शैलियों से परिचित कराना और उन्हें इस योग्य बनाना कि वे इन शैलियों का उचित प्रयोग कर सकें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(viii) विद्यार्थियों की बोध-शक्ति, कल्पना-शक्ति तथा विवेचना-शक्ति विकसित करना।

(ix) विद्यार्थियों के व्यावहारिक ज्ञान में वृद्धि करना।

(x) विद्यार्थियों को इस योग्य बनाना कि वे भाषा के माध्यम से अन्य विचारों का ज्ञान प्राप्त कर सकें।

(xi) विद्यार्थियों में मौन वाचन तथा अध्ययन की योग्यताएं विकसित करना।

(xii) विद्यार्थियों में साहित्यिक रूचियों को विकसित करना।

(xiii) विद्यार्थियों में रचनात्मक एवं सृजनात्मक शक्तियों को विकसित करना।

(xiv) विद्यार्थियों में बौद्धिक, तार्किक एवं मानसिक शक्तियों को विकसित करना।

(xv) उन में साहित्य की 'गद्य' विद्या से आनन्द प्राप्त की योग्यता विकसित करना।

(xvi) गद्य-साहित्य की सहायता से उन्हें चारित्रिक-विकास की ओर अग्रसर करना।

प्रश्न 26. मूल्यांकन की परिभाषा दीजिए।

उत्तर : 'मूल्यांकन' का सीधा-सादा अर्थ है किसी का मूल्य लगाना। शिक्षण में मूल्यांकन द्वारा इस बात का अंकन किया जाता है कि छात्र-छात्राओं ने विभिन्न विषयों के किस स्तर तक ज्ञान प्राप्त किया है। शिक्षा के जिन उद्देश्यों को निर्धारित किया गया था उन उद्देश्यों की प्राप्ति कहां तक हुई और शिक्षक अपने शिक्षण कार्य में कहां तक सफल हुआ। मूल्यांकन के लिये परीक्षायें आयोजित की जाती हैं। छात्र-छात्राएं परीक्षा की तैयारी करते हैं। निश्चित समय पर परीक्षाएं देते हैं। परीक्षा भवन में छात्र-छात्राओं को प्रश्न पत्र बांटे जाते हैं और उनकी उत्तर-कापियों को जांच कर उनका मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन के अर्थ की स्पष्टता हेतु शिक्षाविदों ने भिन्न भिन्न परिभाषाएं दी हैं जो विचारणीय हैं—

1. कलार एवं स्टार के अनुसार, "मूल्यांकन वह निर्णय एवं विश्लेषण है जो विद्यार्थी के कार्य से प्राप्त सूचनाओं से निकाला जाता है।"
2. सी. सी. रास के शब्दों में, "मूल्यांकन जो मापन से अलग है, का प्रयोग अक्सर बालक के समूचे व्यक्तित्व अथवा शिक्षा की समूची स्थितियों की जांच प्रक्रिया के लिये किया जाता है।"
3. डा. हिल के विचारों में, "पुरानी प्रणाली समूचे पाठ्यक्रम तथा शिक्षण-विधि को निर्देशित किया करती थी जब कि नई प्रणाली में परीक्षण एवं शिक्षण दोनों विशिष्ट शिक्षण-उद्देश्यों द्वारा निर्धारित किये जायेंगे। अतः इन्हीं पर समूची शिक्षा एवं मूल्यांकन निर्धारित होने चाहियें।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4. जे. डब्लयू राईटस्टोन के विचारानुसार, ''मूल्यांकन में व्यापक व्यक्तित्व से सम्बन्धित परिवर्तनों तथा शिक्षा कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों पर बल दिया जाता है। इसमें केवल विषय वस्तु का मूल्यांकन ही सम्बन्धित नहीं बल्कि दृष्टिकोणों, रूचियों, आदर्शों, चिन्तन-विधियों, काम की आदतों तथा वैयक्तिक एवं सामाजिक समायोजन योग्यताओं का मूल्यांकन भी सम्मिलित है।''

ऊपर दी गई परिभाषाओं से स्पष्ट है कि मूल्यांकन एक ऐसी विधा है जो छात्र-छात्राओं की उपलब्धियों शिक्षण-विधियों तथा शिक्षण उद्देश्यों की जांच करती है। इन कार्यों में इसकी विशिष्ट एवं व्यापक उपयोगिताओं की ओर भी संकेत किया है। ये उपयोगितायें परीक्षण एवं मूल्यांकन को शिक्षा-पद्धति का अनिवार्य अंग बना देती है।

प्रश्न 27. निदानात्मक शिक्षण का महत्त्व स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : I. इसका सबसे बड़ा महत्त्व यह है कि शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही भाषा की अशुद्धियों और दोषों से परिचित हो जाते हैं ।

II. अशुद्धियों और दोषों से परिचित होने के बाद निदान के माध्यम से इनको दूर किया जा सकता है ।

III. इससे छात्र-छात्राओं को क्रियाशील और स्वाध्याय की प्रेरणा मिलती है ।

IV. इसके द्वारा शिक्षकों को छात्र-छात्राओं की पूर्णरुप से जानकारी प्राप्त हो जाती है ।

V. इससे शिक्षक छात्र-छात्राओं की गन्दी आदतों को दूर कर सकता है ।

VI. शिक्षक अपने शिक्षण को सशक्त, सार्थक एवं प्रभावपूर्ण बना सकता है ।

VII. निदान किये बिना किसी प्रकार का भाषा सम्बन्धी उपचार सम्भव नहीं हो सकता ।

प्रश्न 28. उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य बताइये।

उत्तर : उपचारात्मक शिक्षण का मुख्य लक्ष्य (प्रयोजन) शैक्षणिक कठिनाईयों का निवारण करना है । शैक्षणिक कठिनाईयों से छात्र का सीखने का मार्ग रुक जाता है । उपचारात्मक शिक्षण उन कठिनाईयों का निवारण करके उसके सीखने के मार्ग को प्रशस्त करके सहज बनाता है । इस प्रकार एक बार उसका सीखने का मार्ग प्रशस्त हो जाता है तो उस छात्र को सही ढंग से ज्ञान की प्राप्ति सहजता से होने लगती है । उसकी सीखने में रुचि हो जाती है और वह प्रसन्नता का अनुभव करने लगता है । उसका व्यक्तित्व सही दिशा में विकसित होने लगता है । उपचारात्मक शिक्षण के निम्न उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं :-

(1) छात्र-छात्राओं की भाषा से सम्बन्धित त्रुटियों का निराकरण करना ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(2) ज्ञान प्राप्ति के मार्ग में बाधा डालने वाली कठिनाईयों का निवारण करना ।

(3) छात्र-छात्राओं की शंकाओं का समाधान करके उनको मानसिक रूप से स्वस्थ बनाना ।

(4) उनको विकास की सही दिशा की ओर अग्रसर करना ।

(5) उनको अपने दोषों से परिचित कराके सजग एवं सचेत करना और इन्हें दूर करने के लिये प्रेरित करना ।

(6) शिक्षण को सशक्त, सार्थक एवं प्रभावशाली बनाना ।

प्रश्न 29. सहगामी गतिविधियों के प्रकार कौन से हैं ?

उत्तर : 1. शारीरिक विकास के लिये उचित क्रिया कलाप जैसे- सामूहिक परेड, सामूहिक ड्रिल, खेलकूद, सैनिक शिक्षा एवं एन. सी. सी.

2. साहित्य एवं ज्ञान के विकास सम्बन्धी क्रिया कलाप- जैसे- वाद-विवाद, भाषण प्रतियोगिता, पुस्तकालय कार्य, कविता पाठ, कहानी कहना, कहानी लेखन प्रतियोगिता, साहित्य सभा, नाटक एवं निबन्ध प्रतियोगिता आदि ।

3. रसात्मक अनुभूति एवं सांस्कृतिक विकास सम्बन्धी क्रिया कलाप- जैसें संगीत, लोक-गीत, नृत्य प्रदर्शनी, चार्ट तथा माडल की रचना, नाटक खेलना आदि ।

4. अवकाश के क्रिया कलाप- जैसे- टिकट और सिक्के इकट्ठे करना, फोटो ग्राफी, चित्र बनाना और मनोरंजक वस्तुओं का एकीकरण करना ।

5. मनोरंजन के क्रिया कलाप- जैसे पिकनिक, पहाड़ों पर चढ़ना, एवं धार्मिक, भौगोलिक और एतिहासिक स्थानों की यात्रा, चिड़ियाघर, मेले आदि पर जाना आदि ।

6. नागरिकता विकास सम्बन्धी क्रिया कलाप- जैसे- नागरिक संस्थाओं का देखना (पर्यवेक्षण) जैसे ग्राम पंचायत, विधान सभा, हाईकोर्ट आदि । इनके अतिरिक्त सामाजिक उत्सवों का मनाया जाना, महान पुरुषों के जन्म दिवस का मनाना, बाल दिवस और शिक्षक दिवस का गनाना आदि ।

7. समाज सेवा सम्बन्धी क्रिया कलाप- जैसे- सामूहिक प्रार्थना, श्रमदान, सफाई सप्ताह, पास पड़ोस में समाज सेवा, प्रथम चिकित्सा, राष्ट्रीय सेवा योजना आदि।

8. बहुमुखी क्रियाकलाप अथवा प्रोजेक्ट योजनाएं- जैसे- स्कूल सौन्दर्य की देखभाल, नगर एवं गांव की देखभाल, पोस्ट आफिस चलाना, स्कूल अथवा गांव में कोई दवाखाना चलाना आदि ।

प्रश्न 30. ध्वनि किसे कहते है ?

उत्तर : मनुष्य ने अपने भाव विचार एवं अनुभवों के आदान-प्रदान के लिए जिस माध्यम को स्वीकार किया है उसे ही भाषा कहते हैं । भाषा की सबसे छोटी इकाई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ध्वनि है । हमारे मुख के अवयवों से घर्षण करती हुई जो प्राणवायु बाहर निकलती है वही ध्वनि या आवाज है । ध्वनियों की पहचान के लिये कुछ चिन्हों-विशेष का प्रयोग किया जाता है, ये विशेष चिन्ह ही अक्षर कहलाते हैं । अक्षर अर्थात् अ +क्षर, जो कभी नष्ट न हुआ हो वह अक्षर है । अक्षर को ही वर्ण भी कहते हैं । वर्ण अर्थात् रंग रूप आदि । हिन्दी भाषा में प्रत्येक मूल ध्वनि के लिए अलग अलग अक्षर या वर्ण का प्रयोग होता है ।

प्रश्न 31. अनुनासिक और अनुस्वार में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : (क) अनुनासिक स्वर- 'स्वर' है जबकि अनुस्वार व्यंजन है ।

(ख) अनुनासिक ऐसी ध्वनि है जिसे स्वर से अलग नहीं किया जा सकता जबकि अनुस्वार ध्वनि की अलग स्वतन्त्र सत्ता है, जैसे अंगूर में अ स्वर का उच्चारण पहले हो रहा है और बाद में (ं)अनुस्वार ध्वनि सुनाई पड़ती है।

(ग) अनुस्वार का शाब्दिक अर्थ- जो स्वर के पीछे आए उन्हें अनुस्वार कहा जाता है ।

प्रश्न 32. संज्ञा के भेद बताइये।

उत्तर : संज्ञाएं तीन प्रकार की होती हैं:-

(1) जातिवाचक संज्ञा

(2) व्यक्तिवाचक संज्ञा

(3) भाव वाचक संज्ञा

आजकल कुछ विद्वान संज्ञा के समुदाय वाचक तथा द्रव्यवाचक दो अन्य भेद भी मानते हैं, लेकिन ये दोनों भेद जातिवाचक संज्ञा में ही आ जाते हैं ।

प्रश्न 33. विशेषण की परिभाषा दीजिए।

उत्तर : जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता (गुण, दोष, परिणाम, संख्या) बताएं उन्हें विशेषण कहते हैं । जैसे- लम्बा, छोटा, मोटा, अच्छा, बुरा, ईमानदार, सुन्दर आदि ।

विशेष- जिस संज्ञा या सर्वनाम शब्द की विशेषता बताई जाती है, उसे विष्य कहते हैं । जैसे :-

मोटी लड़की दौड़ रही है ।

कायर पुरुष युद्ध के मैदान से भाग जाते हैं ।

मैं मीठा आम खाऊँगा ।

मोहन गन्दा लड़का है ।

उपर्युक्त उदाहरणों में मोटी, कायर, मीठा और गन्दा शब्द विशेषण हैं तथा लड़की, पुरुष, आम और लड़का विशष्य हैं ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. भाषा की प्रकृति में शामिल हैं-
   (अ) भाषा पैतृक सम्पत्ति नहीं है (ब) भाषा अर्जित सम्पत्ति है
   (स) भाषा चिर परिवर्तनशील है (द) उपरोक्त सभी
2. "भाषा ध्वनियों द्वारा मानव के भावों की अभिव्यक्ति है।" मत है-
   (अ) पंतजलि (ब) स्वीट
   (स) आटो जस्परसन (द) बनार्ड ब्लॉक
3. "भाषा के आविर्भाव से सारा मानव संसार गूंगों की विराट बस्ती बनने से बच गया।" कथन हैं-
   (अ) सीताराम चतुर्वेदी (ब) जार्ज ट्रेगर
   (स) पंतजलि (द) स्वीट
4. "भाषा वह व्यापार हैं जिससे हम वर्णनात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं।" विचार हैं-
   (अ) स्वीट (ब) बनार्ड ब्लॉक
   (स) पंतजलि (द) आटो जस्परसन
5. "भाषा ऐसी मानवीय वृत्तियों का समूह है जिसका उद्देश्य है भाषा और विचारों की अभिव्यक्ति तथा दूसरों तक प्रसार।" मत हैं-
   (अ) जार्ज ट्रेगर (ब) आटो जस्परसन
   (स) सीताराम चतुर्वेदी (द) पंतजलि
6. "भाषा स्वेच्छागत वाक्-प्रतीकों की वह प्रणाली है जिसके द्वारा सामाजिक समूह परस्पर संगठित रहता है।" विचार है-
   (अ) बनार्ड ब्लॉक एवं जार्ज ट्रेगर (ब) पंतजलि
   (स) स्वीट (द) स्मिथ
7. भाषा की विशेषता में शामिल हैं-
   (अ) व्यक्तित्व की पहचान (ब) समृद्ध और शुद्ध शब्दावली
   (स) भाषा की परिवर्तनशीलता (द) उपरोक्त सभी
8. शिक्षण उद्देश्यों को अधिगम व्यवहार के कितने अनुक्षेत्रों में विभाजित कर विश्लेषण किया जाता हैं-
   (अ) दो (ब) तीन
   (स) चार (द) पाँच

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

9. हिन्दी के राष्ट्र भाषा बनने के तर्क संगत कारण में शामिल है-
(अ) यह बहुसंख्यक की भाषा है
(ब) इसकी लिपि सरल और सुबोध है
(स) यह हमारे अपने देश की भाषा है
(द) उपरोक्त सभी

10. अनुवाद कितने प्रकार से किया जा सकता है-
(अ) तीन (ब) चार
(स) पाँच (द) सात

11. "मनुष्य दमन करने की पुरानी आदत को नहीं छोड़ सकता, परन्तु खेल द्वारा इस दोष को दूर किया जा सकता है।" कथन है-
(अ) टी. पी. नन (ब) स्वीट
(स) स्मिथ (द) बनार्ड

12. माण्टेसरी शिक्षण पद्धति के कितने भाग है-
(अ) दो (ब) तीन
(स) चार (द) पाँच

13. प्रौजेक्ट विधि के शिक्षण पदों में शामिल हैं-
(अ) प्रयोजनशीलता (ब) कार्य नियोजन
(स) कार्य सम्पादन (द) उपरोक्त सभी

14. "शिक्षक राष्ट्र के भाग्य निर्णायक हैं।" कथन हैं-
(अ) स्मिथ (ब) सीताराम चतुर्वेदी
(स) हूमायूं कबीर (द) टी. पी. नन

15. शिक्षण सूत्र में शामिल है-
(अ) ज्ञात से अज्ञात की ओर (ब) मूर्त से अमूर्त की ओर
(स) पूर्ण से अंश की ओर (द) उपरोक्त सभी

16. "हमारे पाठ का आरम्भ मूर्त से तथा उसकी समाप्ति अमूर्त से होनी चाहिए।" मानना है-
(अ) हर्बर्ट स्पेन्सर (ब) पेस्टालॉजी
(स) टी. पी. नन (द) स्वीट

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

17. "बालकों की शिक्षा सदा स्थूल वस्तुओं तथा तथ्यों से होनी चाहिये, शब्दों, परिभाषाओं तथा नियमों से नहीं।" कथन है-

(अ) स्वीट (ब) पेस्टालॉजी

(स) स्मिथ (द) स्पेन्सर

18. वाचन कितने प्रकार का होता हैं-

(अ) दो (ब) चार

(स) पाँच (द) सात

19. अशुद्ध उच्चारण के व्यक्तिगत कारण में शामिल है-

(अ) शारीरिक कमी (ब) प्रयत्न लाघव

(स) अज्ञान (द) उपरोक्त सभी

20. "अगर गद्य कवियों की कसौटी हैं तो निबन्ध गद्य की कसौटी है।" विचार है-

(अ) सीताराम चतुर्वेदी (ब) स्मिथ

(स) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (द) स्वीट

21. "कविता छन्दोमय रचना है।" कथन है-

(अ) शैले (ब) जानसन

(स) हडसन (द) कार्लाइल

22. "कविता कल्पना की अभिव्यक्ति है।" मत है-

(अ) हडसन (ब) विश्वनाथ

(स) शैले (द) मम्मट

23. "रमणीय अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य कहते है।" विचार है-

(अ) जगन्नाथ (ब) पन्त

(स) श्यामसुन्दर दास (द) विश्वनाथ

24. "मूल्यांकन वह निर्णय एवं विश्लेषण है जो विद्यार्थी के कार्य से प्राप्त सूचनाओं से निकाला जाता है।" मानना हैं-

(अ) कलार एवं स्टार (ब) रास

(स) हिल (द) राईटस्टोन

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu.
Acc No. 10005
15/11/2012

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

25. "मूल्यांकन जो मापन से अलग है, का प्रयोग अक्सर बालक के समूचे व्यक्तित्व अथवा शिक्षा की समूची स्थितियों की जाँच प्रक्रिया के लिए किया जाता है।" मत है-

(अ) राईटस्टोन (ब) हिल

(स) सी.सी.रास (द) कलार एवं स्टार

26. अच्छे परीक्षण के आधार में शामिल है-

(अ) विश्वसनीयता (ब) वैधता

(स) वस्तुनिष्ठता (द) उपर्युक्त सभी

27. "सौन्दर्यपूर्ण वस्तु सदा सुखदाई होती है।" मानना है-

(अ) कीट्स (ब) स्मिथ

(स) वुडवर्थ (द) बनार्ड

28. संज्ञा के भेद में शामिल है-

(अ) जातिवाचक (ब) व्यक्तिवाचक

(स) भाववाचक (द) उपर्युक्त सभी

29. विशेषण के कितने भेद होते है-

(अ) दो (ब) तीन

(स) पाँच (द) सात

30. कबीर का जन्म हुआ-

(अ) 1399 (ब) 1455

(स) 1460 (द) 1485

उत्तरमाला

1. (द)	2. (व)	3. (अ)	4. (स)	5. (ब)
6. (अ)	7. (द)	8. (ब)	9. (द)	10. (अ)
11. (अ)	12. (ब)	13. (द)	14. (स)	15. (द)
16. (अ)	17. (ब)	18. (अ)	19. (द)	20. (स)
21. (ब)	22. (स)	23. (अ)	24. (अ)	25. (स)
26. (द)	27. (अ)	28. (द)	29. (स)	30. (ब)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

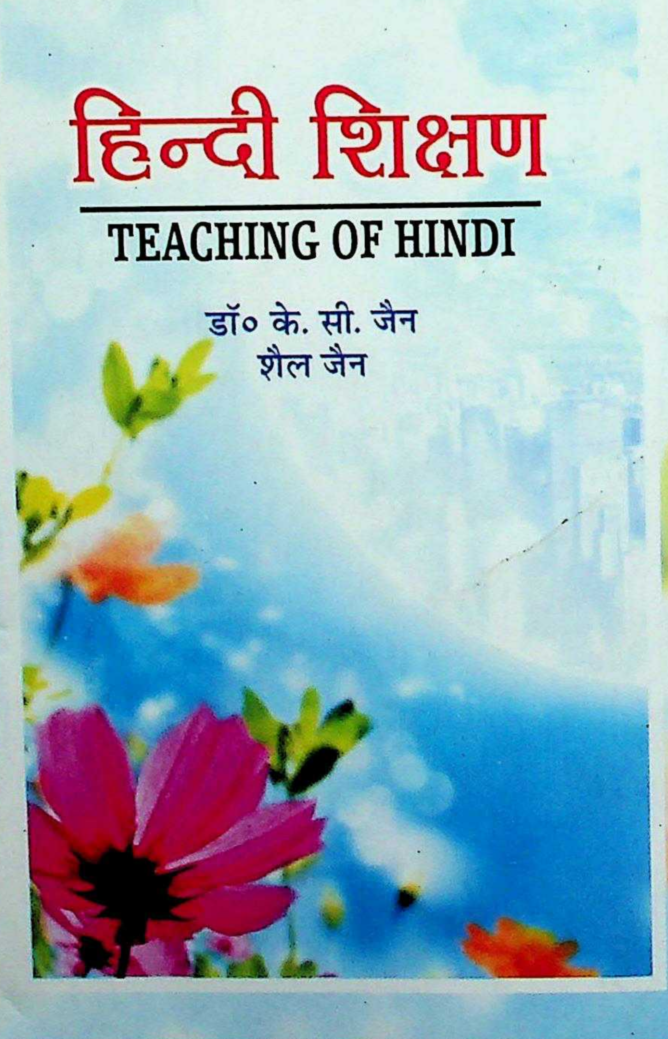

TANDON PUBLICATIONS®

LUDHIANA

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by KS-MoE-2025-Grant